रूपेश

जन्मकुण्डली

रचना एवं फल विचार

।।श्री:।।

जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार

[कुण्डली बनाने से उसका फलादेश करने तक चमत्कारिक अनेकानेक विषयों से सम्पन्न तथा साधारणजनों के लिये भी अत्यन्त उपयोगी, अनुपम और संग्रहणीय]

द्वारा—

डॉ० एस. के. झा 'सुमन'

ज्योतिषशास्त्राचार्य

प्रकाशक—

श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार

कचौड़ीगली, वाराणसी २२१००१

[मूल्य—१५०.००

सन् २००९]

प्रकाशक—
श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार
कचौड़ीगली, वाराणसी
दूरभाष : २३९२५४३
२३९२४७१

©सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन सुरक्षित

द्वारा—
डा० एस. के. झा 'सुमन'

मुद्रक—
भारत प्रेस, वाराणसी

भूमिका

प्राय: सभी लोगों को विदित है कि भारतीय ज्यौतिषशास्त्र आज विश्वजनमानस का अभिन्न अंग-सा हो गया है। उस ज्योतिषशास्त्र के प्रमुख तीन अंग हैं—सिद्धान्त, संहिता एवं होरा। इन स्कन्धों में होरा स्कन्ध के अन्तर्गत जातक, ताजिक, मुहूर्त एवं प्रश्नज्योतिष का भी समन्वय हैं। इनका संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है।

१. सिद्धान्त स्कन्ध—जिस स्कन्ध में त्रुटि से लेकर प्रलय पर्यन्त की कालगणना, सौर, सावन, चान्द्र, नाक्षत्रादि कालमानों का भेद, ग्रहों की गति एवं स्थिति का परिचय, पृथ्वी एवं नक्षत्रों की स्थिति का वर्णन, वेधादि कार्यों की सिद्धि हेतु यन्त्रादि वर्णन, गणित प्रक्रिया का उपपत्ति सहित विवेचनादि होता है, उसे 'सिद्धान्त स्कन्ध' कहते हैं।

२. संहिता स्कन्ध—संहितास्कन्ध में ग्रहादिचारफल, वायसविरूत, शिवारूत, मृगचेष्टित, श्वचेष्टित, अश्वचेष्टित, हस्तिचेष्टित, शकुन, वायु, वृष्टि वर्णन एवं इन सबके संसार पर होने वाले समष्टिगत फल का वर्णन दिया रहता है।
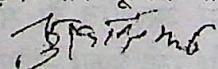
३. होरा स्कन्ध—होरा स्कन्ध मुख्य रूप से व्यष्टिपरक फलादेश से सम्बन्धित है। इसमें जातक विशेष के ज़न्म से लेकर मृत्युपर्यन्त जीवन में घटित होने वाली घटनाओं का और उनके शुभाशुभत्व का विचार किया जाता है।

ज्योतिषशास्त्र के होरा स्कन्ध का महत्व—ज्योतिषशास्त्र के तीनों स्कन्ध परस्पर पूरक का कार्य करते हैं। संहिता एवं होरा स्कन्ध, सिद्धान्तस्कन्ध पर आधारित है। संहिता एवं होरास्कन्ध के बिना सिद्धान्तस्कन्ध भी अपूर्ण है। इसी प्रकार संहिता एंव होरा भी परस्पर आश्रित है; परन्तु जब व्यष्टिपरक फल अर्थात् जातक विशेष के बारे में विचार किया जाता है तब अन्य दोनों स्कन्धों की अपेक्षा होरास्कन्ध महत्त्वपूर्ण हो जाता है। इस स्कन्ध में जन्मकालीन ग्रहस्थिति से व्यक्ति विशेष के सन्दर्भ में जीवन सम्बन्धी शुभाशुभ फल का विचार किया जाता है। वस्तुत: किस समय में उत्पन्न प्राणियों को शरीर, रूप, शील, धन, पुत्र, व्यवसाय, विद्या, भाग्य आदि से सुख या दु:ख प्राप्त होगा? किसके लिए कौन-सा समय उपयुक्त या

अनुपयुक्त रहेगा? कौन व्यक्ति अपने जीवन में कितना सफल होगा? इन सभी विषयों का ज्ञान होरास्कन्ध से ही सम्भव है। विद्वानों का मत है कि यदि मनुष्य को पूर्व में ही ज्ञात हो जाए कि कौन-सा समय उसके लिए अनुकूल या प्रतिकूल है तो वह उस अनुकूल समय में अपने आवश्यक कर्म को पूरा कर लेता है तथा प्रतिकूल समय में अशुभ फल से बचने के लिए सतर्क रहकर उपाय भी कर सकता है। शास्त्रों के अनुसार यह समस्त संसार ग्रहों की स्थिति से ही प्रेरित होते हैं। सृष्टि, रक्षण एवं संहार इन तीनों के ज्योतिषशास्त्रोक्त ग्रहों द्वारा प्रभावित होने के कारण यह स्पष्ट हो जाता है कि यह शास्त्र जीवन में हमारी सर्वाधिक सहायता करता है। उपरोक्त अपेक्षाओं के साथ समसामयिक आवश्यकता के अनुकूल प्रस्तुत पुस्तक 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' आपकी सेवा के लिए अपनी कई अन्य विशेषताओं सहित प्रकाश श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार के सहयोग से कम मूल्य पर उपलब्ध है।

अन्त में यह कि ग्रन्थ प्रलेखनादि व प्रूफादिशोधन के समय जिन महानुभावों का मुझे सहयोग प्राप्त हुआ और जिनके ग्रन्थ या पाण्डुलिपियों से सहयोग मिला, उन लोगों का हृदय से आभार व्यक्त करना मैं अपना पुनीत कर्त्तव्य समझता हूँ। विशेषकर प्रकाशक महोदय की मैं मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हुए उनकी चिरायु की कामना करता हूँ, जिनके सत्प्रयास से ही यह ग्रन्थ आप विज्ञजनों की सेवा में प्रस्तुत हो सका है। साथ ही अंकिता कम्प्युटर का मैं किन शब्दों में आभार व्यक्त करुँ, जिन्होंने कठिन मुद्रण कार्य को भी साध्य बनाया।

वैसे मैंने ग्रन्थ के प्रूफादि शोधन करने में निश्चय ही प्रमाद रहित प्रयास किया है। फिर भी यदि कहीं अशुद्धि रह गई हो, तो गलती करना मानवस्वभाव मान कर विद्वान् पाठक उसे सुधार कर पढ़ेंगे और सूचित भी करेंगे, तो बड़ी कृपा होगी।

अक्षय तृतीया-वि.सं. २०६६
वाराणसी

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठांक

विषय	पृष्ठांक

।।श्री:।।

स्वयं कुण्डली बनायें व देखें

१

विषय-प्रवेश

भारतीय वैदिक वाङमय के अनुसार ऋग्वेद काल से ही ज्यौतिष विषयों की उपस्थिति सिद्ध होती है। प्रारम्भकाल से ही ज्यौषिशास्त्र वेदचक्षुस्वरूप होने से षड्वेदाङ्ग शास्त्रों में प्रतिष्ठित रहा है। प्राचीनतरकालों में ज्योतिषशास्त्र को भी उसी प्रकार छिपाकर रखा जाता था जिस प्रकार से आजकल के समय में अणु या परमाणु के सिद्धान्तों को। इसका कारण यह था कि कोई भी विद्या या ज्ञान गलत नहीं है, परन्तु अपात्रों (अयोग्य व्यक्तियों) के हाथों में पड़कर उसका प्रयोग गलत दिशा या क्षेत्रों में सम्भव था। प्राचीनकाल में महर्षियों ने अपने अन्त:चक्षु से ज्योतिष का ज्ञान प्राप्त किया। महर्षि राग-द्वेष से मुक्त थे और जो सबसे योग्य पात्र उन्हें मिले उन्हें ही उन्होंने ज्योतिष विद्या का ज्ञान दिया। आदिकाल से जो लिखित ग्रन्थ हमारे समक्ष आए हैं उनके कारण पाराशर, वशिष्ठ, व्यास, गर्ग, अत्रि, जैमिनी, नारद इत्यादि का नाम ज्यौतिषशास्त्र से जुड़ा हुआ है। महर्षि पाराशर को ज्योतिष का पिता भी कहा जाता है। पाराशर लिखित 'बृहत्पाराशरहोराशास्त्र' जो 'बृहत्पराशर' के नाम से इस समय प्रसिद्ध ग्रन्थ है आज भी सब ज्योतिष की पुस्तकों में श्रेष्ठ समझा जाता है।

प्रतीत होता है कि आदि काल से भारतवर्ष में ज्योतिष का प्रचार निरन्तर बढ़ता ही रहा है और यद्यपि बहुत-से अमूल्य ग्रन्थ शक, हून, मंगोल और उसके बाद म्लेच्छ, यवन, इत्यादि के निरन्तर हमले में नष्ट हो गए या भारत से दूसरे देशों में ले जाए गए, परन्तु तब भी ज्योतिष के ज्ञान में कोई कमी नहीं आई। इस प्रकार कहना चाहिए कि भारतवर्ष में ही ऋषियों के कारण ज्योतिष का प्रचार हुआ। फिर कालान्तर में राजाओं के आश्रय में रहकर ज्योतिषियों ने ज्योतिष के गौरव को बढ़ाया। पूर्वकाल में प्रत्येक दरबार में राजज्योतिषी भी हुआ करते थे, जो न केवल ज्योतिष में अपितु समस्त विद्याओं में पारंगत होते थे। जयपुर नरेश जयसिंह ने विभिन्न स्थानों में ग्रहों के अन्वेषण के लिए ग्रहवेधशालाओं का निर्माण करवाया जिसमें

दिल्ली और जयपुर मुख्य हैं। अलवर नरेशों के प्रश्रय में भी रहते हुए अनेक आचार्यों ने तन्त्र, ज्योतिष आदि पर अनेक ग्रन्थ रचे और शोधकार्य किए।

यह यहाँ स्पष्ट होना चाहिए कि ज्योतिष केवल विज्ञान ही नहीं है। इसमें गणित भी है जिसके द्वारा ग्रहों की स्थिति का ज्ञान होता है। इसमें ग्रहों का स्वरूप और उनका जीव-जन्तुओं पर प्रभाव, जीवन में कब घटनाएँ घटित होंगी, किस समय प्राणियों में मानसिक स्फूर्ति होगी आदि-आदि बताये गए हैं। इतना ही नहीं; इससे आध्यात्मिक पहलू भी जुड़ा हुआ है। ग्रहों की स्थिति का पता लगाकर उनके स्वरूप और गुणों को देखकर ऊहापोह करते हुए फलादेश करना उस समय तक सफल नहीं होगा, जब तक कि बताने वाला ज्योतिषी भी उतना ही पवित्र नहीं है।

जिस समय बालक का जन्म होता है उसकी जन्म-कुण्डली बनाई जाती है और अशुभ ग्रहों के लिए ग्रह-शान्ति की जाती है। जैसे कि श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध में कहा गयाा है कि श्रीकृष्ण के जन्म के बाद नन्दजी उन्हें लेकर गर्ग मुनि के पास गए, यह जानने के लिए कि बालक के ग्रह क्या बताते हैं। ग्रहों की स्थिति से हमें पता चलता है कि इस बालक की जीवन के किस विभाग में प्रगति हो सकती है तथा उसके लिए उसे क्या करना चाहिए। यदि जीवन के आरम्भ से ही हम बालक की प्रगति चाहते हैं, तो उसे उसी दिशा में प्रेरित करें जिसमें उसकी योग्यताएं शीघ्र और शुभ फल दिखाने वाली हैं, और यह ज्योतिषशास्त्र से सहजता व सरलता से ज्ञात हो जाता है।

राशि-चक्र और ग्रह—पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती हुई स्थित मानी गई है। चूँकि देखने में यह प्रतीत होता है कि सूर्य चल रहा है। इसी प्रकार मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि इत्यादि सूर्य की परिक्रमा करते हैं। ये जिस रास्ते से गमन करते हैं, वह क्रान्तिवृत्त (राशि-चक्र) कहलाता है। इसे ही बारह भागों में विभक्त करने पर बारह राशियां होती हैं।

यह राशि-मण्डल बिल्कुल गोल नहीं अपितु अण्डे की आकृति की होती है, वैसे इसके केन्द्रों पर ३६० अंश का कोण निर्मित होता है। इसलिए इसके १२ विभाग करने पर प्रत्येक विभाग में ३० अंश होते हैं। ये बारह विभाग राशियां कहलाती हैं। इनके नाम क्रम इस प्रकार से हैं।

१. मेष	५. सिंह	९. धनु
२. वृषभ	६. कन्या	१०. मकर
३. मिथुन	७. तुला	११. कुम्भ
४. कर्क	८. वृश्चिक	१२. मीन

सूर्य का जिस दिन राशि में प्रवेश होता है वह दिन संक्रान्ति का कहलाता है। भारतीय ज्योतिष में सूर्य जिस दिन मेष राशि में प्रवेश करता है उसे स्थिर माना गया है। आजकल सूर्य का मेष राशि में प्रवेश का दिन स्थिर नहीं माना जाता है, क्योंकि आधुनिकों का मानना है कि यह प्रारम्भिक बिन्दु चलता है और इस बिन्दु की गति करीब ५०.२ विकला प्रति वर्ष की है। भारतीय ज्योतिष में ग्रहों का निरयण ग्रह स्पष्ट रहता है। मेष राशि का आरम्भ जहां से होता है वहीं से अश्विनी नक्षत्र (यह स्थिर है) की गणना की गई है।

राशिचक्र में कौन-सी राशि किस अंश से शुरू होती है और किस अंश पर समाप्त होती है इसे वक्ष्यमाण चक्र से जानना चाहिए।

मेष	०°	से ३०°	तुला	१८०°	से २१०°
वृषभ	३०°	से ६०°	वृश्चिक	२१०°	से २३०°
मिथुन	६०°	से ९०°	धनु	२४०°	से २७०°
कर्क	९०°	से १२०°	मकर	२७०°	से ३००°
सिंह	१२०°	से १५०°	कुम्भ	३००°	से ३३०°
कन्या	१५०°	से १८०°	मीन	३०३°	से ३६०°

इस प्रकार यदि हम कहते हैं कि सूर्य ३८ अंश पर स्थित है तो उससे यह समझ आना चाहिए कि सूर्य ने पहली राशि (मेष) के ३० अंश पूरे कर दूसरी राशि (वृषभ) के ८ अंश पर वह स्थित है। इसे ही १-८° अर्थात् एक राशि आठ अंश इस प्रकार से लिखा जाता है।

भारतीय ज्योतिष में मुख्य रूप से नौ ग्रह माने गए हैं, जो वक्ष्यमाण प्रकार हैं—

१. सूर्य	२. चन्द्र	३. मंगल
४. बुध	५. बृहस्पति	६. शुक्र
७. शनि	८. राहु	९. केतु

ऊपर जो ग्रह उल्लिखित हैं, वही नव ग्रह कहलाते हैं। किसी भी धार्मिक पूजन इत्यादि में गणपति की पूजा के बाद, नव ग्रहों की पूजा की जाती है,जिससे कार्य में आने वाले विघ्न और बाधाएं नष्ट हो जाएं।

सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि दृश्यग्रह होते

हैं, परन्तु राहु और केतु अदृश्यग्रह या बिन्दु छाया ग्रह हैं; जिनका पृथ्वी पर विशेष प्रभाव पड़ता है।

ग्रह निरन्तर गमनशील रहते हैं; परन्तु उनकी गति हमेशा एक सी नहीं प्रतीत होती है। साधारण रूप से पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा एक वर्ष में कर लेती है। इसी को भारतीय ज्यौतिष में गणना की सुविधा के लिए कहा है कि सूर्य (क्योंकि पृथ्वी से देखने पर सूर्य चलता हुआ प्रतीत होता है) एक वर्ष में भचक्र का भ्रमण कर लेता है। नीचे प्रत्येक ग्रहों के सामने हमने उनकी भचक्र (राशि-मण्डल या क्रान्तिवृत्त) की परिक्रमा पूर्ण करने का काल दर्शाते हैं—

सूर्य	१ वर्ष
चन्द्र	२७ दिन १५ घटि
मंगल	१ वर्ष ६ मास
बुध	१ वर्ष
बृहस्पति	१२ वर्ष
शुक्र	१ वर्ष
शनि	३० वर्ष
राहु	१८ वर्ष
केतु	१८ वर्ष

राहु और केतु हमेशा एक-दूसरे के आमने-सामने रहते हुए वक्री या उलटी गति से गमन करते भाषित होते रहते हैं।

अन्य ग्रहों में सूर्य और चन्द्र सदा मार्गी गति से ही गमन करते प्रतीत होते हैं, अत: उनकी सदा मार्गी गति होती है, परन्तु पञ्चतारा मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि ग्रह कभी मार्गी और कभी वक्री गमन करते हैं। अत: इनकी वक्री और मार्गी दोनों प्रकार की गतियाँ मानी जाती हैं।

इस प्रकार यह समझ लेना चाहिए कि भारतीय ज्यौतिष के प्राय: प्राचीन उपलब्ध ग्रन्थों में इन्हीं सूर्यादि नौ ग्रहों और बारह राशियों को ही केन्द्र में रखकर फलादेश के नियम निरूपित किये गये हैं।

।। इस प्रकार 'स्वयं कुण्डली बनायें और देखें' ग्रन्थ का प्रथम पुष्प रूप 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।१।।

—※※※—

२

कुण्डली की आवश्यकता

भारतीय मान्यता के अनुसार 'जो कुछ वेद में है, वही अन्यत्र भी है, जो वहाँ नहीं, वह अन्यत्र भी नहीं'। जैसे—'यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तद् क्वचित्' मनुस्मृति के अनुसार मनुष्य जीवन के कर्म का आधार वेद है—वेदोऽखिल: कर्ममूलम्। वह वेद 'अणोरणीयान्महतोमहीयान्' स्वरूप परमात्मा का नि:श्वासभूत है, जो प्राणियों को आधिभौतिक, आध्यात्मिक व आधिदैविक त्रिविध दुखों से उबारने वाला तथा उनके पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष) की प्राप्ति का अतिशय सुन्दर पथप्रदर्शक है; उस वेद में संसार के समस्त विज्ञान भी सन्निहित हैं। उस वेद के प्रयोजन को सिद्ध करने वाला षड्वेदाङ्गशास्त्र हैं, जिनमें सन्निहित व समुपासित ज्ञान वेद के साथ ही या विराट वेदपुरुष के रूप में हमारे समक्ष प्रकट हुये और जिन्हें महर्षियों ने अपनी अतीन्द्रिय शक्ति से लोक कल्याणार्थ प्रवर्त्तित किये, उनके नाम हैं—१. व्याकरण, २. ज्यौतिष, ३. निरुक्त, ४. कल्प, ५. शिक्षा और ६. छन्द।

इन वेदाङ्ग शास्त्रों में ज्यौतिष को अतिमहत्त्वपूर्ण माना गया है। महर्षि लगध ने इसे 'काल-ज्ञानं प्रवक्ष्यामि' के अनुसार कालज्ञान या कालविधानशास्त्र भी कहा है। वस्तुत: इसका प्रधान प्रतिपाद्य विषय 'काल' ही है। नारदसंहिता के अनुसार ज्यौतिषशास्त्र के 'सिद्धान्त-संहिता होरारूपं स्कन्धत्रयात्मकम्' अर्थात् सिद्धान्त संहिता और होरा तीन स्कन्ध प्रसिद्ध हैं। वाराहमिहिर ने भी 'ज्योतिषशास्त्रमनेकभेदविषयं स्कन्धत्रयाधिष्ठितम्' कह कर ज्योतिष शास्त्र के अनेक भेदों में प्रमुख उक्त तीन भेदों को ही स्वीकार किया है। सम्प्रति उक्त भेदों में से सिद्धान्त व संहिता की तुलना में होरा स्कन्ध की परम्परा सर्वसुलभ होने से अर्थात् सम्पूर्ण प्राणिमात्र के व्यक्तिगत स्तर पर समस्या निष्कृतिं याने निदान की भावना के कारण विकासोन्मुख भासित हो रही है। फलस्वरूप इस समय ज्यौतिषशास्त्र के पर्याय के रूप में उसके होरास्कन्ध का प्रयोग सर्वत्र देखा जा सकता है। अधोलिखित शब्दों में उक्त भावना की अभिव्यक्ति को ठीक तरह से समझा जा सकता है—

शुभाशुभ फलादेशो ज्योति:शास्त्र प्रयोजनम्।
स च लग्नबलाधीन: कथित: पूर्वसूरिभि: ॥

भचक्रस्य समाभागा उक्ता द्वादश राशयः।
राशीनामुदयो लग्नं ते तु मेष-वृषादयः॥
अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवादस्तत्र केवलः।
प्रत्यक्षं ज्यौतिषं शास्त्रं चन्द्राऽर्कौ यत्र साक्षिणौ॥

ज्यौतिषशास्त्र के प्रवर्त्तकों के अठारह या उन्नीस नामों की चर्चा 'गणक तरङ्गिणी' नामक ग्रन्थ में महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी ने किया है। वे नाम हैं—१. सूर्य, २. पितामह, ३. व्यास, ४. वशिष्ठ, ५. अत्रि, ६. पराशर, ७. कश्यप, ८. नारद, ९. गर्ग, १०. मरीचि, ११. मनु, १२. अङ्गिरा, १३. लोमश, १४. पौलिश, १५. च्यवन, १६. यवन १७. भृगु, १८. शौनक और १९. पुलस्त्य। इन मनीषियों ने अपनी अतीन्द्रिय दृष्टि के बल पर इस शास्त्र के ज्ञान को उच्चतमशिखर पर सुस्थापित करने में सफल रहे हैं और वह ज्ञान आज एक आम आदमी की भी अनिवार्य आवश्यकता है। ज्यौतिषशास्त्र की एक परिभाषा इस प्रकार भी बतायी जाती है— 'रवस्थानां सूर्यादिग्रहनक्षत्रपिण्डानां बोधकमिति ज्यौतिषशास्त्रम्' अर्थात् आकाश में स्थित सूर्य, चन्द्र आदि ग्रह, नक्षत्र जैसे विभिन्न पिण्डों की गति-स्थिति-स्वरूप प्रभाव आदि का सम्यक् परिज्ञान जिससे होता है, वह ज्यौतिषशास्त्र कहलाता है।

अस्तु, अनन्त में विद्यमान समस्त सौरमण्डलों में सूर्य सिद्धान्त के अनुसार 'आदित्यो ह्यादिभूतत्वात् प्रसूत्या सूर्य उच्यते' सर्वप्रथम आदित्य सूर्य प्रकट हुआ। तदनन्तर उन सौरमण्डलों के अन्य सदस्य (पिण्ड) सूर्य से उत्पन्न हुए। अतः सभी पिण्डों का सूर्य से अनुशासित होना भी स्वतः सिद्ध हो जाता है अर्थात् सूर्य के केन्द्रीभूत होकर वे अपने-अपने मार्ग में भ्रमणरत हैं। जिनका परस्पर प्रकाशीय व गतीय सम्बन्ध होना भी स्वाभाविक है। वस्तुतः सभी आकाशीय पिण्ड परस्पर किसी अदृष्ट आकर्षण बल के अनुशासन में आबद्ध यथास्थान गतिशील हैं। स्वाक्ष भ्रमण करती हमारी पृथ्वी भी शून्य में सूर्य की परिक्रमा करती हुई अन्य सौरमण्डलीय पिण्डों से प्रभावित मानी गई है। जिससे भूमण्डलस्थ समस्त चराचर का भी सौरमण्डलीय पिण्डों से प्रभावित होना स्वाभाविक है। इस प्रकार भूमण्डलस्थ पदार्थों पर पड़ने वाले आकाशीय पिण्डों के प्रभावों का हम अपने दैनन्दिनी में विभिन्न प्रकार की घटनाओं से प्रत्यक्षीकरण भी कर सकते हैं। जैसे—

१. सूर्योदय होने पर कमल का खिलना और कुमुदिनी का मुख बन्द करना।

२. सूर्यमुखी पुष्प का सूर्याभिमुख वृद्धि करना।

३. रात्रि में चन्द्रप्रभाव में कुमुदिनी का मुख खोलना।

४. ग्रहण काल में वनस्पतियों का मुर्झाये-सा रहना।

५. ग्रहण के समय समुद्र के जलस्तर का घटना-बढ़ना।

६. पूर्णिमा के दिन पागलों का अधिक व्यग्र होना।

७. पूर्णिमा के दिन समुद्र में ज्वार-भाटे का आना आदि ऐसे अनेक अन्य घटनाओं का प्रत्यक्षीकरण भी प्रकृति का सूक्ष्म अध्ययन कर किया जा सकता है।

इस प्रकार ब्रह्माण्ड के समस्त पिण्डों पर पारस्परिक पड़ने वाले प्रभावों का सम्यक् ज्ञान होने के कारण ही भारतीय आयुर्वेद के अष्टाङ्ग चिकित्सा पद्धति में ग्रह-चिकित्सा पद्धति को भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ। आयुर्वेद की दृष्टि में स्त्रियों का रजोधर्म शुक्ल-कृष्ण पक्षों वाले मास में प्रवृत्त होता है। उस रजोधर्म में चन्द्र की शीतल व मङ्गल की अति ऊष्ण किरणें ही कारण है। ग्रह चिकित्सा पद्धति में माणिक्य आदि रत्नों और विभिन्न धातुओं के भस्म से अनेक रोगों का निदान बताया गया है। यह भस्म ग्रह दोषों से मनुष्य को मुक्त कर स्वस्थ व चुस्त बनाता है। रत्न के नग लगी धातु की अंगूठी धारण करने से भी मनुष्य सुप्रभावित होता है। जैसा आज हम सभी प्राय: जानते और करते भी हैं।

प्राच्य मनीषियों ने ज्योतिर्पिण्डों के प्रभाव को बहुत पहले ही जान लिया था। मनीषियों के अथक प्रयास वश मानव कल्याण की भावना से चराचर को प्रभावित करने वाले पिण्डों और उनके प्रभावों के परिणामात्मक शोधपूर्ण सुस्थिर विशिष्ट ज्ञान त्रिस्कन्धात्मक ज्यौतिषशास्त्र के रूप में प्रकट हुआ। तब से अब तक वह ज्ञान अविरल-निरन्तर मानव जाति की सेवा करता हुआ हमारे शब्दों में आर्ष व पौरूष अनेकश: ग्रन्थों की शोभा बना हुआ है। वस्तुत: ज्यौतिषज्ञान एक विज्ञान है, केवल आगमादेश नहीं। यह ज्ञान वेदों में जिस तरह अपने प्रयोजन के अधीन प्रस्तुत हुआ है, आज भी वह प्रयोजन, उसी ज्ञान से पूर्ण होता दीख रहा है। ज्यौतिशास्त्र आज भी

सूर्य को अपना केन्द्रीय विषय मानता है, उसके विना इस शास्त्र की कल्पना ही व्यर्थ होगी। पहले बताया जा चुका है कि सूर्य से अनुशासित भगोलस्थ पिण्डों के समूह को सौरमण्डल कहा जाता है, उस सौर मण्डल या सौर-परिवार का अध्ययन और प्रभावाङ्कन ज्यौतिषशास्त्र का प्रतिपाद्य है। यह शास्त्र अदृष्ट-व्याख्यान के प्रसङ्ग में पूर्वजन्मादि का विवेचन कर अपने ज्ञान का तादात्म्य इस लोक के साथ अन्य लोकों (सौर-मण्डलों) से भी जोड़ता है। अत: कहा जा सकता है कि समस्त ब्रह्माण्डस्थ पदार्थों का सूक्ष्म व सार्थक विवेचन ज्यौतिषशास्त्र का उद्देश्य है, आद्यन्तहीन सृष्टि के मर्म को समझना या उसका ज्ञान करना उसके समीप पहुँचना, ज्यौतिषशास्त्र का उद्देश्य है, जो निराकर-निर्विकार होकर भी सृष्टि का सञ्चालन कर रहा है।

एवं ज्यौतिषशास्त्र के मध्ययुगीन इतिहास का निष्पक्षभाव से समालोडन करने से यह तथ्य साफ तौर पर समझ आता है कि उसके प्राचीन आर्ष ग्रन्थ भारत में मुगलसाम्राज्य के समय दुर्भाग्यवशात् विपरीतधार्मिक भावना के कारण सुनियोजित ढंग से नष्ट-भ्रष्ट किये जाने से बहुत से लुप्तप्राय हो गए। भाग्यवश उस समय के कुटिल दुर्भावना से जो कुछ बचे ग्रन्थ, हम दुर्भाग्यशालियों के नयनपथ में आते हैं, वे यवन हमारे उन आर्ष ग्रन्थों को प्राप्त-अवसर के अनुसार उसके सार-संग्रह कर अपनी भाषा में अपनी ग्रन्थ की रचना कर लिये यह बात वाराहमिहिर के बृहज्जातक और नीलकण्ठाचार्य के ताजिक नीलकण्ठी के साथ अन्यान्य ग्रन्थों के सम्यक् अध्ययन से सिद्ध होता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि यवनाचार्यों ने जातक पद्धति के अन्तर्गत वर्ष (कुण्डली) पद्धति को परिष्कृत कर प्रस्तुत किया। प्राय: नीलकण्ठाचार्य ने स्वकृत ग्रन्थ में इस पद्धति का सम्यक् विवेचन किया है।

मुगलसाम्राज्य के अनन्तर अंग्रेजी शासन के समय जो कुछ हमारा उत्कृष्ट आर्ष ग्रन्थ समुपलब्ध थे, उन्हें हम-मन्द भागियों को अपमानित कर धीरे-धीरे यूरोप में पहुँचा दिये गये। यही कारण है कि भारत में अर्वाचीन आचार्यों द्वारा विरचित पौरूष-ग्रन्थ ही केवल इस समय हम लोगों के व्यवहार में सुलभ हो रहे हैं। सबके सब वे पौरुष ग्रन्थ मात्र पन्द्रहवीं शताब्दी पूर्व के हैं। इन अर्वाचीन पौरुष ग्रन्थकारों में आर्यभट्ट ३९७ शकाब्दकालीन प्रथम आचार्य हैं। इनका 'आर्यभटीयम्' ग्रन्थ सिद्धान्त ज्यौतिष से सम्बन्धित है। होरा स्कन्ध से सम्बन्धित सर्वप्रथम पौरुषग्रन्थ 'बृहज्जातक' है। यह ग्रन्थ

प्राचीनार्ष होरा ग्रन्थ का सार-संग्रह व सम्मत तथा इस समय उपलब्ध सभी पौरुष ग्रन्थ का मूल भी है। इस ग्रन्थ के कर्त्ता का नाम स्वनामधन्य ''वाराहमिहिर'' है। संहिता स्कन्ध के अन्तर्गत इस समय इनका ग्रन्थ ''बृहत्संहिता'' (वाराही संहिता) एकमात्र संहिता ग्रन्थ के रूप में समयक्तया उपलब्ध है।

इस प्रकार त्रिस्कन्धात्मक ज्यौतिषशास्त्र से सम्बन्धित आर्ष व पौरूष ग्रन्थ, जो सम्प्रति प्रचलित व प्रसिद्ध हैं, उनमें से प्रमुखतर ग्रन्थों का नामोल्लेख करना भी यहाँ उचित ही है। वे ग्रन्थ हैं—पञ्चसिद्धान्तिका, सूर्यसिद्धान्त, ब्राह्मसिद्धान्त, आर्यभट्टीयम्, सिद्धान्त शिरोमणि, सिद्धान्त तत्त्वविवेक, बृहत्संहिता (वाराही संहिता), नारद संहिता, बृहत्पाराशरहोराशास्त्र, बृहज्जातक, सारावली, सर्वाथचिन्तामणि, जातक पारिजात, होरारत्न आदि। उपरोक्त में से प्राय: बृहत्पाराशरहोराशास्त्र आदि ग्रन्थ ज्यौतिषशास्त्र के होरास्कन्ध का सम्पूर्ण ज्ञान प्रदान करने वाले ग्रन्थ हैं। ये महर्षियों या उनके अनुयायियों द्वारा प्रणीत ग्रन्थ होने के कारण ही मनुष्य (प्राणि) के जीवन में होने वाली सम्पूर्ण घटनाओं का सत्यवाचन करने में पूर्ण समर्थ है। इस बात में लेशमात्र भी शंका नहीं है।

उपरोक्त होरास्कन्ध को ही होराशास्त्र या जातकशास्त्र आदि कहा जाता है। प्राणी मात्र के उत्पत्ति समय (जन्म या प्रश्न कुण्डली) के आधार पर उसके जीवन के शुभाशुभ घटनाओं का वाचन करना जातकशास्त्र का प्रतिपाद्य है। लेकिन यहाँ उसके होराशास्त्र नाम की सार्थकता कैसे समझी जा सकती है। इसका उत्तर यह है कि—एक अहोरात्र के अन्तर्वर्ती काल में जो द्वादश राशियों का उदय द्वादश लग्न के रूप में होता है, उन्हीं लग्नों के आधार पर जातकशास्त्र प्राणि के शुभाशुभ फल का वाचन (कथन) करता है। उस लग्न का अपर नाम 'होरा' है। अत: जातकशास्त्र को होराशास्त्र भी कहा जाता है। दूसरी बात यह भी कहा जाता है कि—'अहोरात्र' शब्द के पूर्व वर्ण (अ) तथा परवर्ण (त्र) का लोप करने से स्वत: 'होरा' शब्द निष्पन्न हो जाता है। अत: अहोरात्र अन्तर्वर्ती काल में उदित होने वाली राशियों को होरा (लग्न) कहा जाने लगा। 'सारावली' ग्रन्थ के द्वितीय-अध्याय में इस प्रकार कहा गया है—

आद्यन्तवर्णलोपाद् होरांशास्त्रं भवत्यहोरात्रात्।
तत्प्रतिबद्धश्चायं ग्रहभगणश्चिन्त्यते यस्मात्॥

वाराहमिहिर ने अपनी कृति 'बृहज्जातक' के प्रथम अध्याय में उपरोक्त को इस प्रकार व्यक्त किया है उसके साथ यह भी कहा है कि पूर्व आदि जन्मार्जित कर्म के फलों को भी वह होराशास्त्र स्पष्टतया बताता है, जिन्हें दैवज्ञ जातक की कुण्डली द्वारा अभिव्यञ्जित या प्रकाशित करता है।

होरेत्यहोरात्र विकल्पमेके वाञ्छन्ति पूर्वापरवर्णलोपात्।
कर्मार्जितं पूर्वभवे सदादि यत् तस्य पंक्तिं समभिव्यनक्ति॥

यह होराशास्त्र मनुष्यों को धनादि अर्जन करने में सहायक, विपत्ति रूप समुद्र में नौका (जहाज) और यात्रा के समय मन्त्री सिद्ध होता है। जैसाकि सारावली में कहा गया है—

अर्थार्जने सहाय पुरुषाणामापदर्णवे पोत:।
यात्रासमये मन्त्री जातकमपहाय नास्त्यपर:॥

यह प्राणियों के पूर्वजन्मार्जित अच्छे-बुरे कर्म को प्रारब्धादि कर्मफल के रूप में प्रदान करता है। जिस प्रकार अन्धकार में पड़ी वस्तु का ज्ञान दीपक के प्रकाश से सम्भव होता है, उसी प्रकार प्राणी के जीवन में आनेवाले शुभ वा अशुभ काल या क्षण का ज्ञान होराशास्त्र से होता है। जैसा लघुजातक में कहा गया है—

यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाऽशुभं तस्य कर्मण: पङ्क्तिम्।
व्यञ्जयति शास्त्रमेतत् तमसि द्रव्याणि दीप इव॥

इसी प्रकार सारावली में भी कहा गया है कि प्राणिमात्र के ललाट (मस्तक) पर विधाता ने जो कुछ शुभाशुभ सुख-दु:ख लिख दिया है, उसे होराशास्त्र को जानने वाले दैवज्ञ अपने निर्मल दृष्टि से स्पष्टत: पढ़ लेते हैं। यथा—

विधात्रा लिखिता याऽसौ ललाटेऽक्षरमालिका।
दैवज्ञस्तां पठेद्व्यक्तं होरा निर्मलचक्षुषा॥

अन्यत्र शम्भुहोराप्रकाश में भी—

वर्णावली तु लिखिता भूवि मानवानां
धात्रा ललाटपटले किल दैववित्ताम्॥

उपरोक्त के अनुशीलन से और मनुस्मृति के 'वेदोऽखिलो कर्ममूलम्' वचनस्वरशात् यह तो स्पष्ट ही है कि भारतीय वैदिक दर्शन में 'कर्मवाद' अर्थात् 'पुनर्जनमवाद' का अपना एक विशिष्ट स्थान है। इसे इस प्रकार भी कहने में किसी प्रकार की बाधा नहीं आनी चाहिए कि 'कर्मवाद-पुनर्जन्मवाद' वैदिक दर्शन का मूलभूत आधार है। इसके आधार पर महर्षियों और मनीषियों ने इस सिद्धान्त के प्रतिपादन में कहा है कि आत्मा ही एकमात्र कर्त्ता है' अर्थात् मन-बुद्धि आदि द्वारा सम्पादित कर्म का कर्त्ता एक आत्मा ही है। अत: कहा जाता है—'आत्मा एव कर्त्ताऽस्ति।' आत्मा द्वारा जन्मजन्मान्तरों में निष्पादित अशुभ या शुभाशुभ कर्मों का प्रतिफल है, उसका पुनर्जन्म अर्थात् बार-बार जन्म लेने का कारण एकमात्र स्वकृत कर्म के फलों की प्राप्ति करना है। इसी बात को गोस्वामी तुलसीदास ने इस प्रकार सहज भाव में कह दिया है कि—

कर्मप्रधान विश्व करि राखा।
जो जस करिहि सो तस फल चाखा॥

वह कर्म फल इस जीवन में किस क्रम में, कब-कब, कहाँ-कहाँ, किस किस प्रकार तथा क्या-क्या प्राप्त हो सकेगा, उन समस्त विषयों को जानने का एकमात्र विश्वास योग्य साधन (कुण्डली) 'ज्योतिषशास्त्र' ही है। जैसाकि उपरोक्त आचार्यों के कथनों के अनुशीलन से संज्ञापित भी होता है। अत: कह सकते हैं कि जीवन के समस्त घटनाचक्र पूर्व-पूर्व जन्मों में निष्पादित कर्मों का ही फल या परिणाम है, जिसे जानने का एकमात्र उपकरण 'ज्यौतिषशास्त्र' है।

अस्तु ! वैदिक दर्शन के अनुसार जन्म-जन्मान्तरों में निष्पादित किये गए कर्मों की तीन श्रेणीयाँ हैं—१. सञ्चित २. प्रारब्ध और ३. क्रियमाण। इन तीन प्रकार के कर्मों के फलों को जानने के लिए ज्यौतिषशास्त्र के प्रवर्त्तकों पराशर, गर्ग, जैमिनी, नारद इत्यादि ने प्राय: तीन प्रमुख प्रविधियाँ आविष्कृत और सुविकसित की। यथा सञ्चित कर्म फल जानने के लिए योगपद्धति, प्रारब्ध कर्म फलज्ञान के लिए दशा पद्धति और क्रियमाण कर्म फल ज्ञानार्थ गोचरपद्धति। इस प्रकार यह 'ज्यौतिष (होरा) शास्त्र कुण्डली के ग्रहस्थितिवश बने ग्रहयोगों से सञ्चित कर्म फलों का, दशान्तर्दशादि से प्रारब्ध (कर्म) फलों का और गोचर (दैनन्दिनी ग्रह संचार) वश क्रियमाणकर्म फलों का विचार करता है।

यहाँ यह स्मरण योग्य है कि 'होरा' ज्यौतिषशास्त्र जातक के शुभाशुभ फल का निरुपण जन्म या प्रश्न समय के कुण्डली के अनुसार करता है। यह कुण्डली जातक के पूर्वादि जन्म के सञ्चित कर्मों का मूर्त्तिमान् रूप है अथवा इस प्रकार कहा जा सकता है कि यह पूर्वादि जन्मों के कर्मों को जानने की 'कुंजी' है। जिस प्रकार एक विशाल वट वृक्ष का समावेश उसके बीज में होता है, उसी प्रकार प्रत्येक जातक के पूर्वादि जन्मों के कृत्कर्म कुण्डली में सन्निहित या अंकित होता है।

इस प्रकार जो आस्तिक है, आत्मा को नित्य पदार्थ मानते हैं, वे इस बात को स्वीकारने से इन्कार नहीं कर सकते कि सञ्चित व प्रारब्ध कर्मों के फल को जातक अपनी वर्तमान जीवन नौका में बैठकर क्रियमाण कर्म रूपी पतवार के द्वारा संशोधन व परिवर्द्धन करते हुए उपभोग करता है, अतएव कुण्डली से जातक के भाग्य का ज्ञान किया जाता है। सारांश में इसे इस तरह भी कहा जा सकता है कि क्रियमाण कर्मों के बल से पूर्व सञ्चित अदृष्ट में न्यूनाधिक करने की सम्भावना भी प्राप्त रहती है।

यह पहले भी कहा जा चुका है कि ज्यौतिष का प्रधान सदुपयोग अपने अदृष्ट को ज्ञात कर उसमें सुधार करने का प्रयास करना है। यदि हम पहले से अपने भाग्य को जानकर सजग हो, तो प्रतिकूल परिणामात्मक भाग्य को पलटने का प्रयास भी कर सकते हैं। लेकिन यहाँ भी जब प्रबल या तीव्र अदृष्ट का उदय होता है, तो वह कत्तई टाला नहीं जा सकता, उसका फल अवश्य भोगना पड़ेगा। इस प्रकार उपरोक्त चिन्तन के अनुशीलन से निःस्सरित होता है कि 'ज्यौतिष द्वारा अमुक व्यक्ति का भाग्य अमुक प्रकार का बताया गया है, अतः अमुक व्यक्ति अमुक प्रकार का होगा ही', इस प्रकार के कथन को गलत मानना ही पड़ेगा। क्योंकि ऐसी स्थिति में यदि क्रीयमाण कर्म का पलड़ा भारी हो गया, तो अदृष्ट (सञ्चित कर्म) अपना फल प्रदान करने में असमर्थ सिद्ध होगा। यहाँ पर यदि क्रीयमाण कर्म यथार्थ रूप में सम्पन्न नहीं किया जाय, तो वह अदृष्ट अपना फल प्रदान करेगा ही, अर्थात् उपरोक्त कथन सत्य हो सकेगा।

अस्तु, उपरोक्त चिन्तन के अनुशीलन से यह ज्ञात हुआ कि ज्यौतिष द्वारा कुण्डली का जिस प्रकार फलादेश किया जाता है, वह कभी ठीक भी हो सकता है, कभी अन्यथा भी जा सकता है। अतः जातक को सदा पुरुषार्थ

पूर्ण जीवन जीना ही श्रेयस्कर है अर्थात् जीवन को उन्नतिशील बनाने एवं अपने क्रियमाण कर्म द्वारा अपने भविष्य को सुधारने के लिए ज्यौतिषशास्त्र का अनुसरण तो अवश्य करना चाहिए। कुण्डली फलादेश से अवगत होने के लिए प्रत्येक क्षण प्रयास करना चाहिए। साथ ही जातक को अपने क्रियमाण कर्म अर्थात् वर्तमान में साधन किये जा रहे कर्मों की समीक्षा भी करनी चाहिए, जिससे जातक अपने जीवन को पूर्णता प्रदान करने के अपने ही लक्ष्य से भटक नहीं सके। इन्हीं बातों को स्मरण कराते हुए भगवान् श्री कृष्ण ने गीता में अर्जुन का आत्मा की स्वतंत्रता या स्वावलम्बन करने का उपदेश इस प्रकार से किया है—

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥

अर्थात् मनुष्य को चाहिए कि वह अपना उद्धार आप ही करे, निराश होकर वह अपनी अवनति स्वयं न करे, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य अपने कर्मवश स्वयं अपना बन्धु या हितैषी या मित्र है और स्वकर्मवश ही स्वयं अपना शत्रु या नाश करने वाला है।

इस प्रकार उपरोक्त के अनुशीलन से यह मानना पड़ता है कि मनुष्य को कुंण्डली के फलाफल का विचार करते हुए अपने क्रियमाण कर्म से सम्बन्धित अपने नियोजित पुरुषार्थ का यथार्थपरक अधिकतर दोहन या शोषण करना चाहिए; जो ज्यौतिष के मार्गदर्शन से निश्चय ही सम्भव है।

अतएव प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह ज्यौतिषशास्त्रीय उस कुण्डली विषयक ज्ञान का सद्दोहन करते हुए पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति की दिशा में अग्रसर हों; क्योंकि यही सनातन वैदिक परम्परा है तथा प्रत्येक काल में सत्य का दर्शन कराने वाला, अंधविश्वासों से दूर रखने वाला तथा किसी भी प्रकार की कुण्ठा से मुक्त करने वाला एक कर्मसूचक यंत्र है, जो हमें सुधरने या सुधारने का अवसर प्रदान करता है।

॥ इस प्रकार 'स्वयं कुण्डली बनायें और देखें' ग्रन्थ का द्वितीय पुष्प रूप 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ॥२॥

३

पारिभाषिक शब्द-विवेचन

यहाँ पर कुछ ऐसे पारिभाषिक शब्दों और विषयों की चर्चा करते हैं, जिनसे भारतीय ज्यौतिष को समझने और जानने में सहजता का अनुभव तो होगा ही, साथ-ही जातकशास्त्र के विषय वस्तु रूप कुण्डली या जन्मपत्र को बनाने और उसका फलादेश करने के विवेक को हस्तगत करने में निश्चित सफलता भी थोड़े श्रम से मिल सकेगी। प्राय: कुण्डली गणित, जिसकी चर्चा आगे करेंगे, में परम्परया सर्वप्रथम इष्टकाल का साधन किया जाता है। अत: वहीं से अपेक्षानुसार शब्दों व विषयों की परिभाषा व तात्पर्य प्रस्तुत करते हैं।

इष्टकाल—सूर्योदय से जन्मकाल तक के घट्यादि काल को इष्टकाल कहा जाता है।

सूर्योदय—इसे हम अपने-अपने पंचांग से जान लेते हैं, यह प्रत्येक स्थान का भिन्न-भिन्न होता है। पञ्चाङ्ग में यह स्थानीय मानक या दोनों समय का दिया रहता है।

जन्म समय—यह वह समय है, जब जातक जन्म लेता है, जिसे घण्टा-मिनट में व्यवहार किया जाता है। इसी तरह प्रश्न आदि का समय भी कहा जा सकता है।

घटी—घटी, दण्ड, घड़ी, नाड़ी आदि तुल्यार्थ बोधक शब्द हैं। एक अहोरात्र में ६० घड़ी माना गया है। अत: १ घण्टा में २.३० घटी।पल होता है। ६० विपल का एक पल, ६० पल की १ घड़ी, ६० घड़ी का एक अहोरात्र होता है।

भयात—यह नक्षत्र का वह समय है, जो नक्षत्र के प्रारम्भ काल से जातक के जन्म काल तक व्यतीत होता है। इसकी चर्चा आगे होगी।

भभोग—यह नक्षत्र के सम्पूर्ण स्पष्ट भोग काल का नाम है।

ग्रहस्पष्ट—जन्म या प्रश्न के समय ग्रहों की आकाशीय वास्तविक स्थिति, जो राशि, अंश, कला, विकला आदि के रूप में साधन करना होता है।

मध्यम मान—स्पष्ट मानों का माध्य अर्थात् औसत मान को कहा जाता है। जैसे—तिथि का औसत भोगमान ६० घड़ी, वैसे ही नक्षत्र, योग आदि का भी उसके तुल्य ही औसत भोग मान होता है।

सावनदिन या वार—सूर्योदय से अन्यतम सूर्योदय तक के काल को

सावन दिन या वार कहा जाता है, जिसे ही लोग रवि, सोम आदि सात वारों के नाम से जानते हैं।

राशि—भचक्र (क्रान्तिवृत्त) को बारह भागों में बांटा गया है। प्रत्येक राशि में ३० अंश या सवा दो नक्षत्र या नक्षत्रों के नौ पाद होते हैं राशियों के नाम क्रमशः इस प्रकार हैं—मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन। आगे विशेष कुण्डली लेखन में देखना चाहिए।

भाव—जन्म-कुण्डली में १२ भाव होते हैं। उनके क्रम से नाम हैं—तनु, धन, सहज, सुहृत्, सुत, रिपु, जाया, मृत्यु, धर्म, कर्म, आय और व्यय। किस भाव से किन-किन वस्तुओं का विचार करना चाहिए, यह आगे बतलाया गया है।

लग्न—इसे जन्म लग्न भी कहते हैं। यह कुण्डली का पहला भाव होता है। जन्म के समय पूर्व क्षितिज में जो राशि प्रथम उदित होता है, उसे लग्न कहते हैं।

लग्न स्पष्ट—लग्न के जितने राशि, अंश, कला, विकला आदि पर जन्म हो, उसे लग्न स्पष्ट कहते हैं।

नक्षत्र—सत्ताईस नक्षत्र होते हैं। कुछ अन्य प्रयोजनवश २८वां नक्षत्र, जिसे 'अभिजित' कहते हैं, भी है, जो उत्तराषाढ़ा का अन्तिम चरण या १५ घड़ी और श्रवण के प्रथम-चरण के आदि से ४ घड़ी अर्थात् १९ घड़ी का होता है। नक्षत्रों के समूह जिस प्रकार से देखने में आए, उसी के आधार पर राशियों के नाम भी रखे गये हैं।

ग्रह—सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि ये सात ग्रह हैं। राहु और केतु ये दो छाया ग्रह हैं (ये अदृश्य और क्रान्तिवृत्त और ग्रहकक्षावृत के सम्पात रूप हैं)। भारतीय ज्योतिष में इन्हीं नव ग्रहों को माना गया है।

इसके अतिरिक्त आधुनिक ज्यौतिष में हर्शल (जिसको यूरेनस भी कहते हैं), नेपच्यून और प्लूटो इन तीन ग्रहों का प्रभाव भी विशेषरूप से अनुभव में आने से इन्हें भी 'ग्रह' जैसा माना जाने लगा है।

क्रान्तिवृत्त—इसे राशि-मण्डल भी कहते हैं। आकाश गोल में अपनी गति से चलने का जो सूर्य का मार्ग है, उसका नाम क्रान्तिवृत्त है।

मानक समय—सम्प्रति यूरोप महादेशीय ग्रीनह्वीच नाम के स्थान से गुजरती भूमध्य रेखा से पूर्व ८२/३० अंश-कला रेखांश के स्थानिक समय को सम्पूर्ण भारत के लिए मानक समय (स्टैण्डर्ड टाईम) माना गया है। इसी

तरह अन्य देशों के लिये भी उसके अपने मध्य स्थान से सम्बन्धित स्थानिक समय (लोकल टाईम) को उस-उस देश या स्थान का मानक समय माना गया है। प्रायः यह सभी देशों का भिन्न-भिन्न होता है। जैसे भारत का ८२/३० अंश-कला या ५-३० घण्टा-मिनट और पाकिस्तान का ७५/० अंश-कला या ५.० घण्टा-मिनट ग्रीन ह्वीच से मान लिया गया है।

स्थानिक समय—जब जिस स्थान के खमध्य में सूर्य, भ्रमण वश पहुँचता है, वह समय उस स्थान का दिनार्द्ध होता है। जिसे दिन-मध्य भी कहा जाता है। दिन मध्य से पूर्व सूर्योदय, पश्चात् सूर्यास्त होता है। दिन मध्य या दिनार्द्ध का दो गुणाा दिनमान और दिनमान का पाँचवाँ भाग स्थानिक सूर्यास्त घण्टा-मिनट होता है। सूर्यास्त काल को १२ में से निकाल देने पर सूर्योदय घण्टा-मिनट हो जाता है। इस प्रकार प्रत्येक पञ्चाङ्ग में इन्हें (दिनमान, सूर्योदय व सूर्यास्त को लिखने या प्रयोग करने की परम्परा है।) यह प्रत्येक स्थान का भिन्न-भिन्न होता है। इसलिए ऐसे समय को स्थानिक समय (Local Time) कहा जाता है।

रेखांश—ग्रीनह्वीच नामक स्थान को सम्प्रति भूमध्य माना गया है और भूमध्य रेखा पर जो स्थान जिस अंश-कला पर स्थित होता है, सम्पूर्ण विश्व के उस-उस स्थान का उसे रेखांश कहा जाता है। इस प्रकार ग्रीनह्वीच को भूमध्य के ० अंश पर स्थित मानकर उससे पूर्व और पश्चिम में स्थित स्थानों का रेखांश सर्वेक्षण द्वारा नियत कर मानचित्र में विधिवत् दर्शाया गया रहता है। आजकल विभिन्न ग्रन्थों में भी विभिन्न शहरों-उपनगरों के नाम के साथ उनके रेखांशों का उल्लेख कर दिया गया रहता है। यह रेखांश कुण्डली निर्माण के प्रसङ्ग में अति महत्तवपूर्ण कारक है। इससे ही दो देशों या दो प्रदेशों या दो नगरों या उपनगरों के पूर्व-पश्चिम अन्तर, किन्हीं दो स्थानों के रेखांशों का अन्तर कर शेष में ४ से गुणा करने से मिनटादि और १० से गुणा करने पर घट्यादि या पलादि देशान्तर रूप में ज्ञात किया जाता है। ग्रन्थान्त में अक्षांश-रेखांश सारिणी दी गई है।

अक्षांश—भूगोल ध्रुवों द्वारा दो भागों में विभक्त माना गया है—एक उत्तरी और दूसरी दक्षिणी। ध्रुव से ९० अंश की दूरी पर निरक्ष देश स्थित माना गया है। मानचित्र में प्रायः तिरछी रेखाओं द्वारा अक्षांश का संज्ञापन करते हुए उत्तर तथा दक्षिण स्थान का प्रदर्शन किया गया रहता है। इसका उपयोग दो स्थानों के दक्षिणोत्तर अन्तरांश को जानने के लिए किया जाता है। निरक्ष देश पर से गई हुई रेखावृत्त विषुवत्वृत्त कहलाती है, जिससे भूगोल उत्तर अक्षांश और दक्षिण अक्षांश सम्बन्धी देशों में बँटा हुआ माना जाता है।
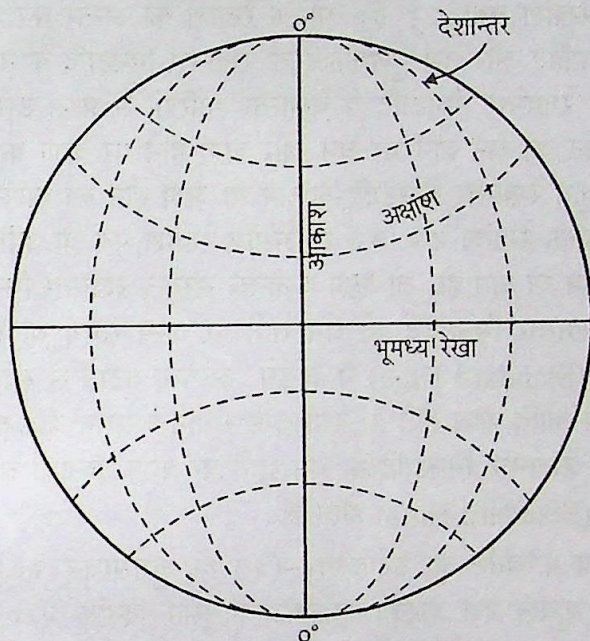
भूमध्य रेखा से उत्तर या दक्षिण की दूरी। एटलस में यह दूरी 'पड़ी' हुई रेखाओं द्वारा देखना चाहिए।

आकाश-मध्य से पूर्व या पश्चिम की तरफ की दूरी। सुविधा के लिए लन्दन के ग्रीनह्वीच स्थान को शून्य मानकर उससे पूर्व या पश्चिमकी दूरी जैसा ऊपर रेखांश शीर्षक से बताया गया है।

एटलस में यह खड़ी हुई रेखाओं द्वारा चित्र में दिखाया गया है।

जिस प्रकार पृथ्वी पर किसी भी स्थान का अक्षांश और रेखांश देखा जाता है उसी प्रकार से ग्रहों का भी देखना चाहिए।

समय का परिवर्तन—ग्रीनह्वीच से ८२/३० अंशादि पूर्व रेखांश के स्थान का स्थानीय समय सम्पूर्ण भारत का मानक समय (Standard Time) है। यह पहले ही बताया जा चुका है। आप यह भी जानते हैं कि प्रत्येक स्थान का स्थानिक समय पृथक्-पृथक् होता है। स्थानिक समय के अनुसार मध्याह्न (मध्यदिन) ठीक १२ बजे होता है, उस समय हमारी कलाई घड़ी, जो हमें मानक समय (Standard Time) बताती है, उसमें प्रायः १२ बजे से कुछ न्यूनाधिक समय हो रहा होता है। स्थानिक व मानक दोनों समय के पारस्परिक इसी अन्तर को बताने या निकालने के लिए रेखांश का प्रयोग विद्वानों ने इस प्रकार किया

है—अभीष्ट रेखांश तथा ८२-३० मानक रेखांश का अन्तर कर उसमें ४ से गुणा करना चाहिए और उस गुणनफल को रेखान्तर मिनटादि के नाम से जाना जाता है। उक्त रेखान्तर मिनटादि में वेलान्तर सारिणी से प्राप्त उस दिनाङ्क के वेलान्तर मिनट का धन होने पर धन और ऋण होने पर ऋण करते हैं। अब वेलान्तर संस्कृत रेखान्तर मिनटादि के धन या ऋण होने का निर्णय इस तरह करते हैं—मानक रेखांश ८२/३० से अभीष्ट रेखांश पूर्व या अधिक हो, तो धन तथा पश्चिम या कम हो, तो ऋण वेलान्तर संस्कृत रेखान्तर मिनटादि होता है। उस ± रेखान्तर मिनटादि को धन रहने पर जन्म समय या अन्य किसी मानक समय (Standard Time) में जोड़ने, अन्यथा घटाने से स्थानिक समय में जन्म समय आदि प्राप्त होते हैं। इसी तरह स्थानिक समय यदि कोई हो, तो उसमें उस ± रेखान्तर मिनटादि के धन रहने पर ऋण अन्यथा धन करने से मानक समय (Standard Time) होता है।

समय परिवर्तन का उदाहरण—(१) श्री शुभसम्वत् २०६१, शाक १९२६ चैत्र शुक्ल पक्ष द्वादशी शुक्रवार तदनुसार दिनांक २/०४/२००४ ई० की रात्रि ३.४५ बजे दत्तात्रेय नामक जातक का जन्म मधुबनी (बिहार) में हुआ है।

जन्म स्थान का रेखांश ८६/७, मानक रेखांश ८२/३०, वेलान्तर-४ मिनट।

चूँकि

जन्म स्थान का रेखांश = ८६/७
भारतीय मानक रेखांश = ८२/३०

दोनों रेखांशों का अन्तर ३/३७
× ४

१२/१४८
रेखान्तर मिनटादि = १४/२८
वेलान्तर मिनट − ४/०

अतः वेलान्तर संस्कृत रेखान्तर मिनटादि = १०/२८

यहाँ जन्म स्थान या अभीष्ट रेखांश ८६/७ मानक रेखांश ८२/३० से पूर्व भी है और अधिक भी, इसलिए रेखान्तर मिनटादि धनात्मक हुआ। वेलान्तर −४ मिनटादि घटाने पर भी संस्कृत रेखान्तर मिनट धन ही हुआ।

(S.T.) अब जन्म समय = ३/४५ बजे रात्रि
वेलान्तर संस्कृत रेखान्तर मिनटा = + ०/१०

३/५५ बजे रात्रि मधुबनी का स्थानिक जन्म समय ज्ञात हुआ। अब यदि स्थानिक समय को मानक समय बनाना हो, तो उपरोक्त +१० मिनट रेखान्तर को स्थानिक समय में से घटाने पर मानक समय होगा।

वेलान्तर—मध्यम और स्पष्ट समय के अन्तर का नाम है, वेलान्तर। इससे प्रायः मध्यम सूर्योदय को स्पष्ट सूर्योदय बनाया जाता है। कलाई घड़ी से प्राप्त जन्म समय स्टैण्डर्ड टाईम होता है, उसे भी स्थानिक समय में परिणत करने में वेलान्तर संस्कार की आवश्यकता होती है। विद्वानों ने अंग्रेजी तारीख के अनुसार प्रत्येक दिन के वेलान्तर को 'वेलान्तर-सारिणी' में सन्निविष्ट कर दिया है। जहाँ उसे धन (+) व ऋण (–) चिह्न के द्वारा निर्देशित कर दिया गया है। जिसका अपेक्षा के अनुसार संस्कार किया जाता है। वेलान्तर का जन्म समय (S.T.) में धन या ऋण सीधे और सूर्योदय के लिए विपरीत संस्कार करने का नियम है। ग्रन्थान्त में वेलान्तर सारिणी दी गयी है, उसे वहीं देखना चाहिए।

देशान्तर साधन—पञ्चाङ्ग स्थान से भिन्न स्थान का जन्म समय के होने पर देशान्तर संस्कार करने की आवश्यकता होती है। देशान्तर साधन में यह देखना चाहिए कि पञ्चाङ्ग स्थान व जन्म स्थान दोनों ग्रीनह्वीच से पूर्व में स्थित हैं या पश्चिम में। यदि ऐसा हो, तो दोनों स्थानों के रेखांशों का अन्तर करना चाहिए और उस अन्तर में ४से गुणा करने पर घण्टादि और १० से गुणा करने पर घट्यादि देशान्तर ज्ञात होता है। उस समय, जब पञ्चाङ्ग स्थान से जन्मस्थान पूर्व दिशा में स्थित हो, देशान्तर घण्टादि या घट्यादि धनात्मक, पश्चिम में स्थित होने पर ऋणात्मक होता है।

उदाहरण (२)—मधुबनी रेखांश = ८६/७ और पञ्चाङ्ग स्थान काशी का रेखांश ८३/०, दोनों का अन्तर ३/७, इसमें ४ से गुणा किया, तो १२/२८ देशान्तर मिनटादि तथा १० से गुणा करने पर ३०/७० या ३१/१० देशान्तर पलादि सिद्ध हो जाता है।

यह देशान्तर मिनटादि या पलादि, काशी (पञ्चाङ्गस्थान) से मधुबनी जन्म स्थान का रेखांश पूर्व दिशा में स्थित होने से अर्थात् अधिक होने से धनात्मक हुआ।

देशान्तर साधन के समय यदि जन्म स्थान और पञ्चाङ्ग स्थान में से एक ग्रीनह्वीच से पूर्व में और दूसरा पश्चिम में स्थित हो, तो ऐसे में दोनों स्थानों के रेखांशों के योग में ४ से गुणाकर घण्टादि और १० से गुणाकर घट्यादि देशान्तर प्राप्त होता है। देशान्तर का धन या ऋण पूर्व नियमानुसार जानना चाहिए।

चरान्तर साधन—जन्म स्थान और पञ्चाङ्ग स्थान के चरों का अन्तर चरान्तर होता है। अतः दोनों स्थानों का चर साधन करना पड़ता है, जिसे साधन करना आगे बताया जाएगा।

जन्म स्थान का चर अधिक होने पर चरान्तर धन अन्यथा ऋण जानना चाहिए अथवा धन या ऋण चरान्तर का निर्णय इस प्रकार करना चाहिए—जन्म स्थान के अक्षांश से पञ्चाङ्ग स्थान का अक्षांश कम हो तथा उत्तराक्रान्ति हो, तो धन चरान्तर, उसी तरह जन्मस्थान के अक्षांश से पञ्चाङ्ग स्थान का अक्षांश अधिक और दक्षिणाक्रान्ति हो, तो भी धन चरान्तर जानना चाहिए। अन्य स्थितियों में चरान्तर ऋण होगा।

स्पष्ट देशान्त साधन—इसका प्रचलित अपर नाम 'फलघटि' भी है। इसका प्रयोग पञ्चाङ्ग (तिथि, नक्षत्र, योग आदि) और इष्टकाल को स्वदेशीय बनाने के लिए किया जाता है। इसके साधन के लिए देशान्तर में चरान्तर का संस्कार करना पड़ता है। देशान्तर में चरान्तर का संस्कार अधोलिखित नियमानुसार करना चाहिए—

१. यदि दोनों (देशान्तर व चरान्तर) धनात्मक हों, तो दोनों का परस्पर योग करने से धनात्मक स्पष्ट देशान्तर प्राप्त होता है।

२. यदि दोनों ऋणात्मक हों, तो भी दोनों का परस्पर योग करने से ऋणात्मक स्पष्ट देशान्तर होता है।

३. यदि उन दोनों में से एक धनात्मक और दूसरा ऋणात्मक हो, तो उन दोनों का परस्पर अन्तर करना चाहिए और उस समय स्पष्ट देशान्तर का धनात्मक या ऋणात्मक होना उन दोनों में जो अधिक या बड़ा होगा, उसके अनुसार सम्भव होगा अर्थात् धन मान अधिक या बड़ा हो तो धन स्पष्ट देशान्तर अथवा ऋणमान अधिक या बड़ा हो, तो ऋण स्पष्ट देशान्तर होगा।

स्पष्ट देशान्तर साधन का उदाहरण (३)—

मधुबनी से काशी का देशान्तर पलादि = ३१/१० धनात्मक है।
मधुबनी से काशी का चरान्तर पलादि = +१/२० भी धनात्मक है।
अतः मधुबनी से काशी का स्पष्ट देशान्तर पलादि = ३२/३० सिद्ध हुआ।

(उपरोक्त नियम -१ के अनुसार धन (+) किया गया है।)

प्रसङ्गात् चरान्तर साधन—पञ्चाङ्ग स्थान तथा जन्म स्थान का पृथक्-पृथक् दिनमान लाकर उन दोनों दिनमानों का दिनार्द्ध बनायें। तदनन्तर पञ्चाङ्गस्थानीय और जन्म स्थानीय दिनार्द्ध का अन्तर करें, वह अन्तर चरान्तर पलादि होता है। उस चरान्तर पलादि के धन या ऋण का निर्णय ऐसे करना चाहिए—यदि जन्म स्थानीय दिनार्द्ध अधिक या बड़ा हो, तो चरान्तर पल धन एवं यदि पञ्चाङ्ग स्थानीय दिनार्द्ध अधिक या बड़ा हो, तो चरान्तर पल ऋण होता है। इस प्रकार प्राप्त चरान्तर धन या ऋण का उपयोग भी स्पष्ट देशान्तर साधन के लिए किया जाता है।

चरान्तर साधन का उदाहरण (४)—

काशी का दिनमान =३०/५१/१३; मधुबनी का दिनमान = ३०/५३/५२
काशी का दिनार्द्ध =१५/२५/३६; मधुबनी का दिनार्द्ध = १५/२६/५६
दोनों के दिनार्द्धों का अन्तर = ०/१/२० पलादि।

यह दिनार्द्धान्तर ही चरान्तर है। मधुबनी का दिनार्द्ध बड़ा या अधिक होने से यह चरान्तर पलादि धन हुआ।

पलभा साधन करना—सायन विषुव (मेष-तुला) संक्रान्ति के दिन मध्याह्न कालिक १२ अंगुल के शंकु की छाया का मान जितने अंगुलादि हों, उसे ही 'पलभा' कहा गया है।

वह पलभा अक्षांशानुसार संगृहीत कर अधोलिखित तालिका में दे दिया गया है। उस तालिका के द्वारा आप जहाँ कहीं की पलभा बनाना चाहें, इस प्रकार बना सकते हैं—उस स्थान का अक्षांश जानकर अग्रलिखित चक्र से उस अंश की तथा अग्रिमांश की पलभाओं का अन्तर करें और शेष से अक्षांश की कला को गुणा कर ६० का भाग दें, जो लब्धि होगी, उसे गतांश सबन्धी पलभा में जोड़ने पर अभीष्ट स्थान की पलभा ज्ञात होगी।

पलभा जानने का उदाहरण (५)—ऊपर बतायी विधि के अनुसार मद्रास की पलभा जाननी है, तो वहाँ का अक्षांश देखने से १३/४ मिला। उपरोक्त पलभा चक्र से १३ व १४ अंश की पलभा लेने से क्रम से २/४६/४१

और २/५९/२८ की प्राप्ति हुई। इन दोनों का अन्तर हुआ ०/१२/४७। इसमें अक्षांश की कला ४ से गुणा किया और ६० से भाग दिया, तो लब्धि ०/०/५१ प्राप्त हुई। इसको प्रथम पलभा अक्षांश १३ अंश सम्बन्धी २/४६/४१ में यथास्थान ज़ोड़ने पर २/४७/३२ मद्रास की पलभा हुई।

शकारम्भकालिक अयनांश-बोधक तालिका–१

शक वर्ष	अयनांश			शक वर्ष	अयनांश			शक वर्ष	अयनांश		
	अं	क	वि		अं	क	वि		अं	क	वि
१८००	२२	८	३३	१९००	२३	३२	१७	१९२७	२३	५४	५३
१८१०	२२	१६	५५	१९०१	२३	३३	७	१९२८	२३	५५	४३
१८२०	२२	२५	१७	१९०२	२३	३३	५७	१९२९	२३	५६	३३
१८३०	२२	३३	४१	१९०३	२३	३४	४७	१९३०	२३	५७	२३
१८४०	२२	४२	०२	१९०४	२३	३५	३८	१९३१	२३	५८	१४
१८५०	२२	५०	२५	१९०५	२३	३६	२८	१९३२	२३	५९	४
१८६०	२२	५८	४७	१९०६	२३	३७	१८	१९३३	२३	५९	५४
१८६५	२३	२	५८	१९०७	२३	३८	८	१९३४	२४	०	४४
१८७०	२३	७	९	१९०८	२३	३८	५९	१९३५	२४	१	३४
१८७५	२३	११	२०	१९०९	२३	३९	४९	१९३६	२४	२	२५
१८८०	२३	१५	३१	१९१०	२३	४०	३९	१९३७	२४	३	१५
१८८५	२३	१९	४३	१९११	२३	४१	२९	१९३८	२४	४	५
१८८६	२३	२०	३३	१९१२	२३	४२	१९	१९३९	२४	४	५५
१८८७	२३	२१	२३	१९१३	२३	४३	१०	१९४०	२४	५	४५
१८८८	२३	२२	१३	१९१४	२३	४४	०	१९४१	२४	६	३६
१८८९	२३	२३	४	१९१५	२३	४५	४०	१९४२	२४	७	२६
१८९०	२३	२३	५४	१९१६	२३	४६	३०	१९४३	२४	८	१६
१८९१	२३	२४	४४	१९१७	२३	४७	२०	१९४४	२४	९	६
१८९२	२३	२५	२५	१९१८	२३	४८	११	१९४५	२४	९	५६
१८९३	२३	२६	२५	१९२०	२३	४९	०१	१९४६	२४	१०	४७
१८९४	२३	२७	१५	१९२१	२३	४९	५१	१९४७	२४	११	३७
१८९५	२३	२८	६	१९२२	२३	५०	४२	१९४८	२४	१२	२७
१८९६	२३	२८	५६	१९२३	२३	५१	३२	१९४९	२४	१३	१७
१८९७	२३	२९	४६	१९२४	२३	५२	२२	१९५०	२४	१४	७
१८९८	२३	३०	३७	१९२५	२३	५३	१२	१९५१	२४	१४	५७
१८९९	२३	३१	२७	१९२६	२३	५४	३	१९५२	२४	१५	४७

पलभा से चरखण्ड साधन करना—पलभा को तीन जगहों में रखकर उन्हें क्रमशः १०, ८ और १०/३ से गुणा करना चाहिए। गुणनफल मेषादि (मे.वृ.मि.) तीन राशियों के क्रम से चरखण्ड प्राप्त होंगे। वे ही उत्क्रम से कर्कादि (क., सिं, कं) तीन राशियों के चरखण्ड होते हैं। इस प्रकार मेषादि छः राशियों के चरखण्ड ही उत्क्रम से मीन, कुम्भ, मकर, धनु, वृश्चिक और तुला राशि के भी होंगे।

पलभा से चरखण्ड लाने का उदाहरण (६)—मद्रास का चरखण्ड साधन करना है, तो वहाँ की पलभा २/४७/३२ में से अर्धाधिकमेकं ग्रहणम से पलभा २/४८ ग्रहण किया। फिर इस प्रकार क्रिया करते हैं—

=	२/४८ ×१०	२/४८ ×८	२/४८×१० ÷३
	२०/४८०,	१९/३८४,	२०/४८० ÷३
=	२८/१०,	२२/२४,	९/२० अर्धाल्पे त्याज्यम् से

अतः क्रमशः मेष का २८, वृष का २२ और मिथुन का ९ चरखण्ड हुआ।

इस प्रकार मद्रास में मेषादि राशियों के चरखण्ड होंगे—

मेष-मीन = २८ वृष-कुम्भ = २२, मिथुन-मकर = ९

कर्क-धनु = ९, सिंह-वृश्चिक = २२, कन्या-तुला = २८

इसी तरह काशी व मिथिलाञ्चल (मधुबनी) का चरखण्ड निकालते हैं—

काशी का चरखण्ड पलभा	मिथिला का चरखण्ड पलभा	राशि नाम
५/४५×१० = ५०/४५० = ५७/३०	६/०/१० = ६०	मेष, मीन, कन्या, तुला
५/४५×८ = ४०/३६० = ४६/०	६/०×८ = ४८	वृष, कुम्भ, सिंह, वृश्चिक
५/४५×१०÷३= ५०/४५÷३= १९०	६/०×१०/३ = २०	मिथुन, मकर, कर्क, धनु

इस प्रकार काशी का चरखण्ड ५७, ४६, १९ और मिथिला का ६०, ४८, २० हुए।

चरखण्ड का उपयोग—प्रायः चर साधन और स्वदेशीय उदयमान लाने में चरखण्ड का उपयोग किया जाता है। चूँकि मेषादि राशियों के निरक्षदेशीय उदयमान स्थिर रहता है। उनमें अपने-अपने देश के चरखण्ड मेषादि तीन राशियों में क्रम से ऋण और कर्कादि में उत्क्रम से धन करने से

स्वदेशीय मेषादि द्वादश राशियों के उदयमान ज्ञात होते हैं। इसका उपयोग लग्न साधन में होता है।

चर साधन करना—जन्मस्थानीय तात्कालिक सूर्य में अयनांश (इसका साधन आगे किया जायगा) जोड़ने से सायन सूर्य होता है। सायन सूर्य यदि तीन राशि से अल्प हो, तो उसकी भुज संज्ञा होती है। यदि सायन सूर्य तीन राशि से अधिक हो, तो ६ राशि में घटाने पर,वह यदि ६ राशि से अधिक हो, तो ६ राशि घटाने पर और ९ राशि से अधिक हो, तो १२ राशि में घटाने पर भुज राश्यादि होते हैं। उस सायन सूर्य के भुज की राशि संख्या तुल्य गत चरखण्ड होते हैं। भुज की केवल अंशादि को ऐष्य चरखण्ड से गुणा और ३० का भाग देकर लब्धि पलादि में गत चरखण्ड के पल जोड़ने पर जन्मस्थानीय चरपलादि होते हैं। इसी तरह पञ्चाङ्गस्थानीय तात्कालिक सूर्य से चरपलादि का भी आनयन कर लेते हैं। फिर दोनों चरपलों का अन्तर करना चाहिए। वही चरान्तरपल होता है। यहाँ जन्मस्थानीय चरपल अधिक होने पर धन चरान्तरपल होता है, अन्यथा ऋण जानना चाहिए।

चर साधन का उदाहरण(७)—दिनांक २ अप्रैल २००४ को मधुबनी नामक स्थान के इष्ट कालिक स्पष्ट सूर्य ११/१९/३२/३६ राश्यादि में नवीन अयनांश २३°/५५'/३७'' को जोड़ने पर सायन सूर्य राश्यादि ०/१३/२८/१३ हुआ। यह तीन राशि से कम है; अतः यही भुज हुआ। भुज के राशि स्थान में शून्य है, अतएव उपरोक्त चरखण्ड में कोई भी गत खण्ड नहीं है। प्रथम खण्ड ६० एष्य खण्ड हैं। सायन सूर्य भुजांशादि १३/२८/१३ को प्रथम चरखण्ड ६० से गुणा किया; तो ७८०/१६८०/७८० हुआ, इसे ६० से तष्टित करने से ८०८/१३/० आया, इसमें ३० से भाग देने पर लब्धि २६/५६/१३ चर पलादि मिली। यहाँ गत चरखण्ड का अभाव है, अतः मधुबनी का चरपलादि २६/५६/१३ सिद्ध हुई।

काशी का सायन सूर्य ०/१३/२८/४३ का भुज राश्यादि ०/१३/२८/४३ हुआ। यहाँ भी राशि स्थान में शून्य है, अतः ऐष्य चरखण्ड, प्रथमखण्ड ५७ ही हुआ।

$$\text{अतः } \frac{\text{सायन सूर्य भुजांश १३/२८/४३} \times \text{५७ प्रथमचर खण्ड}}{\text{३०}} = \frac{\text{७६८/९७/०}}{\text{३०}}$$

= २५/३६/१७ पलादि

यहाँ भी चरखण्ड का अभाव है।

अतः काशी का चरपलादि = २५/३६/१७ हुआ।

अब मधुबनी चरपलादि = २६/५६/१३
और काशी चरपलादि = – २५/३६/१७
चरान्तर पलादि = १/१९/५६

अतएव मधुबनी से काशी का चरान्तर पलादि = १/१९/५६ हुआ, यहाँ जन्मस्थान मधुबनी का चरपल अधिक है। अत: चरान्तरपलादि धन होना चाहिए।

दिनमान तथा सूर्योदयादि साधन—पूर्वोक्त रीति से अभीष्टस्थान का चरपल साधन करना चाहिए, फिर निरक्षदेशीय मध्यरात्रिकमान ४५ घटि में (सायन सूर्य यदि मेषादि ६ राशियों में हो, तो जोड़ने पर, यदि तुलादि ६ राशियों में हो, तो घटाने पर) चरपलादि का संस्कार करने से अभीष्टदेशीय मिश्रमान हो जाता है। इस मिश्रमान को द्विगुणित कर, उसमें से ६० घटाने से दिनमान आ जाता है। दिनमान को ६० में घटाने पर रात्रिमान होता है। प्राप्त दिनमान में ५ का भाग देकर लब्धि सूर्यास्तकाल घण्टादि प्राप्त होता है। उसे १२ में घटाने पर सूर्योदयकाल घण्टादि आ जाता है। यह अभीष्ट स्थान का होता है।

चूँकि निरक्षदेशीय मध्यरात्रिकमान ४५ घटि ± चरघट्यादि = इष्टदेशीय मिश्रमान घट्यादि।

यहाँ सायन सूर्य मेषादि ६ राशि में होने पर धन, तुलादि ६ राशि में होने पर ऋण चर घट्यादि होता है।

तदनन्तर (इष्टदेशीय मिश्रमान × २) – ६० = दिनमान घट्यादि
अहोरात्र (६० घटि)—दिनमान = रात्रिमान घट्यादि
पुन: दिनमान ÷ ५ = लब्धि सूर्यास्त घण्टादि
तथा १२—सूर्यास्त घण्टादि = शेष सूर्योदय घण्टादि।
दिनमान आदि साधन का उदाहरण(८)—
चूँकि निरक्षदेशीय मध्यरात्रि का मान = ४५ घटि
और मधुबनी चरघट्यादि = +०/२६/५६/१३
मधुबनी का मिश्रमान घट्यादि = ४५/२६/५६/१३
×२
९०/५३/५२/२६
–६०/०/०/०
मधुबनी का दिनमान घट्यादि = ३०/५४ अर्धाधिमेकं ग्राह्यम् के अनुसार

अब मधुबनी सूर्यास्त = ३०/५४ ÷ ५ = ६/११ घण्टादि।

और सूर्योदय = १२/०−६/११ = ५/४९ घण्टादि।

तथा ६०−३०/५४ = रात्रिमान २९/६

(सायनसूर्य मेषादि ६ राशियों में है। अतः उपरोक्त में चरघट्यादि यहाँ + किया गया है।)

विशेष—पञ्चाङ्गस्थानीय इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य की गति में जन्मस्थानीय देशान्तर घटि पर से अनुपात द्वारा जैसे—६० घटि में दैनिक ग्रहगति, तो देशान्तर घटि में क्या देशान्तर कला? इस प्रकार प्राप्त देशान्तरकला ज्ञान कर उसको पञ्चाङ्गस्थान से जन्मस्थान पूर्व दिशा में हो, तो ऋण पश्चिम में धन अर्थात् देशान्तर घटि यदि धन हो, तो देशान्तर कला ऋण और यदि ऋण हो, तो देशान्तर कला धन मानकर पञ्चाङ्ग स्थानीय इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य में संस्कार कर उस सूर्य को जन्मस्थानीय इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य मानकर जितना सायन सूर्य होता है, उस पर से साधित चरघट्यादि या पलादि से उक्त रीति द्वारा प्राप्त सूर्योदय घण्टादि से साधित जन्मस्थानीय इष्टकाल घट्यादि सूक्ष्म होगा।

सारिणी द्वारा चर साधन—प्रायः पञ्चाङ्गों में चर मिनटादि या पलादि साधन करने के लिए सारिणी उपलब्ध होती है, उससे भी चर साधन किया जा सकता है, लेकिन उससे साधन करने में भी सावधानी और प्रयत्न की आवश्यकता होती है। इसके लिए अक्षांश और क्रान्ति को लिख लें। चूँकि क्रान्ति या अक्षांश प्रायः पूर्णाङ्क में नहीं प्राप्त होते हैं। अतः इस बात को ध्यान में रखते हुए अग्रलिखित की तरह प्रक्रिया अपनानीं पड़ती है—

(१) अक्षांश के अंश और क्रान्ति के अंश तथा पुनः क्रान्ति के अग्रिम अंश का सारिणी से फल लेकर अन्तर करें। अन्तर मिनटादि इस प्रकार होता है।

(२) उस प्राप्त अन्तर मिनटादि को क्रान्ति के कला से गुणा करें। गुणनफल मिनटादि प्राप्त होगा।

(३) अब अक्षांश के अंश और क्रान्ति के अंश तथा पुनः अक्षांश के अग्रिम अंश और क्रान्ति के उसी अंश का सारिणी से फल लेकर अन्तर करें। इस तरह भी अन्तर मिनटादि प्राप्त होगा।

(४) उस प्राप्त अन्तर मिनटादि को अक्षांश के कला से गुणा करें। गुणनफल यहाँ भी मिनटादि होगा।

(५) अब अक्षांश के अंश और क्रान्ति के अंश से प्राप्त फल मिनटादि, क्रान्ति कला द्वारा प्राप्त फल मिनटादि और अक्षांश कला से प्राप्त फल मिनटादि को यथास्थान एकत्रित लिखकर योग करें। योगफल मिनटादि होगा। यही चर मिनटादि हुआ।

अपेक्षानुसार इसे ढ़ाई गुणित कर चरपलादि भी बना सकते हैं।

इस प्रकार प्राप्त चरमिनटादि पूर्व साधित चरमिनटादि के तुल्य ही होगा। उपरोक्त प्रकार से ४५ घटि में संस्कार देकर उसे द्विगुणित कर उसमें से ६० दण्ड निकालने से दिनमानादि ज्ञान किये जा सकते हैं।

सूर्योदयादि साधन के अन्य प्रकार—निरक्षदेश में सदा ही तुल्यमान के दिन व रात्रि होतें हैं। जहाँ सूर्योदय ६ बजे प्रातः और सूर्यास्त भी ६ बजे सायंकाल में प्रतिदिन सम्भव होता है। लेकिन तद्भिन्न स्थानों में सूर्योदय व सूर्यास्त भिन्न-भिन्न काल का होता है, अर्थात् एक स्थान का चर दूसरे स्थान के चर से भिन्न होता है। यह सब केवल सूर्य या यों कहें पृथ्वी के विलक्षण गति के कारण ही सम्भव होता है। अतः स्थानविशेष के उदयास्त काल साधन के लिए पूर्व वर्णित चरकाल का ज्ञान आवश्यक है। चर के सहयोग से सूर्योदयास्त साधन इस प्रकार भी किया जा सकता है—

जन्मस्थान का सूर्योदय = निरक्षदेशोदय घं० ६ ± चर मिनटादि।

जन्मस्थान का सूर्यास्त = निरक्षोदय घं० ६ ± चर मिनटादि।

चूँकि चरकालज्ञान अक्षांश और क्रान्ति के वश किया जाता है, अतः उदय और अस्त के साधन में चर संस्कार के हेतु धन या ऋण का निर्णय इस तरह करते हैं—

(१) उत्तरा क्रान्ति के समय में उत्तर अक्षांश के उदयास्त के लिए निरक्षदेशीयोदय काल घं० ६ में उदय के लिए ऋण चर मिनट और अस्त के लिए धन चरमिनट करना चाहिए।

(२) दक्षिणा क्रान्ति के समय उत्तर अक्षांश के उदयास्त के लिए निरक्षदेशोदय काल घं० ६ में उदय के लिये धन चर मिनट और अस्त के लिए ऋण चर मिनट करना चाहिए।

सूर्योदयादि साधन का उदाहरण (९)—

निरक्षदेशीय सूर्योदय	=	६/०
मधुबनी चर मिनटादि	=	−०/१०/४६
मधुबनी सूर्योदय घण्टादि	=	५/४९/१४

इसी प्रकार—

निरक्षदेशीय सूर्यास्त = ६/०

मधुबनी चर मिनटादि = +०/१०/४६

मधुबनी सूर्यास्त घण्टादि = ६/१०/४६

(उपरोक्त में २६/५६/१३ चरपलादि को २/३० से भाग देकर १०/४६ चरमिनटादि बनाया गया है। उस मिनटादि को उत्तर अक्षांश और उत्तराक्रान्ति होने के कारण ६ घण्टे में ऋण (–) उदय के लिए और अस्त के लिये धन (+) किया गया है)

अथवा—धन या ऋण संस्कार के लिए इसे ध्यान में रखें—

सायन सूर्य जब मेषादि राशि षट्क में सञ्चार कर रहे होते हैं, तो वे उत्तर गोल में होते हैं और उस समय उत्तरा क्रान्ति होती है। जब सायन सूर्य तुलादि राशि षट्क में सञ्चार कर रहे होते हैं, तो वे दक्षिण गोल में होते हैं। अत: उत्तर अक्षांश में घण्टे ६ में ऋण चर मिनट उदय के लिए और धन चर मिनट अस्त के लिए (सायन सूर्य के मेषादि ६ राशि में रहने पर) लेकिन तुलादि ६ राशि में रहने पर विपरीत संस्कार अर्थात् उदय के लिए धन चरमिनट और अस्त के लिए ऋण चरमिनट करना चाहिए। अर्थात् दक्षिणा क्रान्ति में विपरीतसंस्कार चरमिनट का होता है।

यह सूर्योदय काल स्थानीय होता है, वेलान्तर संस्कार से स्पष्ट सूर्योदय और उसमें रेखान्तर संस्कार कर देने पर मानक समय (S. T.) हो जाता है। इसे पहले ही लिखा जा चुका है। उसके लिए स्थानीय से मानक समय में परिवर्तन के नियम का पुनरावलोकन करना चाहिए।

स्थानीय सूर्योदय को १२ घण्टे में घटाने से सूर्यास्त होता है और सूर्यास्त में ५ का गुणा करने से दिनमान घण्टादि आ जाता है उसका ढाई गुना दिनमान घट्यादि हो जाता है। इस दिनमान को ६० घटी में घटाने से रात्रिमान हो जाता है।

उपरोक्त प्रकार की विपरीत क्रिया करने से दक्षिण अक्षांश का सूर्योदयादि आ जाते हैं। अर्थात् घण्टे ६ में जहाँ धन चरमिनट करना कहा गया है, वहाँ ऋण और जहाँ ऋण चरमिनट कहा गया है, वहाँ धन चरमिनट करना चाहिए। एवं उत्तर अक्षांश के लिए घण्टे ६ में चर मिनट उत्तराक्रान्ति काल में धन और दक्षिणा क्रान्ति में ऋण करने से दिनार्द्ध आ जाता है। दक्षिण अक्षांश के लिए इसके विपरीत संस्कार करने से दिनार्द्ध

होता है। दिनार्द्ध में २ से गुणा करने से दिनमान होता है। एक अन्य विधि इस प्रकार है—

लग्न सारिणी से दिनमान साधन—जिस नगर में दिनमान साधन करना है उस नगर के लग्नसारिणी में स्पष्ट सूर्य की राशि और अंश से फल लेकर पुन: सूर्य में ६ राशि जोड़कर उसी प्रकार फल लेना चाहिए। दूसरे फल में पहले का अन्तर करने से दिनमान आ जाता है। उस दिनमान घट्यादि में ५ का भाग करने से सूर्यास्त और १२ में उसका अन्तर करने से सूर्योदय आ जाता है। इसी प्रकार से जन्मस्थान का सूर्योदय स्थानीय समयानुसार साधन कर मानक जन्मसमय को स्थानीय (लोकल) समय बनाकर शुद्ध इष्टकाल साधन कर लेना चाहिए।

इस इष्टकाल से लग्नादि द्वादश भाव का आनयन करना चाहिए।

जन्मस्थानीय इष्टकाल में स्पष्ट देशान्तर का विपरीत संस्कार देने से पञ्चाङ्ग स्थानीय इष्टकाल हो जाता है, जिससे ग्रहादि, भयात, भभोग आदि साधन करना चाहिए।

अयनांश—पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करने के साथ-साथ अपनी धुरी पर भी लट्टू की तरह घूममी रहती है फलस्वरूप इसकी धुरी के केन्द्र बिन्दु एक जगह स्थिर नहीं रहते हैं, अपितु एक प्रकार का वृत्त बनाते हैं। यह प्रतिवर्ष करीब ५० विकला से अधिक के हिसाब से पूर्व स्थान से खिसकते हैं और ३६० अंश की पूर्ण परिक्रमा २५,८०० वर्षों में पूरी करते हैं। भारतवर्ष में विभिन्न पञ्चाङ्ग अपना-अपना पृथक्-पृथक् अयनांश मानते हैं।

दिए गए चित्र में धुरी 'क च' खड़ी रेखा 'क घ' पर एक कोण बनाती हुई घूम रही है, क्योंकि यह घूमने की चाल तेज है इसलिए वह 'ग म' की तरफ नहीं गिरती अपितु यदि कोई बिन्दु 'ख' इस धुरी पर माना जाए तो वह बिन्दु 'घ' के चारों तरफ एक वृत्त का आकार (जैसा कि चित्र में दिखाया गया है) बनाएगा। इसी प्रकार का वृत्त पृथ्वी की धुरी के बिन्दु बनाते हैं।

अयनांश साधन करना—अयनांश के विषय में अभी तक मतैक्यता का अभाव ही परिलक्षित होता है। विभिन्न मतों में भिन्न-भिन्न शून्यायनांश वर्ष माने जाने के कारण वर्षारम्भ का अयनांश भिन्न-भिन्न होता है। वर्षारम्भ का अयनांश साधन यहाँ दिखाया जा रहा है जिसका चरादि साधन के साथ स्वदेशीय लग्न और दशम लग्न आदि निकालने में आवश्यकता रहती है। प्रचलित प्रमुख मत का उल्लेख इसलिये कर देते हैं कि जिस मत की अपेक्षा हो या सरलता से साधन करने योग्य हो, उसका व्यवहार किया जा सके—

१. आचार्य मकरन्द शक ४२१ को शून्यायनांश वर्ष मानते हैं, और इसके अनुसार अयनांश की वार्षिक गति ५४' विकला आती है। वस्तुतः मकरन्द सूर्य सिद्धान्त मत के अनुयायी हैं। इसका साधन इस प्रकार करना चाहिए—

अभीष्ट शक में से ४२१ शक को घटाकर और उस शेष का दशमांश उसी शेष में से घटा देना चाहिए तथा प्राप्त अवशेष में ६० से भाग देने पर अभीष्ट शक के आरम्भ का अयनांश आ जाता है। उसे अभीष्ट जन्मादिकालिक बनाने के लिए तत्कालिक स्पष्ट सूर्य को अंशात्मक बनाकर उसमें तीन से गुणाकर २० से भाग देने पर लब्धि विकला आती है। उस विकला को पूर्व प्राप्त अभीष्ट शकारम्भायनांश के विकला में जोड़ने से इष्टकालिक स्पष्ट अयनांश होता है। अतः इसका सूत्रात्मक स्वरूप इस प्रकार होगा—

$$\frac{(\text{अ०श} - ४२१) - \frac{(\text{अ०श} - ४२१)}{१०}}{६०} = \text{अभीष्ट शकारम्भायनांशादि।}$$

अभीष्ट अयनांशादि + (सूर्यांशादि × ३ ÷ २०) विकला = अभीष्ट शक में इष्टकालिक स्पष्टायनांश।

मकरन्दीय अयनांश साधन का उदाहरण (१०)—शक १९२६ - ४२१ = १५०५-१५०५ का दशांश १५०/६ = १३५४/५४ में ६० का भाग देने से लब्धि २२° ३४' ५४'' यह शकारम्भ में अयनांश हुआ। तत्पश्चात् इष्टकालिक सूर्य ११/१९/३३/६ का ३४९'३३' ६ अंशादि उसमें ३ से गुणा कर १०४८, इसमें २० से भाग देने पर प्राप्त ५२ विकला को वर्षारम्भकालिक अयनांश के विकला स्थान में जोड़ने से इष्टकालिक स्पष्ट अयनांश २२°/३५'/४६'' निकल आता है। इस अयनांश को इष्टकालिक सूर्य में जोड़कर सायन सूर्य प्राप्त होता है तथा उससे चर, लग्न, दशमलग्न आदि का साधन करना चाहिए। यहाँ यह ध्यान देना आवश्यक है कि चरादि, जहाँ का साधन करना अभीष्ट हो, सूर्य वहीं के इष्टकालिक होना चाहिए।

२. गणेशदैवज्ञ ने शक ४४४ को शून्यायनांश वर्ष माना है तथा इनके अनुसार अयनांश की वार्षिक गति ६०'' विकला होती है। इसका साधन प्रकार अधोलिखित की तरह बताया गया है—

अभीष्ट शक में ४४४ घटाकर शेष में ६० का भाग देने से लब्धि अभीष्ट शक के आरम्भ का अयनांश हो जाता है।

ग्रहलाघवीय अयनांश जानने का उदाहरण(११)—शक १९२६-४४४ = शेष १४८२ ÷ ६० = लब्धि २४° ४२' शकारम्भ का अयनांश हुआ, इसे पूर्ववत् इष्टकालिक सूर्यांश ३४९° × ३ ÷ २० से लब्ध ५२'' विकला जोड़ने से अभीष्ट कालिकायनांश २४°, ४२' ५२'' हुआ। अथवा वार्षिक गति ६० विकला के अनुसार मासिक गति ५ विकला और दैनिक गति १० प्रतिविकला आती हैं। मेष संक्रान्ति से मास गणना कर उक्त गति के अनुसार प्राप्त विकलादि को शकारम्भ के अयनांश में जोड़ने से भी इष्टकालिक स्पष्ट अयनांश प्राप्त हो जाता है।

विशेष—वस्तुत: अयनांश का वास्तविक ज्ञान करना, दीर्घकाल तक वेध करते रहने की अपेक्षा रखता है। ग्रहलाघवीय अयनांश इसलिए लोकप्रिय हुई कि तात्कालिक दृष्ट्या वह वेधसिद्ध अयनांश के प्राय: तुल्य पाया गया। तथा गणना की दृष्टि से भी सुखकर अर्थात् सरल व सहज प्रतीत हुआ। यही ग्रहलाघवकार को भी अभीष्ट था। वैसे ग्रहलाघवीय अयनांश की तुलना में मकरन्दीय अयनांश अधिक सूक्ष्मायनांश है। जो वेधोपलब्ध अयनांश के समतुल्य अभी भी है। यह कहने में सङ्कोच की गुंजाइश नहीं है।

नवीन वेधानुसार अयनांश की गति लगभग ५०.२'' विकला अर्थात् ५० विकला १२ प्रतिविकला मानी गई है। जिसके सम्बन्ध में सूर्य सिद्धान्त में आचार्य श्री कपिलेश्वर शास्त्री ने अपनी उपपत्ति में लिखा है कि वस्तुत: अयनचलन भी सर्वदा एकरूप में नहीं रहता, इस बात को पाश्चात्य विद्वान् भी स्वीकार करते हैं। पाश्चात्यों के मत में ५० विकला से ५८ विकला (५०°-५८°) अयनचलन की गति समय भेद से होता है। जहाँ सौरमत से ५४ विकला मध्यमा गति अयन चलन की मान ली गई है।

इस प्रकार इतना तो स्पष्ट ही है कि नवीन मत वाले भी अभी अयनचलन के सम्बन्ध में ठीक-ठीक कुछ विशेष कहने की स्थिति में नहीं हैं। वैसे सम्प्रति नवीन मत के अनुयायी कुछ अधिक लोग ही प्रतीत होते हैं। कुछ पञ्चाङ्गकार ने भी नवीन मत को अङ्गीकृत कर लिया है। अत: उसका भी यहाँ हम यथासाध्य विवेचन करते हैं—

३. श्री वी. बी. केतकर शक १८०० के आरम्भ में अयनांश २२°८' ३३'' मानकर अभीष्ट अयनांश का साधन करने की युक्ति प्रस्तुत करते हैं। केतकर जी का अयनांश शक १८०० के अनुसार गणना से शून्यायनांश वर्ष शक २१३ (२९१ ई०) प्रतीत होता है। वे अयनांश की वार्षिकगति ५०.२ विकला अथवा ५०'' १२''' विकलादि तथा मासिक गति ४''-११''' विकलादि माने हैं। उनके अनुसार अभीष्ट शकारम्भ का अयनांश लाने की विधि इस प्रकार है—

अभीष्ट शक में से १८०० शकवर्ष को निकाल कर शेष में वार्षिक गति ५०.२ विकलादि से गुणा और ६० का भाग देने पर लब्धि कला और शेष विकला होगी। इन्हें १८०० शक के पठितायनांश २२° ८ ३३'' अंशादि में जोड़ने से अभीष्ट शकारम्भकालीन अयनांश होगा। यहाँ यह भी किया जा सकता है कि अभीष्ट शक से पूर्व जिस किसी शक का अयनांश ज्ञात हो, उसे भी अभीष्ट शक से घटाकर उपरोक्त क्रिया करने से अभीष्ट शकारम्भकालीन अयनांश आ जायेगा। अग्रलिखिततालिका में शकारम्भकालीन कुछ साधित अयनांश भी दिया गया है, जिससे आपको सरलता रहेगी। इष्टकालीन स्पष्ट अयनांश निकालने के लिए मासिकगति और दैनिक गति क्रमश: ४/११ विकलादि और ८/२२ प्रतिविकलादि से लाना चाहिए। इसके लिए वार्षिक, मासिक व दैनिक अयनांश गति तालिका का उपयोग करना चाहिए।

अथवा अभीष्ट शक में से पठित शक १८०० घटावें। शेष को दो जगह रखकर एक जगह ७० से और दूसरी जगह ५० से भाग दें। दोनों जगह से क्रमश: प्राप्त लब्धि अंशादि और कलादि का अन्तर करें तथा शेष आदि को पठितायनांश २२.८.३३ अंशादि में जोड़ें। इस प्रकार अभीष्ट शक के आरम्भ में अयनांश ज्ञात होगा।

केतकरीय अयनांश साधन का उदाहरण(१२)—अभीष्ट शक १९२६-१८०० = १२६ ÷ ७० और १२६ ÷ ५०, इनसे प्राप्त फल क्रमश: अंशादि १°/४८'/०'' और कलादि २'/३१'' का अन्तर १°/४५'/२९'' को १८०० शकारम्भ के अयनांश २२°/८'/३३'' में जोड़ने पर २३°/५४'/२'' अभीष्ट शकारम्भ का अयनांश हुआ। इष्टशकारम्भ से स्पष्टायनांश जानने के लिए अग्रलिखित तालिका का उपयोग करें।

पठित १८०० शक के आरम्भ के अयनांश के साथ अग्रिम १९५२ शक के आरम्भ तक का अयनांश गणित ज्ञान की सुविधा के लिए उक्त तालिका में साधन कर रखे गये हैं, जिससे अभीष्ट शकारम्भ के अयनांश उसके सामने कोष्ठक से प्राप्त होते हैं। जैसे शक १८८२ के आरम्भ का पूर्व साधित अयनांश २३.१७.१२ उस शक के सामने में प्राप्त होता है। वक्ष्यमाण तालिका में एक से दस वर्ष तक के अयन कलादि गति साधन कर दिया जा रहा है, जिससे अभीष्ट दो शकारम्भ के अयनांश के वार्षिक अन्तराल का ज्ञान होता है, जिसके द्वारा अग्रिमादि वर्षों की अयनांश भी जाना जा सकेगा।

वर्षान्तराल अयनांश बोधार्थ एकत: दशवर्षीय अयनगतिकलादि
तालिका—२

वर्ष	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	२०	३०
कला	०	१	२	३	४	५	५	६	७	८	१६	२५
विकला	५०	४०	३०	२०	११	१	५१	४१	३१	२२	४४	६
प्रतिविकला	१२	२४	३६	४८	०	१२	२४	३६	४८	०	०	०

शकारम्भत: मेषादि सूर्य संक्रान्तिवशमासिकायनांश ज्ञानार्थ तालिका-३

मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.	मास.ग.वि.
०	४	८	१२	१६	२०	२५	२९	३३	३७	४१	४६	४
०	११	२२	३३	४४	५५	६	१७	२८	३९	५०	१	११

नवीन मतानुसार जन्मकालीन स्पष्ट अयनांश—इसके साधन करने के लिए तालिका १ से अभीष्ट शकारम्भ का अयनांश लेकर लिखें तथा उसमें जन्मकालिक स्पष्ट सूर्य की वर्तमान राशि के आरम्भ का अयनांश तालिका—३ से विकलादि फल लेकर यथास्थान जोड़ें। तत्पश्चात् उस राशि के सूर्य भुक्तांशादि का विकलात्मक फल इस प्रकार अनुपात से प्राप्त करें कि चूँकि ३० अंश से अयनगति ४/११ विकलादि तो सूर्य भुक्तांशादि से क्या?

$$\frac{\text{अत: सूर्य भुक्तांशादि} \times \text{अयनमास गति ४/११ विकलादि}}{\text{३० अंश}} = \text{लब्धि विकलादि}$$

इसको भी पूर्वोक्त अयनांश के विकला में जोड़ने से जन्म कालिक स्पष्ट अयनांश हो जाता है।

नवीन अयनांश आनयन का उदाहरण(१३)—अभीष्ट १९२६ शकारम्भ का अयनांश (तालिका-१) = २३/५४/३/० अंशादि। इष्टकालीन सूर्य की वर्तमान राशि के आरम्भ का अयनांश (तालिका-२) = ०/०/४६/१" हुआ। इष्टकालीन सूर्य की वर्तमान राशि के भुक्तांशादि से प्राप्त आनुपातिक फल = ०/०/४८/०" हुआ। अत: कुल योग २३/५५/३७/१ इष्टकालिक अयनांश हुआ। इष्टकालिक अयनांश ज्ञान के लिए उपरोक्त में इस प्रकार अनुपात से फल लिया गया है कि—

$$\frac{\text{सूर्य भुक्तांशादि ३४९} \times \text{अयनमास गति २५१प्रति विकला}}{\text{३०}} = \text{४८ विकला।}$$

अब तक स्थानीयसमय व मानकसमय परिवर्तन करना, स्पष्ट देशान्तरसाधन, दिनमान और सूर्योदय साधन आदि को पृथक्-पृथक् बताया गया है। यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि स्थानीय सूर्योदय, तो दिनमान से प्राप्त होंगे या घं० ६ ± चर मिनट करने से प्राप्त होगा उसमें वेलान्तर संस्कार (धन या ऋण) पूर्व में यथास्थान बताये अनुसार करने से स्थानीय स्पष्ट सूर्योदय और उसमें रेखान्तर मिनट का धन या ऋण संस्कार पूर्वोक्तानुसार जैसा स्थानीय से मानक समय बनाते समय करते हैं, करने से मानक समय में सूर्योदय प्राप्त हो जाता हैं। मानक समय में उसके विपरीत संस्कार से स्थानीय सूर्योदय भी प्राप्त होगा। पुन: एक बात याद रखना चाहिए कि जन्म समय आपको प्राय: स्टैण्डर्ड टाइम (मानक समय) में ही प्राप्त होता है। अत: वह मानक समय किसी स्थान विशेष का नहीं वरन् सार्वत्रिक होता है, अत: इष्टकाल साधन में आपको पञ्चाङ्गीय सूर्योदय मानक समय का ही

प्रयोग करना चाहिए। अन्यथा जन्म समय स्थानिक बनाकर जन्मस्थानीय स्थानिक सूर्योदय से इष्टकाल साधन करें, यही उचित पक्ष है।

अन्तर्दशा—प्रत्येक महादशा में नौ ग्रहों की दशाएं होती हैं, क्योंकि एक महादशा का काल बहुत वर्षों का होता है इसी कारण उसके पुनः नौ विभाग किए जाते हैं, जिसे अन्तर्दशा कहा जाता है। वैसे दशायें पाँच स्तरीय होती हैं—दशा, अन्तर्दशा, प्रत्यन्तर्दशा, प्राणदशा और सूक्ष्मदशा। विशेष ज्ञान के लिए आगे देखना चाहिए।

अस्त—सूर्य की किरणों के अधिक पास आ जाने पर ग्रह अस्त समझा जाता है अर्थात् वह दिखाई नहीं देता। चन्द्रमा सूर्य से १२° पर, मंगल १७° पर, बृहस्पति ११° पर, शनि १५° पर, बुध यदि वक्री हो १२° पर अन्यथा १४° पर, शुक्र यदि वक्री हो तो ८° पर अन्यथा १०° पर अस्त होता है। बुध सूर्य से २८° से अधिक दूर नहीं रहता है, उसे अस्त होने का दोष नहीं होता है। इसी प्रकार शुक्र सूर्य से ४८° से दूर नहीं होता है। उसे अस्त होने का क्षीण दोष होता है।

अंश—प्रत्येक राशि में तीस अंश होते हैं। एक पूर्ण वृत्त का ३६०वां भाग होता है। इसे अंग्रेजी में डिग्री कहते हैं।

प्रत्येक अंश में ६० कलाएं होती हैं। प्रत्येक कला में ६० विकलायें होती हैं।

आपोक्लिम—जन्म लग्न से तीसरे, छठे, नवें और बारहवें भावों को आपोक्लिम कहते हैं।

उच्च—प्रत्येक ग्रह किसी एक राशि में उच्च होता है। सूर्य मेष में, चन्द्रमा वृषभ में, मंगल मकर में, बुध कन्या में, बृहस्पति कर्क में, शुक्र मीन में, शनि तुला में। राहु और केतु के उच्च स्थान के बारे में मतभेद हैं।

नीच—प्रत्येक ग्रह किसी एक राशि में नीच का (अर्थात् कमजोर) होता है।

सूर्य तुला में, चन्द्रमा वृश्चिक में, मंगल कर्क में, बुध मीन में, बृहस्पति मकर में, शुक्र कन्या में, शनि मेष में।

उपचय—लग्न से तीसरे, छठे, दसवें और ग्यारहवें भावों को उपचय कहते हैं।

उभयोदय राशि—मीन राशि।

केन्द्र—-जन्म लग्न, चौथे, सातवें और दसवें भाव को केन्द्र कहते हैं।

त्रिकोण—-पांचवां और नवां भाव। जन्म लग्न को त्रिकोण और केन्द्र दोनों ही कहा गया है।

गोचर—किसी भी ग्रह का जन्म-कुण्डली के किसी भी भावों या राशियों (जन्म के समय जो ग्रहों की स्थिति हो उसके समानान्तर तात्कालिक आकाशीय ग्रहस्थिति) पर से जाने को गोचर कहते हैं। शनि और बृहस्पति के गोचर विशेष प्रभाव दिखाते है।

गति—-ग्रहों की चाल को 'गति' कहते हैं।

दृष्टि—ग्रह जहां बैठते हैं वहां से विभिन्न भावों को देखते हैं। सब ग्रह अपने से सातवीं राशि (या भाव को) को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। इसके अतिरिक्त बृहस्पति अपने से पांचवें, नवें भावों को, मंगल अपने से चौथे, आठवें भावों को तथा शनि अपने से तीसरे, दसवें भावों को पूर्ण रूप से देखता है।

राहु और केतु की दृष्टि नहीं होती है। शनि की दृष्टि अशुभ फल देती है और बृहस्पति की दृष्टि शुभ फल देने वाली होती है।

नवांश—प्रत्येक राशि के (३० अंश के) नौ भाग किये जाते हैं जो कि ३°—२० के होते हैं। इन विभागों को नवांश कहते हैं।

पणफर—लग्न से दूसरे, पांचवें आठवें और ग्यारहवें भावों को पणफर कहते हैं।

पाप ग्रह—तीसरे, छठे, और ग्यारहवें भावों के स्वामी पाप ग्रह कहलाते हैं। आठवें भाव का स्वामी भी पाप ग्रह होता है। सूर्य, मंगल, शनि, राहु और केतु नैसर्गिक पाप ग्रह है। क्षीण चन्द्र और पाप-ग्रह के साथ यदि बुध हो तो पाप-ग्रह समझा जाता है। मतान्तर से सूर्य पापग्रह नहीं है।

पीड़ित—जो ग्रह पाप ग्रह के साथ हो, उसके द्वारा देखा जाता हो, पाप ग्रह की राशि में हो, पाप ग्रहों के मध्य में बैठा हो अथवा नीच, शत्रुक्षेत्री हो, वह पीड़ित (कमजोर) होता है। वही क्रूर ग्रह भी कहलाता है।

शुभ—जो ग्रह अच्छे भावों का स्वामी हो (जैसे पहले, पांचवें, नवें

भावों का) वह शुभ होता है। शुक्ल पक्ष की अष्टमी से कृष्ण पक्ष की अष्टमी का चन्द्रमा, बुध, शुक्र और बृहस्पति शुभ ग्रह है।

क्रूर—सूर्य, मंगल, शनि, राहु और केतु क्रूर ग्रह हैं।

पुरुष राशियां—मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भ।

स्त्री राशियां—वृषभ, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन।

पुरुष ग्रह—भारतीय ज्योतिष में सब ग्रहों को प्रायः पुरुष माना गया है। लेकिन ग्रह अपने कारकफल के अनुसार भारतीय ज्योतिष में सूर्य, मंगल, बृहस्पति पुरुष ग्रह हैं, चन्द्रमा, शुक्र स्त्री ग्रह हैं, बुध स्त्री नुपंसक और शनि पुरुष नपुंसक ग्रह माने गए हैं।

पृष्ठोदय राशियां—मेष, वृषभ, कर्क, धनु और मकर।

शीर्षोदय राशियां—मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुम्भ।

उभयोदय राशि—मीन।

बलवान्—ग्रह या राशि शुभ ग्रह से सम्बन्धित हो तो बलवान् कहलाती है। जो ग्रह अपनी राशि, उच्च, मित्र की राशि में तथा जहां वह दिग्बली होता है, उसमें बैठा हो तो बलवान समझा जाता है। जिस राशि में शुभ ग्रह हो अथवा जो शुभ ग्रहों के मध्य में हो, अपने स्वामी से युत या दृष्ट हो अथवा राशि का स्वामी बलवान् हो वह राशि बली होती है। ऐसा ही भाव के लिए भी माना जाता है।

महादशा—चन्द्र स्पष्ट द्वारा महादशा का निर्णय किया जाता है। विंशोतरी दशा पद्धति में नौ ग्रहों की महादशाएं होती हैं। विशेष विचार के लिए आगे देखना चाहिए।

पञ्चाङ्ग—इसमें पांच चीज़ों का विचार किया जाता है—तिथि, वार, नक्षत्र, करण और योग—इसलिए इसे पञ्चाङ्ग कहते हैं। इसके अलावा इसमें सूर्य, चन्द्र इत्यादि ग्रहों का स्पष्ट मुहूर्त्त आदि-आदि अन्य चीजें भी दिया जाता है।

युति—जब दो या अधिक ग्रह एक ही भाव में बैठें हों।

वक्री ग्रह—जो ग्रह मीन से कुम्भ की तरफ जाएं वे वक्री होते हैं।

सूर्य और चन्द्रमा हमेशा सीधी गति से चलते हैं। राहु और केतु हमेशा उलटे (अर्थात् मीन से कुम्भ से मकर आदि) चलते हैं। बाकी पांचों ग्रह कभी सीधे (मार्गी) और कभी वक्री (उलटे) चलते हैं। पृथ्वी और सब ग्रह सूर्य की परिक्रमा करते हैं। जब पृथ्वी की चाल अपेक्षाकृत अधिक होती है तब उससे कम गति से चलता हुआ ग्रह पीछे हटता हुआ प्रतीत होता है। यह इसी प्रकार से लगता है जैसे कि दो गाड़ियां एक ही दिशा में जाएं परन्तु एक की चाल तेज होने से उसमें बैठे हुए व्यक्तियों को दूसरी गाड़ी पीछे की तरफ चलती हुई प्रतीत होती है।

वर्गोत्तम—जब कोई ग्रह जिस राशि में हो, उसी नवांश में भी हो तो वह 'वर्गोत्तम' कहलाता है।

विषुव काल—यदि कोई घड़ी २१ मार्च को चालू की जाए और इतने धीरे चले कि पूरे एक वर्ष में २४ घण्टे ही चल पाए। वह एक दिन में जितने मिनट और सैकिण्ड चलेगी, वह उस दिन का विषुव काल होगा।

स्वग्रही—प्रत्येक ग्रह की अपनी राशि/राशियां होती है। जब वह जन्म के समय अपनी राशि में हो तो 'स्वग्रही' कहलाता है।

स्थानीय मध्यम काल—ग्रीनह्वीच (०°) से पूर्व या पश्चिम का समय। यह चार मिनट प्रति अंश के हिसाब से जोड़ा या घटाया जाता है। जैसे कोई स्थान ग्रीनविच से १५° पर पूर्व में हो तो वहां का स्थानीय मध्यम काल ग्रीनविच से एक घण्टा आगे होगा। इसके लिए स्थानिक समय नाम पूर्व विवेचित शीर्षक को देखना चाहिए।

स्वामी—सातों ग्रह अलग-अलग राशियों के स्वामी होते हैं, जैसे—मेष-वृश्चिक का स्वामी मंगल, वृष-तुला का स्वामी शुक्र, मिथुन-कन्या का स्वामी बुध, कर्क राशि का स्वामी चन्द्र, सिंह का सूर्य, धनु-मीन का गुरु और मकर-कुम्भ का स्वामी शनि को माना गया है।

स्थिर राशियां—वृषभ, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ।

चर राशियां—मेष, कर्क, तुला और मकर।

द्विस्वभाव राशियां—मिथुन, कन्या, धनु और मीन।

सम्बन्ध—ज्योतिष में 'सम्बन्ध' बहुत महत्त्वपूर्ण समझा जाता है।

जब किन्हीं दो ग्रहों में परस्पर युति या पूर्ण दृष्टि हो या दोनों की राशियों में परिवर्तन हो अथवा एक ग्रह दूसरे ग्रह की राशि में बैठे और उसे देखता हो—ये चार प्रकार के सम्बन्ध होते हैं।

त्रिक—जन्म लग्न से छठे, आठवें और बारहवें भाव को 'त्रिक' कहते हैं।

योगकारक—जब कोई एक ग्रह किसी केन्द्र और त्रिकोण दोनों का स्वामी हो तो वह 'योगकारक' कहलाता है।

मारकेश—दूसरे और सातवें भाव के स्वामी को 'मारकेश' कहते हैं।

राजयोग—किसी केन्द्र और किसी त्रिकोण के स्वामी का परस्पर सम्बन्ध 'राजयोग' कहलाता है।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का तृतीय पुष्प रूप 'पारिभाषिक शब्द विवेचन' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।३।।

४
कुण्डली गणित

प्रारम्भ में कहा गया है कि जन्म के समय ग्रहों की स्थिति जातक के कार्यों पर प्रभाव डालती है। जन्म के समय से ही शिशु के मस्तिष्क और शरीर पर ग्रहों का तेज अपना प्रभाव उसी प्रकार से डालता है जैसे फोटो लेने पर कैमरे की रील पर दृश्य अंकित होता है। जन्म के समय जो ग्रहों की स्थिति होती है वह जब भी गोचर में जाते हुए ग्रहों के द्वारा अथवा दशा-अन्तर्दशा के कारण प्रभावित होते हैं तो जातक में मानसिक, आध्यात्मिक और शारीरिक प्रक्रिया शुरू हो जाती है। उसी के अनुरूप उसका चाल-चलन, व्यवहार इत्यादि निर्भर करता है। जन्म का समय कौन-सा लेना चाहिए, इसके बारे में भी मतभेद हैं---(क) जिस समय नाल काटी जाए, (ख) जिस समय शिशु का सिर बाहर आए अथवा (ग) जिस समय शिशु पहली बार रोए। इस मतभेद को दूर करने के लिए यह अच्छा हो कि जिस समय शिशु का पूर्ण जन्म हो जाए अर्थात् माता के शरीर से बाहर आ जाए, उस समय को शिशु का जन्म समय मानना चाहिए।

जन्म की तारीख, जन्म का स्थान और जन्म का समय इन तीनों के आधार पर जन्म या प्रश्न कुण्डली की गणित क्रिया करनी चाहिए।

जन्म का स्थान जानना भी इसलिए आवश्यक है, क्योंकि सूर्योदय अलग-अलग स्थान पर अलग-अलग समय में होता है तथा जन्म के अक्षांश और देशान्तर पर विभिन्न राशियों का उदय काल निर्भर करता है। जन्म-कुण्डली की गणना करने में प्रमुखता से जन्म-लग्न अर्थात् पृथ्वी का वह भाग जो जन्म के समय पूर्व क्षितिज में उदित राशि होती है उसका तथा प्रमुखता से ग्रह का साधन स्पष्ट करने पड़ते हैं।

सर्वप्रथम जन्म या प्रश्न कुण्डली के प्रयोग के पूर्व उसे बनाने के लिए में लग्न निकालना आवश्यक होता है तथा लग्न स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित की आवश्यकता होती है—

१. जन्म स्थान का अक्षांश और देशान्तर

२. जन्म का दिनांक

३. जन्म का समय

४. जन्म वर्ष का पंचांग आदि की आवश्यकता होती है। इनकी सहायता से इष्टकाल, भयात, भभोग, ग्रह स्पष्ट आदि साधन के साथ-साथ

लग्न, दशमलग्न, द्वादशभाव आदि का साधन करना आवश्यक होता है। आगे उदाहरण के साथ जन्मकुण्डली की गणित क्रिया करना विस्तार से बतलाया जाएगा।

अतएव कुण्डली गणित का आरम्भ सर्वप्रथम इष्टकाल साधन से होता है। इसके लिये हमें उपरोक्त दिनांक, जन्म स्थान का नाम के साथ जन्म समय की आवश्यकता होती है। जन्म समय प्राय: घण्टा-मिनट में कलाई घड़ी के अनुसार उपलब्ध होता है। वह समय मानक समय (Standard Time) अर्थात् सार्वत्रिक होता है। अत: उसको स्थानीय समय में परिवर्तित करने की आवश्यकता होती है या फिर कभी स्थानिक समय (Local Time) को मानक समय (Standard Time) में बदलने की। इस प्रकार समय परिवर्तन के नियमों का अनुपालन करना आवश्यक होता है। अतएव इसे समझने के लिए पूर्वविवेचित रेखांश व अक्षांश समय परिवर्तन आदि विषयों की जानकारी भी अनिवार्य है। अत: अब यहाँ क्रम से कुण्डली गणित दिये जा रहे हैं—

इष्टकाल साधन करना—कुण्डली गणित में इष्टकाल का अन्यतम महत्त्व है। इष्टकाल, सूर्योदय से लेकर जन्मसमय तक के काल को कहा जाता है। इसका साधन जन्म समय में से सूर्योदय काल को निकाल कर किया जाता है। विदित है कि जन्म समय प्राय: मानक समय में प्राप्त रहता है। अत: सूर्योदय भी मानक समय में होना आवश्यक होता है; क्योंकि इष्टकाल साधन करने के लिए जन्म समय और सूर्योदय दोनों या, तो स्थानीय हो, या फिर मानक समय में, यह आवश्यक है, अन्यथा इससे भिन्न रीति से साधित इष्टकाल गलत होगा। स्थानिक समय व मानक समय के परिवर्तन का नियम पूर्व में ही बताया जा चुका है।

अब इष्टकाल के साधन में कुछ आवश्यक जानने योग्य बातें हैं, उस ओर आपका ध्यान आकृष्ट करना, उचित होगा। इस प्रसङ्ग में यह कहना है कि प्रथम हमें एक सावन दिन अर्थात् सूर्योदय से अग्रिम सूर्योदय पूर्व तक के काल को तीन भागों में विभाजित करना चाहिए और देखना चाहिए कि जन्म समय उन भागों में से किस भाग में है अर्थात् प्रात: काल में है या मध्याह्न बाद में या फिर मध्यरात्रि बाद में; यह जान लेने के बाद इष्टकाल का साधन सरल व सहज हो जाता है। जैसे—

१. मध्याह्न पूर्व अर्थात् दिन में १२ बजकर ५९ मिनट पूर्व के समय में जन्म समय पड़ा हो, तो सीधे जन्म समय में से सूर्योदय को घटाकर इष्टकाल ज्ञात कर लेते हैं।

किसी का जन्म समय प्रातः १० बजकर ३५ मिनट हो, तो इसका इष्टकाल इस प्रकार होगा। जैसे—

जन्मसमय घण्टादि – सूर्योदय घण्टादि = इष्टकाल घण्टा/मिनट

१०/३५ (S.T) – ५/५३ (S.T.) = ४/४२ घण्टा/मिनट इष्टकाल

२. मध्याह्न के बाद मध्यरात्रि पूर्व अर्थात् रात्रि १२ बजकर ५९ मिनट पूर्व के समय में जन्म समय पड़ा हो, तो जन्म समय में १२ जोड़कर फिर उसमें से सूर्योदय घटाकर इष्टकाल का ज्ञान कर लेते हैं। जैसे किसी का जन्मसमय सायं ७/४० बजे हो, तो इसका इष्टकाल इस प्रकार होग। जैसे—

१२/०
\+ ७/४० (सायं)

१९/४० (S.T) – ५/५३ (S.T) = १३/४७ घण्टा/मिनट इष्टकाल।

३. मध्यरात्रि बाद अग्रिम सूर्योदय के समय से पूर्व के समय में जन्मसमय पड़ा हो, तो जन्म समय में +२४ जोड़कर फिर उसमें से सूर्योदय घटाकर इष्टकाल का ज्ञान कर लेते हैं। जैसे—

किसी का जन्म रात्रि २/३० बजे हो, तो इसका इष्टकाल इस प्रकार होगा।

२४/०
\+ २/३०

२६/३० (S.T) – ५.५३ (S.T) = २०/३७ घण्टा/मिनट इष्टकाल

इस प्रकार उपरोक्त घण्टा/मिनट इष्टकालों को ढ़ाई (२/३०) से गुणा करने पर इष्टकाल घट्यादि या दण्डादि हो जाता है। यहाँ ध्यातव्य है कि २ घटि ३० पल से १ घण्टा होता है, तथा एक सावन दिन में ६० घटि या २४ घण्टे होते हैं।

इष्टकाल साधन का उदाहरण (१४)—

जन्म दिनांक २ अप्रैल २००४, शुक्रवार रात्रि में

जन्म समय = ३.४५ (S.T) प्रातः सूर्योदय = ५/५३ (S.T)

जन्मस्थान अक्षांश = २६/२२ पञ्चाङ्ग स्थान अक्षांश = २५/२०

रेखांश = ८६/७ रेखांश = ८३/०

पूर्वोक्त नियम के अनुसार ज़न्मसमय ३.४५ रात्रि शुक्रवार मध्यरात्रि के बाद का स्पष्ट है।

अतः यहाँ इष्टकाल = २४ + जन्म समय–सूर्योदय = शेष × २/३० घट्यादि। इसके अनुसार—

२४/०	यहाँ जन्मसमय में २४को जोड़कर
+ ३/४५ (S.T)	[illegible](S.T) को घटाया
२७/४५	गया है। शेष घं/मि. को २/३० से
– ५/५३ (S.T)	गुणा करने के स्थान पर शेष घं.मि
२१/५२	को ही ढ़ाई बार जोड़कर घट्यादि
२१/५२	इष्टकाल बनाया गया है।
१०/३०	
+ ०/२६	

काशी में ५४/४० इष्टकाल घट्यादि ज्ञात हुआ।

इस इष्टकाल में काशी से मधुबनी के स्पष्ट देशान्तर, जिसे उदाहरण–३ में लाया गया है, का संस्कार करने से मधुबनी का इष्टकाल होगा।

अत:	५४/४०	काशी का इष्टकाल घट्यादि
	+ ३२/३०	स्पष्ट देशान्तर घट्यादि धन होने से जोड़ा गया है।
इस प्रकार	५५/१२/३०	यह मधुबनी का इष्टकाल घट्यादि सिद्ध हुआ।

यहाँ ध्यातव्य है कि मधुबनी के इस इष्टकाल का वहीं के लग्न, दशमलग्न आदि लाने के लिए मात्र उपयोग करेंगे। भयात-भभोग, ग्रहस्पष्ट आदि का साधन काशी के इष्टकाल से ही करना उचित है।

इष्टकाल घट्यादि साधन करने के लिए यह भी ध्यान देना उचित है कि जन्म स्थान व पञ्चाङ्ग स्थान दोनों भिन्न स्थान के हों, तो जन्म स्थान की मानक जन्मसमय और पञ्चाङ्ग स्थान के सूर्योदय के मानक समय से ही इष्टकाल साधन करें, यह सैद्धान्तिक दृष्ट्या उचित प्रयास होगा। जैसा ऊपर किया गया है।

इसके बाद क्रम से भयात, भभोग, ग्रहस्पष्ट साधन के लिए मिश्रमान, चालन आदि से आपको परिचित कराया जा रहा है।

जन्मस्थानीय पञ्चाङ्ग साधन करना—जिस प्रकार इष्टकाल में स्पष्ट देशान्तर का संस्कार कर जन्मस्थानीय इष्टकाल घट्यादि लाया गया है, उसी तरह पञ्चाङ्ग में जन्मवार के दिन व पूर्व दिन सूर्योदय काल में जो तिथि, नक्षत्र, योग, करण आदि का मान दियें हो, उनमें भी अधोलिखित की तरह आवश्यकतानुसार स्पष्ट देशान्तर का संस्कार कर देने से वे भी जन्म स्थान के हो जाते हैं।

पञ्चाङ्ग (काशी) में मान + स्पष्ट देशान्तर = जन्म स्थान मधुबनी का मान।

द्वादशी तिथि घट्यादि ३३/५/० + ०/३२/३० घट्यादि=३३/३७/३० घट्यादि।
मघा नक्षत्र घट्यादि ३३/३९/० + ०/३२/३० घट्यादि=३४/११/३० घट्यादि।
शूल योग घट्यादि १९/३६/० + ०/३२/३० घट्यादि =२०/८/३० घट्यादि।
बालव करण घट्यादि ३३/५/० + ०/३२/३० घट्यादि =३३/३७/३० घट्यादि।

उपरोक्त में इष्टकाल की तरह स्पष्ट देशान्तर धन होने से उसका धन संस्कार दिया गया है।

बाल बोधार्थ पञ्चाङ्ग साधन बताया गया है। अपेक्षा अनुसार इसका कुण्डली लेखन में उपयोग भी किया जा सकता है। वैसे भयात, भभोग, ग्रहस्पष्ट आदि करने के लिए पञ्चाङ्गोक्त तिथ्यादि के घट्यादि मान का उपयोग करने से भी परिणाम अप्रभावित ही रहता है।

भयात व भभोग साधन करना—तिथि, नक्षत्र, योग और करण के मान क्रम से पञ्चाङ्ग के पाक्षिक पृष्ठों में वार क्रम से दिये होते हैं। भयात-भभोग साधन करने के पूर्व इन चीजों व तथ्यों से अवगत होना आवश्यक है। उन तिथ्यादिकों का सूर्योदयकाल से उनके अन्त तक का मान पञ्चाङ्ग में दिया होता है। जहाँ उनका अन्त होता है, वहीं से उनसे अगले का प्रारम्भ अर्थात् पञ्चाङ्ग में किसी एक नक्षत्र का मान जो उसका अन्तकाल है, वहीं से अगला नक्षत्र प्रारम्भ होता है। यह चक्रात्मक चलता है। इस प्रकार जन्म (इष्टकाल) समय तक नक्षत्र का कितना भाग व्यतीत हुआ, यह उस नक्षत्र का भयात (भ = नक्षत्र, यात = गत) मान है। एक नक्षत्र कब प्रारम्भ हुआ और कब समाप्त? प्रारम्भ से उसकी समाप्ति काल तक के समय, उस नक्षत्र का भभोगमान कहलाता है। प्रत्येक नक्षत्र का मध्यम भोगमान ६० घड़ी होता है, जबकि स्पष्टमान-भभोग भिन्न-भिन्न होता है। अतः—

भयात = ६० − गत नक्षत्र + इष्टकाल
और भभोग = ६० − गत नक्षत्र + वर्तमान नक्षत्र।

भयात-भभोग लाने का उदाहरण(१५)—

नक्षत्र का मध्यम भोगमान = ६०/०
गत नक्षत्र = − ३३/३९
शेष घट्यादि = २६/२१

काशी का इष्ट घट्यादि = + ५४/४०

अत: भयात घट्यादि = २१/०१

पुन: शेष घट्यादि = २६/२१

पूर्वाफाल्गुनी वर्तमान (जन्म) नक्षत्र = + ३४/३२

अत: भभोग घट्यादि = ६०/५३

इस प्रकार जातक का जन्म पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र के द्वितीय चरण में सिद्ध होता है।

यहाँ इष्टकाल (जन्म समय) में जो नक्षत्र होता है, वह वर्तमान (जन्म) नक्षत्र और उससे पहले वाले को गत नक्षत्र (बीता हुआ) कहा जाता है। यहाँ जन्म शुक्रवार का है। उस दिन जन्म समय में पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र है। अत: गत नक्षत्र मघा के मान को मध्यम भोग में से घटाकर शेष में इष्टकाल जोड़ने से भयात और उसी शेष में पूर्वा फाल्गुनी का पञ्चाङ्गोक्त मान को जोड़ने से भभोग प्राप्त हुआ है।

यहाँ पाठक को सावधानीपूर्वक यह तय करना चाहिए कि जन्म समय में कौन-सा नक्षत्र है। ज़न्म नक्षत्र के पहले कौन-सा नक्षत्र है तथा जन्मनक्षत्र के बाद कौन-सा नक्षत्र है, यह देखना आवश्यक है; क्योंकि कभी-कभी एक सावन वार में तीन नक्षत्र के होने की सम्भावना भी रहती है या एक नक्षत्र तीन वारों में भी हो सकते हैं।

स्पष्ट ग्रह साधन करना—पञ्चाङ्गों में सूर्योदयकालिक या मिश्रमानकालिक ग्रह स्पष्ट दिये होते हैं। पञ्चाङ्ग में सूर्योदयकालिक ग्रह स्पष्ट के रहने पर इष्टकाल से लेकिन मिश्रमानकालिक स्पष्ट ग्रह दिये हों, तो चालन से जन्मकालिक स्पष्ट ग्रह बनाते हैं। इसके लिए ग्रह गति से इष्टकाल या चालन को गुणा कर ६० से भाग देकर जो कलादि लब्धि होती है, उसे जन्मदिन के सूर्योदयकालिक ग्रह में ग्रह के मार्गी रहने पर जोड़ने से, वक्री रहने पर घटाने से जन्मकालिक ग्रह होता है। यदि मिश्रमानकालिक ग्रह हो, तो उस लब्धि को चालन के अनुसार जोड़ते या घटाते हैं, तो जन्मकालिक ग्रह हो जाता है। यहाँ चालन का धन या ऋण इस प्रकार जानना चाहिए—यदि मिश्रमान से इष्टकाल अधिक हो, तो धन चालन, कम हो, तो ऋण चालन जानें। वहाँ भी ग्रह यदि मार्गी हो, तो उस ग्रह में धन चालन रहने पर धन करने से, ऋण चालन में ऋण करने से जन्मकालिक स्पष्ट ग्रह होता है; परन्तु वक्री हो, तो विपरीत क्रिया से जन्मालिक स्पष्ट ग्रह होता है।

नोट—ग्रह स्पष्ट से यहाँ तात्पर्य है कि ग्रह आकाश में जन्म के समय किस राशि के किस अंश, कला, विकला आदि में स्थित है। यही स्पष्ट ग्रह की राशि, अंश, कला, विकला आदि पञ्चाङ्ग में लिखा रहता है।

इसे पुनः स्पष्ट बतलाया जा रहा है—

यदि पञ्चाङ्ग में औदयिक ग्रह हों, तो—

$$\frac{\text{ग्रह गति} \times \text{इष्टकाल}}{६०} = \text{इष्टकलादि फल}$$

औदयिक ग्रह + इष्टकलादि फल = जन्मकालिक स्पष्ट ग्रह।

यहाँ यदि ग्रह वक्री हो, तो ऋण (–) इष्टकालादि फल करने से जन्मकालिक या तात्कालिक या इष्टकालिक ग्रह हो जाते हैं।

विशेष—यह भी जान लें कि सूर्य व चन्द्र कभी भी वक्री नहीं होता। राहु व केतु सदा वक्रगति ही करते हैं। लेकिन मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि नियम से कभी मार्गी और कभी वक्री होते रहते हैं।

चालन—यह इष्टकाल और मिश्रमान के या मिश्रमान और इष्टकाल के बीच का समय होता है। अर्थात् इष्टकाल से मिश्रमान अधिक हुआ, तो ऋण चालन होगा। यदि इष्टकाल से मिश्रमान अल्प हुआ, तो धन चालन होगा। जैसे—

मिश्रमान ± इष्टकाल = ± चालन

विशेष—मिश्रमान में स्पष्ट देशान्तर का + संस्कार कर देने से जन्मस्थान का मिश्रमान हो जाता है, तब स्वतः ग्रह जन्मस्थानीय होगा। इस स्थिति में मिश्रमान और इष्टकाल के अन्तररूप चालन + या – जन्म स्थानीय हो जाता है।

अब चालन से ग्रह स्पष्ट करना चाहिए—

$$\frac{\text{ग्रह गति} \times \text{चालन}}{६०} = \pm \text{ चालनकलादि फल}$$

मिश्रमानकालिक ग्रह ± चालन कलादि फल = जन्म या इष्टकालिक ग्रह।

यहाँ ध्यान देना चाहिए कि ग्रह यदि वक्रीय हो, तो चालन फल धन (+) रहने पर ऋण (–) और ऋण (–) रहने पर धन (+) हो जाता है।

विशेष—पञ्चाङ्ग स्थान से जन्मस्थान का ग्रह बनाने के लिए भी संस्कार करना चाहिए। यह संस्कार दूरस्थ नगरों में अवश्य करने चाहिए। समीपस्थ में स्वल्पान्तर होने से उपेक्षित कर सकते हैं। इसके लिए यह करना चाहिये कि—

$$\frac{\text{दैनिक ग्रह गति} \times \text{देशान्तर घट्यादि}}{६०} = \text{लब्धि देशान्तर फल कलादि।}$$

तात्कालिक ग्रह ± लब्ध देशान्तर कलादि = स्वदेशीय तात्कालिक स्पष्ट ग्रह।

यहाँ देशान्तरफल कलादि पञ्चाङ्ग स्थान से जन्मस्थान पूर्व होने से ऋण और पश्चिम होने पर धन होगा। इस संस्कार को प्राय: लोग एक देश के विभिन्न नगरों में उपेक्षित करते हैं, जो शीघ्रगति ग्रहों में अवश्य करनी चाहिए। पञ्चाङ्गस्थानीय सूर्य से जन्मस्थानीय सूर्य उपरोक्त संस्कार से बनाकर जन्मस्थानीय दिनमान सही आ जाते हैं।

ग्रह साधन के उदाहरण (१६)—पञ्चाङ्गस्थान (काशी) के औदयिक पङ्क्ति—

ग्रह	—	ग्रहस्पष्ट राश्यादि		गति कलादि
सूर्य	—	११/१८/३८/४३	—	५९/११
मंगल	—	१/१३/५६/११	—	३६/२०
बुध	—	०/५/२६/१४	—	६१/५४
गुरु	—	४/२०/१६/५०	—	५/४८ वक्रीय
शुक्र—		१/३/३३/४३	—	५४/४१
शनि	—	२/१३/१६/१२	—	२/१६
राहु	—	०/१८/५०/१	—	३/११

विशेष—ग्रहों की गति ज्ञान करने के लिए दो अन्यतम दिनों के ग्रह स्पष्ट का अन्तर करने से ग्रहों की दैनिक गति ज्ञात हो जाती है वहीं राहु की गति ३/११ कलादि सदा ग्रहण करना चाहिए। केतु सदा राहुसे सातवीं राशि में रहता है।

ग्रह स्पष्ट करने के लिए पञ्चाङ्ग स्थान का इष्टकाल घट्यादि = ५४/४० ही उपयोग करना चाहिए—

जन्मकालिक सूर्य स्पष्टीकरण—

$$\frac{\text{सू.ग. (५९/११)} \times \text{(५४/४०) इ.का.}}{\text{६०}} = \text{५३/५५ इष्टकलादि फल।}$$

अत: ११/१८/३८/४३ जन्मवार का औदयिक ग्रह स्पष्ट
+ ५३/५५ इष्टकलादि फल
११/१९/३२/३८ जन्मकालिक स्पष्ट सूर्य।

जन्मकालिक मंगल स्पष्टीकरण—

$$\frac{\text{मं.ग. (३६/२०)} \times \text{इ.का. (५४/४०)}}{\text{६०}} = \text{३३/६ इष्टकलादि फल।}$$

अत: १/१३/५६/११ जन्मवार का औदयिक मंगल
+ ३३/६ इष्टकलादि फल
१/१४/२९/१७ जन्मकालिक स्पष्ट मंगल।

जन्म कालिक बुध स्पष्टीकरण—

$$\frac{\text{बु.ग. (६१/५४)} \times \text{इ.का. (५४/४०)}}{\text{६०}} = \text{५६/२४ इष्टकलादि फल।}$$

अत: ०/५/२६/१४ जन्मवार का औदयिक बुध
+ ५६/२४ इष्टकलादि फल
०/६/२२/३८ जन्मकालिक स्पष्ट बुध।

जन्म कालिक गुरु स्पष्टीकरण—

$$\frac{\text{गु.ग. (५/४८)} \times \text{इ.का. (५४/४०)}}{\text{६०}} = \text{५/१७ इष्टकलादि फल।}$$

अत: ४/२०/१६/५० जन्मवार का औदयिक गुरु वक्री
− ५/१७ इष्टकलादि फल
४/२०/११/३३ जन्मकालिक स्पष्ट वक्री गुरु।

जन्म कालिक शुक्र स्पष्टीकरण—

$$\frac{\text{शु.ग. (५४/४१)} \times \text{इ.का. (५४/४०)}}{\text{६०}} = \text{४९/४९ इष्टकलादि फल।}$$

अतः १/३/३३/४३ जन्मवार का औदयिक शुक्र
+ ४९/४९ इष्टकलादि फल

१/४/२३/३२ जन्मकालिक स्पष्ट शुक्र।

जन्म कालिक शनि स्पष्टीकरण—

$$\frac{\text{श.ग. (२/१६)} \times \text{इ.का. (५४/४०)}}{६०} = \text{२/४ इष्टकलादि फल।}$$

अतः २/१३/१६/३२ जन्मवार का औदयिक शनि
+ २/४ इष्टकलादि फल

२/१३/१८/१६ जन्मकालिक स्पष्ट शनि।

जन्म कालिक राहु स्पष्टीकरण—

$$\frac{\text{रा.ग. (३/११)} \times \text{इ.का. (५४/४०)}}{६०} = \text{२/५४ इष्टकलादि फल।}$$

अतः ०/१८/५०/१ जन्मवार का औदयिक राहु।
– २/५४ इष्टकलादि फल

०/१८/४७/७ जन्मकालिक स्पष्ट राहु।

यहाँ इष्टकालिक केतु राश्यादि स्पष्ट, उपरोक्त इष्टकालिक स्पष्ट राहु के राश्यादि में राशि स्थान में ६ राशि जोड़ने से प्राप्त हो जाता है।

ध्यातव्य:—उपरोक्त ग्रह स्पष्ट करने में गौमुत्रिका क्रम का सहारा लेना तो प्रचलित है, लेकिन उसमें कठिनाईयाँ भी हैं। अतः उनसे बचने के लिये आप इस प्रकार गुणन क्रिया कर सकते हैं—गति कलादि को विकला बनायें और इष्टकाल घट्यादि को भी पलात्मक बनायें। तदनन्तर विकला की संख्या को पल की संख्या से सीधे क्रम में गुणा करें। उस गुणनफल में २१६००० से भाग दें, लब्धि कला प्राप्त होगी। शेष में ६० से गुणा कर फिर उसी अंक से भाग दें, तो लब्धि विकला होगी। यह क्रिया गणक-यंत्र (Calculator) से सहज ही किया जा सकता है। अतः इस प्रकार प्राप्त कला-विकला आदि ही उपरोक्त इष्टकलादिफल के रूप में प्राप्त होता है। जिसका संस्कार ± प्राप्त चिह्न के अनुसार जन्मवार के ग्रह में करने से जन्मकालिक स्पष्ट ग्रह हो जाते हैं।

आपके पास उपलब्ध पञ्चाङ्ग में यदि ग्रह पाक्षिक या साप्ताहिक दिए

हों, तो वहाँ मिश्रमान वारादि (वार-घटि-पल आदि) में ग्रहण कर वारादि इष्ट से चालन लाकर उपरोक्त प्रकार ग्रह स्पष्ट की क्रिया करें।

इस प्रकार सूर्यादि ग्रहों को जन्मकाल का बना लेने के बाद चन्द्र का स्पष्टीकरण करना चाहिए। चन्द्र का जन्मकालिक स्पष्ट साधन भयात व भभोग पर से किया जाता है, उसकी विधि आगे दी जा रही है—

चन्द्र स्पष्ट साधन करना—चन्द्र स्पष्ट पूर्वोक्त सूर्यादि ग्रहों की तरह साधन नहीं किया जाता है। इसे भयात-भभोग पर से इस प्रकार स्पष्ट किया जाता है।

पहली विधि—

$$\frac{\text{पला. भयात} \times ८००}{\text{पला. भभोग}} = \text{लब्धि कलादि।}$$

गत नक्षत्र संख्या × ८०० + पूर्वानीतलब्धि कलादि = कलादि चन्द्रस्पष्ट।

$$\frac{\text{कलादि चन्द्र स्पष्ट}}{६० \times ३०} = \text{चन्द्रस्पष्ट राश्यादि।}$$

पहली विधि से चन्द्र स्पष्ट करने का उदाहरण (१७)—

चन्द्र को भयात व भभोग पर से इसलिए स्पष्ट किया जाता है; क्योंकि चन्द्र की दैनिक गति अति विलक्षणा होती है। इसे अन्य ग्रह की तरह स्पष्ट करने से उसमें त्रुटि होने की सम्भावना अधिक रहती है।

उदाहरण—१५ में साधित भयात २१/१ व भभोग ६०/५३ और चन्द्र का कलात्मक भोग ८०० कला। अब उपरोक्त सूत्र में इन्हें इस प्रकार स्थापित करने पर—

$$\frac{\text{भयात पलात्मक १२६१} \times \text{८०० कला प्रति नक्षत्र भोग}}{\text{भभोग पलात्मक ३६५३}} = \frac{१००८८००}{३६५३}$$

= २७६/९/२४ लब्धि कलादि।

$$\frac{\text{गत नक्षत्र (मघा) संख्या १०} \times ८०० + \text{२७६/९/२४ लब्धि कलादि}}{६०}$$

$$= \frac{८२७६/९/२४}{६०} = \text{१३७/५६/९/२४ अंशादि चन्द्र}$$

= ४/१७/५६/९/२४ रास्यादि जन्मकालिक स्पष्ट चन्द्र सिद्ध हुआ।

दूसरी विधि—

$$\frac{\text{पलात्मक भयात} \times ६०}{\text{पलात्मक भभोग}} = \text{लब्धि घट्यादि।}$$

$$\frac{(\text{गत नक्षत्र संख्या} \times ६० + \text{लब्धि घट्यादि}) \times २}{९} = \text{अंशादि स्पष्ट चन्द्र।}$$

अंशादि चन्द्र ÷ ३० = राश्यादि स्पष्ट चन्द्र।

दूसरी विधि से चन्द्र स्पष्ट करने का उदाहरण (१८)—

$$\frac{\text{पलात्मक भयात १२६१} \times \text{६० घटि प्रति नक्षत्र मध्यमभोग}}{\text{भभोग पलात्मक ३६५३}} = \frac{७५६६०}{३६५३}$$

= २०/४२/४२/३४ लब्धि घट्यादि।

गत नक्षत्र (मघा) संख्या १० × ६० + २०/४२/४२/३४ लब्धि घट्यादि = ६२०/४२/४२/३४ घट्यादि।

तथा $$\frac{६२०/४२/४२/३४ \times २}{९} = \frac{१२४१/२५/२५/०८}{९}$$

= १३७/५६/९/२४ अंशादि स्पष्ट चन्द्र।
= ४/१७/५६/९/२४ राश्यादि जन्मकालिक स्पष्ट चन्द्र हुआ।

चन्द्र स्पष्टा गति—

$$\frac{४८०० \times ६०}{\text{पलात्मक भभोग}} = \text{चन्द्र स्पष्टागति कलादि।}$$

चन्द्र की स्पष्ट गति साधन करने का उदाहरण (१९)—

$$\frac{४८००० \times ६०}{\text{पलात्मक भभोग}} = \frac{२८८००००}{३६४३३६५३}$$

= ७८८/२३ कलादि स्पष्ट चन्द्र गति।

सूर्यादि ग्रह स्पष्ट से नक्षत्रपाद ज्ञान तालिका

क्रम	नक्षत्र	१ चरण			२ चरण			३ चरण			४ चरण		
		रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.
१.	अश्विनी	०	३	२०	०	६	४०	०	१०	०	०	१३	२०
२.	भरणी	०	१६	४०	०	२०	०	०	२३	२०	०	२६	४०
३.	कृतिका	१	०	०	१	३	२०	१	६	४०	१	१०	०
४.	रोहिणी	१	१३	२०	१	१६	४०	१	२०	०	१	२३	२०
५.	मृगशीर्ष	१	२६	४०	२	०	०	२	३	२०	२	६	४०
६.	आर्द्रा	२	१०	०	२	१३	२०	२	१६	४०	२	२०	०
७.	पुनर्वसु	२	२३	२०	२	२६	४०	३	०	०	३	३	२०
८.	पुष्य	३	६	४०	३	१०	०	३	१३	२०	३	१६	४०
९.	आश्लेषा	३	२०	०	३	२३	२०	३	२६	४०	४	०	०
१०.	मघा	४	३	२०	४	६	४०	४	१०	०	४	१३	२०
११.	पू. फा.	४	१६	४०	४	२०	०	४	२३	२०	४	२६	४०
१२.	उ. फा.	५	०	०	५	३	२०	५	६	४०	५	१०	०
१३.	हस्त	५	१३	२०	५	१६	४०	५	२०	०	५	२३	२०
१४.	चित्रा	५	२६	४०	६	०	०	६	३	२०	६	६	४०
१५.	स्वाति	६	१०	०	६	१३	२०	६	१६	४०	६	२०	०
१६.	विशाखा	६	२३	२०	६	२६	४०	७	०	०	६	३	२०
१७.	अनुराधा	७	६	४०	७	१०	०	७	१३	२०	६	१६	४०
१८.	ज्येष्ठा	७	२०	०	७	२३	२०	७	२६	४०	८	०	०
१९.	मूल	८	३	२०	८	६	४०	८	१०	०	८	१३	२०
२०.	पू. षा.	८	१६	४०	८	२०	०	८	२३	२०	८	२६	४०
२१.	उ. षा.	९	०	०	९	३	२०	९	६	४०	९	१०	०
२२.	श्रवण	९	१३	२०	९	६	४०	९	२०	०	९	२३	२०
२३.	धनिष्ठा	९	२६	४०	१०	०	०	१०	३	२०	१०	६	४०
२४.	शतभिषा	१०	१०	०	१०	१३	२०	१०	१६	४०	१०	२०	०
२५.	पू. भा.	१०	२३	२०	१०	२६	४०	११	०	०	११	३	२०
२६.	उ. भा.	११	६	४०	११	१०	०	११	१३	२०	११	१६	४०
२७.	रेवती	११	२०	०	११	२३	२०	११	२६	४०	१२	०	०

राशियों के उदयमान परिज्ञान—उदयमान की आवश्यकता लग्न साधन में पड़ती है। राशियों का यह उदयमान दो प्रकार का होता है—१. निरक्षदेशीय और २. स्वदेशीय। यहाँ यह जान लेना आवश्यक है कि सिद्धान्त ग्रन्थों में निरक्षदेशीय उदयमान 'लङ्कोदयमान' के नाम से पठित है। वस्तुतः यह लङ्कोदयमान शून्याक्षांशीय होने से कुण्डली गणित में दशम या चतुर्थ लग्न के साधन में उपयोगी है और यह सार्वत्रिक होता है। लग्न व सप्तम लग्न कें साधन के लिए लङ्कोदयमान से स्वदेशीयमान का आनयन करना पड़ता है। अतः स्वदेशीयोदयमान का साधन करने के लिए स्वस्वदेशीय अक्षांश, रेखांश, पलभा, चरखण्ड आदि का ज्ञान भी आवश्यक है, जिसकी चर्चा पूर्व में की जा चुकी है। यहाँ लङ्कोदयमान से स्वदेशीयोदयमान लाने का प्रदर्शन किया जाता है।

ग्रहलाघवकरण ग्रन्थ के अनुसार द्वादश राशियों के लङ्कोदयमान हैं—

यथा— मेष—२७८, कन्या—२७८, तुला—२७८, मीन—२७८
वृष—२९९, सिंह—२९९, वृश्चिक—२९९, कुम्भ—२९९
मिथुन—३२३, कर्क—३२३, धनु—३२३, मकर—३२३

नोट—सर्वानन्द करण में २७८ के स्थान में २७९ और ३२३ के स्थान में ३२२ लङ्कोदयमान पठित हैं।

इस प्रकार मेषादि द्वादश राशियों के निरक्षोदय (लङ्कोदय) मान स्थिर माने गए हैं। इनमें चर प्रसङ्गोक्त साधित स्वदेशीय चरखण्ड मेषादि तीन राशियों में क्रम से ऋण (–) और धन (+) करने से स्वदेशीय मेषादि द्वादश राशियों के उदयमान आ जाते हैं।

कुछ शहरों व नगरों के स्वोदय मान नीचे दिये जा रहे हैं—

राशि-नाम	लङ्कोदयमान - चरखण्ड काशी	स्वोदय	चरखण्डमधुबनी-उदयमान	कोलकातोदयमान
मेष-मीन	= २७८ - ५७	२२१	- ६० = २१८	२२८
वृष-कुम्भ	= २९९ - ४६	२५३	- ४८ = २५१	२५९
मिथुन-मकर	= ३२३ - १९	३०४	- २० = ३०३	३०७
कर्क-धनु	= ३२३ + १९	३४२	+ २० = ३४३	३३९
सिंह-वृश्चिक	= २९९ + ४६	३४५	+ ४८ = ३४७	३३९
कन्या-तुला	= २७८ + ५७	३३५	+ ६० = ३३८	३२८

राशि नाम		चेन्नई	मुम्बई	दिल्ली के उदयमान
मेष-मीन	—	२५०	२३७	२२३
वृष-कुम्भ	—	२७७	२६६	२४७
मिथुन-मकर	—	३१४	३०९	३०१
कर्क-धनु	—	३३२	३३७	३४५
सिंह-वृश्चिक	—	३२१	३३२	३७४
कन्या-तुला	—	३०६	३१९	३८७

इसी तरह से अन्यान्य शहरों व नगरों का उदयमान ज्ञात किया जा सकता है। यहाँ ऊपर जो नगरों व महानगरों के उदयमान साधन दिखाया गया है या जो लङ्कोदयमान कहे गए हैं,, वे सभी पलात्मक हैं। जैसे—२७८ पल, २९९ पल या काशी में २२१ पल आदि मेष आदि राशि के पलात्मक उदयमान हैं।

स्पष्ट लग्न साधन—लग्न को स्पष्टलग्न, प्रथम लग्न या प्रथम भाव भी कहा जाता है। लग्न साधन कुण्डली गणित का केन्द्र विन्दु है। इसके साधन के लिए इष्टकाल, इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य, इष्टकालिकायनांश और स्वदेशीय (जन्मस्थानीय) राश्युदयमान की आवश्यकता होती है। प्रायः इन सभी उपकरणों की चर्चा की जा चुकी है। अतः ज्यौतिष सिद्धान्त ग्रन्थों और परम्परानुरूप लग्न साधन की विधियों की चर्चा की जा रही है—

इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य में स्पष्ट अयनांश युक्त करने से सायन सूर्य होता है। उस सूर्य की अंशादि को भुक्तांशादि कहते हैं। भुक्तांशादि को ३० अंश में घटाने से भोग्यांशादि होता है। अब यह विचार कर कि सायन सूर्य किस राशि में है? जिस राशि में सायन सूर्य हो, उस राशि का इष्टस्थानीय (स्वदेशीय) राश्युदयमान, जो पलात्मक है, उससे सायन सूर्य की भुक्तांशादि या भोग्यांशादि को गुणा कर ३० से भाग देने पर लब्धि क्रम से भुक्तपलादि व भोग्यपलादि होते हैं।

अब भुक्तपल या भोग्यपल को इष्टकाल के पलात्मक मान में घटायें। ध्यान दें यदि भुक्तपलादि हो, तो इष्टकाल को ६० घटी में से घटाकर शेष घटी को पलात्मक बनाकर भुक्तपल घटावें। लेकिन भोग्यपलादि के रहने पर सीधे इष्टकाल के पलात्मक में ही उसे घटाना चाहिए। इस प्रकार से भुक्तपल घटाने से जो शेष हो, उसमें जिस राशि का उदयमान ऊपर लिया

गया है, उस राशि से उल्टे क्रम (अर्थात् मीन, कुम्भ, मकर, धनु आदि की तरह) अथवा सूर्यभुक्त राशियों के उदयमान को क्रमशः घटायें। भोग्यपल घटाने से जो शेष हो, उसमें उदयमान वाली राशि से सीधे क्रम वाली राशियों अर्थात् सूर्य की भोग्यराशियों के उदयमान को घटायें। यह उदयमान घटाने की क्रिया उस काल तक करना चाहिए, जब तक घट सके घटा दें। जो घटी, वह शुद्ध राशि, जो न घटी वह अशुद्ध राशि कही जाती है। इस प्रकार अवशिष्ट पल को ३० से गुणा कर अशुद्ध राशि के उदयमान से भाग देने पर लब्धि अंशादि होते हैं। भुक्त प्रकार में उस लब्धि को अशुद्ध राशि की संख्या मेषादि राशि क्रम से जो हो, उसमें घटा दें और भोग्य प्रकार में लब्धि अंशादि को शुद्ध राशि की संख्या मेषादि से जो हो, उसमें जोड़ दें। इस प्रकार दोनों स्थितियों में अयनांश घटा देने से स्वदेशीय (जन्मस्थानीय) स्पष्ट लग्न राश्यादि प्राप्त होती है।

गणित क्रिया की लाघवता के लिए उपरोक्त को सूत्र रूप में भी दे दिया जाता है—

इष्टकालिक स्पष्ट सूर्य + स्पष्ट अयनांश = सायन सूर्य,

३०° – सायन सूर्यभुक्तांश = सायन सूर्य भोग्यांश।

(भोग्यांश × सायन सूर्याश्रित राशि का स्वदेशीयोदयमान) ÷ ३० = भोग्यपल।

(भुक्तांश × सायन सूर्याश्रित राशि का स्वदेशीयोदयमान) ÷ ३० = भुक्तपल।

भोग्य प्रकार से लग्नानयन करना—

(इष्टपल – भोग्यपल) – अग्रिम राशियों के उदयमान = शेष पल (अशुद्ध राशि मान से अल्प)।

$$\frac{\text{शेष} \times ३०}{\text{अशुद्ध राश्युदयमान}} = \text{लब्धि अंशादि}$$

मेषादि शुद्ध राशि संख्या + लब्धि अंशादि = सायन लग्न स्पष्ट

सायन लग्न स्पष्ट – अयनांश = निरयन लग्न राश्यादि।

भुक्त प्रकार से लग्नानयन करना—

घटि ६० – इष्टकाल घट्यादि = शेष इष्टघट्यादि।

(शेष इष्टपल – भुक्तपल) – गत राशियों के उदयमान = शेषपल (अशुद्ध राशि के पल से अल्प)

$$\frac{\text{शेष} \times ३०}{\text{अशुद्ध राश्युदयमान}} = \text{लब्धि अंशादि}$$

मेषादि अशुद्ध राशि संख्या – लब्धि अंशादि = सायन स्पष्ट लग्न।

सायन स्पष्ट लग्न – स्पष्ट अयनांश = निरयन स्पष्ट लग्न।

लग्न स्पष्ट करने का उदाहरण (२०)— लग्न स्पष्ट करने के लिए सूर्यस्पष्ट, अयनांश, स्वदेशीय उदयमान और जन्मस्थान सम्बन्धी इष्टकाल घट्यादि की आवश्यकता रहती है, यह बताया जा चुका है। यहाँ सूर्य स्पष्ट भी देशान्तर संस्कृत हो, तो लग्न स्पष्ट में भी सूक्ष्मता आती है। इस समय भोग्य प्रकार से लग्न स्पष्ट करना दिखाया जा रहा है—

स्पष्ट सूर्य ११/१९/३२/८ ; अयनांश (नवीन) = २३/५५/३७ ; इष्टकाल घट्यादि ५५/१२/३० तथा उदयमान पहले ही मधुबनी का लाया जा चुका है।

अब जन्मकालिक सूर्य स्पष्ट = ११/१९/३२/८ (देशान्तर कला संस्कृत)

स्पष्ट अयनांश = + २३/५५/३७

सायन सूर्य स्पष्ट = ०/१३/२७/४५ राश्यादि।

यहाँ सायन सूर्य मेष राशि के १३/२७/४५ अंशादि का भोग कर चुका है।

अत:—

३०/ ०/ ०

सायन सूर्य भुक्तांशादि = – १३/२७/४५

भोग्यांशादि = १६/३२/१५

(यहाँ अशांदि से तात्पर्य है, अंश-कला-विकला आदि का।)

यहाँ उपरोक्तानुसार—

$$\frac{\text{भोग्यांश } १६/३२/१५ \times \text{सायन सूर्य की राशि मेष का उदयमान } २१८}{३०}$$

$$= \frac{३४८८/६९७६/३२७०}{३०}$$

(उपरोक्त में प्रथमत: ३२७० आदि अंकों में ६० से भाग देकर लब्धि पूर्व-पूर्व के अंकों में जोड़कर शेष भी उस उस स्थान पर ग्रहण किया गया है।

$$= \frac{३६०५/१०/३०}{३०} = १२०/१०/२१ \text{ भोग्यपलादि।}$$

अब इष्टकाल = ५५/१२ का पलात्मक = ३३१२/०/०

मेष राशि के स्वोदय का भोग्य पलादि = − १२०/१०/२१

शेष पलादि = ३१९१/४९/३९

मधुबनी में वृष का उदयमान = − २५१

२९४०/४९/३९

मिथुन का उदयमान = − ३०३

२६३७/४९/३९

कर्क का उदयमान = − ३४३

२२९४/४९/३९

सिंह का उदयमान = − ३४७

१९४७/४९/३९

कन्या का उदयमान − ३३८

१६०९/४९/३९

तुला का उदयमान = − ३३८

१२७१/४९/३९

वृश्चिक का उदयमान = − ३४७

९२४/४९/३९

धनु का उदयमान = − ३४३

५८१/४९/३९

मकर का उदयमान = − ३०३

२७८/४९/३९

कुम्भ का उदयमान = − २५१

२७/४९/३९ शेष पलादि।

अब आगे मीन का उदयमान २१८ नहीं घटेगा। अतः मीन की अशुद्ध राशि संज्ञा जानें और कुम्भ की शुद्ध राशि।

अब पुनः नियमानुसार—

$$\frac{\text{शेष पलादि} \times ३०}{\text{अशुद्ध राश्युदयमान}} = \text{लब्धि अंशादि}$$

$$\text{अतः } \frac{२७/४९/३९ \times ३०}{\text{अशुद्ध मीन का उदयमान } २१८} = \frac{८१०/१४७०/११७०}{२१८}$$

यहाँ उपरोक्त में ११७० आदि अंकों में ६० से क्रमशः भाग देकर क्रमशः लब्धि को पूर्व-पूर्व अंको में जोड़ा गया है।

$$= \frac{८३४/४९/३०}{२१८} = ३/४९/४६$$ लब्धि अंशादि।

अतएव कुम्भ शुद्ध राशि संख्या = ११/०/ ०/ ०

लब्धि अंशादि = + ३/४९/४६

सायन स्पष्ट लग्न = ११/३/४९/४६

अयनांश = − २३/५५/३७

निरयण स्पष्ट लग्न = १०/९/५४/९

यही निरयण स्पष्ट लग्न प्रथम लग्न, लग्न स्पष्ट आदि है।

इस तरह प्रथम लग्न = १०/९/५४/९

\+ ६/०/ ०/ ०

४/९/५४/९ सप्तम लग्न हो जाता है।

इस प्रकार लग्न कुम्भ और सप्तम लग्न सिंह सिद्ध हुए।

लग्न स्पष्ट की ज्ञातव्य बातें—

१. लग्न साधन दो प्रकार से होता है—(क) सायन सूर्य के भुक्तांश से जिसे भुक्तप्रकार और (ख) सायन सूर्य के भोग्यांश से, जिसे भोग्य प्रकार कहा जाता है।

२. भुक्त प्रकार में भुक्तपल हमेशा ६०− इष्टकाल = शेष इष्ट घटि के पलात्मक में से घटाया जाता है। जबकि भोग्यप्रकार में सदा इष्टकाल घटि के पलात्मक में भोग्यपल घटाया जाता है।

३. भुक्त प्रकार में गत राश्युदय अर्थात् विपरीत क्रम से राशि के उदयमान घटाया जाता है अर्थात् वे राशियाँ, जो सूर्यभुक्त हो चुकी हैं।

४. मध्यरात्रि के बाद का यदि इष्टकाल हो, तो ६०− इष्टकाल = रात्रिशेष को इष्टकाल मानकर भुक्त प्रकार से लग्नायन करना आसान, सहज व समान होता है।

५. मध्यरात्रि पूर्व का यदि इष्टकाल हो, तो उसमें से दिनमान निकाल दें, फिर भोग्य प्रकार से लग्नानयन सहज, सरल व समान होता है। इसके लिए सायन सूर्य में भी ६ राशि जोड़कर क्रिया करें।

६. पूर्वोक्त लग्नानयन में भुक्त या भोग्यपल यदि इष्टकाल के पल

में ही न घटे, तो उस इष्टपल में ३० से गुणा कर सायन सूर्य की राश्युदयमान से भाग देकर जो लब्ध अंशादि हो, उसको भुक्त प्रकार में स्पष्ट सूर्य की राश्यादि में घटाने से और भोग्य प्रकार में जोड़ने से स्पष्ट लग्न की राश्यादि प्राप्त होती है।

सारिणी से लग्न लाने का प्रकार—प्राय: प्रत्येक पञ्चाङ्ग में लग्न सारिणी भी दी रहती है। यदि उससे लग्न साधन करना अभीष्ट हो, तो जिस दिन का लग्न चाहिए, उस दिन के इष्टकालिक सूर्य के राशि व अंश द्वारा सारिणी से फल लेकर लिखें और उसमें इष्टकाल जोड़े। उस योगफल तुल्य अंक सारिणी के जिस कोष्ठक में मिलते हैं, उसके किनारे खड़ी पङ्क्ति और ऊपर पड़ी पङ्क्ति में राशि और अंश प्राप्त होते हैं, वही राशि व अंश लग्न होता है और शेष कला-विकला कुछ न्यूनाधिक हो सकता है। उसके लिए अनुपात का प्रयोग करें। जैसे—लग्न राशि के अपने और अग्रिम अंश के फल का अन्तर कर विपलादि बनावें। फिर लग्न राशि के अपने अंश और उसके योगफल (जिससे लग्न राशि अंश मिला था) का अन्तर कर, उसको भी विपल बनावें। अब अनुपात इस प्रकार करें—इतना विपल प्राप्त हुआ १° या ६० कला में, तो दूसरे इतने विपल में क्या? प्राप्त फल को पूर्व में प्राप्त लग्न के राशि व अंश में जोड़ दें। इस प्रकार स्पष्ट लग्न राश्यादि होगा।

राश्युदयमान वश लग्न ज्ञान प्रकार—विद्वानों को चाहिये कि अपने-अपने देश के राश्युदयमान द्वारा लग्न बनावें। विदित है कि मेषादि राशियों के उदयमान प्रत्येक स्थान के लिए पृथक्-पृथक् होते हैं। सूर्य एक राशि में ३० दिन या एक मास रहते हैं, इस प्रकार प्रतिदिन १ अंश- १ अंश भोग करते हैं। अर्थात् प्रत्येक दिन १ अंश सम्बन्धित उदयपल उदय से पूर्वभुक्त होता है। अत:सूर्याश्रित राशि के उदयमान को ३० से भाग देकर एक-एक दिन का भुक्तपल ज्ञात कर लें। उस एक दिन के भुक्तपल में अभीष्ट दिन के सूर्य के अंशादि का गुणाकर जितने पलादि हों, उनको उदयमान में घटाने से सूर्योदय के बाद उस राशि का भोग्यपल बचेगा। उसका घट्यादि बनावें। फिर उसमें अग्रिम राशि का उदयमान जोड़ने पर जिस राशि में इष्टकाल का अंक प्राप्त हो, वह राशि ही लग्न होता है। इस प्रकार यह भी जान लें कि मध्याह्न में सूर्याश्रित राशि से चौथी राशि, अस्तकाल में सप्तम और मध्यरात्रि में दशम राशि लग्न होता है। इस प्रकार थोड़ी ऊहपोह से ही विना सारिणी या गणित क्रिया के आपको लग्न की राशि का ज्ञान हो जाता है।

एवं जातक शास्त्र में लग्न का बड़ा महत्त्व है। विद्वानों ने भी इसकी महत्ताा को स्वीकार किया है। यथा—

त्रुटेः सहस्त्रभागो यो लग्नकालः स उच्यते।
ब्रह्मादितत्र जानाति किं पुनः प्राकृतो जनः ॥

—नारद संहिता

लग्नं देवः प्रभुः स्वामी लग्नं ज्योतिः परं मतम्।
लग्नदीपो महान् लोके लग्नं तत्त्वं दिशन् गुरुः॥

—त्रैलोक्य-प्रकाश

अतः लग्न का चिन्तन करने का प्रयास सबको करना चाहिए। लग्न के सिद्ध होने पर काल भी वश में हो सकते हैं। वही लग्न धर्म-अर्थ-काम प्राप्ति की गति प्रदान कर मोक्षमार्ग को भी प्रशस्त करता है।

दशम-चतुर्थ भाव साधनार्थ नतानयन—यदि मध्यरात्रि के बाद का इष्टकाल हो, तो उस इष्टकाल को अहोरात्रमान ६० घटी में घटाना चाहिए, अन्तर घटी रात्रिशेष होगी। उस रात्रिशेष और दिनार्द्ध का योगफल पूर्वनत घटी होगी। यदि मध्यरात्रि पूर्व का इष्टकाल हो, तो उस इष्टकाल में से दिनमान को घटाना चाहिए, अन्तरघटी रात्रिगतक़ाल होगी। उस रात्रिगतकाल और दिनार्द्ध का योगफल पश्चिमनत घटी होगी। यदि अहोरात्र के दिन भाग में दिनार्द्ध से अल्प इष्टकाल हो, तो दिनार्द्ध में से इष्टकाल को घटाना चाहिए, अन्तर घटी दिनशेष होगी। उस दिनशेष घटी को दिनार्द्ध में घटाने से पश्चिमनत घटी होगी। एवं ३० घटी में से क्रम से पूर्वनतघटी और पश्चिमनतघटी को घटाने से पूर्वोन्नत घटी और पश्चिमोन्नत घटी होती हैं।

इस प्रकार यदि पूर्वोन्नतघटी साधन किया गया हो, तो उसे इष्टकाल और इष्टकालिक सायन सूर्य में ६ राशि जोड़कर उसको सायन सूर्य के रूप में ग्रहण कर सीधे लङ्कोदय मान से भोग्यप्रकार से लग्नसाधनवत् दशमलग्न आनयन करना चहिए तथा यदि पश्चिमनत साधन किया गया हो, तो उसे इष्टकाल और इष्टकालिक सायन सूर्य को ही सायन सूर्य मानकर लङ्कोदय मान से भोग्य प्रकार द्वारा ही लग्नसाधनवत् दशमलग्न साधन करना चाहिए। उस दशमलग्न में ६ राशि मिलाने से चतुर्थलग्न होता है।

यहाँ दिन-रात्रि भेद से पूर्वापर नत और उन्नत का साधन दिखाया गया है। उपरोक्त प्रकार को इस प्रकार सूत्र रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

१. (६० – इष्टकाल) + दिनार्द्ध = पूर्वनत घटी (मध्यरात्रि बाद जन्म होने पर)
२. (इष्टकाल – दिनमान) + दिनार्द्ध = पश्चिमनतघटी (मध्यरात्रिपूर्व जन्म होने पर)

अथवा

इष्टकाल – दिनार्द्ध = पश्चिम नतघटी

३. दिनार्द्ध – इष्टकाल = पूर्वनत घटि (मध्याह्न पूर्व जन्म होने पर)
४. दिनार्द्ध – (दिनमान – इष्टकाल) = पश्चिमनत घटी (मध्याह्न बाद जन्म होने पर)

अथवा

इष्टकाल – दिनार्द्ध = पश्चिमनत घटी।

अत: उपरोक्त (२) व (४) में जान लेना चाहिए कि मध्याह्न से मध्यरात्रि पूर्व तक जन्म होने पर या इष्टकाल रहने पर; इष्टकाल – दिनार्द्ध = पश्चिमनत, इस प्रकार साधन करना कथमपि अनुचित नहीं है।

एवं पूर्वापर नतों को क्रमश: ३० में घटाने से पूर्वापर उन्नत घटी होती हैं।

यथा— ३० – पूर्वनत घटी = पूर्वोन्नत घटी।
३० – पश्चिमनत घटी = पश्चिमोन्नत घटी।

यहाँ यह स्मरणार्ह है कि पूर्वोन्नतघटी या पश्चिमोन्नतघटी को इष्टकाल मानकर लङ्काराश्युदयमान से भोग्यप्रकार द्वारा दशम लग्न साधन करना चाहिए। विशेष यहाँ यह है कि पूर्वोन्नत घटी की स्थिति में सायन सूर्य में ६ राशि जोड़कर क्रिया करनी चाहिए। इसका साधन भी लग्न साधन की तरह ही करना होता है।

तथा पूर्वनत को इष्टकाल मानकर इष्टकालिक सायन सूर्य और लङ्कोदय (लङ्काराश्युदय) मान से भुक्त प्रकार से दशम लग्न साधन करना चहिए। इस प्रकार से साधित दशमलग्न राश्यादि के राशिस्थान में ६ राशि जोड़ने से चतुर्थ लग्न होता है।

दशम लग्न साधन—इस प्रकार दशम व चतुर्थ लग्न ज्ञान के लिए यह जान लेना चाहिए कि ठीक मध्याह्न काल में जन्मेष्टकाल हो, तो स्पष्ट सूर्य ही दशमलग्न होता है। उसी प्रकार मध्यरात्रि का इष्टकाल हो, तो स्पष्ट सूर्य ही चतुर्थ लग्न होता है। दशम लग्न में ६ राशि जोड़ने पर चतुर्थ लग्न या चतुर्थ में ६ राशि जोड़ने पर दशमलग्न हो जाता है। खगोलविदों ने दशम

व चतुर्थ लग्न को क्रम से क्रान्तिवृत्त और याम्योत्तरवृत्त का ऊर्ध्व और अधः सम्पात् माना है। पूर्वनत की स्थिति में जितनी घटी से याम्योत्तरवृत्त के अधोभाग में सूर्य उन्नत या उठा हुआ होता है, उतनी घटी से षड्राशि युक्त सूर्य याम्योत्तरवृत्त के ऊर्ध्वभाग से झुका हुआ या नत होता है, जिस प्रकार क्रान्तिवृत्त और याम्योत्तरवृत्त के दोनो सम्पातों की स्थिति षड्राश्यन्तर पर होती है। इसलिए ही षड्राशियुक्त सूर्य और दशमलग्न के बीच का अन्तर भी षड् राशियुक्त सूर्य के भोग्यांश तुल्य होता है, उस समय दशमलग्न के भुक्त राश्यादि सम्बन्धी काल अहोरात्र वृत्त में पूर्वोन्नतघटी तुल्य ही सिद्ध होता है। इसलिए ही पूर्वोन्नत से दशमलग्न साधन में षड्राशियुक्त सूर्य ग्रहण करना प्रशंसनीय है एवं पश्चिम नत की स्थित में दशमलग्न और सूर्य का अन्तर सूर्यभोग्यांश तुल्य ही होता है, उस समय दशमलग्न भुक्तराश्यादि सम्बन्धी काल अहोरात्र वृत्त में पश्चिमनतघटी तुल्य ही होता है। अतएव दोनों प्रकार से दशमलग्न साधन में भोग्यप्रकार का उपयोग करना सरल है।

एवं यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि दशमलग्न साधन में लङ्कोदयमान ग्रहण करना चाहिए, कारण यह है कि स्वदेशीय याम्योत्तरवृत्त निरक्षदेशीय क्षितिजवृत्त होता है; क्योंकि याम्योत्तरवृत्त भी ध्रुवस्थानों में गया हुआ माना गया है। इसीलिए दशमलग्न साधन में निरक्षदेशीयोदयमान का प्रयोग किया जाता है। दशम व चतुर्थ लग्न परस्पर ६ राशि के अन्तर पर स्थित होने से ही दशमलग्न में ६ राशि युक्त कर चतुर्थ लग्न होता है।

तदनन्तर नत साधन के साथ दशमलग्न साधन के विषय को और स्पष्ट करने के लिए वक्ष्यमाण प्रकार उदाहरण दिया जा रहा है—

माना कि सायन सूर्य = ५/८/१६/१०, इष्टकाल = ५६/२०/४ घट्यादि और दिनमान = ३१/२७ घट्यादि है। चूँकि इष्टकाल मध्यरात्रि के बाद का है, अतः उपरोक्तानुसार रात्रिशेष = ६० – इष्टकाल ५६/२०/ = ३/४० घटी।

पूर्वनत घटी = रात्रिशेष ३/४० + १५/४३/३० दिनार्द्ध।
= १९/२३/३० घट्यादि।

अन्य प्रकार से भी

मिश्रमान = दिनमान ३१/२७ + १४/१६/३० रात्र्यार्द्ध
= ४५/४३/३० घट्यादि।

अतः परनत घटी =इष्टघटी ५६/२० – ४५/४३/३० मिश्रमान घट्यादि।
= १०/३६/३० घट्यादि।

दोनों प्रकार से साधित पूर्वापर नतों का योगघटी =
१९/२३/३० + १०/३६/३० = ३० घटी

तथा ३० – पूर्वनतघटी = पूर्वोन्नतघटी।
३० – १९/२३/३० = १०/३६/३० घट्यादि सिद्ध हुआ।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अन्य प्रकार से प्राप्त मध्यरात्रि पश्चात् का परनत वस्तुतः पूर्वोन्नत ही है, जिसे मिश्रमान द्वारा उपरोक्त प्रकार से साधन किया गया है। इसी तरह मध्यरात्रि पूर्व में साधित मिश्रमान— इष्टकाल = पूर्वनतघटी, वस्तुतः प्रथम प्रकार से परोन्नत घटी है। अतएव दशमलग्न साधन के लिए दोनों स्थितियों में सायन सूर्य में ६ राशि जोड़ना अनिवार्य होगा, साथ ही मध्यरात्रि पूर्व में परोन्नत होने से परनत के विपरीत भुक्त प्रकार से ही क्रिया की जा सकेगी।

अब पूर्वोन्नत घटी को इष्टकाल मानकर लङ्कोदयमान से भोग्य प्रकार द्वारा दशमलग्न (मध्यलग्न) का लग्नवत् साधनोदाहरण प्रस्तुत किया जा रहा है, जिसके लिए स्पष्ट सायन सूर्य में ६ राशि जोड़ना भी आवश्यक है। यदि यहाँ सायन सूर्य में ६ राशि नहीं जोड़ें, तो चतुर्थ लग्न प्राप्त होगा—

सायन सूर्य = ५/८/१६/१०
+६ राशि पूर्वनत होने से।
११/८/१६/१०

अब ३०° – ८/१६/१० भुक्तांशा = २१°/४३'/५०" सूर्य भोग्यांश।

$$\frac{२१°/४३'/५०'' \times २७८}{३०} = २०१/२२/१२$$ भोग्यपलादि (मीन)।

पूर्वोक्त पूर्वोन्नत घट्यादि = १०/३६/३०
पूर्वोन्नत पलादि = ६३६/३०/०
भोग्य (मीन) पलादि = – २०१/२२/१२
४३५/७/४८
मेषोदयमान पल = – २७८/०/०
शेष पलादि = १५७/७/४८

चूँकि शेष पलादि में वृष का उदयमान २९९ पल नहीं घटेगा। अत: वृष अशुद्ध राशि हुई और मेष शुद्ध राशि।

अब यहाँ पर—

$$\frac{\text{शेष पलादि } १५७/७/४८ \times ३०}{\text{वृष अशुद्ध राशि उदयमान } २९९} = १५^\circ/४५'/५६'' \text{ अंशादि।}$$

अब—

शुद्ध राशि संख्या = १/०/०/०
लब्धि अंशादि = - १५/४५/५६
१/१५/४५/५६ सायन दशमलग्न।
अयनांश = - २१/३७/१४
०/२४/८/४२ निरयन दशमलग्न।

अत: यही निरयन दशमलग्न है, इसमें ६ राशि जोड़ने पर ६/२४/८/४२ चतुर्थ लग्न हुआ।

२. विना नतघटी के दशमलग्न साधन प्रकार—

इष्टकालिक स्पष्ट लग्न में ६ राशि जोड़कर, उसको स्पष्ट सूर्य और दिनार्द्ध को नत घटी मानकर लङ्कोदय पर से भोग्यप्रकार द्वारा साधित लग्न, दशमलग्न होता है।

३. ०° (शून्याक्षांश) सारिणी द्वारा लग्न साधन की तरह दशम लग्न साधन किया जा सकता है।

द्वादश भाव साधन—दशमभाव और सप्तमभाव के अन्तर के तृतीयभाग का एकगुणित फल लग्न में जोड़ने पर द्वितीय भाव एवं उसका द्विगुणितफल लग्न में जोड़ने पर तृतीय भाव होते हैं। उस तृतीय भाव को द्विराशि में घटाकर उसके शेष का एक गुणित फल चतुर्थभाव में जोड़ने पर पञ्चम भाव और उस शेष के द्विगुणित फल चतुर्थ भाव में जोड़ने पर षष्ठभाव होते हैं। इस प्रकार २, ३, ५ और ६ भाव भी प्राप्त हो जाते हैं। इन भावों में क्रमश: ६-६ राशि जोड़ने से अवशिष्ट भाव जैसे—८, ९, ११ और १२ भाव भी अधिगत हो जाते हैं। इस प्रकार लग्नादि द्वादश भाव निष्पन्न होते हैं, जिनकी संज्ञायें जातकादि शास्त्रों में तनु, धन, सहज, सुहृत्, सुत, रिपु, जाया, मृत्यु, धर्म, कर्म, आय, और व्यय कही गई हैं।

एवं उपरोक्त तन्वादि द्वादश भावों में अन्यतम दो भावों का योगार्द्ध, उन दोनों भावों में पूर्वभाव का अवसान और अपर भाव की आरम्भ सन्धि होती हैं। इस प्रकार द्वादश भावों की द्वादश सन्धियाँ भी निष्पन्न हो जाती हैं।

इन भावों और सन्धियों में स्थित रहने वाला ग्रह यदि सन्ध्यांश तुल्य हो, तो निष्फल, भावांश तुल्य हो, तो सम्पूर्ण फल प्राप्त होता है। यदि ग्रहस्पष्ट भाव से अधिक या अल्प हो, तो वह अवसान-सन्धि के समीप या आरम्भ सन्धि में हो सकता है या फिर भावांश से कुछ अल्प उस भाव में ही हो सकता है। ऐसी स्थिति में ग्रह और सन्धि का अन्तर कर उसमें भाव व सन्धि के अन्तर से भाग देने पर लब्धि क्षय या चय होती है अर्थात् भावाधिक होने पर सम फल और अल्प होने पर क्षय फल होते हैं।

उपरोक्त द्वादश भाव साधन सम्बन्धी युक्तियों को यहाँ स्पष्ट किया जाता है। इन युक्तियों को सूक्ष्मता, सहजता व सरलता से जानने के लिए द्वादश भावों को उदाहरण द्वारा प्रस्तुत करते हैं।

माना कि दशमभाव =०/२४/ ८/४२, चतुर्थभाव =६/२४/ ८/४२
सप्तमभाव =९/२७/२५/१२, प्रथमभाव =३/२७/२५/१२

उपरोक्तानुसार—

$$\frac{\text{दशमभाव} - \text{सप्तमभाव}}{३} = \frac{०/२४/८/४२ - ९/२७/२५/१२}{३}$$

$$= \frac{२/२६/४३/३०}{३} = ०/२८/५४/३० \text{ तृतीयांश}$$

अत: लग्न + (तृतीयांश × १) = द्वितीयभाव और लग्न + (तृतीयांश × २) = तृतीयभाव होगा। यहाँ क्रिया लाघव करने के लिए सीधे लग्न में तृतीयांश जोड़ा, तो द्वितीय भाव और द्वितीयभाव में तृतीयांश जोड़ा, तो तृतीयभाव तथा तृतीयभाव में तृतीयांश जोड़ा, तो चतुर्थ भाव सिद्ध होगा। यथा—

३/२७/२५/१२ =	प्रथम भाव या लग्न
+ २८/५४/३०	तृतीयांश
४/२६/१९/४२ =	द्वितीय भाव
+ २८/५४/३०	तृतीयांश
५/२५/१४/१२ =	तृतीय भाव
+ २८/५४/३०	तृतीयांश
६/२४/८/४२ =	चतुर्थ भाव

अब दो राशि में तृतीयांश घटाकर शेषांश चतुर्थ भाव में जोड़ने से

पञ्चम भाव और द्विगुणित शेषांश फल को चतुर्थ भाव में जोड़ने से षष्ठ भाव होता है। उपरोक्त प्रकार क्रिया लाघवार्थ—यथा—

२/०/०/० = दो राशि; अतः	चतुर्थभाव	=	६/२४/८/४२
− २८/५४/३० तृतीयांश	शेषांश	= +	१/१/५/३०
१/१/५/३० शेषांश	पंचम भाव	=	७/२५/१४/१२
	शेषांश	= +	१/१/५/३०
	षष्ठ भाव	=	८/२६/१९/४२
	शेषांश	= +	१/१/५/३०
	पूर्वानीत सप्तम भाव	=	९/२७/२५/१२

इस प्रकार आनीत भाव वक्ष्यमाण प्रकार हैं, जिनमें पृथक्-पृथक् ६ राशि जोड़कर अवशिष्ट भाव अधोलिखित प्रकार प्राप्त हो जाते हैं—

साधित भाव—

प्रथम भाव	= ३/२७/२५/१२	+ ६ राशि =	९/२७/२५/१२	सप्तम भाव
द्वितीय भाव	= ४/२६/१९/४२	+ ६ राशि =	१०/२६/१९/४२	अष्टम भाव
तृतीय भाव	= ५/२५/१४/१२	+ ६ राशि =	११/२५/१४/१२	नवम भाव
चतुर्थ भाव	= ६/२४/८/४२	+ ६ राशि =	०/२४/८/४२	दशम भाव
पञ्चम भाव	= ७/२५/१४/१२	+ ६ राशि =	१/२५/१४/१२	एकादश भाव
षष्ठ भाव	= ८/२६/१९/४२	+ ६ राशि =	२/२६/१९/४२	द्वादश भाव

भाव संख्या	स्पष्ट सन्धियाँ		स्पष्ट सन्धियाँ	भाव संख्या
१—	४/११/५२/२७	+ ६ राशि =	१०/११/५२/२७	७
२—	५/१०/४६/५७	+ ६ राशि =	११/१०/४६/५७	८
३—	६/९/४१/२७	+ ६ राशि =	०/९/४१/२७	९
४—	७/९/४१/२७	+ ६ राशि =	१/९/४१/२७	१०
५—	८/१०/४६/५७	+ ६ राशि =	२/१०/४६/५७	११
६—	९/११/५२/२७	+ ६ राशि =	३/११/५२/२७	१२

उपरोक्त प्रकार से द्वादश भाव और उनकी सन्धियाँ निकाल कर वक्ष्यमाण चक्र की तरह कुण्डली में सजा दिया जाता है—

॥ सन्धि सहित द्वादश भाव॥

भाव	तनु	धन	भ्राता	सुख	सुत	शत्रु	जाया	आयु	भाग्य	कर्म	लाभ	व्यय
राशि	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	०	१	२
अंश	२७	२६	२५	२४	२५	२६	२७	२६	२५	२४	२५	२६
कला	२५	१९	१४	८	१४	१९	२५	१९	१४	८	१४	१९
विकला	१२	४२	१२	४२	१२	४२	१२	४२	१२	४२	१२	४२

	सन्धि	सन्धि	सन्धि	सन्धि	सन्धि	सन्धि	सन्धि	सन्धि	सन्धि	सन्धि	सन्धि	सन्धि
राशि	४	५	६	७	८	९	१०	११	०	१	२	३
अंश	११	१०	९	९	१०	११	११	१०	९	९	१०	११
कला	५२	४६	४१	४१	४६	५२	५२	४६	४१	४१	४६	५२
विकला	२७	५७	२७	२७	५७	२७	२७	५७	२७	२७	५७	२७

द्वादशभाव साधन में विशेष

खगोलीय दृष्ट्या क्रान्ति वृत के चतुष्पादों में तीन-तीन भावों का होना बताया गया है। वहीं यह भी बताया गया है कि एक पाद का तृतीयांश दो भावों के बीच की दूरी है अर्थात् लग्नान्त से चतुर्थ भावान्त के अन्तर का तृतीयांश दो भावों का अन्तर बतलाता है तथा दो भावों के योग का आधा सन्धि होती है। अत: भाव से सन्धि तक और सन्धि से अग्रिम भाव तक, यह दो भावों के बीच की दूरी हुई अर्थात् तृतीयांश का आधा, भाव से सन्धि की दूरी हुई। इस प्रकार क्रान्ति वृत के एक पाद के अन्दर तीन भाव और तीन सन्धि, कुल ६ भाव व सन्धि का साधन अभीष्ट होगा। अतएव तृतीयांश के स्थान पर यदि षष्ठांश निकाल कर लग्न में जोड़े, तो प्रथम सन्धि, इसमें षष्ठांश जोड़ें तो द्वितीय भाव होगा, इस तरह एक पाद की ससन्धि भाव सिद्ध होगा। पुन: अग्रिम पाद अर्थात् चतुर्थ भावान्त से सप्तम भावान्त के बीच जो दो राशि में से तृतीयांश घटाकर भाव साधन करते हैं, वहाँ केवल एक राशि ग्रहण कर उसमें से षष्ठांश को घटाकर शेषांश से पूर्ववत् ससन्धि भाव सिद्ध होगा।

इस प्रकार ६ भाव और उनकी ६ सन्धियाँ साधन कर उनमें क्रमश: उपरोक्तवत् ६-६ राशि को जोड़कर सभी अवशिष्ट भाव और सन्धियाँ सिद्ध होंगी। इस प्रक्रिया में एक साथ भाव व सन्धि साधन करना सम्भव होगा। इस प्रकार द्वादश भाव और उनकी सन्धि साधन करने का उपक्रम इस तरह सम्पन्न करना चाहिए—

$$\frac{\text{चतुर्थ लग्न} - \text{प्रथम लग्न}}{६} = \text{लब्धि षष्ठांशादि।}$$

अत: अब प्रथम लग्न + षष्ठांशादि..............ससन्धि चतुर्थभाव तक।

फिर ३० अंश - षष्ठांशादि = शेषांशादि।

अब चतुर्थ लग्न + शेषांशादि..........ससन्धि सप्तम भाव तक।

फिर इनमें ६-६ राशि जोड़कर द्वादश भाव व द्वादश सन्धि उपपन्न होते हैं।

जैसे— च. भा. = ६/२४/८/४२
प्र. भा. = −३/२७/२५/१२
२/२६/४३/३०÷६ = १४°/२७'/१५" षष्ठांशादि।

×३०
६०
+२६
८६
६
२६
२४
२
×६०
१२०
+४३
१६३
१२
४३
४२
१
×६०
६०
+३०
९०
६
३०
−३०
×

३०°/ ०/ ०
− १४°/२७/१५
१५°/३२'/४५" शेषांशादि।

अब ससन्धि द्वादश भाव साधन दिखाते हैं—

प्र.भा. = ३/२७/२५/१२
+ १४/२७/१५ = षष्ठांश
४/११/५२/२७ = प्र. सन्धि
+ १४/२७/१५ = षष्ठांश
द्वि.भा. = ४/२६/१९/४२
+ १४/२७/१५ = षष्ठांश
५/१०/४६/५७ = द्वि. सन्धि
+ १४/२७/१५ = षष्ठांश
तृ.भा. = ५/२५/१४/१२
+ १४/२७/१५ = षष्ठांश
६/९/४१/२७ = तृ. सन्धि
+ १४/२७/१५ = षष्ठांश
च. भाव = ६/२४/ ८/४२
+ १५/३२/४५ = शेषांश
७/ ९/४१/२७ = च. सन्धि।
+ १५/३२/४५ = शेषांश
पं.भा. = ७/२५/१४/१२
+ १५/३२/४५ = शेषांश
८/१०/४६/५७ = पं. सन्धि।
+ १५/३२/४५ = शेषांश
ष.भा. = ८/२६/१९/४२
+ १५/३२/४५ = शेषांश
९/११/५२/२७ = षष्ठ सन्धि।
+ १५/३२/४५ = शेषांश
सं.भा. = ९/२७/२५/१२

इस च.भा. से स.भा. तक शेषांश जोडना चाहिए।

इस प्रकार सप्तम भाव भाव तक साधन कर लेने के बाद प्रथम भाव से षष्ठ भाव तक सन्धि सहित ६-६ राशि जोड़ते हुए व्यय भाव व सन्धि तक सिद्ध होगा। पहले ही द्वादशभाव ससन्धि चक्र में सगृहीत कर लिखा जा चुका है।

ससन्धि द्वादश भाव की अति सरल रीति—द्वादश भाव साधन में ध्यान देने की बात विशेष यह है कि उपरोक्तानुसार प्रथमभाव से चतुर्थ भाव तक षष्ठांश द्वारा भाव व सन्धि साधन कर लें। उसके बाद तृतीय सन्धि के राशि स्थान में १ जोड़ें। चतुर्थ भाव सन्धि होगी। तृतीय भाव के राशि स्थान में दो जोड़ें, पञ्चम भाव होगा। द्वितीय भाव सन्धि में ३ जोड़ें पञ्चम भाव सन्धि होगी। द्वितीय भाव के राशिस्थान में ४ जोड़ें, तो षष्ठ भाव हो जायेगा। फिर प्रथम भाव सन्धि में ५ जोड़ें, तो षष्ठ सन्धि हो जाएगी। इस तरह प्रथम भाव से षष्ठ भाव सन्धि तक साधन करने के बाद, उन सभी भाव व सन्धि में ६ जोड़ते हुए सप्तमादि व्यय भाव व सन्धि पर्यन्त सिद्ध होंगी। इस प्रकार समय व श्रम दोनों की बचत होती है।

द्वादश भाव साधन के अन्य प्रकार—ससन्धि द्वादश भाव स्पष्ट करने के लिए सीधे लग्न स्पष्ट में यथास्थान १५° जोड़ना चाहिए, तो प्रथम भाव सन्धि होगी, फिर उसमें १५° जोड़ने पर द्वितीय भाव; फिर उसमें १५° जोड़ कर द्वितीय सन्धि प्राप्त होगी। इसी तरह १५°-१५° अग्रिम भाव व सन्धि में जोड़ते हुए ससन्धि द्वादश भाव निकल आते हैं। प्राय: आजकल विद्वान् कुण्डली में इसी प्रकार भावों व उनकी सन्धियों की गणना करते दीखते हैं। जो सिद्धान्त की दृष्टि से भी प्राय: युक्तियुक्त है और व्यवहार में भी सरल व सहज तथा गणना योग्य है। इन द्वादश भावों के प्रसङ्ग में अब तक बहुत लिखा जा चुका है, उसे वहीं देखना चाहिए। यहाँ इसे बालबोधार्थ उदाहरण द्वारा दिखाते हैं—

द्वादश भाव व सन्धि गणना की सरल रीति का उदाहरण(२१)—

उदाहरण—२० में साधित लग्न स्पष्ट = १०/९/५४/९ राश्यादि।

अब लग्न में राशि का आधा = १५ अंश जोड़ते हुए भाव व सन्धि इस प्रकार प्राप्त होंगे—

प्रथम लग्न =	१०/९/५४/९
	+ १५°/ ०/ ०
सन्धि =	१०/२४/५४/९
	+ १५°/ ०/ ०
द्वि.भा. =	११/०९/५४/९

	+ १५/ ०/ ०
सन्धि =	११/२४/५४/९
	+ १५/०/०
तृ.भा. =	०/९/५४/९
	+ १५/ ०/ ०
सन्धि =	०/२४/५४/९
	+ १५/ ०/ ०
च.भा. =	१/९/५४/९
	+ १५/ ०/ ०
सन्धि =	१/२४/५४/९
	+ १५/ ०/ ०
प.भा. =	२/९/५४/९
	+ १५°/ ०/ ०
सन्धि =	२/२४/५४/९
	+ १५/ ०/ ०
ष.भा. =	३/९/५४/९

इस प्रकार ससन्धि षष्ठ भाव साधन करने के पश्चात् उनमें ६-६ राशियाँ जोड़ते जाने से ससन्धि द्वादश भाव होते हैं। जिन्हें आगे तालिका में एकत्रित कर दिया गया है। जहाँ चलित चक्र बनाना भी दिखाया गया है।

अब यहाँ भावों व सन्धियों में स्थित ग्रहों के फलों के मूल्याङ्कन करने की विधि को दिखाया जा रहा है, जैसा ज्यौतिष ग्रन्थों में आचार्यों व विद्वानों ने बताया है।

एवं आचार्यों व विद्वानों ने इन भावों व ग्रहों की राश्यादि से भावों में ग्रहों की फल दातृत्वशक्ति का मूल्याङ्कन करते हुए कहा है कि ग्रह आरम्भ सन्धि से न्यून होने पर पीछे के भाव का फल देता है, तथा भाव के अन्त सन्धि से अधिक होने पर आगे के भाव का फल देता है। इस प्रसङ्ग में 'भावप्रवृत्तौ हि फल प्रवृत्तिः' के अनुसार भावारम्भसन्धि से अधिक ग्रह के होने पर उस भाव सम्बन्धी फल की प्रवृत्ति होती है। वहाँ से क्रमशःफल की वृद्धि होती हुई भाव तुल्य ग्रह के होने पर पूर्ण फल प्राप्त हो जाता है। माना कि पूर्ण फल की मात्रा '१' है। वहीं पर सन्धि और ग्रह का अन्तर भी

परममान में होता है, अर्थात् भाव और सन्धि के अन्तर तुल्य, सन्धि और ग्रह का अन्तर हो जाता है। वहाँ से क्रमश: भाव फल का ह्रास होने लगता है और वहाँ अवसान (भावान्त) सन्धि तुल्य ग्रह के होने पर फल का नाश हो जाता है, वहाँ सन्धि ग्रह का अन्तर भी शून्य तुल्य होता है। वही सन्धि और ग्रह के अन्तरवश से ही फल की वृद्धि और ह्रास का ज्ञान होता है। अतएव वहाँ अनुपात से अभीष्ट स्थान में ग्रहों के भावफल होते हैं। जैसे—

यदि भाव और सन्धि के अन्तर तुल्य, सन्धि और ग्रह के अन्तर से परमफल १ हो, तब इष्ट सन्धि और ग्रह के अन्तर से क्या? अत: अभीष्ट स्थान में भाव फल—

$$\frac{१ \times \text{सन्धि} \sim \text{ग्रह}}{\text{भाव} - \text{सन्धि}} = \frac{\text{सन्धि} \sim \text{ग्रह}}{\text{भाव} - \text{सन्धि}}$$

अत: किसी भाव का ग्रह जनित न्यूनाधिक फल ज्ञात करने के लिए आचार्य केशव के जातक पद्धति में सूझाये युक्ति के अनुसार सन्धि और ग्रह के अन्तर में भाव व सन्धि के अन्तर से भाग देकर फल की वृद्धि या क्षय जानना चाहिए, अर्थात् भाव से अधिक ग्रह हो, तो फल का ह्रास और भाव से अल्प ग्रह हो, तो फल की वृद्धि जाननी चाहिए।

कुण्डली लेखन प्रकार

कुण्डली किस प्रकार से लिखी जाती है? इसे दिखाने से पूर्व यह बताना आवश्यक है कि इसकी कई प्रकार प्रचलन में है, जैसे—टेवा (टिप्पण),जन्माक्षर पत्रिका, जन्मपत्रिका, षड्वर्गीय जन्मपत्रिका, दशवर्गीय जन्म पत्रिका, षोडशवर्गीय जन्मपत्रिका आदि। लेकिन लिखने की दृष्टि से ये सभी समान ही होते हैं, केवल उनमें विषयगत विस्तार का अन्तर होता है। प्राय: इन सब चीजों का ज्ञान व्यवहार से हो जाता है। इन कुण्डलियों को किस प्रकार लिखना आरम्भ करें, इसे प्राकृत उदाहरण से दिखाया जा रहा है—

॥ श्री गणेशाय नम:॥

स जयति सिन्धुर्वदनो देवो यत्पादपङ्कजस्मरणम्।
वासरमणिरिव तमसां राशीन्नाशयतु विघ्नानाम्॥

स्वस्ति श्रीमन्नृपतिविक्रमार्कराज्यसमयातीत श्रीशुभसम्वत् २०६१ वर्षे श्रीमद्भूपतिशालिवाहन कृतशाके १९२६ प्रवर्तमाने हेमलम्ब नाम सम्वत्सरे सौम्यायने याम्यगोलगते श्रीदिनकरे वसन्तर्तौ महामाङ्गल्यफलप्रदे मासोत्तमे चैत्रे मासे शुक्ले पक्षे द्वादशी तिथौ शुक्रवासरे घट्यादय: ३३/५ परं त्रयोदशी जन्मतिथौ मघानाम नक्षत्रे घट्यादय: ३३/३९ परं पूर्वाफाल्गुनी जन्मनक्षत्रे शूलनाम योगे घट्यादय: २२/४६ परं गण्डजन्मयोगे तात्कालिके कौलव करणे सिंह राशिस्थिते चन्द्रे मूषक योनौ मनुष्य गणे क्षत्रिय वर्णे चतुष्पद् वश्ये श्वान् वर्गे मध्य युंजायां अग्नि हंसके मध्यनाडी स्थिते श्रीफणीश्वरचक्रे मीन सङ्क्रान्तेर्गतांशा: १९ कला ३२ विकला ३८ श्रीमन्मार्तण्डमण्डला-र्धोदयाद् गतघट्यादय: ५४/४०/०० एतत्समये कुम्भलग्नवहमानायां शुभवेलायां मधुबनी विहार जन्मस्थाने विप्रज्ञातौ श्रीयुत् नारायणात्मज श्रीमान् सुरेश इत्येषां गृहे अखण्ड सौभाग्यवती भार्याया अमुक देव्या: सुदक्ष कुक्षौ प्रथम पुत्ररत्नमजीजनत्।

तदभिधानं पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रस्य द्वितीय चरणानुगतं टकाराद्यक्षरे अ स्वरोपरि टमाटर इति जन्म नाम। परं मातृ पित्रोरूल्लापने यथारुचि (दत्तात्रेय) इति नाम देयम्।

घाताख्य:—ज्येष्ठ मास: ३-८-१३ तिथय: शनिवासर: मूल नक्षत्रं धृतिनामयोग: बव करणं प्रथम प्रहर: षष्ठम पुरुषघातचन्द्र इति। शुभम्भवतु॥ कल्याणमस्तु॥ भयातं घट्यादय २१/०१ भभोग: घट्यादय: ६०/४३ स्पष्ट देशान्तरं पलादि ३२/३०॥

इसके नीचे यदि ग्रह स्पष्ट किया गया हो, तो अधोलिखितानुसार गति आदि के साथ स्पष्ट ग्रह व्यवस्थित करना चाहिए, तत्पश्चात् जन्माङ्ग चक्र व राशि चक्र रखना चाहिए।

पाठक की सुविधा के लिए, जिससे कुण्डली लेखन में सहायता मिल सके, यहाँ नक्षत्र योनि गणादि तालिका, द्वादश राशियों के वर्णादि सहित घातादि तालिका और वर्ग विचार तालिका दे दी गई है।

नक्षत्र योनि गणादि बोधक तालिका

क्रम	नक्षत्र पाद-गताक्षर	नक्षत्र	योनि	गण	युञ्जा	नाडी	राशि	स्वामी
१.	चु.चे.चो.ला.	अश्विनी	अश्व	देव	पूर्व	आद्य	मेष	मं.
२.	ली.लू.ले.लो	भरणी	गज	मनुष्य	पूर्व	मध्य	मेष	मं.
३.	आ.इ.उ.ए.	कृत्तिका	मेष	राक्षस	पूर्व	अन्त्य	मेष१ वृ.३	मं.१शु३
४.	ओ.वा.वि.वु.	रोहिणी	सर्प	मनुष्य	पूर्व	अन्त्य	वृषभ	शु.
५.	वे.वो.का.की.	मृगशीर्ष	सर्प	देव	पूर्व	मध्य	वृ.२ मि.२	शु.२ बु.२
६.	कु.घ.ङ.छ.	आर्द्रा	श्वान	मनुष्य	मध्य	आद्य	मिथुन	बु.
७.	के.को.हा.ही.	पुनर्वसु	मार्जार	देव	मध्य	आद्य	मि.३ क.१	बु.३ चं.१
८.	हु.हे.हो.डा.	पुष्य	मेष	देव	मध्य	मध्य	कर्क	चन्द्र
९.	डी.डू.डे.डो.	आश्लेषा	मार्जार	राक्षस	मध्य	अन्त्य	कर्क	चन्द्र
१०.	मा.मी.मु.मे.	मघा	मूषक	राक्षस	मध्य	अन्त्य	सिंह	सूर्य
११.	मो.टा.टी.टु.	पू.फा.	मूषक	मनुष्य	मध्य	मध्य	सिंह	सूर्य
१२.	टे.टो.पा.पी.	उ.फा.	गौ	मनुष्य	मध्य	आद्य	सि.१ कन्या३	सू.१ बु.३
१३.	पू.ष.ण.ठ.	हस्त	महिषी	देव	मध्य	आद्य	कन्या	बु.
१४.	पे.पो.रा.री.	चित्रा	व्याघ्र	राक्षस	मध्य	मध्य	क.२ तु.२	बु.२ शु.२
१५.	रु.रे.रो.ता.	स्वाती	महिषी	देव	मध्य	अन्त्य	तुला	शुक्र
१६.	ती.तू.ते.तो.	विशाखा	व्याघ्र	राक्षस	मध्य	अन्त्य	तु.३ वृ.१	शु.३ मं.१
१७.	ना.नी.नू.ने.	अनुराधा	मृग	देव	मध्य	मध्य	वृश्चिक	मंगल
१८.	नो.या.यी.यु.	ज्येष्ठा	मृग	राक्षस	अन्त्य	आद्य	वृश्चिक	मंगल
१९.	ये.यो.भा.भी.	मूल	श्वान	राक्षस	अन्त्य	आद्य	धनु	गुरु
२०.	भू.धा.फ.ढ़ा.	पू.षा.	कपि	मनुष्य	अन्त्य	मध्य	धनु	गुरु
२१.	भे.भो.जा.जी.	उ.षा.	नकुल	मनुष्य	अन्त्य	अन्त्य	ध.१ मकर३	गु.१ श.३
२२.	जू.जे.जो.खा.	अभिजित्	नकुल	मनुष्य	अन्त्य	अन्त्य		
२३.	खी.खू.खे.खो.		श्रवण	कपि	देव	अन्त्य	अन्त्य	मकरशनि
२४.	गा.गी.गू.गे.	धनिष्ठा	सिंह	राक्षस	अन्त्य	मध्य	म.२ कुं.२	शनि
२५.	गो.सा.सी.सू.	शतभिषा	अश्व	राक्षस	अन्त्य	आद्य	कुम्भ	शनि
२६.	से.सो.दा.दि.	पू.भा.	सिंह	मनुष्य	अन्त्य	आद्य	कु.३ मी.१	श.३ गु.१
२७.	दु.थ.झ.ञ.	उ.भा.	गौ	मनुष्य	अन्त्य	मध्य	मीन	गुरु
२८.	दे.दो.चा.ची.	रेवती	गज	देव	पूर्व	अन्त्य	मीन	गुरु

द्वादश राशियों के वर्णादि सहित मासादिघाततालिका

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
वर्ण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	विप्र	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	विप्र	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र	विप्र
वश्य	चतु.	चतु.	मानव	जलचर कीट	चतु.	मानव	मानव	कीट सरी.	मानव चतु.	चतु. जल.	मनुष्य	जलचर
तत्त्व	अग्नि	भूमि	वायु	जल	अग्नि	भूमि	वायु	जल	अग्नि	भूमि	वायु	जल
मास	कार्तिक	मार्ग	आषाढ़	पौष	ज्येष्ठ	भाद्रपद	माघ	आश्विन	श्रावण	वैशाख	चैत्र	फाल्गुन
तिथि	१-६-११	५-१०-१५	२-७-१२	२-७-१२	३-८-१३	५-१०-१५	४-९-१४	१-६-११	३-८-१३	४-९-१४	३-८-१३	५-१०-१५
वार	रवि	शनि	सोम	बुध	शनि	शनि	गुरु	शुक्र	शुक्र	भौम	गुरु	शुक्र
नक्षत्र	मघा	हस्त	स्वाति	अनुराधा	मूल	श्रवण	शतभिषा	रेवती	भरणी	रोहिणी	आर्द्रा	आश्लेषा
योग	विष्कुम्भ	सुकर्मा	परिघ	व्याघात	धृति	शुभ	शुक्ल	व्यति.	वज्र	वैधृति	गण्ड	वज्र

द्वादश राशियों के वर्णादि सहित मासादिघाततालिका

करण	बव	शकुनी	चतुष्पाद	नाग	बव	कौलव	तैत्तिल	गर	तैत्तिल	शकुनी	वणिज्	विष्टि
प्रहर	१	४	३	१	१	१	४	१	१	४	३	४
पु.घा.चं.	१	५	९	२	६	१०	३	७	४	८	११	१२
स्त्री.घ.चं.	१	८	७	९	४	३	६	२	१०	११	५	१२
संज्ञा	चर	स्थिर	द्विस्व.	चर	स्थिर	द्विस्व.	चर	स्थिर	द्विस्व	चर	स्थिर	द्विस्व.
पु.स्त्री	पुं.	स्त्री	पुं.	स्त्री	पुं	स्त्री	पुं	स्त्री	पुं	स्त्री	पुं	स्त्री

क्र.	वर्गाक्षर	वर्ग	वर्गस्वामी
१.	अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ ए, ऐ, ओ, औ, अं अः	अ वर्ग	गरुड
२.	क, ख, ग, घ, ङ	क वर्ग	मार्जार
३.	च, छ, ज, छ, ञ	च वर्ग	सिंह
४.	ट, ठ, ड, ढ, ण	ट वर्ग	श्वान
५.	त, थ त, ध, न	त वर्ग	सर्प
६.	प, फ, ब, भ, म	प वर्ग	मूषक
७.	य, र, ल, व	य वर्ग	मृग
८.	श, ष, स ह	श वर्ग	मेष

वर्ग विचार—जन्म नक्षत्रपादगत अक्षर जिस अकारादि अष्टवर्ग में पड़े, उस पर से उसका स्वामी जानना चाहिये। जैसे वर्गअक्षर पर जन्म नाम है, तो वर्गस्वामी गरुड होगा। कवर्ग अक्षर पर नाम रहने से उसका स्वामी मार्जार होगा। इसी प्रकार अन्यत्र भी समझना चाहिये। अपने नाम के वर्ग से पञ्चम वर्ग का वैर होता है। जैसे—गरुड सर्प का, मार्जार मूषक का इत्यादि और अपने से तीसरा सम होता है। जैसे— गरुड का सिंह सम है तथा चतुर्थ मित्र होता है। जैसे— गरुड का मित्र श्वान है।

।। अथ सगतिका सूर्यादि स्पष्टग्रह तालिका ।।

ग्रह	राशि	अंश	कला	विकला	गति-कलादि	मार्गी	अवस्था:	कारका:
सूर्य	११	१९	३२	३८	५९/११	मार्गी	कुमार	अमात्य
चन्द्र	४	१७	५६	९	७८८/२३	मार्गी	युवा	मातृ
मंगल	१	१४	२९	१७	३६/२०	मार्गी	युवा	पितृ
बुध	०	६	२२	३८	६१/५४	मार्गी	कुमार	ज्ञाति
गुरु	४	२०	११	३३	५/४८	वक्री	वृद्ध	आत्म
शुक्र	१	४	२३	३२	५४/४१	मार्गी	मृत	स्त्री
शनि	२	१३	१८	१६	२/१६	मार्गी	युवा	पुत्र
राहु	०	१८	४७	७	३/११	वक्री	वृद्ध	भ्रातृ
केतु	६	१८	४७	७	३/११	वक्री	वृद्ध	=

।। अथ राश्यङ्गचक्रमिदम् ।।

यदि बड़ी कुण्डली बनानी हो, तो अग्रलिखितानुसार विषयों को यथाक्रम सजाकर रखना चाहिए।

।। ससन्धि द्वादशभाव तालिका ।।

भाव	तनु	सं.	धन.	सं.	सहज.	सं.	सुख	सं.	सुत	सं.	शत्रु.	सं.
रा	१०	१०	११	११	०	०	१	१	२	२	३	३
अं.	९	२४	९	२४	९	२४	९	२४	९	२४	९	२४
क.	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४
वि.	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९
भाव	जाया	सं.	आयु	सं.	भाग्य	सं.	कर्म	सं.	लाभ	सं.	व्यय	सं.
रा.	४	४	५	५	६	६	७	७	८	८	९	९
अं.	९	२४	९	२४	९	२४	९	२४	९	२४	९	२४
क.	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४	५४
वि.	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९

उपरोक्त ससन्धि द्वादश भाव तालिका और सूर्यादि स्पष्ट ग्रह के अनुसार सजाकर नीचे चलित चक्र, इस प्रकार बनाया गया है।
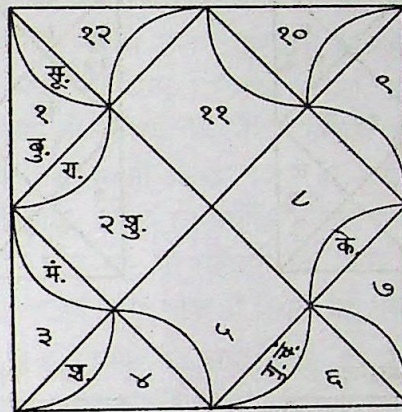
॥ अथ होराचक्रमिदम् ॥
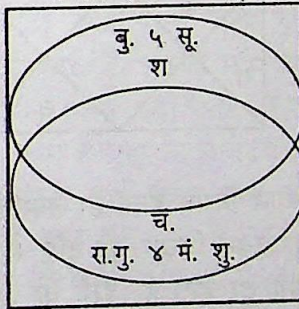
॥ अथ द्रेष्काणचक्रमिदम् ॥

चलित चक्र में ग्रह रखते समय ध्यान देना चाहिए कि ग्रहस्पष्ट, भाव या सन्धि से कम या समान है, यदि ऐसा है, तो उसी भाव या सन्धि में और यदि अधिक हो, तो अग्रिम भाव या सन्धि में ग्रह है, जाने।

दूसरे-दूसरे भावों में राशि स्थापन—इष्टकाल, भयात, भभोग, ग्रहस्पष्ट, लग्न, द्वादशभाव आदि स्पष्ट करने के बाद क्रमशः लग्न से दूसरी राशि दूसरे भाव में, लग्न से तीसरी राशि तीसरे भाव में, लग्न से चौथी-राशि चौथे भाव में और इसी प्रकार सब भावों में राशियां लिखी जाती हैं, परन्तु भारतीय ज्योतिष में इस बिन्दु को स्थिर मानकर गणना एक ही स्थान से की जाती है; क्योंकि सृष्टि के आदि में जैसा मेषादि बिन्दु स्थित

॥ अथ सप्तमांशचक्रमिदम् ॥

॥ अथ नवमांशचक्रमिदम् ॥

॥ अथ द्वादशांशचक्रमिदम् ॥

॥ अथ त्रिंदशांशचक्रमिदम् ॥

था, इस प्रकार लग्न को भी इस चक्र में स्थान नियत होता है। उपरोक्त चक्रों को देखने से यह बात समझ आ जाती है। अयन विचार की दृष्टि से मेषादि बिन्दु अपने आदि स्थान से अब तक जितनी दूर हटा है, इसी को अयनांश कहते हैं। इसकी चर्चा पहले ही की जा चुकी है।

यहाँ विशेष जानने की बात यह हो सकती है कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है परन्तु लट्टू की तरह इसकी धुरी के अन्तिम बिन्दु एक स्थान पर स्थिर नहीं रहते हैं। यह बिन्दु एक वर्ष में करीब ५०.२ विकला का कोण बनाते हैं और पूरा एक चक्र करीब-करीब २५,८०० वर्षों में पूर्ण होता है। पाश्चात्य ज्योतिष में धुरी के बिन्दु को अस्थिर मानते हैं।

प्रत्येक स्थान में मेष, वृषभ, मिथुन इत्यादि राशियों के नाम लिखने के बदले उनके स्थान में अंक लिख देते हैं, जैसे—मेष के बदले १, वृषभ के बदले २, मिथुन के बदले ३, कर्क के बदले ४, सिंह के बदले ५, कन्या के बदले ६ और इसी प्रकार से अन्य राशियों की संख्याएँ चक्रों में लिखी गई हैं।

राशि-भाव स्थापन क्रम—उपरोक्त उदाहरण में दिए गए चक्रों में कुम्भ राशि पहले भाव में है। पहले भाव को ही लग्न कहते हैं। दूसरे भाव में मीन, तीसरे में मेष, चौथे में वृष, पांचवें में मिथुन, छठे में कर्क, सातवें में सिंह, आठवें में कन्या, नवें में तुला, दसवें में वृश्चिक, ग्यारहवें भाव में धनु, बारहवें भाव में मकर है। जन्म-लग्न को हमेशा पहले भाव में लिखा जाता है और इसके बाद जो राशियों का नैसर्गिक क्रम है, उसे दूसरे भाव, तीसरे भाव इत्यादि के क्रम से ही लिखा जाता है। पाठकों को चाहिए कि 'भाव' शब्द को भली-भाँति समझ लें क्योंकि इसका प्रयोग बार-बार होना है। आगे के अध्यायों में हम यह भी बताएंगे कि किस भाव से किन-किन बातों का विचार करना चाहिए और भावों में स्थित ग्रह क्या-क्या फल देते हैं।

उपरोक्त प्रासङ्गिक विषयों से आगे बढ़ने के पूर्व हम पाठकों का ध्यान पुन: निम्नलिखित बातों की ओर आकर्षित करते हैं—

(क) जन्म का समय ठीक होना चाहिए। प्राय: जन्म का समय भारतीय स्टैण्डर्ड टाइम में रहता है तो उसे उपरोक्त विधि से लोकल समय में बदल देना चाहिए।

(ख) ज्योतिषजन जन्म-कुण्डली में 'सूर्योदयादिष्टम्'.... घड़ी और पल साधन करते हैं। इसका मतलब है कि सूर्योदय से इतने घड़ी इतने पल के बाद जन्म हुआ। घड़ी और पल को घण्टा-मिनट में बदलकर और जिस स्थान का जन्म है वहां के सूर्योदय में जोड़ने से जन्म का समय घण्टा-मिनट में आ जायेगा। यहाँ ध्यान देना चाहिए कि सूर्योदय यदि स्थानीय मध्यम काल है तो जन्म समय भी स्थानीय मध्यमकाल आयेगा। यदि स्टैण्डर्ड टाइम है तो जन्म समय भी स्टैण्डर्ड टाइम में होगा। ६० घड़ी में २४ घण्टे १ घड़ी में २४ मिनट होते हैं।

(ग) जो लग्न स्पष्ट, ग्रह स्पष्ट आदि यहाँ निकालने बताए गए हैं, उसी प्रकार से किसी भी देश में जन्म लिया हुआ जातक के लिए निकाले जा सकते हैं। उसके लिए भी उस स्थान के स्थानीय काल तथा स्टैण्डर्ड टाइम को जानना आवश्यक है। वहां के स्टैण्डर्ड टाइम को भारतीय टाइम में बदल कर इष्टकाल ग्रह स्पष्ट आदि करने चाहिए। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि हरहाल में ग्रह स्पष्ट भयात, भभोग आदि को छोड़कर लग्न, दशमलग्न आदि का साधन जन्म स्थानीय इष्टकाल से ही करना उचित है।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का चतुर्थ पुष्प रूप 'कुण्डली गणित विवेचन' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।४।।

—⁂—

५

सप्तवर्ग चक्र विवेचन

जन्माङ्ग होरा, द्रेष्काण, नवमांश, द्वादशांश तथा त्रिंशांश चक्र से षड्वर्ग और उनके साथ सप्तमांश चक्र को रखने पर सप्तवर्ग होता है।

१. जन्माङ्ग चक्र—इस चक्र को बनाने के लिये बारह खानों के आकाशीय रेखाचित्र में ऊपर से ठीक मध्य में स्पष्ट लग्न की राशि संख्या को रखकर अन्य खानों में क्रम से उससे आगे-आगे की राशि संख्यायें लिखी जाती हैं। तदनन्तर स्पष्ट ग्रहों को जो-जो राशि प्राप्त हो, उनको उस उस राशि में रख देने से जन्माङ्ग चक्र तैयार हो जाता है। जैसे पहले ही स्पष्ट लग्न (कुम्भ) की ११वीं राशि संख्या से अन्य राशियों की संख्यायें रखकर ग्रहों को भी उनकी-उनकी राशियों में रख देने से यह चक्र बनायी गई है।

इस चक्र के साथ-साथ राशिचक्र भी बनाया जाता है। यह चक्र जन्मराशि को लग्न स्थान में रखकर पूर्ववत् ग्रहों को उनकी-उनकी राशियों में रखने से राशि चक्र तैयार हो जाता है, वैसे यह चक्र वर्ग में ग्रहण नहीं है। प्रसङ्गवश बालपाठक के बोध के लिए यहाँ यह भी उल्लेख करना अनुचित नहीं है कि जन्म के समय जो नक्षत्र रहता है, उसे जन्म नक्षत्र और उस नक्षत्र से प्राप्त राशि जन्म राशि होती है। उपरोक्त चक्र में चन्द्र को जन्मराशि की संख्या वाली खाना में रखा गया है।

२. होरा चक्र—प्रत्येक राशि में पन्द्रह-पन्द्रह अंश की दो होरा होती है। विषम राशि में प्रथम सूर्य तथा द्वितीय चन्द्र की होरा रहती है। समराशि में प्रथम चन्द्र तथा द्वितीय सूर्य की होरा रहती है।

कुम्भ जन्म लग्न व लग्नराशि विषम है और १५ अंश से अल्प है। अत: लग्न में सूर्य की होरा होगी। होरा चक्र में केवल दो ही राशि रहती हैं—सिंह तथा कर्क। अत: सिंह राशि लग्न होगी, तब कर्क उसके सम्मुख रहेगी।

सूर्य मीन राशि के १५ अंश से अधिक है। अत: समराशि की

दूसरी होरा सिंह राशि में सूर्य रहेगा और चन्द्र सिंह राशि के उत्तरार्ध में है, अत: विषमराशि की दूसरी होरा कर्क में चन्द्र रहेगा। इस तरह अन्य ग्रहों का भी स्थापन करना चहिये।

३. द्रेष्काण चक्र—एक राशि के तृतीयांश को द्रेष्काण कहा जाता है अर्थात् एक राशि में ३ द्रेष्काण रहते हैं। एक-एक द्रेष्काण दस-दस अंश का रहेगा। उनमें प्रथम द्रेष्काण उसी राशि का; दूसरा उससे पञ्चम राशि का तथा तीसरा पहले से नवीं या दूसरे से पञ्चम राशि का रहता है। अर्थात् तीनों द्रेष्काण एक-दूसरे से पञ्चम राशि के रहते हैं।

जन्मलग्न कुम्भ राशि के प्रथम दस अंश में है। अत: लग्न का द्रेष्काण कुम्भ राशि होगी।

सूर्य ११/१९/३२/३८ है। यह द्वितीय द्रेष्काण में है। अत: कर्क राशि के द्रेष्काण में सूर्य रहेगा। चन्द्र ४/१७/५६/५४ सिंह के दूसरे द्रेष्काण (सिंह से पाँचवीं राशि) धनु राशि का रहेगा। इसी प्रकार और ग्रहों का भी साधन करना चाहिये।

४. सप्तमांश चक्र—३० अंश में ७ का भाग देने से अंशादि ४/१७/८ लब्धि प्राप्त होता है। अत: ४/१७ का एक-एक भाग मानकर सात खण्ड किये; उनमें विषमराशि में प्रथमादि खण्ड अपनी राशि से प्रारम्भ होता है और समराशि में प्रथमादि खण्ड अपनी राशि से सप्तम राशि से प्रारम्भ होता है।

लग्न १०/९/५४/९ है। कुम्भ के तीसरे सप्तमांश में आता है। अत: लग्न का सप्तमांश मेष हुआ। सूर्य ११/१९/३२/३८ है। यह मीन के पाँचवें सप्तमांश में है। अत: सूर्य का सप्तमांश (मीन से सप्तम कन्या राशि और इससे पाँचवाँ सप्तमांश) १० राशि हुआ। चन्द्र ४/१७/५६/५४ है। अत: चन्द्र का सप्तमांश सिंह से पाँचवाँ सप्तमांश हुआ। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का भी जान लेना चाहिये।

५. नवांश चक्र—३० अंश में ९ का भाग देने से अंशादि ३/२० लब्धि प्राप्त होता है। इसी लब्धि तुल्य एक राशि में ९ खण्ड होंगे। मेष, सिंह, धनु राशि में नवमांश का प्रारम्भ मेष से होगा। वृषभ, कन्या व मकर राशि में नवमांश का प्रारम्भ मकर से मिथुन, तुला व कुम्भ राशि

में नवमांश का प्रारम्भ तुला से तथा कर्क, वृश्चिक व मीन राशि में नवमांश का प्रारम्भ कर्क से होगा।

लग्न १०/९/५४/९ है। यह कुम्भ के ३ नवमांश में पड़ा। अतः लग्न का नवमांश धनु हुआ। सूर्य ११/१९/३२/३८ है। यह मीन के ६ नवमांश में पड़ा। अतः धनु के नवमांश में सूर्य है। तथा चन्द्र ४/१७/५६/५४ है। यह सिंह के ६ नवमांश में है। अतः चन्द्र कन्या में मेषादि से गिनने पर है। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का भी समझ लेना चाहिये।

६. द्वादशांश चक्र—३० अंशों में १२ का भाग देने से अंशादि २/३० लब्धि प्राप्त होता है। अर्थात् एक राशि में २/३० अंशादिलब्धितुल्य १२ विभाग रहेंगे। उनमें अपनी राशि से ही द्वादशांश का प्रारम्भ होता है।

लग्न १०/९/५४/९ है। यह कुम्भ राशि के चौथे द्वादशांश में वृष राशि का हुआ। अतः लग्न का द्वादशांश वृष राशि हुई। सूर्य ११/१९/३२/३८ मीन राशि के ८वें द्वादशांश में तुला राशि का है। अतः सूर्य तुला के द्वादशांश का हुआ। चन्द्र ४/१७/५६/५४ सिंह राशि के ८वें द्वादशांश मीन का है। अतः चन्द्र मीन राशि के द्वादशांश में रहेगा। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का भी समझना चाहिये।

७. त्रिंशांश चक्र—विषमराशि में ५, ५, ८, ७, ५ इन अंशों के पांच खण्ड त्रिंशांश में होते हैं। इन खण्डों के स्वामी क्रमशः मंगल, शनि, गुरु, बुध तथा शुक्र हैं और सम राशि में इनके विपरीत खण्ड तथा स्वामी रहते हैं अर्थात् ५/७/८/५/५ इन खण्डों के क्रमशः शुक्र, बुध, गुरु, शनि तथा मंगल स्वामी हैं। खण्ड स्वामियों की दो-दो राशियाँ होती हैं। अतः विषम राशि में उस ग्रह की विषम राशि का त्रिशांश होगा और सम राशि में उस ग्रह की समराशि का त्रिंशाश जानें।

लग्न १०/९/५४/९ विषम राशि के दूसरे खण्ड (शनि) में है। अतः शनि की विषम राशि ११ लग्न की त्रिशांश हुई। सूर्य ११/१९/३२/३८ समराशि के तीसरे खण्ड (गुरु) में है। अतः गुरु की समराशि १२ सूर्य त्रिंशांश हुई। तथा चन्द्र ४/१७/५६/५४ विषम राशि के तीसरे

खण्ड (गुरु) के त्रिशांश में है। अत: गुरु की विषमराशि ९ चन्द्र की त्रिंशांश हुई। इसी प्रकार अन्य ग्रहों का भी त्रिशांश निकालना चाहिए।

दशवर्ग साधन—सप्तवर्ग में दशांश, षोडशांश तथा षष्ट्यंश चक्र जोड़ने से दस वर्ग कुण्डली बन जाती है।

दशांशचक्र—विषम राशि में अपनी राशि से तथा सम राशि में अपने से नौवीं राशि से दशांश के स्वामी होते हैं। एक दशांश में ३ अंश होते हैं।

षोडशांश चक्र—चर राशि में मेष से, स्थिर राशि में सिंह से तथा द्विस्वभाव राशि में धनु से षोडशांश का प्रारम्भ होता है। प्रत्येक राशि का सोलहवाँ भाग एक षोडशांश होता है। एक षोडशांश १ अंश ५२ कला ३० विकला का रहता है।

षष्ट्यंशचक्र

३० कला का एक षष्ट्यंश होता है। अत: ग्रह स्पष्ट की राशि को छोड़कर उसके अंश को द्विगुणित करके कला में ३० का भाग देकर लब्धि को उसमें मिला दें। यह लब्ध संख्या गत षष्ट्यंश होगी। उसमें एक मिलाने से वर्तमान षष्ट्यंश होता है। षष्ट्यंश के ६० देवता पठित हैं। विषम राशि के देवता के क्रम को उलट देने से सम राशि के षष्ट्यंश के देवता होते हैं।

अभीष्ट षष्ट्यंश की राशि जानने के लिये १२ से भाग देकर शेष राशि अभीष्ट षष्ट्यंश की होगी। राशि गणना का प्रारम्भ स्वराशि से ही होता है।

इस प्रकार जन्माङ्ग, होरा से त्रिशांश तक चक्र बनाने से सप्तवर्गी कुण्डली का स्वरूप तैयार हो जाता है। सप्तवर्गी कुण्डली में दशांश चक्र, षोड्शांश चक्र और षष्ट्यंश चक्र बना देने से वह दशवर्गीय कुण्डली हो जाता है। इसमें अन्य ६ चक्रों को मिलाने से षोडशवर्गीय कुण्डली भी तैयार कर ली जा सकती है। इसे ग्रन्थान्तर से जानना चाहिए। ग्रन्थविस्तार भय से उन्हें यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

अथ षड्वर्गचक्रसंज्ञापिकातालिका

चक्र	अंश	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.ध	ा.म	ा.	कु.	मी.
होराचक्र	१-१५	५ र.	४ चं.	५ र.	४ चं.	५ र.	४ चं.	५ र.	४ चं.	५ र.	४ चं.	५ र.	४ चं.
	१६-३०	४ चं.	५ र.	४ चं.	५ र.	४ चं.	५ र.	४ चं.	५ र.	४ चं.	५ र.	४ चं.	५ र.
द्रेष्काण चक्रम्	१-१०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
	११-२०	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
	२१-३०	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८
सप्तमांश चक्र	४-१७	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ र.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.
	८-३४	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ र.	१२ बृ.	७ शु.
	१२-५१	३ बु.	१० श.	५ र.	१२ वृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.
	१७-९	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ र.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.
	२१-२६	५ र.	१२ बृ.	७ शु	२ शु	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.
	२५-४३	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ र.	१२ बृ.	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.
	३०-०	७ शु.	२ शु.	९ बृ.	४ चं.	११ श.	६ बु.	१ मं.	८ मं.	३ बु.	१० श.	५ र.	१२ बृ.

नवमांशचक्र

राशि	३-२०	६-४०	१०	१३-२०	१६-४०	२०	२३-२०	२६-४०	३०
मेष, सिंह, धनु	१	२	३	४	५	६	७	८	९
वृष, कन्या, मकर	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६
मिथुन, तुला, कुम्भ	७	८	९	१०	१११	२	१	२	३
कर्क, वृश्चिक, मीन	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२

विषम त्रिशांश समत्रिंशांश

त्रिंशांश चक्र	विषम	५	५	८	७	५	सम	५	७	८	५	५
	अं.	५	१०	१८	२५	३०	अं.	५	१२	२०	२५	३०
	ग्र.	मं.	श.	बृ.	बु.	शु.	ग्र.	शु.	बु.	बृ.	श.	मं.
	रा.	१	११	९	३	७	रा.	२	६	१२	१०	८

द्वादशांशचक्र

१.	२-३०	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	१२ श.	१२ बृ.
२.	५-०	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ वृ.	१ मं.
३.	७-३०	३ बु.	४ चं.	५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ वृ.	१० श.	११ श.	१२ वृ.	१ मं.	२ शु.
४.	१०-०	४ चं.	५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ बृ.	१० श.	११ श.	१२ बृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.
५.	१२-३०	५ सू.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ वृ.	१० श.	११ श.	१२ वृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.
६.	१५-०	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ वृ.	१० श.	११ श.	१२ वृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ र.
७.	१७-३०	७ शु.	८ मं.	९ वृ.	१० श.	११ श.	१२ वृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ र.	६ बु.
८.	२०-०	८ मं.	९ वृ.	१० श.	११ श.	१२ वृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ र.	६ बु.	७ शु.
९.	२२-३०	९ वृ.	१० श.	११ श.	१२ वृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.
१०.	२५-०	१० श.	११ श.	१२ वृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ वृ.
११.	२७-३०	११ श.	१२ वृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ वृ.	१० श.
१२.	३०-०	१२ वृ.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ वृ.	१० श.	११ श.

दशांशचक्र

मे	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अंश
१	१०	३	१२	५	२	७	४	९	६	११	८	३
२	११	४	१	६	३	८	५	१०	७	१२	९	६
३	१२	५	२	७	४	९	६	११	८	१	१०	९
४	१	६	३	८	५	१०	७	१२	९	२	११	१२
५	२	७	४	९	६	११	८	१	१०	३	१२	१५
६	३	८	५	१०	७	१२	९	२	११	४	१	१८
७	४	९	६	११	८	१	१०	३	१२	५	२	२१
८	५	१०	७	१२	९	२	११	४	१	६	३	२४
९	६	११	८	१	१०	३	१२	५	२	७	४	२७
१०	७	१२	९	२	११	४	१	६	३	८	५	३०

षोडशांशचक्र

षो.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
स्वा.	ब्र.	वि.	ह.	सू.	ब्र.	वि.	ह.	सू.	ब्र.	वि.	ह.	सू.	ब्र.	वि.	ह.	सू.
अं.	१	३	५	७	९	११	१३	१५	१६	१८	२०	२२	२४	२६	२८	३०
क.	५२	४५	३७	३०	२२	१५	७	०	५२	४५	३७	३०	२२	१५	७	०
वि.	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०	३०	०
मे.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
वृ..	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८
मि.	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
क.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
सिं.	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८
क.	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
तु.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
वृ.	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८
ध.	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
म.	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४
कुं.	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८
मी.	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२

षष्ट्यंशचक्र

	मे.	मि.	सिं.	तु.	ध.	कु.	वृ.	क.	क.	वृ.	म.	मी.	
१. घोरांश	१	३	५	७	९	११	२	४	६	८	१०	१२	इन्दुरेखांश
२. राक्षसांश	२	४	६	८	१०	१२	१	३	५	७	९	११	भ्रमणांश
३. देवांश	३	५	७	९	११	१	१२	२	४	६	८	१०	पयोध्यंश
४. कुबेरांश	४	६	८	१०	१२	२	११	१	३	५	७	९	सुधांश
५. यक्षोगणांश	५	७	९	११	१	३	१०	१२	२	४	६	८	शीतलांश
६. किन्नरांश	६	८	१०	१२	२	४	९	११	१	३	५	७	अशोभनांश
७. भ्रष्टांश	७	९	११	१	३	५	८	१०	१२	२	४	६	शुभाकरांश
८. कुलघ्नांश	८	१०	१२	२	४	६	७	९	११	१	३	५	निर्मलांश
९. गरलांश	९	११	१	३	५	७	६	८	१०	१२	२	४	दण्डायुधांश
१०. अग्न्यांश	१०	१२	२	४	६	८	५	७	९	११	१	३	कालाग्न्यंश
११. मायांश	११	१	३	५	७	९	४	६	८	१०	१२	२	प्रवीणांश
१२. प्रेतपुरीशांश	१२	२	४	६	८	१०	३	५	७	९	११	१	इन्दुमुखांश
१३. वरुणांश	१	३	५	७	९	११	२	४	६	८	१०	१२	द्रंष्ट्राकरालांश
१४. देवगणेशांश	२	४	६	८	१०	१२	१	३	५	७	९	११	शीतलांश
१५. कालांश	३	५	७	९	११	१	१२	२	४	६	८	१०	मृद्वंश
१६. अहिभागांश	४	६	८	१०	१२	२	११	१	३	५	७	९	सौम्यांश
१७. अतृतांश	५	७	९	११	१	३	१०	१२	२	४	६	८	कालांश
१८. चन्द्रांश	६	८	१०	१२	२	४	९	११	१	३	५	७	पातकांश
१९. मृद्वंश	७	९	११	१	३	५	८	१०	१२	२	४	६	वंशक्षयांश
२०. कोमलांश	८	१०	१२	२	४	६	७	९	११	१	३	५	कुलघ्नांश
२१. पञ्चभागांश	९	११	१	३	५	७	६	८	१०	१२	२	४	विषप्रदग्धांश
२२. लक्ष्मीकांश	१०	१२	२	४	६	८	५	७	९	११	१	३	परिपूर्णचन्द्रांश
२३. वागीशांश	११	१	३	५	७	९	४	६	८	१०	१२	२	अमृतांश
२४. दिग्वरांश	१२	२	४	६	८	१०	३	५	७	९	११	१	सुधांश
२५. देवांश	१	३	५	७	९	११	२	४	६	८	१०	१२	कण्टकांश
२६. आर्द्रांश	२	४	६	८	१०	१२	१	३	५	७	९	११	आमयांश
२७. कलिनाशांश	३	५	७	९	११	१	१२	२	४	६	८	१०	घोरांश
२८. क्षितीश्वरांश	४	६	८	१०	१२	२	११	१	३	५	७	९	दावाग्न्यंश
२९. कमलाकरांश	५	७	९	११	१	३	१०	१२	२	४	६	८	कालांश

षष्ट्यंशचक्र

	मे.	मि.	सिं.	तु.	ध.	कु.	वृ.	क.	क.ब	J.	म.	मी.	
३०. मन्दात्मजांश	६	८	१०	१२	२	४	९	११	१	३	५	७	मृत्युकरांश
३१. मृत्युकरांश	७	९	११	१	३	५	८	१०	१२	२	४	६	मन्दात्मजांश
३२. कालांश	८	१०	१२	२	४	६	७	९	११	१	३	५	कमलाकरांश
३३. दावाग्न्यंश	९	११	१	३	५	७	६	८	१०	१२	२	४	क्षितिश्वरांश
३४. घोरांश	१०	१२	२	४	६	८	५	७	९	११	१	३	कलिनाशांश
३५. आमयांश	११	१	३	५	७	९	४	६	८	१०	१२	२	आर्द्रांश
३६. कण्टकांश	१२	२	४	६	८	१०	३	५	७	९	११	१	देवांश
३७. सुधांश	१	३	५	७	९	११	२	४	६	८	१०	१२	दिग्वरांश
३८. अमृतांश	२	४	६	८	१०	१२	१	३	५	७	९	११	वागीशांश
३९. परिपूर्णचन्द्रांश	३	५	७	९	११	१	१२	२	४	६	८	१०	लक्ष्मीशांश
४०. विषप्रदग्धांश	४	६	८	१०	१२	२	११	१	३	५	७	९	पद्मभागांश
४१. कुलघ्नांश	५	७	९	११	१	३	१०	१२	२	४	६	८	कोमलांश
४२. वंशक्षयांस	६	८	१०	१२	२	४	९	११	१	३	५	७	मृद्वंश
४३. पातकांश	७	९	११	१	३	५	८	१०	१२	२	४	६	चन्द्रांश
४४. कालांश	८	१०	१२	२	४	६	७	९	११	१	३	५	अमृतांश
४५. सौम्यांश	९	११	१	३	५	७	६	८	१०	१२	२	४	अहिमागांश
४६. मृद्वंश	१०	१२	२	४	६	८	५	७	९	११	१	३	कालांश
४७. शीतलांश	११	१	३	५	७	९	४	६	८	१०	१२	२	देवगणेशांश
४८. दंष्ट्राकरालाश	१२	२	४	६	८	१०	३	५	७	९	११	१	वरुणांश
४९. इन्दुमुखांश	१	३	५	७	९	११	२	४	६	८	१०	१२	प्रेतपुरीशांश
५०. प्रवीणांश	२	४	६	८	१०	१२	१	३	५	७	९	११	मायांश
५१. कालाग्न्यंश	३	५	७	९	११	१	१२	२	४	६	८	१०	अग्न्यंश
५२. दण्डायुधांश	४	६	८	१०	१२	२	११	१	३	५	७	९	गरलांश
५३. निर्मलांश	५	७	९	११	१	३	१०	१२	२	४	६	८	कुलघ्नांश
५४. शुभाकरांश	६	८	१०	१२	२	४	९	११	१	३	५	७	भ्रष्टांश
५५. अशोभनांश	७	९	११	१	३	५	८	१०	१२	२	४	६	किन्नरांश
५६. शीतलांश	८	१०	१२	२	४	६	७	९	११	१	३	५	यक्षोगणांश
५७. सुधांश	९	११	१	३	५	७	६	८	१०	१२	२	४	कुबेरांश
५८. पयोध्यंश१	०	१२	२	४	६	८	५	७	९	११	१	३	देवांश
५९. भ्रमणांश	११	१	३	५	७	९	४	६	८	१०	१२	२	राक्षतांश
६०. इन्दुरेखांश	१२	२	४	६	८	१०	३	५	७	९	११	१	घोरांश

होरादिषड्वर्गचक्ररचनार्थ तालिका

	अंश	२	३	४	५	६	७	८	१०	१२	१२	१२	१३	१५	१६	१७	१७	१८	२०	२१	२२	२३	२५	२५	२६	२७	३०
	कला	३०	२०	१७	०	४०	३०	३४	०	०	३०	५१	२०	०	४०	८	३०	०	०	२५	३०	२०	०	४२	४०	३०	०
	विकला	०	०	८	०	०	०	१७	०	०	०	२५	०	०	०	३४	०	०	०	४२	०	०	०	५१	०	०	०
० मेष	हो.	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
	द्रे.	१	१	१	१	१	१	१	१	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	९	९	९	९	९	९	९	९
	स.	१	१	१	२	२	२	२	३	३	३	३	४	४	४	४	५	५	५	५	६	६	६	६	७	७	७
	न.	१	१	२	२	२	३	३	३	४	४	४	४	५	५	६	६	६	६	७	७	७	८	८	८	९	९
	द्वा.	१	२	२	२	३	३	४	४	५	५	६	६	६	७	७	७	८	८	९	९	१०	१०	११	११	११	१२
	त्रि.	१	१	१	१	११	११	११	११	९	९	९	९	९	९	९	९	९	३	३	३	३	३	७	७	७	७
१ वृषभ	हो.	४	४	४	४	३	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
	द्रे.	२	२	२	२	२	२	२	२	६	६	६	६	६	६	६	६	६	६	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०
	स.	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१	१	१	१	२	२	२
	न.	१०	१०	११	११	११	१२	१२	१२	१	१	१	१	२	२	३	३	३	३	४	४	४	५	५	५	६	६
	द्वा.	२	३	३	३	४	४	५	५	६	६	७	७	७	८	८	८	९	९	१०	१०	११	११	१२	१२	१२	१
	त्रि.	२	२	२	२	६	६	६	६	६	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१०	१०	१०	१०	८	८	८	८
२ मिथुन	हो.	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
	द्रे.	३	३	३	३	३	३	३	३	७	७	७	७	७	७	७	७	७	७	११	११	११	११	११	११	११	११
	स.	३	३	३	४	४	४	४	५	५	५	५	६	६	६	६	७	७	७	७	८	८	८	८	९	९	९
	न.	७	७	८	८	८	९	९	९	१०	१०	१०	१०	१०	११	१२	१२	१२	१२	१	१	१	२	२	२	३	३
	द्वा.	३	४	४	४	५	५	६	६	७	७	८	८	८	९	९	९	१०	१०	११	११	१२	१२	१	१	१	२
	त्रि.	१	१	१	१	११	११	११	११	९	९	९	९	९	९	९	९	९	३	३	३	३	३	७	७	७	७

होरादिषड्वर्गचक्ररचनार्थ तालिका

	अंश	२	३	४	५	६	७	८	१०	१२	१२	१२	१३	१५	१६	१७	१७	१८	२०	२१	२२	२३	२५	२५	२६	२७	३०
	कला	३०	२०	१७	०	४०	३०	३४	०	०	३०	५१	२०	०	४०	८	३०	०	०	२५	३०	२०	०	४२	४०	३०	०
	विकला	०	०	८	०	०	०	१७	०	०	०	२५	०	०	०	३४	०	०	०	४२	०	०	०	५१	०	०	०
३ कर्क	हो.	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
	द्रे.	४	४	४	४	४	४	४	४	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२
	स.	१०	१०	१०	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१	१	१	१	२	२	२	२	३	३	३	३	४	४	४
	न.	४	४	५	५	५	६	६	६	७	७	७	७	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	११	११	११	१२	१२
	द्वा.	४	५	५	५	६	६	७	७	८	८	९	९	९	१०	१०	१०	११	११	१२	१२	१	१	२	२	२	३
	त्रिं.	२	२	२	२	६	६	६	६	६	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१०	१०	१०	१०	८	८	८	८
४ सिंह	हो.	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
	द्रे.	५	५	५	५	५	५	५	५	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	१	१	१	१	१	१	१	१
	स.	५	५	५	६	६	६	६	७	७	७	७	८	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	११	११	११
	न.	१	१	२	२	२	३	३	३	४	४	४	४	५	५	६	६	६	६	७	७	७	८	८	८	९	९
	द्वा.	५	६	६	६	७	७	८	८	९	९	१०	१०	१०	११	११	११	१२	१२	१	१	२	२	३	३	३	४
	त्रिं.	१	१	१	१	११	११	११	११	९	९	९	९	९	९	९	९	९	३	३	३	३	३	७	७	७	७
५ कन्या	हो.	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
	द्रे.	६	६	६	६	६	६	६	६	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	२	२	२	२	२	२	२	२
	स.	१२	१२	१२	१	१	१	१	२	२	२	२	३	३	३	३	४	४	४	४	५	५	५	५	६	६	६
	न.	१०	१०	११	११	११	१२	१२	१२	१	१	१	१	२	२	३	३	३	३	४	४	४	५	५	५	६	६
	द्वा.	६	७	७	७	८	८	९	९	१०	१०	११	११	११	१२	१२	१२	१	१	२	२	३	३	४	४	४	५
	त्रिं.	२	२	२	२	६	६	६	६	६	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१०	१०	१०	१०	८	८	८	८

होरादिषड्वर्गचक्ररचनार्थ तालिका

	अंश	२	३	४	५	६	७	८	१०	११	१२	१२	१३	१५	१६	१७	१७	१८	२०	२१	२२	२३	२५	२५	२६	२७	३०
	कला	३०	२०	१७	०	४०	३०	३४	०	०	३०	५१	२०	०	४०	८	३०	०	०	२५	३०	२०	०	४२	४०	३०	०
	विकला	०	०	८	०	०	०	१७	०	०	०	२५	०	०	०	३४	०	०	०	४२	०	०	०	५१	०	०	०
६ तुला	हो.	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
	द्रे.	७	७	७	७	७	७	७	७	११	११	११	११	११	११	११	११	११	११	३	३	३	३	३	३	३	३
	स.	७	७	७	८	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१	१	१
	न.	७	७	८	८	८	९	९	९	१०	१०	१०	१०	११	११	१२	१२	१२	१२	१	१	१	२	२	२	३	३
	द्वा.	७	८	८	८	९	९	१०	१०	११	११	१२	१२	१२	१	१	१	२	२	३	३	४	४	५	५	५	६
	त्रि.	१	१	१	१	११	११	११	११	९	९	९	९	९	९	९	९	९	३	३	३	३	३	७	७	७	७
७ वृश्चिक	हो.	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
	द्रे.	८	८	८	८	८	८	८	८	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	४	४	४	४	४	४	४	४
	स.	२	२	२	३	३	३	३	४	४	४	४	५	५	५	५	६	६	६	६	७	७	७	७	८	८	८
	न.	४	४	५	५	५	६	६	६	७	७	७	७	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	११	११	११	१२	१२
	द्वा.	८	९	९	९	१०	१०	११	११	१२	१२	१	१	१	२	२	२	३	३	४	४	५	५	६	६	६	७
	त्रि.	२	२	२	२	६	६	६	६	६	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१०	१०	१०	१०	८	८	८	८
८ धनु	हो.	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
	द्रे.	९	९	९	९	९	९	९	९	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	५	५	५	५	५	५	५	५
	स.	९	९	९	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१	१	१	१	२	२	२	२	३	३	३
	न.	१	१	२	२	२	३	३	३	४	४	४	४	५	५	६	६	६	६	७	७	७	८	८	८	९	९
	द्वा.	९	१०	१०	१०	११	११	१२	१२	१	१	२	२	२	३	३	३	४	४	५	५	६	६	७	७	७	८
	त्रि.	१	१	१	१	११	११	११	११	९	९	९	९	९	९	९	९	९	३	३	३	३	३	७	७	७	७

होरादिषड्वर्गचक्ररचनार्थ तालिका

	अंश	२	३	४	५	६	७	८	१०	१२	१२	१२	१३	१५	१६	१७	१७	१८	२०	२१	२२	२३	२५	२५	२६	२७	३०
	कला	३०	२०	१७	०	४०	३०	३४	०	०	३०	५१	२०	०	४०	८	३०	०	०	२५	३०	२०	०	४२	४०	३०	०
	विकला	०	०	८	०	०	०	१७	०	०	०	२५	०	०	०	३४	०	०	०	४२	०	०	०	५१	०	०	०
९ मकर	हो.	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
	द्रे.	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	६	६	६	६	६	६	६	६
	स.	४	४	४	५	५	५	५	६	६	६	६	७	७	७	७	८	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०
	न.	१०	१०	११	११	११	१२	१२	१२	१	१	१	१	२	२	३	३	३	३	४	४	४	५	५	५	६	६
	द्वा.	१०	११	११	११	१२	१२	१	१	२	२	३	३	३	४	४	४	५	५	६	६	७	७	८	८	८	९
	त्रिं.	२	२	२	२	६	६	६	६	६	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१०	१०	१०	१०	८	८	८	८
१० कुम्भ	हो.	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
	द्रे.	११	११	११	११	११	११	११	११	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	७	७	७	७	७	७	७	७
	स.	११	११	११	१२	१२	१२	१२	१	१	१	१	२	२	२	२	३	३	३	३	४	४	४	४	५	५	५
	न.	७	७	८	८	८	९	९	९	१०	१०	१०	१०	११	११	१२	१२	१२	१२	१	१	१	२	२	२	३	३
	द्वा.	११	१२	१२	१२	१	१	२	२	३	३	४	४	४	५	५	५	६	६	७	७	८	८	९	९	९	१०
	त्रिं.	१	१	१	१	११	११	११	११	९	९	९	९	९	९	९	९	९	३	३	३	३	३	७	७	७	७
११ मीन	हो.	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
	द्रे.	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	४	४	४	४	४	४	४	४	४	४	८	८	८	८	८	८	८	८
	स.	६	६	६	७	७	७	७	८	८	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	१०	११	११	११	११	१२	१२	१२
	न.	४	४	५	५	६	६	६	६	७	७	७	७	८	८	९	९	९	९	१०	१०	१०	११	११	११	१२	१२
	द्वा.	१२	१	१	१	२	२	३	३	४	४	५	५	५	६	६	६	७	७	८	८	९	९	१०	१०	१०	११
	त्रिं.	२	२	२	२	६	६	६	६	६	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१२	१०	१०	१०	१०	८	८	८	८

होरादिषड्वर्ग चक्र रचनार्थ सारिणी का उपयोग

सामने तालिका के वायीं ओर राशि और ऊपर अंश-कला-विकला है। जिस किसी लग्न स्पष्ट या ग्रह स्पष्ट के जिस किसी वर्ग के ज्ञान के लिए तालिका में सबसे बायीं ओर कोष्ठक में स्थित वर्ग का नाम सारिणी में ज्ञात कर उसके सामने कोष्ठकस्थ संख्या उस वर्ग की राशि संख्या होगी।

कारकांश चक्र—प्राय: कुण्डली में कारकांश चक्र भी बनाया जाता है। इसको बनाने के लिए सर्वप्रथम सूर्यादि ग्रह स्पष्ट को सामने रखना चाहिए। इन स्पष्ट ग्रहों में जिस ग्रह का अंश (राशि को छोड़कर) सबसे अधिक होगा, वह आत्मकारक; उससे कम अंश वाला ग्रह अमात्यकारक: उससे भी कम अंश वाला ग्रह मातृकारक और उससे भी कम अंश वाला ग्रह भ्रातृकारक; इसी तरह उत्तरोत्तर कम अंश वाला ग्रह क्रम से पिता, पुत्र, ज्ञाति (जाति) व स्त्रीकारक (स्त्री कुण्डली में पतिकारक) होते हैं। ये चरकारक हैं।

।। अथ कारकांश चक्रमिदम् ।।

अब कारकांश चक्र बनाने के लिए लग्न का निर्णय इस प्रकार किया जाता है। यहाँ देखना चाहिए कि 'आत्मकारक' ग्रह नवमांश चक्र में किस राशि में है, वही राशि कारकांश चक्र में लग्न होगा अर्थात् लग्न स्थान में लिखा जाएगा। इसके बाद स्पष्ट ग्रह जिस-जिस राशि में है, उस-उस राशि में लिखे जाने से कारकांश कुण्डली तैयार हो जाती है। यहाँ हमने प्रकृत उदाहरण में ग्रह स्पष्ट के साथ तत्तद् ग्रहों के चर-कारकों (आत्म-अमात्य आदि) को दर्शाया है। इस तरह कारकांश चक्र अधोलिखित प्रकार बनेगा; जहाँ लग्न 'तुला' है; क्योंकि नवमांश में आत्मकारक ग्रह गुरु तुला राशि में है।

लग्न आदि बारह भावों के स्थिर कारक इस प्रकार हैं—१. सूर्य, २. गुरु, ३. मंगल, ४. चन्द्र व बुध, ५. गुरु, ६ शनि व मंगल, ७. शुक्र, ८. शनि, ९. सूर्य व गुरु, १० सूर्य, गुरु व शनि, ११ गुरु और १२ शनि।

ग्रहों की बालादि अवस्था—एक राशि में ३० अंश होते हैं। उनमें ६-६ अंश में विषम राशि के रहने पर प्रारम्भ से बाल, कुमार, युवा, वृद्ध व मृत तथा समराशि के रहने पर अन्त से मृत, वृद्ध, युवा, कुमार व बाल, ये पाँच-पाँच अवस्थायें होती हैं। यहाँ प्रत्येक अवस्था ६-६ अंश के होते हैं। यह अधोलिखित तालिका से और भी स्पष्ट होगा।

दीप्तादि अवस्था विचार

१. अपनी उच्च राशि में रहने वाला ग्रह दीप्तावस्था में होता है।
२. अपनी राशि में रहने वाला ग्रह स्वस्थावस्था में होता है।
३. अपनी मित्र राशि में रहने वाला ग्रह हास्ययुक्तावस्था में होता है।
४. शुभ ग्रहों के वर्ग में रहने वाला ग्रह शान्तावस्था में होता है।
५. बलवान् रहने पर ग्रह शक्तावस्था में होता है।
६. अस्त रहने पर ग्रह लुप्तावस्था में होता है।
७. नीच राशि गत रहने पर ग्रह दीनावस्था में होता है।
८. शत्रु या पाप राशि गत रहने पर ग्रह पीड़ितावस्था में होता है।

इन आठ अवस्थाओं में ग्रह के रहने पर तदनुसार वह शुभाशुभ फल प्रदान करता है। प्राय: दशाफल विचार करने में यह अवस्था बहुत उपयोगी सिद्ध होती है।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का पञ्चम पुष्प रूप 'सप्तवर्ग चक्र विवेचन' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।५।।

—※※※—

६

राशियों की विशेषता

ज्योतिषशास्त्रीय कुण्डली के ज्ञान के लिए राशियों की विशेषताओं को समझना आवश्यक है। बारह राशियां होती हैं। इन बारह राशियों का स्वामि या अधिपतियों के नाम निम्नलिखित हैं—

राशि	स्वामी	राशि	स्वामी
मेष	मंगल	तुला	शुक्र
वृषभ	शुक्र	वृश्चिक	मंगल
मिथुन	बुध	धनु	बृहस्पति
कर्क	चन्द्र	मकर	शनि
सिंह	सूर्य	कुम्भ	शनि
कन्या	बुध	मीन	बृहस्पति

राहु और केतु किसी भी राशि के स्वामी नहीं हैं। यह हम पहले भी बता चुके हैं कि हर्शल (इसका दूसरा नाम ही यूरेनस है), नेपच्यून या प्लूटो को भारतीय ज्योतिष में कोई स्थान नहीं दिया गया। इसका कारण यह है कि प्रत्येक ग्रह से लाइट (रोशनी) पृथ्वी तक आने में लाखों वर्ष भी लग जाते हैं और हर्शल, नेपच्यून इत्यादि का पता पिछली शताब्दी से ही लगा है। यह उस समय हुआ जब इन ग्रहों की रोशनी पृथ्वी पर आने लगी। इसी प्रकार के कुछ और ग्रह भी आगे आने वाले समय में पृथ्वी तक अपने प्रकाश दे सकेंगे ऐसी आशा है। हर्शल इत्यादि ग्रहों का विश्लेषण भी करेंगे।

जब किसी कार्य का निर्णय करना हो—जैसे जीवन के किस विभाग में कितना शुभ और कितना अशुभ फल होगा, तो हम एक विशेषभाव का और एक विशेष ग्रह का (जिनका उस विभाग से सम्बन्ध है) अध्ययन करते हैं। हम देखेंगे कि वह भाव और ग्रह बलवान है या कमजोर,अच्छा फल दिखाएंगे या अशुभ फल देंगे। किस भाव से किन-किन बातों का विचार किया जाए, किन अन्य भावों का उससे सम्बन्ध है, कौन-कौन से ग्रह किन-किन वस्तुओं के 'कारक' हैं, ये सब हम आगे बताएंगे। यहाँ पाठकों से आशा करते हैं कि वे राशियों के नाम और उनके स्वामी को ध्यान में अवश्य रखेंगे क्योंकि फलादेश करने में भाव के साथ-साथ भाव के स्वामी को भी

देखा जाता है। राशि का विचार अर्थात् जिस भाव में जो राशि आई है और उस राशि के स्वामी का विचार अलग-अलग करने का कोई न प्रयोजन है, न उसका औचित्य ही है। राशि का स्वामी यदि बलवान् है तो राशि अर्थात् जिस भाव में वह है वह भाव भी बलवान् होगा। चौथे अध्याय में जो कुण्डली उदाहरणस्वरूप दी गई है, उसमें कुम्भ राशि लग्न (प्रथम भाव) में है और उसका स्वामी शनि है, मीन राशि दूसरे भाव में है और उसका स्वामी गुरु है, तीसरे भाव में मेष राशि है और उसका स्वामी मंगल है, वृष राशि चौथे भाव में आई है और उसका स्वामी शुक्र है, इसी प्रकार से आगे के भावों में समझना चाहिए।

इसलिए यह याद रखना आवश्यक है कि किस राशि का कौन-सा ग्रह स्वामी है। मान लीजिए, मेष राशि (जैसा कि उदाहरण कुण्डली में है) तीसरे भाव में आई, इसका स्वामी मंगल है । मंगल तीसरे भाव का स्वामी कहलाएगा। ज्योतिष में हम संक्षेप में कह सकते हैं कि मंगल तीसरे भाव का स्वामी है। इसका मतलब है कि तीसरे भाव में मेष राशि पड़ी है और उसका स्वामी मंगल है, इसलिए मंगल तीसरे भाव का स्वामी हुआ। पाठक इस बात को अच्छी प्रकार समझें, जिससे उन्हें आगे कठिनाई प्रतीत न हो।

उदाहरण की कुण्डली में मंगल वृष राशि में है तो हम संक्षेप में कह देते है कि मंगल चौथे भाव में है और इसी को दूसरे शब्दों में कि तृतीयेश चौथे भाव में बैठा है। कुम्भ लग्न में (क) मंगल वृष राशि में है, (ख) मंगल चौथे भाव में है, (ग) तृतीयेश चौथे भाव में है, (घ) दशमेश (दशम भाव का स्वामी) चौथे में है—इन सबका एक ही मतलब हुआ कि मंगल चौथे भाव में है। इस बात को भली-भांति समझा जाए।

उपरोक्त जो हमने बताया है वह ज्योतिष में बहुधा प्रयोग किया जाता है। अब हम राशियों का स्वरूप, गुण, विशेषताओं आदि को बताते हैं।

चरादि राशियाँ—चर, स्थिर और द्विस्वभाव बारह राशियों को तीन भागों—चर, स्थिर और द्विस्वभाव में बांटा गया है।

(क) मेष, कर्क, तुला और मकर—चर राशियां हैं।

(ख) वृषभ, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ—स्थिर राशियां हैं।

(ग) मिथुन, कन्या, धनु और मीन—द्विस्वभाव राशियां हैं अर्थात् इनमें चर और स्थिर दोनों ही प्रकार के गुण हैं।

चर राशियां सञ्चारशील होती हैं। इनमें जन्म लेने वाले पैदल चलने में रुचि, परिवर्तन को पसन्द करते हैं।

स्थिर राशियां अपेक्षाकृत कम सञ्चारशील होती है। इनमें जन्म लेने वाले एक ही जगह में रहना, कम चलना, परिवर्तन न चाहने वाले होते हैं।

द्विस्वभाव राशियों में पहले १५° तक स्थिर राशियों का गुण और अन्त के १५° तक चर राशियों का गुण होता है। इनमें जन्म लेने वाले व्यक्तियों को बहुधा एक से अधिक कार्य एक ही समय में करने की इ्च्छा रहती है।

विषम और सम राशियाँ—(क) मेष, मिथुन, सिंह, तुला, धनु और कुम्भ—ये विषम राशियां हैं। (ख) वृषभ, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन—ये सम राशियां हैं।

पुरुष और स्त्री राशियाँ—विषम राशियां पुरुष सूचक हैं और सम राशियां स्त्री सूचक हैं।

राशियां और शरीर के भाग

मेष से मीन तक ये बारह राशियां निम्नलिखित प्रकार से शरीर के बारह अंगों या भागों की द्योतक राशियाँ हैं—

मेष	—	सिर और चेहरा	तुला	—	बस्ति
वृषभ	—	गर्दन, गला०	वृश्चिक	—	जननेन्द्रिय
मिथुन	—	बांहें और कन्धे	धनु	—	जांघ
कर्क	—	हृदय (छाती)	मकर	—	घुटने
सिंह	—	पेट (ऊपरी भाग)	कुम्भ	—	पिण्डलियां
कन्या	—	नाभि	मीन	—	पैर

आकाश में अपनी गति से भ्रमण करने का सूर्य की जो कान्तिवृत अर्थात् राशि मण्डल है, उनमें ताराओं की निकटता से जिस राशि की जैसी आकृति आई उसी प्रकार उनके मेष, वृष, मिथुन आदि नाम रखे गए हैं। विराटपुरुष (भगवान्) के जिस अंग में जो राशि पड़ती है, वह उस भाग की द्योतक राशियाँ है।

विभाग करने का कारण यह है कि यदि कोई राशि पीड़ित है, कोई क्रूर ग्रह वहाँ स्थित हो अथवा शत्रु आदि की दृष्टि या उस राशि का स्वामी कमजोर हो अर्थात् क्रूर ग्रह से दृष्ट हो किंवा उनके साथ हो, तो जातक के

शरीर का वह अंग (जो उस राशि से ज्ञात होता है) किसी चोट, बीमारी या पीड़ा की वजह से कष्ट युक्त होता है। कौन-से ग्रह क्रूर हैं या शुभ या किस प्रकार दूसरे ग्रहों और राशियों को देखते हैं यह विस्तार से आगे के प्रसङ्ग में बताएंगे।

राशियां और उनके विभाग—हम पहले बता चुके है कि प्रत्येक राशि में ३० अंश होते हैं। ज्योतिष के विचारार्थ इन ३० अंशों को ९ भागों में बांटने से प्रत्येक भाग में ३ अंश और २० कला हुई, जो इस प्रकार हैं—

(१) ०° से ३°।२०', (२) ३°।२°, से ६।४०'
(३) ६°। ४०' से १०°, (४) १०° से १३°। २०'
(५) १३°। २०' से १६°। ४०', (६) १६°। ४०' से २०°,
(७) २०° से २३°। २०', (८) २३°। २०' से २६°। ४०',
(९) २६°। ४०' से ३०°।

इसी प्रकार से बारह राशियों के नौ-नौ विभाग करने पर १०८ विभाग होंगे (१२ × ९ = १०८)। इन १०८ विभागों के भी राशियों के ही नामों से निम्नलिखित रूप में बताया गया है—

मेष—मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और धनु।
वृषभ—मकर, कुम्भ, मीन, मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह और कन्या।
मिथुन—तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन, मेष, वृषभ और मिथुन।
कर्क—कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, और मीन।
सिंह—मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और धनु।
कन्या—मकर, कुम्भ, मीन, मेष, वृषभ, मिथुन,कर्क, सिंह, और कन्या।
वृश्चिक—कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन।
धनु—मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और धनु।
मकर—मकर, कुम्भ, मीन, मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह और कन्या।
कुम्भ—तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन, मेष, वृषभ और मिथुन।
मीन—कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन।

राशियों का विभाग उपरोक्त समूहों में एक ही प्रकार से है—

(क) मेष, सिंह, धनु।
(ख) वृषभ, कन्या, मकर।
(ग) मिथुन, तुला, कुम्भ।
(घ) कर्क, वृश्चिक, मीन।

इस प्रकार के विभाग की चर्चा यहाँ करने का क्या लाभ हैं? इसका लाभ यह है कि यदि एक ग्रह अपने ही विभाग में है तो वह बलवान् होता है। उदाहरण के लिए, चन्द्रमा यदि मीन राशि में १° पर हो तो ०° से ३°। २० तक पहला विभाग 'कर्क' है। अब चूँकि कर्क का स्वामी चन्द्रमा स्वयं ही हुआ इसलिए मीन के १° में चन्द्रमा बलवान समझा जाएगा।

दूसरा सिद्धान्त यह है कि यदि कोई ग्रह उसी विभाग में हो अर्थात् जिस राशि में वह है, तो वह वर्गोतम ग्रह कहलाता है। 'वर्गोत्तम' ग्रह उतना ही बलवान समझा जाता है जितना कि अपनी स्वयं की राशि में बैठा हुआ ग्रह। यह हम उदाहरण देकर समझाते हैं।

मान लीजिए, सूर्य मिथुन राशि के २८ अंश पर है। अब २६°। ४०' से ३०° तक किसी भी राशि में नवां विभाग हुआ। उपरोक्त सारिणी में देखने पर मिथुन में नवां विभाग 'मिथुन' ही है। इस लिए २८° मिथुन में सूर्य न केवल मिथुन राशि अपितु मिथुन विभाग में भी हुआ। इसे ही हम वर्गोत्तम कहते हैं। इस २८° मिथुन में सूर्य ऐसा ही शुभ फल देगा, जैसा कि यदि वह सिंह राशि में बैठा होता, तब देता। देखिए 'फल दीपिका' के अध्याय ९, श्लोक २० और 'बृहज्जातक' के अध्याय १, श्लोक १४।

वराहमिहिर ने यह देखने व समझाने के लिए कि ग्रह कब वर्गोत्तम होता है, इस प्रकार कहा है—

"चर राशियों में पहला विभाग, स्थिर राशियों में पाँचवाँ या बीच का विभाग और द्विस्वभाव राशियों में अन्तिम अर्थात् नवां विभाग वर्गोत्तम होता है।"

राशियों के ये नौ विभाग करने पर जो विभाग होते हैं, उन्हें 'नवांश' कहते हैं। इसकी चर्चा पहले ही किया जा चुका है और आगे भी करते हैं।

नवांश कुण्डली का ज्योतिष में बहुत महत्त्व है। जन्म-कुण्डली में यदि कोई ग्रह बलवान हो परन्तु नवांश कुण्डली में नीच राशि में हों अथवा पीड़ित हो तो ग्रह अच्छा प्रभाव नहीं दिखाएगा। यह नवांश कुण्डली चौथे अध्याय में प्रदर्शित किया गया है, उसे वहीं देखना चाहिए।

दिवाबली और रात्रिबली राशियां—सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ और मीन ये सब दिवाबली अर्थात् दिन के समय बलवान होती हैं। मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, धनु और मकर रात्रिबली राशियां है। दिन में जन्म

हो तो दिवाबली राशियों में स्थित ग्रह अपेक्षाकृत बलवान होते हैं। रात्रि में जन्म हो तो रात्रिबली राशियों में स्थित ग्रह अधिक बलवान हाते हैं।

राशियों की दिशाएं—मेष, सिंह और धनु पूर्व दिशा, वृषभ, कन्या और मकर दक्षिण दिशा, मिथुन, तुला और कुम्भ पश्चिम दिशा और कर्क, वृश्चिक और मीन उत्तर दिशा में अपना विशेष प्रभाव दिखाती हैं अर्थात् वास करती हैं।

यदि कोई राशि बलवान और शुभ ग्रह से सम्बन्धित हो तो उस दिशा में लाभ होता है। यदि राशि कमजोर और पीड़ित हो तो उसकी दिशा में हानि होती है।

यात्रा के लिए वह लग्न चुनना चाहिए जो यात्रा की दिशा का द्योतक है। जैसे पूर्व में जाना हो तो मेष, सिंह, धनु लग्न में यात्रा आरम्भ करनी चाहिए। यदि चन्द्रमा भी उन्हीं राशियों में हो जिस दिशा में यात्रा करनी है तो अत्यधिक शुभ है। इसे 'सम्मुख चन्द्र' कहते हैं। ऐसे समय में यात्रा करने से विघ्न और बाधाएं नहीं आती हैं और कार्य शीघ्र पूर्ण होता है।

सम्मुखे अर्थलाभाय दक्षिणे सुखसम्पदः।
पृष्ठतः प्राणनाशय वामे चन्द्रे धनक्षयः।।

इसके अतिरिक्त यात्रा में दिक्शूल अर्थात् दिशाशूल का विचार भी करना चाहिए। यह अति आवश्यक है।

अर्थात् मंगल-बुध को उत्तर दिशा में यात्रा न करे, दक्षिण में बृहस्पतिवार को न जाए और पूर्व दिशा में सोम-शनि को न जाए तथा रवि-शुक्र में पश्चिम दिशा में न जाए।

राजाज्ञा में कोई निषेध नहीं है। राजाज्ञा, गुरु आदेश और अपने घर वापिस लौटना हो तो किसी भी समय यात्रा की जा सकती है।

पृष्ठोदय और शीर्षोदय राशियां—मेष, वृषभ, कर्क, धनु और मकर ये पृष्ठोदय अर्थात् पिछली ओर से लेने वाली राशियाँ हैं। मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक और कुम्भ शीर्षोदय अर्थात् आगे से उदय लेने वाली राशियाँ हैं। मीन का दोनों ओर से उदय होती है।

पृष्ठोदय राशियां क्रूर होती हैं तथा क्रूर कर्मों के लिए उपयुक्त हैं। शीर्षोदय राशियां शुभ हैं और शुभ कार्यों के लिए अधिक उपयुक्त होती हैं। दोनों तरफ से उदित होने वाली राशि (मीन) सब कार्यों के लिए उपयुक्त

हैं और मिश्रित फल दिखाती है। जब इन राशियों में कोई भी ग्रह नहीं होता; तब ऊपर बताया गया प्रभाव होता है; परन्तु यदि पृष्ठोदय राशि में कोई क्रूर ग्रह भी बैठा हो तो उसकी क्रूरता और बढ़ जाती है। यदि वहां शुभ ग्रह हो तो उसका शुभ प्रभाव कम हो जाता है। इसके विपरीत शीर्षोदय राशियों में शुभ ग्रह के बैठने से उसका शुभ प्रभाव और भी अधिक होगा और क्रूर ग्रह का वहां पर अर्थात् शीर्षोदय राशि में दुष्प्रभाव कम हो जाता है। इसके अतिरिक्त यदि ग्रह—

(१) शीर्षोदय राशि में हो तो दशा के आरम्भ से ही अपना प्रभाव दिखा देता है।

(२) पृष्ठोदय राशि में हो तो दशा के अन्त में (अर्थात देर से) अपना प्रभाव दिखाता है।

(३) दोनों ओर से उदित होने वाली राशि में दशा के मध्य में अपना प्रभाव (अच्छा या खराब) दिखाता है।

(ग्रहों की विंशोत्तरी दशा-अन्तर्दशा की गणना उचित स्थान किया गया है।)

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का षष्ठ पुष्प रूप 'राशियों की विशेषता' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।६।।

७

भावों की विशेषता

पूर्व चर्चा में हमने भाव शब्द का अनेकश: प्रयोग किया है। वहाँ बताया भी कि बारह राशियाँ और बारह ही भाव होते हैं। अब सूर्य एक राशि में एक मास तक उन सब व्यक्तियों के लिए होता है, जिनका उस महीने में जन्म हो, जैसे १३ अप्रैल से १३ मई के बीच में सूर्य मेष राशि में रहेगा और मेष राशि में इसका जो विशेष प्रभाव होता है, वह होगा। परन्तु जिन व्यक्तियों का जन्म दोपहर में हुआ है उनका सूर्य दसवें भाव में, जिनका जन्म शाम को हुआ है उनका सूर्य सातवें भाव में, जो जन्म मध्य रात्रि में हुए हैं वहां सूर्य चौथे भाव में, तथा जिनका जन्म सूर्योदय के समय है उनका सूर्य पहले भाव में होगा।

पृथ्वी अपनी धुरी पर भ्रमण करती रहती है। सूर्य समेत समस्त ग्रह पूरब की ओर जन्म-स्थान से विभिन्न प्रकार के कोण बनाते हैं और इस कोण से कौन-सा ग्रह किस भाव में है यह पता चलता है।

जातकशास्त्र में भाव का क्या प्रयोजन है? उनका प्रयोजन यह है कि प्रत्येक भाव शरीर के किसी अंग का, किसी सम्बन्ध का (पिता, माता, भाई इत्यादि) और जीवन के किसी भाव का द्योतक है। किसी भी विशेष बात का निर्णय करने के लिए उस भाव के स्वामी या जो ग्रह उस भाव में बैठे हों या उसे देखते हों या उस भाव का कारक हो, इन सबका विचार करना पड़ता है। ग्रह किस प्रकार दूसरे भावों पर दृष्टि डालता है, इसे आगे बताएगें परन्तु अभी हम यह बताएंगे कि भाव के स्वामी से हमारा क्या तात्पर्य है। यह हम पहले भी बता चुके हैं कि जब अलग-अलग राशियों का पूर्वीय क्षितिज में उदय होता है उस समय एक के बाद दूसरी राशि से एक के बाद दूसरे भावों का ज्ञान होता है। जिस समय मेष राशि उदित हो तो मेष से चौथे भाव में कर्क राशि में होगी। अब कर्क राशि का स्वामी चन्द्रमा है इसलिए चन्द्रमा को चौथे भाव का स्वामी कहते हैं। मान लीजिए,वृषभ लग्न से उस समय वृषभ, मिथुन, कर्क, सिंह चौथे भाव या चौथे भाव में स्थित सिंह राशि हुई और सूर्य क्योंकि सिंह राशि का स्वामी है इसलिए वह चौथे भाव का स्वामी हुआ।

सूर्य और चन्द्रमा एक-एक भाव के ही स्वामी होंगे; क्योंकि इन दोनों की एक-एक राशि ही है, परन्तु मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि इनमें से प्रत्येक ग्रह दो-दो राशियों के स्वामी या अधिपति हैं। राहु और केतु किसी भी राशि के स्वामी नहीं होते, इसलिए वे किसी भी भाव के स्वामी नहीं होंगे।

भावों की संज्ञायें—(क) पहला, चौथा, सातवां और दसवां भाव केन्द्र कहलाता है। इनमें बैठे हुए ग्रह बलवान होते हैं।

(ख) दूसरा, पांचवां, आठवां और ग्यारहवां भाव पणफर कहलाता है। आठवें स्थान के अतिरिक्त यहां बैठे हुए ग्रह भी काफी बलवान होते हैं, परन्तु केन्द्र में बैठे हुए ग्रह के समान नहीं।

(ग) तीसरा, छठा, नवां और बारहवां भाव आपोक्लिम कहलाता है। नवम के अलावा इन भावों में ग्रह कमजोर समझे जाते हैं, परन्तु छठे भाव में क्रूर ग्रह अच्छे समझे जाते हैं। कौन-से ग्रह क्रूर हैं और कौन-से ग्रह शुभ यह आगे बताया जाएगा।

(घ) पांचवें और नवें भावों को त्रिकोण कहते है। त्रिकोण के स्वामी और त्रिकोण में बैठे हुए ग्रह शुभ और बलवान् होते हैं।

(ङ) तीसरा, छठा, दसवां और ग्यारहवां भाव उपचय कहलाता है। 'उपचय' का मतलब है बढ़ाना।

(च) छठे, आठवें और ग्यारहवें भावों को त्रिक कहते हैं, जो ग्रह इनके स्वामी हों या जो ग्रह इनके स्वामी के साथ बैठे या जो ग्रह इनमें बैठें, वे अशुभ होते हैं।

'त्रिक' का मतलब है—तीन खराब भाव।

संसार की प्रत्येक बातें—स्वास्थ्य, धन, बुद्धि, विद्या, प्रसन्नता, दु:ख, धर्म, जायदाद, सम्बन्धी, दुकानदारी और व्यापार, वैवाहिक सुख, विवाह, सामाजिक स्थिति, आमदनी, विदेश यात्राएं, बीमारी, विरासत, शत्रु, भोग-विलास इत्यादि ये सब किसी न किसी भाव से ज्ञात होते हैं। परन्तु प्रत्येक भाव से क्या-क्या बातें पता लगती हैं, यह विस्तार से बताना सम्भव नहीं है। इसलिए संक्षेप में ही किस भाव से क्या विचार होता है, यह बताते हैं। कुछ बातें एक से अधिक भावों से देखी जाती हैं, इसलिए इसके लिए वह सब भाव देखने पड़ेंगे।

पहला भाव—शरीर, शरीर की बनावट, शारीरिक शक्ति, शक्ति,

सूरत, रंग, व्यक्तित्व, स्वभाव, झुकाव, स्वास्थ्य, प्रसन्नता और दुःख, आयु, बाल और सिर, यश, सामाजिक स्तर, जन्मस्थान, नाना, दादी इत्यादि।

दूसरा भाव—चेहरा, आंखें (विशेष रूप से दाहिनी आंख), नाक, मुंह, दांत और जीभ, बोलने, बात करने की निपुणता, कठोर या नर्म वाणी (सच या झूठ बोलना) और खाना, भोजन में रुचि, धन और धान्य, सोना, चाँदी और जवाहरात, कंजूसी, वस्तुओं का खरीदना और बेचना, कुटुम्ब, मृत्यु इत्यादि।

तीसरा भाव—गला, आवाज, कान, सुनने की शक्ति, कन्धा, बाजू, छाती का ऊपर का हिस्सा, भाई या बहन (विशेष रूप से अपने से छोटे), साथी, सम्बन्धी, पड़ोसी, नौकर, अपने से नीचे कार्य करने वाले और मददगार, हिम्मत, लड़ना, क्रोध, धर्म, शारीरिक और मानसिक शक्ति, होशियारी, क्षमता, खेल-कद, छोटी यात्राएं, इधर-उधर घूमना, छोटे-छोटे लेख, आयु, धर्म इत्यादि।

चौथा भाव—हृदय और उसके समानन्तर छाती का दहिना हिस्सा, माता, पिता और माता की ओर के सम्बन्धि, मित्र, रहने का मकान, जमीन, बाग, खेती की भूमि, गीली जमीन और वहां का उत्पादन, पशु, पानी के नीचे का स्थान, तालाब और कुआं, आराम, सोना, प्रसन्नता, सम्मान, मीठी सुगन्ध, सवारी, दक्षिण भारतीय ज्योतिषियों के अनुसार विद्या, धार्मिक स्वभाव, जीवन का अन्तिम समय, जीवन के अच्छे सिद्धान्त।

पांचवां भाव—पेट, बच्चे, बच्चा जनने की शक्ति, यकृत, बच्चे (लड़के और लड़कियां), बुद्धि, विद्या, याददाशत, मन, ज्ञान, सलाह, पुस्तक लिखने की क्षमता, भगवान् में भक्ति, साधना और प्रार्थना, पिछले जन्म में किए गए अच्छे कार्य, आनन्द, वेश्याओं से सम्बन्ध, सट्टा, जुआ, घुड़दौड़ इत्यादि।

छठा भाव—नाभि के पास शरीर का हिस्सा, नीचे की अंतड़ियां, मामा और मौसी, बीमारी, चोट इत्यादि, मानसिक और शारीरिक रोग, चिन्ता, दुष्मनी, दुश्मन, लड़ना, मेहनत, खतरे, जेल, भाई/बहन से कलह, चोरी, नौकर, नौकरी, कर्जा, गन्दी और बुरी आदतें, क्रूर कर्म, विघ्न और बाधाएं इत्यादि।

सातवां भाव—विवाह, पति-पत्नी, दूसरों से सम्बन्ध, कामेन्द्रियों का सुख, वैवाहिक प्रसन्नता, पति-पत्नी का स्वरूप और उनकी आयु, साझेदारी और साझेदारी में किया गया कार्य,यात्रा, यात्रा में रुकावट, मुकदमें, शत्रु पर विजय,पेशाब का रास्ता, दुकानदारी इत्यादि।

आठवां भाव—जननेन्द्रियों का बाहरी भाग, छूत की बीमारी (गर्मी, सुज़ाक इत्यादि), मधुमेह, भगन्दर, बवासीर, आयु, मानसिक उदासीनता, पाप, दुःख, खतरे, बीमारियां, कृति, पति-पत्नी की परेशानियां, भाई के शत्रु, ज़मीन के नीचे गड़ा हुआ धन, मृत्यु, मृत्यु का स्थान और कारण, युद्ध, समुद्र पार की वस्तुएं, धन की हानि, राजदण्ड, डर, हार, पैतृक सम्पत्ति के अतिरिक्त दूसरा मकान, विरासत में मिला हुआ धन, पति की आर्थिक स्थिति इत्यादि।

नवां भाव—जांघ और कूल्हा, पिता (दक्षिण के ज्योतिषियों के अनुसार) पौत्र, भाई की पत्नी, पति के भाई और बहन, मठ, धर्म, अच्छे कार्य, दान, आध्यात्मिक और दार्शनिक प्रवृत्ति, ज्ञानप्राप्ति के तरीके, अच्छे व्यक्तियों से सम्बन्ध, समुद्री यात्रा,समृद्धि, भाग्य स्थान कहते है 'भाग्य' में धन, प्रसन्नता, सुख सभी वस्तुएं सम्मिलित हैं।

दसवां भाव—घुटना, पीठ, पिता, सास, गोद लिया पुत्र, उपार्जन करने की क्षमता, कर्म, अच्छे या बुरे कार्य,सफलता,खेती,विदेश में रहना, राजा, राज्य, सरकार,यश,जीवन-स्तर, अपने से बड़े लोग, सन्यास, नौकरी इत्यादि।

ग्यारहवां भाव—पिण्डली, बड़े भाई और बहन, मित्र, दामाद, माता की आयु, लाभ, आय, हानि, ससुर से लाभ, सांसारिक सुख की वस्तुएं, सवारी, शत्रु और उनके कार्य, कपड़े, पैतृक सम्पत्ति, कार्य कुशलता, इच्छाएं, ज्ञान और देवभक्ति इत्यादि।

बारहवां भाव—पांव (पंजे), काका, बुआ, मामी, जननेन्द्रियों के सुख,पत्नी का क्षय, दूसरी पत्नी, मानसिक उदासीनता, शरीर का व्यय, दुःख, जेल जाना, पांव का काटना, हानि, खर्चे, वस्तुओं का खरीदना, उदारता,मार्तृभूमि से दूर रहना, जीवन में नाम,यश वगैरह की हानि, बायां नेत्र, दांत इत्यादि।

ज्योतिष में जीवन में काम आने वाली समस्त वस्तुएं किसी न किसी

भाव में या किसी न किसी ग्रहों से देखी जाती हैं। ग्रहों के बारे में हमारे कुछ पाठक शुरू में यह देखकर कि बहुत-सी वस्तुयें एक से अधिक भाव पर आधारित होती हैं, निष्कर्ष निकालने में कुछ कठिनाई महसूस करते हैं; परन्तु यह जानना चाहिए कि जीवन की प्रत्येक बात किसी न किसी प्रकार दूसरी बातों पर निर्भर करती है। जैसे एक अच्छे हृदय का होना लम्बी आयु के लिए आवश्यक है, परन्तु उसके लिए पेट और अंतड़ियां ठीक से काम करें, अच्छा रक्तप्रवाह हो, मानसिक तनाव भी साधारण रहे आदि-आदि। इसीलिए यदि कुछ बातें एक से अधिक भाव से निकलें तो उसके लिए तारतम्य से निष्कर्ष निकालना चाहिए।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का सप्तम पुष्प रूप 'भावों की विशेषता' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।७।।

८
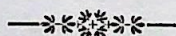
ग्रहों की विशेषता

द्वादश या बारह भावों से पृथक्-पृथक् किन-किन बातों का विचार करना चाहिए, यह पूर्व में बताया है। इसके अतिरिक्त राशियों के बारे में पूर्व में ही बताया है। अब यहां पर ग्रहों की विशेषताओं अर्थात् उनके उच्च-नीच स्थान, मित्र-शत्रु आदि विषयों को बतलाते हैं।

पहले ही बताया है कि किस-किस राशि का स्वामी कौन-कौन-सा ग्रह है, अब बतलाया जा रहा है कि कोई भी ग्रह जब स्वराशि या अपनी राशि में होता है तो बलवान समझा जाता है। इस सिद्धान्त के आधार पर सिंह का सूर्य, कर्क का चन्द्रमा, मेष या वृश्चिक का मंगल, मिथुन या कन्या का बुध, धनु या मीन का बृहस्पति, वृषभ या तुला का शुक्र और मकर या कुम्भ का शनि बलवान माना जाता है अर्थात् ग्रह स्वराशि में स्थित रहकर बलवान् होता है तथा इसी तरह राहु कन्या राशि में और केतु मीन राशि में बलवान् होते हैं।

मूल त्रिकोण राशियाँ—'मूल त्रिकोण' में बैठा हुआ ग्रह अपनी राशि में बैठे होने से अधिक बलवान् होता है। निम्नलिखित राशि और उनके अंश तक ग्रहों के मूल त्रिकोण हैं—

सूर्य	सिंह राशि के	०° से २०° तक
चन्द्र	वृषभ राशि के	३° से ३०° तक
मंगल	मेष राशि के	०° से १२° तक
बुध	कन्या राशि के	१५° से २०° तक
बृहस्पति	धनु राशि के	०° से १०° तक
शुक्र	तुला राशि के	०° से ५° तक
शनि	कुम्भ राशि के	०° से २०° तक
राहु	कुम्भ राशि के	समस्त
केतु	सिंह राशि के	समस्त

उच्च राशियाँ—उपरोक्त के अतिरिक्त एक अन्य प्रकार की राशियां बताई जा रही है, उनमें ग्रह अपनी 'उच्च' राशि में होता है। अपनी 'उच्च' राशि से सातवीं राशि में ग्रह 'नीच' राशि का कहलाता है। अपनी उच्च राशि का बल सबसे अधिक होता है अपनी राशि तथा मूल त्रिकोण राशिस्थ से भी अधिक; परन्तु अपनी नीच राशि में ग्रह अत्यधिक कमजोर होता है।

यदि एक ग्रह अपनी उच्च राशि में हो तो उसे 'उच्चस्थ ग्रह' और यदि अपनी नीच राशि में हो तो उसे 'नीचस्थ ग्रह' कहते हैं। निम्नलिखित प्रकार से ग्रहों की 'उच्च' और 'नीच' राशियां बतलाई जाती हैं—

ग्रह	उच्च राशि	नीच राशि
सूर्य	मेष	तुला
चन्द्र	वृषभ (०° से ३°)	वृश्चिक
मंगल	मकर	कर्क
बुध	कन्या (०° से १५°)	मीन
बृहस्पति	कर्क	मकर
शुक्र	मीन	कन्या
शनि	तुला	मेष

चन्द्रमा प्रारम्भ से तीन अंश तक वृषभ राशि में उच्च का होता है और तीन अंश के बाद से २७ अंशों तक मूल त्रिकोण में। इसी प्रकार बुध अपनी कन्या राशि के पहले १५ अंश तक अपने उच्च में और १५ अंश से २० अंश तक अपने मूल त्रिकोण में होता है तथा अन्तिम दस अंशों तक बुध अपनी राशि में होता है अर्थात् कन्या राशि बुध का उच्च स्थान (०° से १५°), मूल त्रिकोण (१५° से २०°) और अपनी राशि (२०° से ३०°) होती है।

राहु और केतु के उच्च और नीच स्थानों के बारे में मतभेद हैं। कुछ लोगों के अनुसार मिथुन राशि में राहु उच्च का होता है और धनु राशि में नीच का, परन्तु कुछ अन्य विद्वानों के अनुसार वृषभ राशि का राहु उच्च का और वृश्चिक राशि का राहु नीच का होता है। केतु का उच्च-नीच इसके विपरीत समझना चाहिए अर्थात् राहु का उच्च स्थान, केतु का नीच स्थान होता है; क्योंकि केतु सदैव राहु से सातवें स्थान में स्थित रहता है।

ग्रहों की मित्रता और शत्रुता—भारतीय ज्योतिष में ग्रहों की दो प्रकार की मित्रता मानी जाती है। पहली 'नैसर्गिक' और दूसरी 'तात्कालिक'। 'नैसर्गिक' मित्रता सभी जन्म-कुण्डलियों के लिए एक-सी रहेगी, परन्तु तात्कालिक मैत्री जन्म-कुण्डली की ग्रह स्थिति पर आधारित है और यह प्रत्येक कुण्डली के लिए अलग-अलग प्रकार की होगी। ग्रहों की मित्रता का सिद्धान्त प्राचीन काल से चला आ रहा है और ग्रहों का बल देखने में इसका प्रयोग किया जाता है। नीचे ग्रहों के नैसर्गिक मित्र, सम और शत्रु बतलाते हैं।

नैसर्गिक मित्रामित्र तालिका

ग्रह	मित्र	सम	शत्रु
सूर्य	चन्द्र मंगल बृहस्पति	बुध	शुक्र शनि
चन्द्र	सूर्य बुध	मंगल वृहस्पति शुक्र शनि	—
मंगल	सूर्य चन्द्र बृहस्पति	शुक्र शनि	बुध
बुध	सूर्य शुक्र	मंगल बृहस्पति शनि	चन्द्र
बृहस्पति	सूर्य चन्द्र मंगल	शनि	बुध शुक्र
शुक्र	बुध शनि	मंगल बृहस्पति	सूर्य चन्द्र
शनि	बुध शुक्र	बृहस्पति	सूर्य चन्द्र मंगल

यहाँ देखिए कि बुध तो सूर्य का 'सम' है अर्थात् न तो मित्र न ही शत्रु; परन्तु सूर्य बुध का मित्र है। इससे यह समझना चाहिए कि परस्पर सम्बन्ध एक समान होंगे, ठीक नहीं है। ग्रहों की यह नैसर्गिक मित्रता तर्कपूर्ण और युक्तिसंगत व्यवहार में भी अनुभव किया जा सकता है; परन्तु यहाँ पर उसका विवेचन अभीष्ट नहीं है।

तात्कालिक मैत्री—जैसा पहले कह चुके हैं कि तात्कालिक मित्रता प्रत्येक जन्म-कुण्डली की ग्रह-स्थिति पर निर्भर करती है और इसलिए यह विभिन्न कुण्डलियों की अलग-अलग होगी। ग्रहों की तात्कालिक मित्रामित्र विचार नीचे दिए गए सिद्धान्तों पर निर्भर करती है—

(१) किसी भी ग्रह से दूसरा ग्रह यदि दूसरे, तीसरे, चौथे, दसवें, ग्यारहवें, बारहवें स्थान पर हो तो वह मित्र होता है।

१२ सू.
र १०
१ बु.
११
९
२ बृ
मं ८
३
५
७
४
६

(२) किसी भी ग्रह से दूसरा ग्रह, पहले, पांचवें, छठें, सातवें, आठवें या नवें स्थान में हो तो शत्रु होता है।

सूर्य से बुध और बृहस्पति क्रमश: दूसरे और तीसरे स्थान में है, इसलिए ये दोनों सूर्य के मित्र हैं। परन्तु मंगल सूर्य से नवें स्थान में है, इसलिए शत्रु हुआ। ग्रहों में या तो तात्कालिक मैत्री होती है या तात्कालिक शत्रुता। वे 'सम' नहीं होते हैं। इसमें एक राशि से दूसरी राशि तक गणना की जाती है। जैसे उदाहरण कुण्डली में, जो पुन: नीचे दी जाती है। सूर्य और बुध पांचवें भाव में हैं, इसलिए सूर्य और बुध शत्रु हुए। यहां शत्रुता परस्पर होती है। जैसे सूर्य बुध का शत्रु है तो बुध भी सूर्य का शत्रु होगा। इसी कुण्डली में देखिए कि चन्द्रमा और बृहस्पति छठे भाव में हैं। सूर्य (पांचवें भाव में है) से गणना करने पर चन्द्रमा और बृहस्पति दूसरे भाव में हुए और इसलिए दोनों ही सूर्य के मित्र होंगे (शनि सूर्य से सातवें भाव में हुआ इसलिए शत्रु होगा)। इसी प्रकार सूर्य से (जहां सूर्य बैठा है) मंगल और शुक्र १२वें भाव में हुए। इससे ये दोनों भी सूर्य के मित्र हुए। इस प्रकार चन्द्रमा, मंगल, बृहस्पति और शुक्र तो सूर्य के तात्कालिक मित्र हैं और बुध, शनि सूर्य के शत्रु। सारिणी का रूप देने पर ग्रहों की तात्कालिक मैत्री इस प्रकार हुई—

तात्कालिक मित्रामित्र उदाहरण तालिका

ग्रह	मित्र	शत्रु
सूर्य	चन्द्र; मंगल	बुध
	बृहस्पति, शुक्र	शनि
चन्द्र	सूर्य, मंगल	बृहस्पति

	बुध, शुक्र	शनि
मंगल	सूर्य, चन्द्र	शुक्र
	बुध, बृहस्पति	शनि
बुध	चन्द्र, मंगल	सूर्य
	बृहस्पति, शुक्र	शनि
बृहस्पति	सूर्य, मंगल	चन्द्र
	बुध, शुक्र	शनि
शुक्र	सूर्य, चन्द्र	मंगल
	बुध, बृहस्पति	शनि
शनि	—	सूर्य, चन्द्र मंगल, बुध बृहस्पति, शुक्र

पञ्चधा मैत्री विचार—ग्रहों की तात्कालिक और नैसर्गिक दोनों मित्रामित्र के आधार पर पाँच प्रकार के सम्बन्ध प्रकट होते हैं, उसे अग्र-लिखितानुसार समझना चाहिए—

१. दोनों प्रकार से मित्र हों तो—अति मित्र।

२. दोनों प्रकार से शत्रु हो तो—अति शत्रु।

३. एक प्रकार से मित्र और दूसरे प्रकार से शत्रु हो तो—सम।

४. नैसर्गिक सम हो परन्तु तात्कालिक मित्र हो तो—मित्र।

५. नैसर्गिक सम हो परन्तु तात्कालिक शत्रु हो तो—शत्रु।

इस प्रकार मित्रामित्र पाँच प्रकार की हुई। बुध सूर्य का सम है (नैसर्गिक मैत्री चक्र में), परन्तु तात्कालिक शत्रु है, इसलिए बुध सूर्य का शत्रु हुआ। चन्द्रमा दोनों ही प्रकार से सूर्य का मित्र है इसलिए वह अति मित्र हुआ। इसी प्रकार सब ग्रहों का विचार करना चाहिए। उदाहरण कुण्डली में जो सम्बन्ध बने हैं, उसे अग्रिम पृष्ठ पर देखना चाहिए।

अब प्रश्न उठता है कि हमने यह मित्र, अति मित्र, शत्रु इत्यादि का विचार क्यों किया? इसका उत्तर यह है कि ग्रहों के फलादेश में मित्रामित्र का विचार तो किया जाता है ही विवाह, व्यवसायिक मेलापक आदि में भी इसका उपयोग किया जाता है।

अति मित्र राशि में बैठा हुआ ग्रह अपना अशुभ प्रभाव बहुत ही अल्प मात्रा में करता है और अधिकतर अच्छा फल देता है। मित्र की राशि में ग्रह हो तो भी उसका दुष्प्रभाव कम हो जाता है (परन्तु कुछ कम मात्रा में)।

'सम' (जो न तो मित्र हो न ही शत्रु) की राशि में बैठा ग्रह न तो अधिक अच्छा और न ही अधिक अशुभ प्रभाव करता है। शत्रु राशि में बैठा हुआ ग्रह अपना शुभ स्वरूप खो देता है और क्रूर ग्रह अधिक अशुभ फल देने वाला होगा। अपने अति शत्रु की राशि का ग्रह अत्यधिक क्रूर और अशुभ फल देता है। यदि शुभ ग्रह हो तो उसका अच्छा प्रभाव बहुत अधिक मात्रा में नष्ट हो जाता है।

पञ्चधा मैत्री चक्रम्

ग्रह	अतिमित्र	मित्र	सम	शत्रु	अतिशत्रु
सूर्य	चन्द्र बृहस्पति	—	शुक्र	बुध	शनि
चन्द्र	चन्द्र बुध	मंगल शुक्र	—	बृहस्पति शनि	—
मंगल	सूर्य चन्द्र बृहस्पति	—	बुध	शुक्र शनि	—
बुध	शुक्र	मंगल बृहस्पति	सूर्य चन्द्र	शनि	—
बृहस्पति	सूर्य मंगल	—	चन्द्र बुध शुक्र	शनि	—
शुक्र	बुध	बृहस्पति	सूर्य चन्द्र शनि	मंगल	—
शनि	—	—	बुध शुक्र	बृहस्पति	सूर्य चन्द्र मंगल

ऊपर जो मित्रामित्र के विचार के लिए जो सिद्धान्त बताये गये है, वही नवांश कुण्डली में भी समझना चाहिए। अति मित्र की राशि में है, परन्तु नवांश में अति शत्रु की राशि में हो तो वह ग्रह अपना अच्छा फल

कुछ मात्रा तक खो देता है; परन्तु नवांश में अति मित्र की राशि में हो और जन्म-कुण्डली में अति शत्रु की राशि में हो, तो उसका अशुभ प्रभाव कुछ सीमा तक कम रहेगा।

यहाँ जोर देकर यह कहना चाहेंगे कि किसी ग्रह की स्थिति शुभ है या अशुभ, वह इस बात पर निर्भर करती है कि वह अपने मित्र की राशि में है अथवा शत्रु की राशि में। इसके अतिरिक्त भी कुछ और नियम तथा अपवाद भी हैं, जिनका विश्लेषण आगे किया जाएगा।

राहु और केतु छाया ग्रह हैं। उनका अच्छा खराब प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि वे किस राशि में बैठे हैं या किन ग्रहों के साथ हैं। उस राशि के स्वामी के समान या जिस ग्रह के साथ हों उसके स्वभाव के अनुरूप ही फल देंगे। इसलिए मित्रामित्र में इनका विचार नहीं किया जाता है।

अशुभ और शुभ ग्रह—(१) सूर्य, मंगल, शनि, राहु और केतु क्रूर होने से अशुभ ग्रह हैं। क्रूर ग्रह जिस भाव में बैठता है, उस भाव के फल को नष्ट कर देता है। जिस भाव को देखता है, उसके शुभ फल को भी नष्ट कर देता है। इसमें भी शनि की तीसरी और सातवीं दृष्टि तथा मंगल की सातवीं और आठवीं दृष्टि बहुत दुष्प्रभाव देती है। यह दुष्प्रभाव क्रूर ग्रह की महादशा और अन्तर्दशा में विशेष रूप से अशुभ प्रभाव दिखाएगा। इसके अतिरिक्त भी साधारण रूप से उसका प्रभाव हमेशा ही रहेगा। इसमें एक अपवाद भी है। यदि क्रूर ग्रह अपनी ही राशि में हों या अपनी राशि को ही देखें तो अच्छा प्रभाव दिखाते हैं। कौन-कौन-सा ग्रह किन-किन भावों को देखता है, इसे आगे बताएंगे।

(२) चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति और शुक्र शुभ ग्रह हैं, परन्तु कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी और अमावस्या का चन्द्रमा शुभ नहीं होता हैं, बल्कि क्रूर होता है। कुछ व्यक्तियों का मत है कि यदि बुध क्रूर ग्रह के साथ हो तो अशुभ और शुभ ग्रह के साथ हो तो शुभ होता है। शुभ ग्रह जिस भाव में हो या जिस भाव को देखे, शुभ फल को देता है। विशेष तौर से जिस समय उसकी महादशा या अन्तर्दशा होती है।

ग्रह दृष्टि विचार—अब यह बतलाया जा रहा है कि कौन-सा ग्रह किन भावों को देखता है—

(१) सूर्य, चन्द्र, बुध और शुक्र, सातवें भाव पर पूर्ण दृष्टि डालते

हैं, चौथे और आठवें भावों पर त्रिपादी दृष्टि या ७५ प्रतिशत, पांचवें और नवें भावों पर आधी दृष्टि या ५० प्रतिशत तथा तीसरे और दसवें भावों पर पाद दृष्टि या २५ प्रतिशत, जिस भाव में ग्रह बैठे हों उससे गणना करनी चाहिए।

(२) मंगल चौथे, सातवें और आठवें भावों पर पूर्ण दृष्टि डालता है, पांचवें और नवे भावों पर ५० प्रतिशत तथा तीसरे और दसवें भावों पर २५ प्रतिशत।

(३) बृहस्पति पांचवें सातवें और नवें भावों पर दृष्टि डालता है। चौथे और आठवें भाव पर ७५ प्रतिशत तथा तीसरे और दसवें भाव पर २५ प्रतिशत।

भाव

ग्रह भाव	३	४	५	७	८	९	१०
सूर्य	१/४	३/४	१/२	१	३/४	१/२	१/४
चन्द्र	१/४	३/४	१/२	१	३/४	१/२	१/४
मंगल	१/४	१	१/२	१	१	१/२	१/४
बुध	१/४	३/४	१/२	१	३/४	१/२	१/४
बृहस्पति	१/४	३/४	१	१	३/४	१	१/४
शुक्र	१/४	३/४	१/२	१	३/४	१/२	१/४
शनि	१/४	३/४	१/२	१	३/४	१/२	१
राहु-केतु	१/४	३/४	१	१	३/४	१	१/४

नीचे चक्र में देखने से पाठकों को यह तुरन्त पता चल जाएगा कि कौन-से ग्रह किस अनुपात में किन-किन भावों पर दृष्टि डालते हैं।

सामान्यतया से राहु और केतु की दृष्टि मानने की परम्परा नहीं है। लेकिन प्रचलन में जैसा है ऊपर तालिका में दी गई है।

जिस भाव में ग्रह बैठा हो उस भाव से गणना करनी चाहिए। जैसे दूसरे भाव में शुक्र हो तो अपने से सातवें अर्थात् (दूसरा भाव—१, तीसरा भाव—२ इत्यादि) आठवें भाव को पूर्ण दृष्टि से वह देखता है।

उदाहरण के लिए दी गई जन्म-कुण्डली में बुध की दृष्टि पर एक नजर डालें। बुध पांचवें भाव में बैठा है—

बुध की दृष्टि विचार

बुध से भावों की गणना करने से बारह भावों पर दृष्टि इस प्रकार स्पष्ट ज्ञात होता है—

पहला भाव अर्थात् बुध से पहला पर लग्न से ५वां दूसरा भाव अर्थात् बुध से दूसरा पर लग्न से छठा आदि की तरह ग्रह से भाव गणना करना यहाँ अभीष्ट है।

(१) लग्न से ५	(२) लग्न से ६	(३) ७
(४) ८	(५) ९	(६) १०
(७) ११	(८) १२	(९) १ या लग्न
(१०) २	(११) ३	(१२) ४

अर्थात् यहाँ लग्न से ग्यारहवां भाव बुध से सातवां हुआ और उस पर बुध की पूरी १०० प्रतिशत दृष्टि हुई। इसी प्रकार बुध चौथे और आठवें भावों पर (जो कि लग्न से क्रमशः आठवां और बारहवां भाव है) ७५ प्रतिशत दृष्टि हुई। बुध से पांचवां और नवां भाव (लग्न से क्रमशः नवां और स्वयं लग्न ही हुआ), इन पर ५० प्रतिशत दृष्टि हुई। बुध से तीसरा और दसवां भाव (लग्न से क्रमशः सातवां और दूसरा भाव हुए), इन पर २५ प्रतिशत दृष्टि हुई। ऊपर जो चक्र है उससे किस भाव पर कितनी दृष्टि पड़ती है, यह भली भांति समझ में आ जानना चाहिए।

दूसरी बात जो पाठकों को समझनी चाहिए वह यह है कि ग्रह न केवल भावों को अपितु उनमें बैठे हुए ग्रह को भी उसी अनुपात से देखता है। जैसे ऊपर प्रदर्शित कुण्डली में बुध वृश्चिक राशि में है। उससे सातवें भाव

पर वृषभ राशि है और इस पर बुध की पूर्ण (१०० प्रतिशत) दृष्टि हुई। इसलिए बुध न केवल वृषभ को अपितु शनि को भी, जो वहां है, पूर्ण रूप से देखता है। इसी प्रकार शनि भी न केवल वृश्चिक राशि को अपितु सूर्य और बुध को भी देखता है।

ग्रहों की परस्पर दृष्टि के प्रभाव का इस प्रकार का समझ रखना चाहिए—

(१) पहला यह है कि यदि एक शुभ ग्रह एक क्रूर ग्रह को देखे तो क्रूर ग्रह का दुष्प्रभाव कम हो जाता है। इसके विपरीत क्रूर ग्रह की दृष्टि से शुभ ग्रह की शुभता कम हो जाएगी।

(२) दूसरा यह है कि जब दो ग्रह एक-दूसरे को पूर्ण रूप से देखते हैं तो उनमें एक विशेष प्रकार का सम्बन्ध हो जाता है। इस 'सम्बन्ध' का ज्योतिष में अत्यधिक महत्त्व है। 'सम्बन्ध' का क्या फल होता है यह आगे बताया है।

ग्रहों की दिशाएं

प्रत्येक ग्रह की अपनी दिशाएं होती हैं, जो नीचे बताई जा रही हैं—

पूर्व—सूर्य पश्चिम—शनि
दक्षिण पूर्व—शुक्र उत्तर पश्चिम—चन्द्र
दक्षिण—मंगल उत्तर—बुध
दक्षिण पश्चिम—राहु उत्तर पूर्व—बृहस्पति

यदि जन्म-कुण्डली में कोई ग्रह बलवान और अच्छे भाव में है तो उस ग्रह की जो दिशा है उस ओर से लाभ होता है। इसके विपरीत कमजोर और पीड़ित ग्रह की दिशा में हानि और संकट समझ लेना चाहिए।

ग्रहों के रंग, रत्न और धातु

अब ग्रहों के रंग, रत्न और धातु बताते हैं—

ग्रह	रंग	रत्न	धातु
सूर्य	ताम्रवर्ण	माणिक	तांबा
चन्द्र	सफेद	मोती	चांदी
मंगल	लाल	मूंगा	तांबा, सोना
बुध	हरा	पन्ना	सोना, चांदी, कांसा
बृहस्पति	पीला	पुखराज	सोना
शुक्र	अनेक रंग, सफेद	हीरा	चांदी
शनि	काला	नीलम	लोहा
राहु	गहरा काला	गोमेद	रांगा, सोना
केतु	चितकबरा	लहसनिया	सोना, कांसा

ऊपर जो रत्न बताए गए हैं, ये ही वास्तविक नवरत्न कहलाते हैं। ये सब रत्न मूल्यवान होते हैं। यदि जन्म-कुण्डली में ग्रह बलवान हो तो उस ग्रह की धातु, रत्न और रंग के कार्यों को करने से लाभ होता है, विशेष तौर से जब कि उस ग्रह की दशा-अन्तर्दशा भी हो। कमजोर ग्रह जिन रत्नों-धातुओं का कारक होता है उनका कार्य हानिकारक होता है। पीड़ित, अस्त, क्रूर ग्रह का रत्न या धातु धारण करने से ग्रह की पीड़ा दूर होती है। यह आगे विस्तार से बताएंगे।

जिस ग्रह का जो रंग है उससे चेहरे के रंग पर प्रभाव पड़ता है। विशेष तौर से लग्नेश और पहले भाव में जो ग्रह हो, उसके अनुरूप चेहरे का स्वरूप और रंग होता है अर्थात् हमारा कहने का तात्पर्य यह है कि जातक का रंग, रूप इत्यादि अपने परिवार के अनुरूप ही होगा परन्तु यदि चन्द्रमा, बृहस्पति, बुध लग्न में स्थित हों तो जातक अपने परिवार के लोगों के मुकाबले में अधिक गौर वर्ण और भव्य आकृति का होगा, यदि शुक्र हो तो देखने में अति सुन्दर हो, शनि अथवा राहु से रंग उतना साफ न हो। इसी प्रकार सप्तम भाव में जो ग्रह हो उसके अनुसार ही पत्नी (पति) का गुण रूप और रंग समझना चाहिए, क्योंकि सातवें भाव से पत्नी या पति का विचार किया जाता है। इसी प्रकार से जो ग्रह जिस भाव को देखते हों उनका प्रभाव भी विशेष रूप से होता है। यदि सातवें भाव में कोई भी ग्रह न हो तो पत्नी का रंग और सुन्दरता सातवें भाव के स्वामी और जो ग्रह सातवें भाव को देखें, उन पर निर्भर करता है।

ग्रह लिङ्ग विचार—भारतीय ज्योतिष में सब ग्रह पुरुष ही हैं तथा वे पुरुष, स्त्री या नपुंसकत्व के कारक माने गए हैं। यहाँ पाश्चात्य ज्योतिष से कुछ मतभेद हैं क्योंकि पाश्चात्य ज्योतिषी चन्द्रमा और शुक्र को स्त्री जाति का ही मानते हैं। ग्रहों का पुरुषत्व पुराणों में भी वर्णित है। जैसे चन्द्रमा का बृहस्पति की पत्नी तारा से सम्बन्ध होने के कारण 'बुध' का जन्म हुआ। इसी प्रकार 'शुक्र' की दो पत्नियों 'जयन्ती (इन्द्र की कन्या) और 'गो' (पित्री की क़न्या) का वर्णन है। शुक्र के इन स्त्रियों से चार पुत्र हुए।

इस प्रकार सबके सब नौ ग्रह (राहु और केतु सहित) पुरुष ही कहे गए हैं, किन्तु प्रभाव और कारकत्व की दृष्टि से सूर्य, मंगल और बृहस्पति को पुरुष, चन्द्रमा और शुक्र को स्त्री तथा बुध और शनि को 'नपुंसक' माना गया है। यह लिङ्ग-भेद सन्तान का विचार करने में प्रयोग होता है। पांचवें भाव का स्वामी या पांचवें में स्त्रीकारक ग्रह हो तो ऐसे जातक के कन्या

अधिक होती हैं। यदि पुरुष ग्रह हो तो पुत्र अधिक होते हैं। नपुंसक ग्रह 'कन्याएं' देते हैं।

शारीरिक दोष और ग्रह—ग्रहों का निम्नलिखित रूप से प्राणी शरीर के दोषों पर प्रभाव होता है अत: यदि जन्म-कुण्डली में कोई ग्रह बलवान हो तो शरीर के जिन दोषों पर उसका अधिकार है वे बलवान होते हैं अन्यथा इसके विपरीत समझना चाहिए। जो ग्रह कमजोर और पीड़ित होते हैं उनके दोषों के कारण बीमारी समझनी चाहिए। अब यहाँ ग्रह और उनकी धातुओं को बतलाया जाता है—

(१) सूर्य—हड्डी (२) चन्द्रमा—रक्त
(३) मंगल—मज्जा (४) बुध—चर्म
(५) बृहस्पति—चर्बी (६) शुक्र—वीर्य (डिम्ब कोष)
(७) शनि—नसें

आयुर्वेद में बीमारी का विचार तीन दोषों क्रम से वात, पित्त और कफ पर आधारित होता है। किसी एक, दो या तीनों के बिगड़ जाने पर विभिन्न प्रकार की बीमारियां हो जाती हैं।

ग्रहों पर इन तीनों दोषों का निम्नलिखित रूप से प्रभाव है। इन दोषों के बिगड़ने से उस ग्रह सम्बन्धि बीमारी हो सकती है। सूर्य-पित्त; चन्द्र-वात और कफ; मंगल-पित्त; बुध-त्रिदोष; बृहस्पति-कफ; शुक्र-कफ, शनि वात।

ग्रह स्वाद विचार—नीचे प्रत्येक ग्रह का स्वाद और रुचि बताते हैं। जन्म-कुण्डली में दूसरा भाव मुँह और जीभ का भी है। जातक की किसी विशेष स्वाद में रुचि, दूसरे भाव के स्वामी, दूसरे भाव में बैठे हुए ग्रह अथवा जो ग्रह दूसरे भाव को देखें या द्वितीय भाव के कारक ग्रह उन पर निर्भर करती है। इस रुचि में ग्रहों की दशा-अन्तर्दशा के कारण भी कुछ परिवर्तन होता रहता है—

(१) सूर्य—कड़वा, (२) चन्द्रमा—नमकीन, (३) मंगल—तीखा, (४) बुध—मिश्रित स्वाद वाला, (५) बृहस्पति—मीठा, (६) शुक्र—खट्टा और (७) शनि—कषाय।

अब जन्म का समय ठीक से ज्ञात न हो, जिसके कारण दो लग्नों में से कौन-सा लग्न जन्मकाल में उदय था—उस समय जातक की किसी विशेष स्वाद में रुचि, उसका लग्न निर्धारित करने में काम आती है अर्थात् दूसरे भाव में बैठे ग्रह से जातक की पसन्द का पता चलता है।

दिग्बल विचार—बुध और बृहस्पति पहले भाव में बलवान होते हैं, चन्द्रमा और शुक्र चौथे भाव में, शनि सातवें भाव में और सूर्य और मंगल दसवें भाव में बलवान होते हैं। इन भावों में ये ग्रह बलवान समझे जाते हैं। जो भाव ऊपर बताए गए हैं उनसे सातवें भाव में ग्रह सबसे कमजोर होते है। जैसे बुध और बृहस्पति सातवें भाव में, पहले भाव में शनि तथा सूर्य और मंगल चौथे भाव में। यदि पूर्ण बल एक इकाई हो तो ग्रहों को केन्द्रों में इस प्रकार का बल मिलेगा—

	१	४	७	१०
सूर्य	१/४	०	१/४	१
चन्द्र	१/४	१	१/४	०
मंगल	१/४	०	१/४	१
बुध	१	१/४	०	१/४
बृहस्पति	१	१/४	०	१/४
शुक्र	१/४	१	१/४	०
शनि	०	१/४	१	१/४

इसी अनुपात से और भावों में भी समझना।

ग्रह कारकत्व विचार

ग्रहों के कारकत्व का विचार पूर्व में बता चुके हैं कि किस भाव से किन-किन कार्यों या वस्तुओं का विचार किया जाता है परन्तु इसके साथ ही उन कार्यों के 'कारक' भी होते हैं। उन्हें भी समान रूप से देखना चाहिए। किसी भी कार्य का विचार करने के लिए भाव का,उसके स्थान का, जो ग्रह उस भाव से सम्बन्धित हो अर्थात् जो ग्रह वहां बैठे हों या उसे देखते हो या उसके स्वामी के साथ हो का उस कार्य के 'कारक' का विचार करना चाहिए। आगे हम यह बताते हैं कि कौन-सा ग्रह किन वस्तुओं का कारक है :

(१) सूर्य आत्मा का, चन्द्रमा हृदय और मन का, मंगल शक्ति और ताकत का, बुध बुद्धि और स्नायु-मण्डल का, बृहस्पति प्रसन्नता, विद्या और ज्ञान का, शुक्र सांसारिक सुखों का, जीवन में सुख का, सवारी का, शनि दुःख और मेहनत का कारक है।

(२) सूर्य से पिता, चन्द्रमा से माता, मंगल से भाई और बहन, बुध से मामा, बृहस्पति से सन्तान (पुत्र-कन्या) तथा स्त्रियों की कुण्डलियों में पति का (इसमें मतभेद है), शुक्र से पत्नी और शनि से नौकर का विचार किया जाता है।

(३) पहले भाव का विचार करते समय सूर्य का विचार भी उसके साथ करना चाहिए, दूसरे, पांचवें और ग्यारहवें भाव के साथ बृहस्पति का विचार भी करें। तीसरे भाव के साथ मंगल की स्थिति भी देखें, चौथे भाव के साथ चन्द्रमा और बुध तथा शुक्र का भी विचार किया जाए, छठे भाव के साथ मंगल, शनि का, सातवें भाव के विचार में शुक्र की स्थिति अवश्य देखी जाए, आठवें और बारहवें भाव का विचार करते समय शनि का विचार भी किया जाए, नवें भाव के फलादेश में सूर्य और बृहस्पति का विचार करना आवश्यक है, दसवें भाव के साथ ही सूर्य, बुध, बृहस्पति और शनि का विचार किया जाए। चक्र में बताया है कि किस भाव के साथ किन ग्रहों के बलाबल का विचार कर ही फल कहना चाहिए।

उदाहरण के लिए शरीर की बनावट, शक्ति, स्वास्थ्य इत्यादि का विचार पहले भाव से किया जाता है। अब मान लीजिए, पहला भाव बलवान है, जिसका मतलब यह होगा कि पहले भाव का स्वामी भी बलवान है। अच्छे भाव में बैठा है और शुभ ग्रह से दृष्ट है तथा पहले भाव में भी शुभ ग्रह है अथवा पहले भाव को देखते हैं तो ऐसी स्थिति में जातक का स्वास्थ्य अच्छा रहेगा। परन्तु यदि जन्म कुण्डली में सूर्य पीड़ित हो, दुःस्थान में बैठे या कमजोर रहेगा तो पहले भाव के बलवान होने के उपरान्त भी जातक का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रह पाएगा। कोई भी बीमारी उसे जल्दी हो जाएगी और काफी समय तक रहेगी या दूसरा उदाहरण लीजिए, माता का विचार चन्द्रमा और चौथे भाव से किया जाता है। यदि दोनों में एक बलवान और दूसरा कमजोर हो तो भी माता को कष्ट रहेगा या जातक को अपनी माता से सुख नहीं मिलेगा।

अस्त ग्रह परिचय—सूर्य की निकटता के कारण जब किसी भी ग्रह की किरणें नष्ट हो जाती हैं अर्थात् दिखाई नहीं देतीं तो उस ग्रह को 'अस्त ग्रह' कहा जाता है। अस्त ग्रह कमजोर और पीड़ित होता है। उसका अच्छा (शुभ) फल नष्ट हो जाता है। हमारे विचार से ग्रह का शुभ और अशुभ दोनों ही प्रभाव नष्ट हो जाते हैं और जैसी सूर्य की स्थिति हो उसी के अनुरूप ग्रह का अपना फल होता है क्योंकि बुध और शुक्र हमेशा सूर्य के आसपास ही रहते हैं। (बुध सूर्य से अधिक

से अधिक २८ अंश और शुक्र सूर्य से अधिक से अधिक ४८ अंश दूर हो सकता है), इसलिए उनका अस्त होना इतना अशुभ नहीं होता है। बृहस्पति अस्त हो तो शुभ फल नहीं देता। मंगल और शनि यदि शुभ हों तो शुभ फल नहीं देते। यदि अशुभ फलकारक हो तो खराब फल ही कुछ हद तक देंगे। पञ्चाङ्ग में गणना करते समय देखिए कि कोई ग्रह जन्म के समय अस्त था या नहीं। अस्त ग्रह दिन के समय दिखाई नहीं देता, रात्रि में ही दृष्टि गोचर होता है।

नीचे दी गई जन्म कुण्डली में शनि अस्त है।

इस जन्म-कुण्डली में सूर्य के १७° अंश और शनि के भी १६ अंश हैं। सूर्य के निकट होने से शनि अस्त है। यहां शनि लग्नेश भी है। यह जातक कमजोर शरीर का है। इसे जीवन में सुख कम मिला। चन्द्रमा और शुक्र तथा पांचवां भाव मंगल और शनि के मध्य में है। यह अभी तक अविवाहित है।
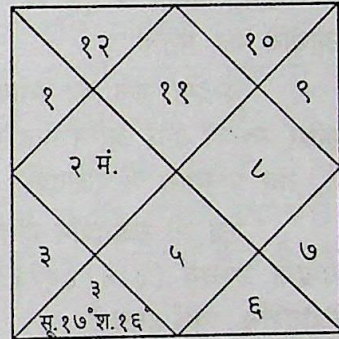
।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का अष्टम पुष्प रूप 'ग्रह विशेषता विवेचन' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।८।।

९

गर्भाधान व प्रसव निरूपण

उत्पति के विना राश्यादि फल विभाग किस का किया जाय ? अतएव समस्त प्राणियों का कारणभूत आधान (गर्भाधान) का विवेचन किया जाता है।

स्त्री के जन्म राशि से अनुपचय राशि (१/२/४/५/७/८/९/१२) में चन्द्रमा, मंगल से दृष्ट हो, तो प्रतिमास में आर्त्तव होता है, ऐसा किसी आचार्य का मत है।

चन्द्रमा जल का स्वामी तथा भौम अग्नि का स्वामी है तथा जल रुधिर स्वरूप और अग्नि पित्त स्वरूप है, एवं जब रक्त पित्त से क्षुभित होता है, तब प्रतिमास में रजोदर्शन होता है।

एवं जो रजोदर्शन होता है, वह गर्भाधान के हेतु होता है तथा यदि चन्द्रमा उपचय (३/६/१०/११) स्थान में स्थित हो, तो उस समय का रजोदर्शन व्यर्थ होता है।

पुरुष के जन्म स्थान से यदि चन्द्रमा उपचय स्थान में बृहस्पति अथवा वह शुभ ग्रह से दृष्ट हो, तो उसकी स्त्री पति के साथ सम्भोग (मैथुन) को प्राप्त होती है। विशेष करके शुक्र दृष्ट हो, तो अवश्य संयोग प्राप्त करती है।

यदि वह चन्द्रमा मंगल से दृष्ट हो, तो वह रजस्वला वैश्य से, रवि से दृष्ट हो, तो राजपुरुष से, शनि से दृष्ट हो, तो नौकर के साथ संयोग को प्राप्त करती है।

वह दृष्टि फल एक ही ग्रह की दृष्टि हो तो कहा जाता है। अधिक ग्रहों की दृष्टि से नहीं तथा यदि उस चन्द्रमा को भौमादि सभी पाप ग्रह देखतें हों, तो स्त्री गृह को छोड़ वेश्या पद को प्राप्त करती है। बादरायण के अनुसार—

पुरुषोपचयगृहस्थो गुरुणा यदि दृश्यते हिममयूषः।
स्त्री-पुरुष संप्रयोगं तदा वदेदन्यथा नैव इति॥

मैथुन विचार—गर्भाधान लग्न से सप्तम भाव में जो राशि हो, वह द्विपदादि में जो प्राणि वर्ग हो, उस प्राणि के मैथुन सदृश स्त्री पुरुष का मैथुन कहना चाहिये।

तथा यदि सप्तम राशि पाप ग्रह युक्त दृष्ट हो, तो क्रोध तथा कलह से युक्त और निन्द्य मैथुन प्रयोग कहना चाहिये। यदि सप्तम राशि शुभ ग्रह से दृष्ट-युक्त हो, तो सुन्दर तथा वात्स्यायनादि संप्रायोगिक (कोक शास्त्रोक्त) मैथुन कहना चाहिये।

तथा यदि शुभाशुभ ग्रहों से दृष्ट-युक्त हो तो मिश्र कर्मों से अधिवासित मैथुन निवृत्ति कहना चाहिये तथा संयोग में शुक्र शोणित से गर्भावास ढ़ंकता है, संयोग में शुक्र शोणित मिश्रित हो, गर्भावास में प्रवेश करता है।

गर्भ का विचार—पुरुष की जन्म राशि से बली रवि तथा शुक्र समनवांशगत होकर उपचय राशि में हों अथवा स्त्री के जन्म राशि से मंगल तथा चन्द्रमा उपचय राशि में हो, तो गर्भ सम्भव कहना चाहिये।

अथवा पुरुष की जन्म राशि से बली रविशुक्र स्वनवांशगत उपचय राशि में हो, अथवा स्त्री की जन्म राशि से चन्द्रमा, मंगल स्वनवांश गत उपचय राशि में हो, अथवा बलवान् बृहस्पति ९/५ अथवा लग्न में हो, तो गर्भ सम्भव कहना चाहिये।

प्रश्न या आधानकालिक योग से पुत्र या पुत्री का जन्म विचार—गर्भाधान समय में स्त्री-पुरुष का जैसा मनोभाव मद लालसादि हो, वैसा ही कफादि·दोष युक्त प्रसव भी कहना चाहिये।

गर्भाधान समय यदि लग्न, चन्द्रमा, बृहस्पति तथा सूर्य बलिष्ठ होकर विषम राशि तथा विषम नवांश में हों तो पुंजन्म अथवा यदि सम राशि समनवांश गत हों, तो स्त्री जन्म कहना चाहिये।

अथवा बली सूर्य बृहस्पति विषम राशि में हो, तो पुंजन्म तथा यदि बली चन्द्रमा, मंगल, शुक्र सम राशि में हो, तो स्त्री जन्म कहना चाहिये।

यमल योग विचार—यदि सूर्य मिथुन राशि में तथा बृहस्पति धनु राशि में स्थित हो और दोनों बुध से दृष्ट हों, तो यमल (जुड़वा) पुत्र पैदा करते हैं। एवं यदि शुक्र, चन्द्रमा और मंगल कन्या तथा मीन में हो और बुध से दृष्ट हो तो कन्या युग्म पैदा करते हैं।

पुत्र जन्म विचार—प्रश्न कालिक या आधान कालिक लग्न को छोड़कर विषम स्थान ३/५/७/९/११ में से किसी स्थान में शनि हो, तो पुरुष का जन्म आदेश करना चाहिये। तथा जहाँ दो प्रकार का योग (अर्थात् एक योग स्त्री जन्म का तथा अन्य योग पुत्र जन्म का) हो, तो वहाँ ग्रह का बल विचार कर स्त्री जन्म अथवा पुत्र जन्म का निश्चय करना चाहिये।

नपुंसक योग विचार—अनन्तर यदि सूर्य, चन्द्रमा दोनों विषम राशि में स्थित होकर परस्पर दृष्ट हों, तो नपुंसक योग होता है। (यह प्रथम प्रकार) अथवा बली बुध, शनि विषम राशि में स्थित होकर परस्पर दृष्ट हों, तो (द्वितीय प्रकार) अथवा विषम राशि स्थित मंगल सम राशि स्थित सूर्य को देखता हो, तो (तृतीय योग) अथवा सम-विषम राशिस्थ बुध, चन्द्रमा यदि मंगल से दृष्ट हों, तो (पञ्चम योग) एवं लग्न, चन्द्रमा तथा शुक्र यदि विषम राशि में विषम नवांश में स्थित हो वा बुध शनि से दृष्ट हों, तो (षष्ठयोग) नपुंसक योग होता है।

पुनः यमल (जुड़वाँ) जन्म योग विचार—यदि सम राशि स्थित लग्न, चन्द्रमा बलवान् ग्रह से दृष्ट हो, तो गर्भ में जुड़वा लड़का कहना चाहिये।

एवं यदि चन्द्रमा तथा शुक्र सम राशि में गुरु, मंगल, बुध और लग्न विषम राशि में अथवा द्विस्वभाव राशि में हो, तो गर्भ में एक पुत्र एक पुत्री कहना चाहिये।

अथ यदि धनु, मीन, मिथुन, कन्या राशि के नवांश गत ग्रह तथा लग्न को मिथुन राशिनवांश स्थित बुध देखता हो, तो एक कन्या दो पुत्र गर्भ में, इस प्रकार तीन सन्तान कहना चाहिये।

तथा यदि द्विस्वभाव राशि नवांश गत ग्रह तथा लग्न को कन्या नवांश गत बुध देखता हो, तो गर्भ में दो कन्या एक पुत्र इस प्रकार तीन सन्तान गर्भ में कहना चाहिये।

यदि मिथुन तथा धनु राशि के नवांश गत ग्रह और लग्न को मिथुन राशिनवांश स्थित बुध देखता हो, तो गर्भ में तीन पुत्र कहना चाहिये।

तथा यदि कन्या और मीन नवांश गत ग्रह तथा लग्न को कन्या नवांश गत बुध देखता हो, तो गर्भ में ३ कन्या का आदेश करना चाहिये।

गर्भाधान में ग्रहों की मातृ-पितृ संज्ञा विचार—यदि दिन में निषेक अथवा जन्म हो तो शुक्र मातृसंज्ञक, सूर्य पितृ संज्ञक होते हैं। एवं रात्रि में जन्म हो या निषेक हो तो चन्द्रमा मातृ संज्ञक और शनैश्चर पितृ संज्ञक होते हैं। तथा दिन में जन्म वा निषेक हो तो चन्द्रमा मौसी, शनिश्चर फुफा (बुआ) संज्ञक और रात्रि में शुक्र मौसी, सूर्य फुआ (बुआ) संज्ञक होते हैं।

इसका प्रयोजन– लग्न से विषम स्थान में स्थित पित्तृ और पितृव्य संज्ञक ग्रह हो, तो यथाक्रम से दोनों (पिता और पितृव्य) को शुभ फल प्राप्त

होता है तथा यदि मातृ तथा मातृष्वसा (मौसी) संज्ञक ग्रह लग्न से समस्थान में हों, तो माता और मौसी को शुभ फल होता है।

गर्भाधान से प्रसूति काल पर्यन्त गर्भ स्वरूप विचार—प्रथम मास में कलल (शुक्र शोणित मिश्रित बूँद), द्वितीय मास में अण्ड स्वरूप, तृतीय मास में हस्तादि अवयव युक्त, चतुर्थ मास में अस्थि युक्त, पञ्चम मास में चर्म सम्भव, छठवें मास में रोम युक्त और सातवें मास में चेतनता युक्त, आठवें मास में तृष्णा व क्षुधा से युक्त, नवम मास में उद्वेग युक्त और दशवें मास में पके हुए फल की तरह गर्भ गिर जाता है (प्रसव हो जाता है), जहाँ प्रथम मास का शुक्र, द्वितीय मास का मंगल, तृतीय मास का बृहस्पति, चतुर्थ मास का सूर्य, पञ्चम मास में चन्द्रमा, छठवें का शनि, सातवें का बुध, आठवें मास का गर्भाधान लग्न का स्वामी, नवम मास का चन्द्रमा और दशम मास का सूर्य स्वामी होता है।

गर्भस्राव विचार—यदि आधान लग्न उत्पात अथवा क्रूरता से आहत हो, तो लग्नपति के मास में (अर्थात् शुक्रार जीव इत्यादि रीति से प्रतिपादित मास में) गर्भस्राव होता है। अथवा योगेश के मास में गर्भस्राव होता है अथवा आधानलग्न में शनि, मंगल हो अथवा चन्द्रमा, शनि या मंगल के गृह में हो यद्वा शनि मंगल दोनों आधान लग्न को देखते हों, तो भी गर्भस्राव होता है।

गर्भपुष्टि विचार—लग्न अथवा चन्द्रमा शुभ ग्रहों से युक्त हों अथवा लग्न या चन्द्रमा से शुभ ग्रह ९/५/७/२/१०/४ इन भावो में यथा सम्भव किसी स्थान में तथा लग्न या चन्द्रमा से पाप ग्रह ३/११ में यथा सम्भव स्थित हों और चन्द्रमा या लग्न रवि से दृष्ट हो, तो ऐसे योग में गर्भस्थ शिशु सुखी (सभी अवयवों से युक्त हृष्टपुष्ट) होता है।

आधानलग्नवश मातृमरण योग विचार—यदि सूर्य अथवा चन्द्रमा पाप ग्रहों के मध्य में स्थित हो तथा शुभ ग्रहों की दृष्टि न हों, तो युगपत् (एक ही साथ) गर्भ सहित स्त्री का मरण होता है।

अथवा पाप ग्रह लग्न तथा सप्तम में स्थित हो शुभ ग्रह की दृष्टि न हो, तो भी पूर्ववत् मरण होता है।

अथवा शनि या क्षीण चन्द्रमा लग्न में स्थित हों, मंगल देखता हो, तो भी पूर्ववत् कहना चाहिए।

अथवा यदि आधान समय बारहवें (१२) सूर्य, चतुर्थ में मंगल तथा क्षीण चन्द्रमा हो, तो भी मरण होता है।

अथवा यदि शुक्र पाप ग्रहों के मध्य में हो तो भी पूर्ववत् मृत्यु होती है।

गर्भनाश योग विचार—चन्द्रमा से अथवा लग्न से चतुर्थ स्थान में यदि पाप ग्रह हों तो गर्भ नष्ट हो जाता है। अथवा लग्न से सप्तम में मंगल हो तो गर्भ सहित माता की मृत्यु होती है।

या चतुर्थ में मंगल द्वादश में सूर्य तथा क्षीण चन्द्रमा हो और पाप ग्रहों की दृष्टि हो तो भी माता सहित गर्भ का नाश होता है।

लग्न में सूर्य अथवा क्षीण चन्द्रमा या भौम हो तथा बारहवें व दूसरे स्थान में पाप ग्रह हो और यदि लग्न शुभ ग्रह की दृष्टि रहित हो, तो भी पूर्ववत् मृत्यु होती है।

सप्तम स्थान में रवि हो अथवा लग्न में मंगल हो तो शस्त्र द्वारा माता सहित गर्भ का नाश होता है।

गर्भमासेश से शुभाशुभफल विचार—यदि आधान लग्न बलवान् बुध, गुरु, शुक्र या सूर्य से दृष्ट हो, तो गर्भ नित्य बढ़ता है तथा प्रत्येक मास में मासाधिप के बलानुसार तत्तत् अवयवों से युक्त होता जाता है।

आधान काल से तृतीय मास में स्त्रियों को अवश्य मासाधिपति के अनुसार दौहृदक (विशेष पदार्थ खाने पीने, पाने की इच्छा) होता है। इस तरह और भी विचार आधान लग्न के योगादि के वश से करना चाहिए।

आधानकालिक योग से प्रसवकाल विचार—आधान समय में यदि चर राशि में सूर्य हो,तो दशम मास में, स्थिर राशि में हों, तो एकादश मास में, द्विस्वभाव राशि में हों, तो बारहवें मास में प्रसव होता है।

एवं गर्भाधान समय में यदि चर लग्न हो, तो दशवें, स्थिर लग्न हो तो एकादशवें, द्विस्वभाव लग्न हो तो बारहवें मास में प्रसव होता है।

तात्कालिक लग्न स्थित वर्गादि से प्रसव का ज्ञान करना चाहिये तथा किसी आचार्य का मत है कि दशवें मास में आधाननक्षत्र से दशवें नक्षत्र में प्रसव होता है।

लेकिन आधानकालिक लग्न या तात्कालिक चन्द्रमा से सप्तम राशि में प्रसव होता है, यह बादरायण का मत है। यह पूर्वोक्त मत से भिन्न होने के कारण से सर्वमंगल मत को कहते हैं।

आधानकालिक या प्रश्नकालिक चन्द्रमा जिस राशि के द्वादशांश में स्थित हो, उसी राशि में स्थित चन्द्रमा के रहते हुए आधानकाल से दशवें मास में प्रसव कहना चाहिये।

आधानकालिक योग से तीन या बारह वर्ष में प्रसव विचार—जिस किसी राशि का उदय हो उसमें यदि मकर या कुम्भ राशि के नवांश का उदय हो तथा तात्कालिक लग्न से सप्तम में यदि शनिश्चर हो, तो यदि ऐसे योग में आधान हो, तो आधान समय से तीन वर्ष बाद प्रसव होता है एवं यदि आधान समय, जिस किसी राशि के उदय में कर्कटांश (कर्क नवांश) का उदय हो तथा लग्न से सप्तम में चन्द्रमा हो तो आधान लग्न से द्वादश (१२) वर्ष बाद प्रसव होता है।

प्रसवकाल विचार—आधान वा प्रश्न काल में दिनरात्रि संज्ञक जो लग्न उदित हो तथा स्वमान से जितना उदित हो उतना स्व मान से दिन वा रात्रि गत होने पर प्रसव कहना चाहिये।

तथा तात्कालिक गत दिनरात्रि से जन्मलग्न तथा दिन, मुहूर्त्त, मास, ऋतु आदि का ज्ञान बुद्धि द्वारा करना चाहिये।

एवं आधान काल में प्रथम, प्रसूति काल का निश्चय कर के गणितज्ञ को जातक शास्त्र कथित विधि का विचार करना चाहिये।

आधानवशाद् जन्मांधादि विचार—यदि आधान समय में सिंह लग्न, रवि, चन्द्रमा से युक्त होकर शनि तथा मंगल से दृष्ट हो, तो गर्भस्थ शिशु अन्धा होता है। (तथा सिंह लग्न यदि रवियुक्त होकर शनि-मंगल से दृष्ट हो, तो दाहिने नेत्र से हीन (काणा) एवं यदि सिंह लग्न चन्द्रमा से युक्त हो कर शनि-मंगल से दृष्ट हो, तो बांये नेत्र से रहित होता है)।

तथा यदि सिंह लग्न में स्थित रवि व चन्द्रमा शुभाशुभ ग्रहों से दृष्ट हो, तो पुष्पिताक्ष होता है (यहाँ भी एक ग्रह के युक्त होने से पूर्ववत् पुष्पिताक्ष भी जानना चाहिये)।

तथा आधान लग्न से यदि बारहवें चन्द्रमा हो, तो बांयें नेत्र से; रवि हो, तो दाहिने नेत्र से हीन (काणा) होता है तथा यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो, तो पूर्ण फल नहीं होता है। एवं जन्म काल में भी विचार करना चाहिये।

विलम्बित वाक् योग विचार—सभी पाप ग्रह राशि सन्धि (कर्क, वृश्चिक, मीन का अन्तिम नवांश) में यथा सम्भव स्थित हों तथा चन्द्रमा वृष राशि में स्थित हो और भौम, रवि, शनि से दृष्ट हो, तो गर्भस्थ बालक गूंगा होता है तथा यदि शुभ ग्रह की दृष्टि हो तो कुछ काल के बिलम्ब से बोलता है।

वधिरसदन्तयोग विचार—यदि पापग्रह तथा चन्द्रमा राशि सन्धि (कर्क वृश्चिक तथा मीन का अन्तिम नवांश) में यथा सम्भव स्थित हो तथा

शुभ ग्रह की दृष्टि न हो, तो जातक बधिर होता है एवं यदि शनि-मंगल जिस किसी राशि में बुध के नवांश (कन्यांश या मिथुनांश) में हो, तो जातक दांत सहित पैदा होता है।

अधिकांगयोग विचार—यदि लग्न से बुध नवम अथवा पञ्चम स्थान में हो और शेष ग्रह बलहीन हो, तो जातक द्विगुण शिर, मुख, हाथ आदि से युक्त होता है।

वामनकुब्जयोग विचार—मकर का अन्तिम नवांश उदित हो तथा रवि, चन्द्रमा और शनि से दृष्ट हो, तो गर्भस्थ बालक वामन होता है। एवं चन्द्रमा कर्क का होकर लग्न में शनि व मंगल से दृष्ट हो, तो गर्भस्थ जन्तु कुब्ज होता है।

पङ्गुयोग विचार—मीन राशि का उदय (लग्न) हो, चन्द्रमा, मंगल तथा शनि की दृष्टि हो, तो जातक लंगड़ा होता है। शुभ ग्रह की दृष्टि से ये सभी योग पूर्ण फल नहीं देते हैं।

विभुजाङ्घ्रिमस्तकयोग विचार—निषेक समय पञ्चम स्थान में जो द्रेष्काण हो, वह यदि मंगल से युक्त हो और सूर्य, चन्द्रमा व शनि से दृष्ट हो, तो भुजारहित एवं नवम स्थानस्थ द्रेष्काण यदि मंगल से युक्त हो और सूर्य, चन्द्रमा व शनि से दृष्ट हो, तो चरण रहित तथा लग्नस्थ द्रेष्काण यदि मंगल से युक्त हो और सूर्य, चन्द्रमा व शनि से दृष्ट हो, तो गर्भस्थ बालक शिर से रहित होता है; क्योंकि भगवान् गर्ग का भी यही मत है—

"लग्नद्रेष्काणगो भौमः सौरसूर्येन्दु वीक्षितः।
कुर्याद्विशिरस तद्वत्पञ्चमे बाहुवर्जितम्।
विपदं नवमस्थाने यदि सौम्यैर्न वीक्षितः॥"

किसी-किसी स्थान पर इस प्रकार का कथन भी दृष्ट होता है—

भौमयुता द्रेष्काणास्त्रिकोणलग्नेऽशुभैश्च संदृष्टाः।
विशिरोऽङ्घ्रि बाहुयुग्मः शेषैरबलैर्भवति गर्भः॥

यह उक्त गर्ग के कथन से भिन्न अर्थक है।

पूर्वोक्त सभी विधान यथायोग्य प्रसूति समय में भी विचार करना चाहिये।

प्रसूतिकालज्ञानार्थं प्रसव प्रकार विचार—निश्चय ही प्रसव काल के निर्णयार्थ आधान निरूपण के पश्चात् और उसके अच्छे ज्ञान के लिए प्रसव प्रकार को कहा जा रहा है।

शीर्षोदय (सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ तथा मिथुन) लग्न में शिर की ओर से, पृष्ठोदय (मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर) लग्न में चरण की ओर से तथा मीन लग्न में हस्त की ओर से जन्म होता है तथा यदि लग्न शुभ ग्रहों से दृष्ट हो, तो सुख से अन्यथा कष्टपूर्वक जन्म होता है।

प्रसव स्थान विचार—लग्नगतराशि या नवांशराशि के सदृश (तुल्य) देश में प्रसव जानना चाहिये। जैसे द्विस्वभावसम्बन्धि लग्न की राशि व नवांश से मार्ग में एवं स्थिर लग्न की राशि तथा नवांश में स्वगृह में प्रसव कहना चाहिये।

अथवा किसी लग्न की स्वनवांश में जन्म हों, तो स्वगृह में या अन्य नवांश में दूसरे के घर में जन्म या पितृमातृ आदि ग्रह के बलानुसार तत्तत् सम्बन्धियों के गृहों में प्रसव कहना चाहिये।

यदि सभी शुभग्रह नीचाश्रित हो, तो दुर्ग (किला), नदी, पेड़ आदि प्रदेश में प्रसव होता है। एवं यदि सभी शुभग्रह एक ही स्थान में स्थित हों तथा लग्न व चन्द्रमा को नहीं देखते हों, तो बिजन (जनरहितदेश, वनप्रदेश) में प्रसव होता है।

अथ जलचर राशि लग्न में हों तथा चन्द्रमा जलचर राशि का हो अथवा पूर्णचन्द्रमा लग्नगत जलचर राशि को देखता हो, तो जल में प्रसव होता है। अथवा दशम या चतुर्थ में जलचर राशि हो, तो भी जल में प्रसव होता है।

अथवा शुभग्रह लग्न में हों तथा पूर्ण चन्द्रमा कर्क में हों और जलचर राशिगत शुभग्रह चतुर्थ में हो अथवा लग्न तथा चन्द्रमा दोनों जलचर राशि के हों, तो भी जल में प्रसव होता है।

शनि कर्क या वृश्चिकराशिगत होकर लग्न में हो तथा चन्द्रमा देखता हो, तो गढ़े वगैरह में जन्म होता है।

यदि शनि जलचर राशिगत (कर्क, मीन, मकर का उत्तरार्द्धगत) होकर लग्न में हों तथा बुध से दृष्ट हो तो क्रीड़ा-भवन में प्रसव होता है। रवि से दृष्ट हो, तो देवमन्दिर में तथा चन्द्रमा से दृष्ट हो, तो ऊसर भूमि में प्रसव होता है।

एवं यदि शनि आरण्यराशि (मेष, वृष, सिंह, वृश्चिक, धनु का परार्द्ध, मकर का पूर्वार्द्ध) गत होकर लग्न में हो तथा यदि बुध से दृष्ट हो, तो पर्वत पर, रवि से दृष्ट हो, तो वन में, चन्द्रमा से दृष्ट हो, तो किला में प्रसव होता है।

एवं यदि शनि नर राशि (मिथुन, कन्या, तुला, धनु का पूर्वार्द्ध तथा कुम्भ) गत होकर लग्न में हो तथा यदि मंगल से दृष्ट हो, तो श्मशान भूमि में, बुध से दृष्ट हो, तो शिल्प भवन में, सूर्य से दृष्ट हो, तो सुन्दर मनोहर प्रदेश में और यदि बृहस्पति से दृष्ट हो तो अग्निहोत्र वाले गृह में प्रसव होता है।

यदि बृहस्पति उच्चराशि का होकर दशम स्थान में हो तो द्विशाल, त्रिशाल तथा चतु:शाल पर जन्म होता है (अर्थात् उच्चांश से भ्रष्ट हो तो दूसरे तल्ले पर एवं उच्चांश से न्यून हो, तो तीन तल्ले पर तथा उच्चांश पर स्थित हो तो चतु:शाल पर) एवं यदि शनि के नवांश में स्थित शुभग्रह चतुर्थ या दशम में हो तो भी कोठे या तल्ले पर जन्म कहना चाहिये।

गृह में प्रसव दिशा विचार—सूतिका गृह में पूर्वादि दिशा में मेषादि दो २ राशि और कोणों में द्विस्वभाव राशि का निवेश करें।

जन्म समय में जो लग्न हो, वह जिस दिशा में हों, गृह के उसी विभाग में प्रसूति का शयन स्थान कहना चाहिये।

दिशा के विभाग से केन्द्र में यदि ग्रह हो, तो जो ग्रह हो, उसका प्रोक्त गृह कहना चाहिये।

यदि लग्न में मीन, मकर तथा धनु का वर्ग हो, तो द्विशाल या त्रिशाल गृह कहना चाहिये।

सूतिकागृहस्वरुप विचार—यदि जन्मसमय में सभी ग्रहों की अपेक्षा शुक्र बली हो, तो सूतिका गृह चित्र-विचित्र शिल्पकारी से युक्त तथा नवीन; बृहस्पति से दृढ, मंगल से जला हुआ, सूर्य से पुराने काष्ठ से युक्त, चन्द्रमा से नूतन, बुध से बहुत शिल्पकारी से युक्त और शनि से सूतिकागृह पुराना कहना चाहिये।

सूतिकागृह में द्वार निर्णय—जन्मसमय में सप्तमभावगत बलिष्ठ ग्रह के अनुसार से सूतिका गृह के द्वार का निर्णय करना चाहिये, तथा ग्रह और राशि के संयोग से भी प्रत्येक गृह का विचार करना चाहिये।

पुन: सूतिकागृहस्वरुप विचार—जन्मसमय में यदि सभी ग्रहों की अपेक्षा सूर्य बली हो तो देवालय में, चन्द्रमा हो, तो जलसम्बन्धि गृह में; मंगल हो, तो अग्निगृह, में बृहस्पति हो, तो कोशगृह (खजानाघर) में; शुक्र हो, तो विहारस्थान में, शनि से उपस्कर (उसर) स्थान में बुधबली हो तो निद्रागृह (शयन गृह) में प्रसव होता है।

शय्यास्वरुप विचार—गृह की तरह खाट की स्थिति (सूतिका की शय्या) तथा उसके युक्तग्रह सदृश चिह्न एवं शुभग्रहों की दृष्टि से विस्तर (बिछौना) भी जानना चाहिये।

प्राच्यादि दिशायें, जिसमें दो-दो राशियों और कोणों में द्विस्वभाव राशियों को स्थापित करने से शय्या (खटिया) का स्वरूप समझना चाहिए। उन राशियों को शरीर भाग (अवयव) जानना चाहिये (अर्थात् लग्न शीर्ष, द्वितीय-व्ययभाव क्रम से दायाँ व बायाँ सिर का भाग, तृतीयैकादश भाव क्रम से दायाँ व बायाँ पावा, चतुर्थ-दशमभाव क्रम से दायाँ-बायाँ पाटी, पञ्चम-नवमभाव क्रम से दायाँ व बायाँ अधः पावा, षष्ठाष्टमभाव क्रम से पादान्त के दायाँ व बायाँ भाग तथा सप्तमभाव पादान्त, इस प्रकार पाद से सिर तक शय्या की स्थिति होती है) उस दिशा में शिर तथा वहाँ युक्तग्रह तुल्य लक्षण कहना चाहिये।

जहाँ पर ग्रह हो अथवा द्विस्वभावराशि हो, वहाँ अवश्य नम्रत्व (शय्या में कमी) कहना चाहिये और ६।३।९।१२ स्थान से पाद (चरणों) को जानना चाहिये (अर्थात् शिरहाने के तरफ तृतीय दक्षिण तथा द्वादशवामपाद एवं चरण के तरफ छठवाँ दक्षिण और नवमवामपाद शेष राशियाँ अङ्ग होती है और शेष पूर्व श्लोक की टीका से स्पष्ट है।

चन्द्रमा नीच राशि का हो अथवा चतुर्थ या लग्न में हो तो पृथ्वी पर शयन कहना चाहिये।

उपसूतिका संख्या व स्वरुप विचार—प्रसव समय में लग्न से लेकर चन्द्रमा के अन्तर्गत जितने ग्रह हों उतनी उपसूतिका की संख्या होती है।

किसी आचार्य का मत है कि अदृश्य चक्रार्द्ध में जितने ग्रह हों, उतनी 'उप-सूतिका' गृह के अन्तर्गत तथा दृश्य चक्रार्द्ध में युक्त ग्रहतुल्य बाहर जानना चाहिये। शुभग्रह के योग से उपसूतिकायें शुभ लक्षण रूप तथा विभूषण से युक्त होती हैं।

तथा पापग्रह के योग से कुरूप शुभ लक्षणहीन भयङ्कर तथा मलिन एवं शुभाशुभ ग्रह के योग से साधारण लक्षणादियुक्त और यदि ग्रह बलयुक्त हो तो सभी शुभ लक्षणादि से युक्त होती हैं (तथा ग्रह के जाति अवस्था तथा वर्णसदृश उपसूतिकाओं का भी अवस्था जाति तथा वर्ण कहना चाहिये)।

दीप-स्नेहादि विचार—पूर्वादि दिशा के क्रम से गृह का द्वादशविभाग करके मेषादि राशि गणना के क्रम से रवि, जिस राशि में हो, उस विभाग में दीपस्थान होता है तथा यदि रवि चर राशि का हो तो चलायमान, स्थिर

राशि में एकदेशस्थित तथा द्विस्वभावराशिस्थ रवि हो, तो प्रथम स्थान से अन्यस्थान में दीप होता है।

वर्त्ति (बत्ती) ज्ञान—यदि लग्नारम्भ हो, तो तत्क्षणदत्तबत्ती, आधा व्यतीत हो चुका हो, तो अर्द्धदग्ध तथा लग्नावसान में सम्पूर्णवर्त्ती दग्ध हो चुकी होगी। तैलज्ञान—पूर्णचन्द्रमा हों, तो पूर्णदीप तथा क्षीणचन्द्रमा हो, तो तैलाभाव एवं मध्य में अनुपात से तैल जानना चाहिये (परञ्च यह मत युक्त नहीं है; क्योंकि इस मत से अमावस्या में सभी का जन्म अन्धकार ही में होगा, अतएव यदि चन्द्रमा राश्यादि में हो तो पूर्णदीप; मध्य में हो, तो अर्द्धभरा हुआ और राश्यन्त में यदि हो, तो तैलरहित दीप जानना चाहिये)।

बहुदीपज्ञान—यदि सूर्य बलवान् हो और मंगल से दृष्ट हो, तो बहुत दीपक प्रसवकाल में होता है। इस योग में यदि शेष ग्रह बलहीन हों, तो घास वगैरह जलाकर बहुत प्रकाश होता है।

दीपाभावज्ञान—यदि चन्द्रमा, जिस किसी राशि में स्थित होकर मकर या कुम्भ के नवांश का हो, अथवा कर्क या मीन के नवांश का हो, या शनि से युक्त हो, अथवा लग्न से चुतर्थ स्थान में हो, या शनि से दृष्ट हो, तो अन्धकार ही में प्रसव कहना चाहिये या दिनभाग में जन्म होना भी समझा जा सकता है, (परञ्च इन सब योगों में यदि चन्द्रमा रवि से दृष्ट हों तो अंधकार का अभाव होता है)।

पिता के समीप या दूर रहते शिशु का जन्म विचार—यदि चन्द्रमा प्रसवलग्न को नहीं देखता हो, तो पिता के परोक्ष में बालक का जन्म होता है अथवा अष्टम नवम एकादश या व्यय में गत सूर्य यदि चर राशि का हो, तो पिता को परदेश रहते हुए, स्थिर राशि का हो तो स्वदेश में तथा द्विस्वभाव राशि का हो तो मार्ग में पिता को रहते हुए पिता के परोक्ष में बालक का जन्म होता है (परञ्च ये सभी योग चन्द्रमा लग्न को नहीं देखता हो, तभी होते हैं, अन्यथा नहीं)।

प्रसवपूर्व पिता मरण योग विचार—यदि दिन का जन्म हो और सूर्य को मंगल पूर्ण दृष्टि से देखता हो, अथवा रात्रि का जन्म हो और शनि को मंगलपूर्ण दृष्टि से देखता हो, तो जन्म के प्रथम ही पिता की मृत्यु कहना चाहिये। इसमें भी यदि चरराशिस्थ सूर्य व शनि मंगल से युक्त या दृष्ट हो, तो परदेश में स्थिरराशि में स्वदेश में एवं द्विस्वभाव राशि में मार्ग में पिता का मरण कहना चाहिये।

पितृबन्धन योग विचार—यदि सूर्य से ९।५ या ७वें भाव में

पापग्रह हों तथा पापग्रहों से दृष्ट हो, तो पिता को बन्धनयुक्त कहना चाहिये। (यदि सूर्य चरराशि का हो, तो परदेश में, स्थिर राशि का हो, तो स्वदेश में एवं द्विस्वभाव राशिस्थ सूर्य हों, तो मार्ग में ही बन्धन कहना चाहिये)।

प्रसवकाल के शुभाशुभ विचार—यदि प्रसव समय में लग्न से ७।९ या ५वें भाव में क्रूर ग्रह हों, तो आनन्द से रहित प्रसव होता है। एवं १० या ४ भाव में शुभग्रह हों तो प्रसव समय में अनेक प्रकार के सम्पत्तियों की प्राप्ति होती है।

जारजातयोग विचार—लग्न तथा चन्द्रमा को यदि बृहस्पति न देखता हो अथवा सूर्य युक्त चन्द्रमा को बृहस्पति न देखता हो या सूर्ययुक्त चन्द्रमा यदि पापग्रहों से युक्त हो, तो जार पति से उत्पन्न बालक होता है।

एवं यदि बृहस्पति, सूर्य तथा चन्द्रमा तीनों नीचगत हों अथवा शनि लग्न में हो तथा लग्नेश, चन्द्रमा तथा शुक्र; ये ग्रह शुभ ग्रह से दृष्ट न हों, तो भी जारपति से उत्पन्न बालक ह़ोता है।

मातृकष्ट तथा मृत्युयोग विचार—आधान या प्रसव लग्न से यदि पापग्रह चतुर्थ तथा सप्तम में गत हों अथवा चन्द्रमा से युक्त हो तो माता को कष्ट होता है। अथ चन्द्रमा से पापग्रह सप्तम में होकर मंगल से दृष्ट हों तो माता की मृत्यु होती है।

चन्द्रमा से दशम में यदि पापग्रहों से युक्त रवि हो तो माता की मृत्यु होती है। अथवा शुक्र से पञ्चम में शनियुक्त हो या शनि से दृष्ट हो, तो भी माता की मृत्यु होती है।

यदि चन्द्रमा से ९ या ५वें भाव में शनि हो तथा रात्रि का जन्म हो अथवा शुक्र से ९ या ५वें भाव मंगल पाप ग्रह दृष्ट हो तथा दिन का जन्म ह़ो तो भी माता की मृत्यु होती है।

माता द्वारा त्यक्त शिशु दीर्घ जीवी-सुखी योग विचार—जन्म समय में यदि एक राशिगत शनि-मंगल से ९ या ५ अथवा सप्तम में चन्द्रमा हो, तो बालक माता से त्यक्त होता है। इसी योग में यदि चन्द्रमा बृहस्पति से दृष्ट हो, तो बालक माता से त्यक्त होकर भी दीर्घजीवी तथा सुखी होता है।

माता द्वारा त्यक्त शिशु मरण योग विचार—पापग्रह से दृष्ट चन्द्रमा यदि लग्न में तथा मंगल सप्तम में हों, तो जातक माता से त्यक्त होकर मृत्यु को प्राप्त होता है। एवं लग्न से यदि लाभ गृह में मंग़ल और शनि हो, तो भी बालक माता से त्यक्त होकर मृत्यु को प्राप्त होता है।

इस योग में यदि बलवान् शुभग्रह से चन्द्रमा दृष्ट हो, तो शुभग्रह के जाति वाला मनुष्य उस बालक को ग्रहण करता है तथा यदि शुभाशुभ ग्रह से दृष्ट हो, तो पर के हाथ में जाकर भी बालक मृत्यु को प्राप्त होता है।

अथवा शनि और मंगल दोनों एक ही नवांश में स्थित हों या लग्न से सप्तम में मंगल, शनि से दृष्ट हो, तो निश्चय वह बालक माता से त्यक्त होता है।

जन्मसमय में जैसा शुभग्रह देखता हो, वैसा ही बालक गुण को प्राप्त करता है। यदि रवि बलिष्ठ हो तो पितातुल्य, चन्द्रमा बली हो, तो माता सदृश गुण को प्राप्त करता है।

नालवेष्टित जन्मयोग विचार—मेष, वृष, सिंह इनमें से कोई लग्न हो तथा उसमें मंगल या शनि हो, तो राश्यंश समान (लग्न नवांश तुल्य) गात्र में जातक नाल से वेष्टित होता है।

सर्पवेष्टित जन्मयोग विचार—जन्म के समय लग्न में शनि या मंगल के द्रेष्काण में पाप ग्रह हो या चन्द्र हो और द्वितीय तथा एकादश भाव में शुभ ग्रह हो, तो सर्प से समावेष्टित शिशु का जन्म समझना चाहिए।

अथवा भौमद्रेष्काण (मेष का प्रथम, कर्क का द्वितीय, सिंह का तृतीय, वृश्चिक का प्रथम, धनु का द्वितीय, मीन का तृतीय द्रेष्काण) में से कोई लग्नगत हो, वा किसी में चन्द्रमा स्थित हो और शुभग्रह द्वितीय तथा एकादश स्थानगत हो, तो उत्पन्न जातक सर्प या सर्प से वेष्टित होता है।

कोशवेष्टित यमल जन्म योग विचार—मेष, वृष, सिंह, धनु का परार्द्ध, मकर का पूर्वार्द्ध इनमें से किसी राशि में सूर्य हो और शेष अन्य ग्रह यदि द्विस्वभाव राशि में हो, तो एकजरायु में वेष्टित यमल (जुड़वा) बालक उत्पन्न होता है।

जातक के स्वरुपादि विचार—यदि लग्न नवांश की राशि बलवान् हो, तो उसके स्वामी के तुल्य अन्यथा सभी ग्रहों के अपेक्षा जो ग्रह बलवान् हो, उसके सदृश शरीर का आकार कहना चाहिये। एवं चन्द्रमा जिस नवांश का हो, उस राशि के अधिपति सदृश वर्ण कहना चाहिये।

यदि कई ग्रह बलवान् हों, तो मिश्रित शरीर कहना चाहिये तथा कुल, जाति और देश-विशेष का विचार करके वर्णादि का आदेश करना चाहिये।

जातक का प्रकृतिस्वभाव—जन्मसमय में रवि जिस ग्रह के त्रिशांश में स्थित हो, उस ग्रह के सदृश प्रकृति कहना चाहिये।

तथा तात्कालिक मित्रामित्र तथा नीचोच्च आदि स्थान स्थित बल तथा ग्रह स्वभाव को जानकर और भी स्वभाव, आचार, व्यवहार आदि का विचार करना चाहिये।

माता-पिता का शुभाशुभ—जन्म समय यदि क्षीण चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त हो, तो माता तथा यदि रवि हीन बली होकर पापग्रहों से युक्त हो, तो पिता की मृत्यु होती है। इस योग में यदि किसी बली ग्रह या मिश्रित ग्रह की दृष्टि हो, तो व्याधि होती है तथा यदि शुभ ग्रह की दृष्टि हो, तो शुभ होता है।

यदि चन्द्रमा परिपूर्ण मूर्ति होता हुआ बलवान् हो स्वोच्च या स्वराशि में हो बृहस्पति, शुक्र से युक्त हो और बुध से यदि दृष्ट हो अथवा वह पञ्चम में हो, तो माता को अत्यन्त शुभ फल देता है एवं यदि सूर्य हो, तो सर्वदा पिता को शुभ फल देता है।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का नवम पुष्प रूप 'गर्भाधान व प्रसव निरूपण' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।९।।

१०

अरिष्ट-भङ्ग योग

आयु का प्रयोजन और उसके प्रकार का विचार—आयु के बिना सभी शुभाशुभ फल व्यर्थ हैं, अतएव अब आयुर्ज्ञान के उपाय का विवेचन किया जाता है।

सभी पुरुष ग्रह विषम राशि में तथा शुक्लपक्ष और दिन में बली होते हैं और सभी स्त्रीग्रह समराशि में तथा कृष्णपक्ष और रात्रि में बली होते हैं।

यहाँ शास्त्रकारों ने तीन प्रकार की आयु बतलाई है प्रथम नियतायु (यथा शतायु, अशीत्यायु, षष्टिसमायु इत्यादि), द्वितीयानियतायु (अमितायु), तृतीय योगज (रिष्टज आयु) आयु को पहले कहा जाता है पश्चात् शेष (नियत, अनियत) आयु को कहना है (वस्तुतः ये तीनों योगजायु के भेद हैं)।

वस्तुतः शास्त्रकारों ने आयु दो प्रकार के माने हैं—१. योगजायु, २. गणितागतायु। योगजायु के भी चार प्रकार हैं—रिष्टज, परम, नियत व अनियत कहा गया है। एवं गणितागत भी अंशज, पिण्डज, नैसर्गिक, जीवशर्मोक्त और मिश्रायु पाँच प्रकार के माने जाते हैं। आगे इसका विवेचन किया गया है। विशेषता हेतु केशवीय जातक पद्धति प्रौढ़ मनोरमा टीका का अध्ययन करना चाहिए।

बालारिष्ट योग विचार—शुक्र की दृष्टि से रहित तथा सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और शनि से दृष्ट बृहस्पति यदि मेष या वृश्चिक राशि का होकर अष्टम में हो, तो इस योग में जन्म लिया हुआ बालक तीन ही वर्ष में लोकान्तर (मृत्यु) को प्राप्त करता है।

वक्री शनि यदि मेष या वृश्चिक राशि में और चन्द्रमा यदि ८।६ या केन्द्र में भौम से दृष्ट हो, तो इस योग में उत्पन्न बालक दो वर्ष जीवित रहता है।

यदि जन्म समय में शनिश्चर, सूर्य तथा चन्द्रमा से युक्त हो, तो बालक नव वर्ष में मृत्यु का ग्रास हो जाता है।

एवं जिसके जन्मसमय वृष या तुलाराशि का होकर मंगल, सूर्य और शनि अष्टम में हो, वह बालक अवश्य उसी मास में मृत्यु को प्राप्त करता है।

अथवा यदि वृष या तुला राशि में स्थित कोई पापग्रह अन्य पापग्रह से दृष्ट होकर अष्टम में स्थित हो, तो इस योग में अमृतपान किये हुए बालक भी १ वर्ष में मृत्यु को प्राप्त करता है (अन्य बालकों की गणना ही क्या)।

एवं कर्क या सिंहराशि में स्थित शुक्र यदि १२।६ या अष्टम भाव में हो और सभी शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो भी बालक ६ वर्ष में मृत्यु का ग्रास होता है।

अथवा कर्क राशि में स्थित बुध यदि चन्द्रमा से दृष्ट होकर लग्न से षष्ठ या अष्टम भाव में स्थित हो, तो शिशु ४ वर्ष में मृत्यु को प्राप्त करता है।

तथा यवनादि आचार्यों से जो-जो उत्कट फलदायक राजयोग वर्णित हैं, उस-उस राज योग में भी कुलज अरिष्ट होता है।

एवं जन्मसमय में केतु, जिस नक्षत्र में उदित हो, उस नक्षत्र में यदि जन्म हो, तो ज़ातक की मृत्यु दो ही मास में हो जाती है।

अथवा यदि मेष या वृश्चिक अथवा मकर वा कुम्भ राशि में स्थित सूर्य लग्न से दशम में हो तथा बली पापग्रह से दृष्ट हो, तो इस योग में उत्पन्न हुए बालक की मृत्यु शीघ्र ही होती है।

किसी ने यहाँ इस प्रकार कहा है—

जन्माधिपतिः पापः पापर्क्षैः पापयुग्दृष्टः।
पीडां जनयति पुंसां शुभदृष्ट्या न चातितराम् ॥

पापग्रह राशि स्वामी पापग्रह की राशि में होकर पापग्रह से दृष्ट या युत हो, तो मनुष्य को शरीर पीड़ा देता है। शुभ ग्रह होने पर अधिक पीड़ा देने वाला नहीं होता है।

अनन्तर लग्न में यदि निगड़ (मकर का प्रथम द्रेष्काण), सर्प (कर्क का द्वितीय-तृतीय, वृश्चिक का प्रथम-द्वितीय, मीन का तृतीय द्रेष्काण), खग (मिथुन का द्वि., सिं. का प्र., तुला का.द्वि. तथा कुम्भ का प्र.) और पाशधर द्रेष्काण पापग्रह से युक्त हो और यदि स्वपति दृष्ट न हो, तो ७वें वर्ष में वह बालक मृत्यु को प्राप्त होता है।

यदि राहु केन्द्र में स्थित हो तथा पापग्रहों से भी दृष्ट हो, तो दशवें या सोलहवें वर्ष में उस जातक की मृत्यु होती है।

यदि जन्मलग्न से केन्द्र तथा त्रिकोण में पापग्रह और ६।८।१२ स्थान में शुभग्रह हों तथा सूर्योदयकाल में जन्म हो तो वह बालक शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होता है।

अंशाधिप, जन्मराश्याधिप और लग्नाधिप जिसके जन्म समय में अस्तंगत हों वह पुरुष थोड़े ही समय में बिना किसी कारण मृत्यु को प्राप्त करता है।

यदि लग्नाधिप छठवें स्थान में हों, तो छठवीं राशितुल्य वर्ष में, द्रेष्काणाधिपति तद्राशितुल्य मास में एवं अंशाधिपति यदि छठवें हों, तो तद्राशितुल्य दिवस में मृत्यु को करता है।

पापग्रहों से दृष्ट शनि लग्न में हो तो १६ दिन में पापग्रहों से युक्त शनि १ मास में तथा शुद्ध शनि १ वर्ष में कष्टप्रद (अरिष्ट कारक) होता है।

यदि क्रूरग्रह से दृष्ट क्षीण चन्द्रमा मेष, वृष तथा कर्क राशि को छोड़कर लग्न में स्थित हो, तो शीघ्र ही जातक की मृत्यु करता है।

लग्न से यदि चन्द्रमा ६ या ८वें स्थान में हो, तो १ वर्ष के लगभग में मृत्यु करता है। यदि क्रूर ग्रहों से दृष्ट हो तो शीघ्र ही तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो ८ वर्ष में एवं यदि शुभाशुभ ग्रहों से दृष्ट हो, तो अनुपात से आगत वर्ष में मृत्यु को करता है।

शुभग्रह यदि लग्न से ६।८ भाव में वर्तमान होकर वक्री पापी ग्रहों से दृष्ट तथा शुभग्रहों से अदृष्ट हों, तो १ मास ही में मृत्यु होती है।

लग्न से दूसरे तथा बारहवें पापग्रह हों तथा षष्ठाष्टम भाव में गत पापग्रह शुभग्रह के सम्बन्ध से रहित हों, तो छठवें या आठवें मास में अवश्य मृत्यु होती है।

जन्मसमय में यदि अस्तंगत लग्नेश और राशीश लग्न से ६, ८ या १२वें भाव गत हों, तो जिस राशि में हों, उस राशि तुल्य वर्ष में मृत्यु को देते हैं।

पापग्रह से पराजित लग्नेश, यदि सप्तम स्थान में हो, तो १ मास में मृत्यु करता है। एवं यदि चन्द्रमा शुभ से दृष्ट न हो, तो तद्वत् जन्म राशीश भी १ मास में मृत्यु करता है।

चन्द्रमा, मंगल और सूर्य से युक्त होकर यदि लग्न से दूसरे अथवा पाँचवें स्थान में हो तथा शुभग्रह से अदृष्ट हो, तो नवम वर्ष में निःसन्देह बालक की मृत्यु करता है।

लग्नाधिपति बली सभी पापग्रहों से दृष्ट होकर लग्न से अष्टम में हो, तो जातक की मृत्यु चतुर्थ मास में अवश्य करता है, ऐसा मुनियों ने कहा है।

शुक्र से दृष्ट सूर्य, शनि सहित यदि लग्न से अष्टम स्थान में हो, तो राशितुल्य वर्ष में मृत्यु को देता है।

पापग्रह से युक्त शुभग्रहों से अदृष्ट चन्द्रमा, यदि लग्न से १२।६।८।१

भाव में से किसी स्थान में हो तथा केन्द्र १।४।७।१० स्थान में कोई शुभग्रह न हो तो जातक की शीघ्र ही मृत्यु होती है।

यदि भचक्र के पूर्वार्द्ध में पापग्रह और उत्तरार्द्ध में शुभग्रह तथा वृश्चिक लग्न में यदि जन्म हो, तो यह वज्रमुष्टि योग होता है, इस योग में उत्पन्न बालक आयुरहित होता है।

क्षीणचन्द्रमा लग्न में तथा पापग्रह केन्द्र अथवा अष्टम में हों तो अवश्य विपत्ति पड़ती है, यह यवनाचार्यों का अभिमत है।

चन्द्रकृत अरिष्ट योग विचार—यदि सन्ध्या समय चन्द्रमा का होरा हो और प्रत्येक केन्द्रस्थान में राश्यन्तगत पापग्रह तथा चन्द्रमा यथास्थान स्थित हो तो इस योग में उत्पन्न बालक की मृत्यु शीघ्र होती है।

यदि पापग्रह द्वय के मध्यम में चन्द्रमा होकर ४।७।८ इन स्थानों में से किसी स्थान में हो तो देवताओं से भी सुरक्षित बालक की अवश्य मृत्यु होती है।

यदि दो पापग्रहों के मध्यगत चन्द्रमा १।७।८ इन स्थानों में से किसी स्थान में स्थित हो और दुर्बल शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो अवश्य इस योग में उत्पन्न बालक की मृत्यु होती है।

यदि ७।८ स्थानगत पापग्रह पापग्रहों से दृष्ट हो, तो माता के सहित बालक की मृत्यु होती है तथा यदि शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो केवल व्याधि होती है, यह सत्याचार्य का मत है।

सद्यः मरण योग विचार—यदि ग्रस्तचन्द्रमा पापग्रह से युक्त होकर लग्न में और मंगल अष्टम में हो, तो माता के सहित बालक की मृत्यु होती है। एवं यदि ग्रस्त रवि पाप ग्रह से युक्त होकर लग्न में और मंगल अष्टम में हो, तो मात्रा के साथ बालक की मृत्यु शस्त्र द्वारा होती है।

यदि क्षीणचन्द्रमा लग्न में तथा पापग्रह केन्द्र और अष्टम में हों तथा शुभग्रहों की दृष्टि न हो, तो इस योग में उत्पन्न बालक की मृत्यु शीघ्र ही होती है।

यदि लग्न में मंगल या शनि तथा सप्तम में रवि हो अथवा सप्तम में मंगल या शनि तथा लग्न में रवि अथवा चन्द्रमा इनमें से किसी से युक्त होकर पापग्रहों से दृष्ट हो, तो शीघ्र ही मृत्यु होती है।

लग्न, सप्तम व अष्टम में पापग्रह और व्यय में चन्द्रमा तथा यदि केन्द्र में कोई भी शुभग्रह न हो, तो जातक की शीघ्र ही मृत्यु होती है।

यदि लग्न, द्वादश, नवम, अष्टम इन स्थानों में क्रम से चन्द्रमा, सूर्य, शनि और मंगल हों तथा बृहस्पति से दृष्ट न हो, तो जातक की शीघ्र ही मृत्यु होती है।

लग्न में चन्द्रमा अथवा रवि हो तथा बली पापग्रह ९।५ या ८ में हों और शुभग्रहों की दृष्टि तथा योग से रहित हों, तो यवनाचार्यों के मत से शीघ्र मृत्युकारक होते हैं।

नौ वर्ष में मृत्यु विचार—यदि प्रसवकाल में शुक्र, रवि और शनि से युक्त हो वृहस्पति की दृष्टि हो तो भी नवम वर्ष से मृत्यु अवश्य करता है।

माता पिता मरण योग विचार—जन्मसमय में चन्द्रमा जिस किसी स्थान में हो—रवि, मंगल और शनि से यदि दृष्ट हो, तो माता की मृत्यु होती है। यदि इस योग में चन्द्रमा शुभग्रहों से दृष्ट हो तो कुछ काल विलम्ब करके माता की मृत्यु होती है।

एवं जिसका जन्म दिन में हो तथा रवि, मंगल या शनि से दृष्ट या पापग्रहों से युक्त हो तो अवश्य पिता की मृत्यु होती है।

पिता व पितामह का मरण योग विचार—यदि जन्म समय में सूर्य, बुध, गुरु तथा शुक्र से रहित और शनि तथा मंगल से सहित हो, तो जन्म समय के पूर्व ही पिता और पितामह का मरण कहना चाहिये।

पिता मरण योग विचार—यदि दिन का जन्म हो तथा सूर्य पापग्रहद्वय के मध्यगत या पापयुक्त हो, तो निःसन्देह पिता की मृत्यु होती है।

प्रसवकाल में यदि सूर्य से सप्तम में मंगल और शनि स्थित होकर शुभग्रहों की दृष्टि से रहित हो, तो शीघ्र ही पिता की मृत्यु होती है।

प्रसवकाल में यदि पापग्रह से युक्त सूर्य चरराशि में हो, तो पिता की मृत्यु विष शस्त्र या जल से या अल्पायु कहना चाहिये।

माता सहित शिशु मरण योग विचार—जन्म समय में चन्द्रमा से अष्टम, नवम या सप्तम में या तीनों में यदि सभी पापग्रह हों, तो माता सहित बालक की मृत्यु होती है।

परदेशस्थ पिता के शिशु जन्म योग विचार—यदि दिन में जन्म हो तथा चर राशिस्थ सूर्य को शनि देखता हो, तो जन्मसमय में पिता का निवास परदेश में कहना चाहिये। एवं यदि रात्रि का जन्म समय हो तथा चरराशिगत शनि को सूर्य देखता हो, तो भी जन्मसमय पिता का निवास परदेश में कहना चाहिये।

जन्मपूर्व पिता मरण योग विचार—यदि रात्रि का जन्म हो तथा मंगल सहित शनि चर राशि में हो, तो अवश्य परदेश में पिता का मरण कहना चाहिये।

अथ शनि तथा मंगल सहित सूर्य किसी भी राशि में किसी स्थान में हो, तो अवश्य जन्म से प्रथम ही पिता का मरण कहना चाहिये।

माता व शिशु दोनों के मरण योग विचार—यदि जन्मस्थान से १।६।७।८।१२ भाव में पापग्रह हों, तो माता-पुत्र सहित मृत्यु को प्राप्त होती है।

तथा यदि ६।१२ स्थानों में पापग्रह हों, तो बालक की मृत्यु होती है तथा माता जीवित रहेगी एवं यदि १।७।८ स्थानों में पापग्रहों की स्थिति हो, तो माता की मृत्यु और बालक की आयु की वृद्धि होती है।

विकृत नेत्र जन्म विचार—यदि मंगल या शनि लग्न से व्यय स्थान में हों, तो शनि दक्षिण नेत्र और मंगल वाम नेत्र का नाश करता है।

अथवा व्यय स्थान में रवि, चन्द्रमा तथा पापग्रह छठवें या आठवें स्थान में हो तो जातक जन्मान्ध होता है।

अथवा ६ठवें आठवें या व्यय स्थान में रवि व चन्द्रमा हो, तो रविं दक्षिणनेत्र तथा चन्द्रमा वामनेत्र को नष्ट करता है।

लग्न में राहु तथा सप्तम में सूर्य हो, तो इस योग में उत्पन्न मनुष्य नि:सन्देह अन्धा होता है।

यदि जन्म लग्न से द्वितीय तथा व्यय राशि में चन्द्रमा तथा सूर्य और यदि छठवें तथा आठवें स्थान में पापग्रह हों, तो जातक अन्धा होता है।

जन्मलग्न से छठवें चन्द्रमा, आठवें सूर्य तथा सूर्य से पञ्चम में कोई शुभग्रह और यदि मंगल द्वितीय राशि में हो, तो इस योग में भी जातक अन्धा होता है।

यदि मंगल और शनि से युक्त चन्द्रमा आठवें या छठवें अथवा पापग्रहों से युक्त हो, तो पित्त तथा कफ के विकार से दृष्टि का नाश करता है।

यह चन्द्रमा यदि आठवें हो, तो दक्षिण दाहिने नेत्र का और छठवें हो, तो बायें नेत्र का नाश करता है। यदि लग्न शुभग्रहों से दृष्ट न हो, तो तुरन्त तथा यदि दृष्ट हो तो नहीं अथवा बाद में नेत्र का नाश करता है।

अथवा यदि जन्म लग्न से ८ या १२वें स्थान में स्थित शनियुक्त

चन्द्रमा पापग्रहों से दृष्ट हो, तो वात तथा कफ के विकार से दृष्टि का नाश करता है।

विशेषता यह है कि यदि अष्टम में हो, तो दक्षिण नेत्र का तथा द्वादश में हो तो बायें नेत्र के ज्योति का नाश करता है। शुभग्रह से दृष्ट हो तो नहीं अथवा बाद में नाश करता है।

इसी प्रकार यदि चन्द्रमा सूर्य, मंगल तथा शनि से युक्त होकर या बारहवें स्थित हो, तो निश्चय अनेक रोगों द्वारा दृष्टि विकार करता है।

विकृत कर्ण जन्म योग विचार—यदि पापग्रह से युक्त चन्द्रमा तीसरे वा ग्यारहवें अथवा लग्न में हों, तो वह पुरुष कर्ण का रोगी होता है। यदि वह चन्द्रमा पापग्रह से दृष्ट हो, तो शीघ्र ही तथा शुभग्रह से दृष्ट हो, तो बाद में अथवा नहीं भी कर्णरोग होता है।

यदि नवम तथा पञ्चम दोनों स्थान में पापग्रह से वीक्षित ग्रह हो, तो अवश्य जन्मसमय ही में विशेष कर्णघात करते हैं।

तथा यदि केवल नवम में ग्रह हो, तो दक्षिण कर्ण एवं पञ्चम में हो, तो वामकर्ण का विशेष क्षति करता है तथा यदि उक्त स्थान शुभग्रह का गृह अथवा शुभग्रह से दृष्ट हो, तो शुभ होता है।

चन्द्रकृत अंग विकृति योग विचार—यदि जन्म समय में चन्द्रमा, जिस किसी राशि में सूर्य की होरा में हो, तो वह स्थान कालाङ्ग विभाग से जिस अङ्ग में हो, उस अङ्ग में कोई रोग होता है, उस अङ्ग में ग्रह के स्थिति अनुसार सव्यापसव्य (दाहिने बायें भाग) का विचार कर पापग्रह के योग से अङ्ग भय और शुभग्रह से चिह्न कहना चाहिये तथा पापग्रह और शुभग्रह की दृष्टि से भी फल कहना चाहिये। पूर्वोक्त तीनों (जिसके अङ्ग में, किस भाग में, अङ्गभय या चिह्न) के सम्पूर्ण फल का विशेष शुभाशुभ विचार ग्रहों के संयोग से करना चाहिये।

चन्द्रादित्यकृत् अरिष्ट विचार—मीन राशि का सूर्य व चन्द्रमा तृतीय स्थान में हों और यदि जातक व्याधिग्रस्त हो तो त्रिरात्रिपर्यन्त जीवित कहना चाहिये।

पूर्वोक्त से यदि तृतीय स्थान में अर्थात् छठवें सूर्य, दशम में चन्द्रमा हो तो जातक व्याधिग्रस्त होकर दूसरी रात्रि तक जीवित रहता है।

इन योगों का प्रयोग जातकारिष्ट में व्याधि के उत्पन्न समय तथा प्रश्न समय में भी करना चाहिये।

सामान्यारिष्ट योग विचार—जिस जातक के चन्द्र से सप्तम भाव मंगल और रवि से युक्त हो, उसकी आयु ७ दिन की होती है।

यदि लग्न से ४।८ दोनों स्थान में स्थित पापग्रह १२/२ भाव में आकर जातक को यदि व्याधिग्रस्त करें तो वह दस दिन जीवित रहता है।

एवं यदि लग्न से पञ्चम भाव में सूर्य और नवम भाव में चन्द्र स्थित हो तथा उस लग्न में यदि व्याधि हो, तो वह बारह दिन जीवित रहता है।

यदि लग्न से त्रिकोण में चन्द्रमा और चतुर्थ या अष्टम में सूर्य हो, तो दुर्व्याधि से पीड़ित होकर बालक तीन रात्रि से अधिक नहीं जीता है।

यदि लग्न से चतुर्थ में चन्द्रमा, छठवें स्थान में सूर्य हो, तो इस योग में व्याधि से ग्रस्त पुरुष १८ दिवस जीवित रहता है।

यदि चन्द्रमा से त्रिकोण स्थान में रवि हो, तो इस योग में व्याधिग्रस्त पुरुष बीस दिन जीवित रहता है।

यदि लग्न या अष्टम में स्थित रवि, मंगल तथा शनि से दृष्ट हो, तो इस योग में रोगग्रस्त पुरुष की मृत्यु होती है।

अथवा यदि केन्द्र स्थान में मंगल तथा बृहस्पति केन्द्रगत न हो, तो इस योग में मृत शिशु का जंन्म होता है।

यदि लग्न में सूर्य हो तथा बृहस्पति केन्द्रस्थानरहित हो, तो इस योग में उत्पन्न बालक शीघ्र मृत्यु को प्राप्त होता है।

यदि केन्द्र में चन्द्रमा तथा बृहस्पति केन्द्ररहित और कोई पापीग्रह अष्टम स्थान में हो, तो जातक की शीघ्र मृत्यु होती है।

जिसके जन्मलग्न के द्रेष्काण और सप्तमांश में पापग्रह तथा लग्न में चन्द्रमा हो अथवा जिसके जन्मलग्न के द्रेष्काण से सप्तम राशि में पाप ग्रह हो और लग्न में चन्द्र हो, तो उसकी शीघ्र मृत्यु होती है।

जिसके जन्म समय अष्टम में बहुत ग्रह एकत्रित हो, उसकी १ मास अथवा ७ रात्रि आयु होती है।

यदि लग्न में शनिश्चर, अष्टम में भौम तथा यदि बृहस्पति केन्द्र में न हो, तो मृतक शिशु उत्पन्न होता है।

लग्न में जो द्रेष्काण हो तत्तुल्य अर्थात् पापीग्रह नवम-पञ्चम में स्थित द्रेष्काण राशि में हो, वैसे ग्रह-सा फल होता है।

जैसे—यदि शनि हो, तो व्याधि मंगल हो, तो मरण और यदि सूर्य हो, तो व्याधि तथा मृत्यु भी होती है।

यदि लग्न में मंगल और केन्द्र में शुक्र हो, तो पुनः उनके लग्न में आने पर मृत्यु होती है।

बृहस्पति त्रिकोण में, लग्नेश लग्न में और लग्न से अन्य केन्द्रस्थान में यदि मंगल हो, तो शीघ्र ही मृत्यु को करते हैं।

नियत आयु योग विचार—जिसके जन्म समय अष्टम में कोई ग्रह न हो तथा कोई भी पापग्रह लग्न में अथवा केन्द्र में न हो और बृहस्पति केन्द्र स्थान में हो, तो उस पुरुष की आयु १०८ वर्ष होती है।

एवं जिसके जन्म समय लग्न से केन्द्र तथा त्रिकोण और अष्टम में कोई भी पापी ग्रह न हो और बृहस्पति व शुक्र दोनों यदि केन्द्र में हो, तो पुरुष की आयु १०८ वर्ष होती है।

यदि लग्न में शुक्र, केन्द्र में बृहस्पति हो और अष्टम में यदि कोई भी पापग्रह न हो, तो इस पुरुष की आयु १२० वर्ष की होती है।

अमित आयु योग विचार—जिसके जन्म समय कर्क लग्न बृहस्पति, शुक्र अथवा बृहस्पति-चन्द्रमा से युक्त हो, अष्टम स्थान शुभाशुभ ग्रह से रहित हो तथा पापग्रह केन्द्र, त्रिकोण और अष्टम स्थान में न हों, तो यह पुरुष निश्चय ही अमित (अनियत) आयु से युक्त होता है।

गतायु योग विचार—जिस पुरुष के जन्म समय क्षीण चन्द्रमा पापग्रह से युक्त होकर ८।७।१२।१।९।५ इनमें से किसी स्थान में हो, बली शुभ ग्रह से दृष्ट न हो, तो वह पुरुष प्रायः गतायु होता है।

अकथित मरणकाल योग विचार—विना कथित मरण काल वाले योग में, योग करने वाले ग्रहों में से, बलवान् ग्रह की राशि में सञ्चारवश जब चन्द्र गमन करता है, तब; या पुनः अपनी राशि में या लग्न में बली पापी ग्रह से दृष्ट होने पर एक वर्ष के अन्दर, जब चन्द्र सञ्चार करता है, तब जातक का मृत्युकाल होता है।

अथवा जिस अरिष्ट योग में समय निर्धारित नहीं किया गया है, उसका समय निर्णय करते हैं—ऐसे योग में प्रबल अरिष्ट कारक ग्रह, जिस राशि में हो, उस राशि में चारक्रम से चन्द्रमा के प्राप्त होने पर अथवा जन्म समय चन्द्रमा, जिस राशि में हो, उस राशि में पुनः चार वश प्राप्त होने पर

अथवा चारक्रम से जन्म लग्नराशि में चन्द्रमा के प्राप्त होने पर मरण कहना चाहिये। कब होगी? तो वर्ष के अन्तर्गत ही मृत्यु होगी। पुनः वर्ष मध्य में कब मृत्यु होगी? तब पूर्वोक्त राशित्रय मध्य में एक किसी राशि में जब चन्द्रमा बली हो और पापग्रहों से दृष्ट हो, तो उस समय मरण कहना चाहिये।

चतुर्ग्रहारिष्टयोग विचार—जिस किसी स्थान में रवि, चन्द्रमा, मंगल और गुरु या चन्द्रमा, मंगल, गुरु और शनि अथवा रवि, चन्द्रमा, मंगल और शनि हो, तो इस योग में उत्पन्न बालक की मृत्यु पाँच वर्ष में होती है।

यदि जन्म समय जिस किसी स्थान में रवि (या रवि व चन्द्र) बुध युक्त होकर शुभग्रह से दृष्ट हो, तो देवता के गोद में भी स्थित बालक ११ वर्ष की अवस्था में मृत्यु को प्राप्त होता है।

यदि जन्म समय तुला या वृष लग्न में रवि, मंगल और शनि तथा सप्तम स्थान में क्षीण चन्द्रमा एवं बृहस्पति की दृष्टिरहित हो, तो बालक सात वर्ष की अवस्था में मृत्यु को प्राप्त होता है।

चन्द्रारिष्ट योग विचार—अस्तंगत चन्द्रमा, मंगल व शनि से युक्त या दृष्ट होकर केन्द्रस्थान में हो, तो चार वर्ष की अवस्था में मृत्यु होती है।

एवं यदि अतिक्षीण चन्द्रमा लग्नाधिपति से अष्टम में गत होकर सभी पापग्रहों से दृष्ट हो, शुभग्रह की दृष्टि न हो, तो तीसरे वर्ष में मृत्यु होती है।

यदि पापी लग्नाधीश कर्क के नवांश का होकर चन्द्रमा से व्यय स्थान में क्रूर ग्रहों से दृष्ट हो, तो नववर्ष की अवस्था में बालक की मृत्यु होती है।

सामान्यारिष्ट योग विचार—यदि जन्म समय दृश्य चक्रार्द्ध में शुभग्रह अदृश्यचक्रार्द्ध में पापग्रह और लग्न में राहु हो, तो पाँच वर्ष की अवस्था में मृत्यु होती है।

जन्मलग्न से सप्तम स्थान में राहुगत होकर सूर्य, चन्द्रमा से दृष्ट और शुभग्रहों से अदृष्ट हो, तो बारह वर्ष की अवस्था में मृत्यु होती है।

यदि जन्मसमय कुम्भ, सिंह या वृश्चिक राशि का राहु लग्न में गत होकर पापग्रहों से दृष्ट हो, तो सात ७ वर्ष की अवस्था में मृत्यु होती है।

यदि जन्मसमय पूर्वदिशा में केतु तारा का उदय और पश्चिम में उल्का आदि का उदय, वायु का घोष हो तथा आर्द्रा या आश्लेषा नक्षत्र का मुहूर्त्त हो, तो ऐसे समय का उत्पन्न बालक शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होता है।

यदि क्षीण चन्द्रमा राहु से युक्त होकर पापग्रहों से दृष्ट हो, तो बिना कारण ही थोड़े दिनों में मृत्यु को प्राप्त होता है।

चन्द्रांशवश अरिष्ट योग विचार—जन्मसमय वक्ष्यमाण अंशों पर स्थित चन्द्रमा मृत्यु करता है—यथा कुम्भराशि के २१वें अंश, सिंह राशि के ५ में अंश, वृष राशि के ९ अंश में, वृश्चिक राशि के २३वें अंश, मेषराशि के ८वें, कर्क के १२वें, तुला के चौथे, मकर के बीसवें, कन्या के प्रथम, धनु राशि के १८वें, मीन के दसवें, मिथुन के २२वें अंश पर स्थित चन्द्रमा मृत्यु करता है।

अब इनके समय का प्रमाण बताया जा रहा है—मेष राशि में जन्म से ८वें वर्ष, वृष में ९वें, मिथुन में २२वें, कर्क में १२वें, सिंह में ५वें, कन्या में प्रथम वर्ष, तुला में ४ चतुर्थ वर्ष, वृश्चिक में २३वें, धनु में १८वें, मकर में २०वें, कुम्भ में २१वें और मीन में १०वें वर्ष की अवस्था में चन्द्रमा मृत्यु को करता है।

अरिष्ट योग में विशेष विचार—एवं सभी प्राणियों के लग्नस्थान तथा केन्द्रादि स्थान का चिन्तन यथासाध्य करना चाहिये।

तथा सभी प्राणियों के राशि स्थान से बृहस्पति को देखना चाहिये; क्योंकि मनुष्यों के जीव बृहस्पति हैं; अतएव बृहस्पति की स्थितिवश जीवन भी नियत है।

अतः लग्न से तृतीय, चतुर्थ, पञ्चम, सप्तम, नवम, दशम, एकादश भाव में बृहस्पति हों, तो क्रम से ४५।५०।४६।२१।१००।४०।६०।३० वर्ष (नैसर्गिक) पुरुषों की आयु होती है।

चन्द्रारिष्ट भङ्ग योग विचार—जन्मसमय यदि चन्द्रमा सभी ग्रहों से दृष्ट हो, तो सम्पूर्ण अरिष्टों का नाश इस तरह करता है, जिस तरह अपने सभी गुण तथा स्वरूप से युक्त राजा द्वेष का शमन करता है।

यदि पूर्णचन्द्रमा मित्र के नवांश में स्थित होकर शुक्र से दृष्ट हो, तो अरिष्ट भङ्ग कारकों में इस प्रकार श्रेष्ठ होता है जैसे कि वायुरोग को नाश करने में सभी औषधियों में बस्ति (लेना) श्रेष्ठ होता है।

अथवा परमोच्चस्थ (१ रा. ३ अं.) चन्द्रमा, यदि शुक्र से दृष्ट हो, तो अरिष्ट को यों नाश करता है, जैसे कि कफ और पित्त से उत्पन्न दोष की वमन तथा विरेक शमन करता है।

क्षीण चन्द्रमा भी यदि शुभग्रह के षड्वर्ग में शुभग्रह से दृष्ट हो, तो अरिष्ट को यों नष्ट करता है, जैसे कि अनार के छिलका का काढ़ा तथा फल महातिसार को नष्ट करता है।

यदि चन्द्रमा से ६।७।८, इन स्थानों में शुभग्रह पाप से रहित हों, तो अरिष्ट को यों नाश करता है, जैसे कि उन्माद को कल्याण घृत शमन करता है।

यदि शुभ फलकर्त्ता शुभग्रह से युक्त तथा इन्हीं के द्रेष्काण में चन्द्रमा हो, तो अरिष्ट को यों नाश करता है, जैसे कि क्षार जल से कान के रोग नष्ट होते हैं।

अथवा यदि पूर्ण चन्द्रमा शुभग्रह के द्वादशांश में हो, तो अरिष्ट का नाश करता है, जैसे कि तक्र का सेवन बवासीर का नाश करता है।

यदि शुभग्रह के राशि में स्थित चन्द्रमा, लग्नेश से दृष्ट हो और अन्य ग्रहों से दृष्ट न हो, तो अरिष्ट का नाश होता है जैसे कि कुलाङ्गना अन्य नीच कुल में जाकर नष्ट हो जाती है।

यदि चन्द्रमा पापग्रह राशि में तथा उसी के वर्ग में भी होकर राशीश से दृष्ट हो, तो बालक की रक्षा करता है, जैसे कि कृपण धन की रक्षा करता है। यदि जन्मराशीश बलवान् मित्र तथा शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो अरिष्ट का नाश होता है, जैसे कि संग्राम प्राप्त होने पर कायरों का नाश होता है।

अथवा यदि जन्म राशीश सभी ग्रहों से दृष्ट होकर लग्न में हो, तो अरिष्ट का नाश करता है, जैसे मरीच और निशोथ से घिसा हुआ अञ्जन नेत्र के अन्धकार को नाश करता है।

यदि पूर्णचन्द्रमा स्वोच्च राशि, स्वराशि, मित्रराशि अथवा शुभग्रह के राशि में या अपने वर्ग में स्थिति होकर शुभग्रहों से दृष्ट हो तथा शत्रु और पापग्रहों से अदृष्ट तथा अयुक्त हो, तो अरिष्ट का नाश करता है, जैसे कि अत्यन्त दुस्तर अन्धकार राशि को सूर्य नाश करता है।

यदि चन्द्रमा से बारहवें बुध-शुक्र, एकादश में क्रूरग्रह और दशवें बृहस्पति हो, तो अरिष्ट का नाश करता है, जैसे कि अगस्त्य के रस से चातुर्थिक ज्वर नाश हो जाता है।

अथवा लग्नाधीश चन्द्रमा यदि ३।६।१०।११।४ में से किसी स्थान

में गत होकर शुभग्रह से दृष्ट हो, तो समस्त अरिष्टों का नाश कर बालक की रक्षा करता है, जैसे शरणागत होने पर राजा प्रजा की रक्षा करता है।

एक ही जन्माधीश यदि परिपूर्ण बली होकर शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो समस्त चन्द्रारिष्ट का नाश करता है, जैसे कि वन में बसने वाला व्याघ्र समस्त मृगकुल का नाश करता है।

सकल अरिष्टों के भङ्ग योग विचार—यदि सभी ग्रहों की अपेक्षा अधिक बलवान् अति देदीप्यमान् बृहस्पति लग्न में स्थित हो, तो बहुत अरिष्टों का नाश करता है, जैसे विभक्ति से युक्त पुरुष विष्णु भगवान् को प्रणाम करने से सहस्रों पापों से मुक्त होता है।

सभी शुभग्रह अत्यन्त बलवान् तथा पापग्रह निर्बल हो और शुभग्रह का लग्न हो, शुभग्रह से दृष्ट हो, तो इस योग में उत्पन्न बालक सभी आपदाओं से रहित होता है, जैसे कि ग्रहों के पूजा से ग्रहजनित दुरित नाश होता है।

अथवा यदि पापग्रह शुभग्रह के वर्ग में स्थित हों तथा शुभग्रह के नवांश और वर्ग में स्थित शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो अरिष्ट का नाश करते हैं, जैसे कि पति से विरक्त स्त्री पति का नाश करती है।

यदि लग्न से ३।६।११ में से किसी स्थान में स्थित राहु शुभग्रहों से दृष्ट हो, तो सद्यः अरिष्ट का नाश करता है, जैसे कि वायु का वेग रुई के गल्ले (ढ़ेर) का नाश करता है।

अथवा यदि जन्म समय सभी ग्रह शीर्षोदय राशि में स्थित हो, तो प्रकृतिस्थ सभी अरिष्टों का नाश करते हैं, जैसे कि आग पर तपा देने से घृत का विकार नष्ट हो जाता है।

यदि जन्माङ्ग में तत्काल शुभग्रह विजयी हो, शुभग्रह के वर्ग में शुभ दृष्ट हो, तो सभी अरिष्ट प्रबल वायु के वेग से वृक्ष की भाँति नष्ट हो जाते हैं।

जन्म समय यदि कोई ग्रह परिवेष मण्डल के अन्तर्गत हो और पापग्रहों से दृष्ट हो, तो अरिष्ट का नाश करता है, जैसे कि भास्कर के ग्रहण काल में स्नान करने से पाप दूर होता है।

अथवा स्निग्ध, मृदु तथा पवनप्रदायक और जलदयोग करने वाले

तथा प्रशस्त ग्रह शीघ्र अरिष्ट का शमन करते हैं—जैसे कि मेघ की धारा धूलि का शमन करती है।

अगस्त मुनि तथा मरीच्यादि सप्तर्षियों का उदय सर्वारिष्ट का नाश करते हैं, जैसे कि सूर्योदय संसार के तम का करता है। सप्तर्षि के उदय आदि का लक्षण बृहत्संहिता में देखना चाहिए।

जन्म समय मेष, वृष या कर्क राशि का राहु, यदि लग्न में हो, तो समस्त अरिष्ट से रक्षा करता है, जैसे कि प्रसन्न राजा अपराधी जन की रक्षा करता है।

और भी अन्य अरिष्ट भङ्ग योग से अरिष्टजनित कष्ट तथा अनिष्ट से ब्रह्मा आश्चर्य करते हैं (अर्थात् कष्ट-अनिष्ट का नाश होता है) जैसे कि समतट देश में गिरगिट आश्चर्य को करता है।

अथवा यदि अधिक ग्रह शुभफल करने वाले हों तथा सूर्य से त्रिकोण में चन्द्रमा हो, तो राजा के यात्रा की भाँति समस्त अरिष्ट का नाश करते हैं।

बृहस्पति तथा शुक्र केन्द्र में हो, तो १०० सौ वर्ष की आयु होती है और ग्रहारिष्ट तथा चन्द्रारिष्ट सभी नष्ट हो जाते हैं।

अमितायु योग विचार—यदि कर्क राशिस्थ सम्पूर्ण चन्द्रमा बृहस्पति से युक्त होकर चतुर्थ या दशम अथवा लग्न में हो और तुला राशि में शनि, बुध तथा शेष ग्रह ३।६ या ११ स्थान में हो, तो अमितायुयोग (अपरिमित अर्थात् १२० वर्ष से भी अधिक) होता है।

इस प्रकार प्राचीनाचार्यों से सिद्ध इन सभी भङ्गों को कहा गया है, जिसको जानकर दैवज्ञ राजप्रिय होते हैं।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का दशम पुष्प रूप 'अरिष्ट-भङ्ग योग' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।१०।।

११

चन्द्र व सूर्य योग

चन्द्र योग का विचार—यदि चन्द्रमा से द्वितीय स्थान में सूर्य को छोड़कर अन्य भौमादि कोई ग्रह हो, तो सुनफा एवं चन्द्रमा से व्यय स्थान में सूर्य को छोड़कर अन्य कोई ग्रह हो, तो अनफा योग तथा सूर्य को छोड़कर द्वितीय व द्वादश दोनों स्थान में ग्रह हों तो दुरुधरा योग होता है। यहाँ विशेषता है कि यदि पूर्वोक्त तीनों योगों में द्वितीय वा द्वादश में सूर्य हो, तो योग भङ्ग नहीं करता; किन्तु योगकारक ग्रहों में सूर्य की गणना नहीं होती अर्थात् सूर्य द्वितीय या द्वादश में हो या न हो, भौमादि ग्रह वहाँ हो, तो पूर्वोक्त में से लक्षणानुसार सुनफादियोग होते हैं।

यदि पूर्वोक्त योग न हो, तो केमद्रुम योग होता है, परञ्च यदि चन्द्रमा तथा केन्द्र स्थान भौमादि ग्रहों से रहित हो और चन्द्रमा ग्रहों से अदृष्ट हो, तो यह योग अति कष्टकारक होता है अर्थात् केन्द्र तथा चन्द्रमा भौमादि ग्रहों से युक्त या दृष्ट हो, तो साधारण फल होता है।

सुनफा तथा अनफा योग के पृथक् पृथक् विस्तार करने से ३१ भेद होते हैं। तथा दौरुधरा योग का प्रस्तार विधि में इच्छा विकल्प से १८० भेद होता है (यहां पर विस्तार के भय से इन भेदों को नहीं लिखा गया, विशेष जानकारी के लिये बृ०जा० चन्द्रयोगाध्याय के श्लो० १३ का भटोत्पल्ल टीका देखिये)।

इस प्रकार यदि जन्म के समय सुनफा योग हो, तो मनुष्य अति बुद्धिमान्, श्रीमान्, स्वभुजोपार्जित विभव से युक्त, अति धर्मशील, शास्त्रज्ञ, यशस्वी, सुन्दर गुणों से सुशोभित, शान्त, सुखी, राजा अथवा मन्त्री होता है।

अनफा योगोत्पन्न पुरुष वक्ता, समर्थ, धनी, निरोगी, सुशील, अन्नपान-पुण्य-वस्त्र तथा सुन्दरियों का भोक्ता, प्रसिद्ध तथा सुन्दर गुणों से युक्त, सुखी और प्रशस्त चित्त वाला होता है।

दुरुधरा योगोत्पन्न पुरुष वाणी, बुद्धि, पराक्रम तथा सुन्दर गुणों से प्रसिद्ध, स्वतन्त्रता, धन, वाहन तथा भोग का भोक्ता; दानी और कुटुम्ब तथा धन रक्षा में खेदयुक्त तथा सदाचारी होता है।

केमद्रुम योगोत्पन्न राजकुल सम्बन्धी पुरुष भी स्त्री, अन्न, पान, गृह, वस्त्र तथा मित्रों से विहीन; दारिद्र, दुःख, रोग तथा मलिनता से युक्त होता है। ऐसे में अन्य वंशजों के लिये क्या कहना है।

चन्द्रयोग में विशेष विचार—केन्द्रादि स्थान विशेष से तथा चन्द्रमा के बलाबलानुसार सुनफादि योगों का शुभाशुभ फल कहना चाहिये।

तथा भौमादि ग्रहों का बलाबल और जातक के जाति, कुल आदि का विचार कर सुनफादि योगों का फलादेश करना चाहिये।

सुनफा योग में ग्रह भेद से फल विचार—यदि मंगल सुनफा योगकारक हो, तो पुरुष प्राय: पराक्रमोपार्जित धन से युक्त, निष्ठुरभाषी, सेनापति, चण्ड (कठोर), हिंसक और घमण्डी तथा विरोधवान् होता है।

यदि बुध सुनफा योग कारक हो, तो पुरुष वेद शास्त्र तथा गान में कुशल, धर्मवान्, काव्यकर्त्ता, मनस्वी, समस्त प्राणियों का हितकारक तथा सुन्दर होता है।

यदि बृहस्पति सुनफा का योगकर्त्ता हो, तो पुरुष विद्या का आचार्य, प्रसिद्ध राजा अथवा राजप्रिय तथा सुन्दर कुटुम्ब और धन-समृद्धि से युक्त होता है।

शुक्र सुनफा योगकारक हो, तो पुरुष स्त्री सम्बन्धि-क्षेत्र-सम्पति-विभव आदि तथा चतुष्पद से युक्त, पराक्रमी, राजा से पूजित, सुन्दर, धीर तथा कुशल होता है।

शनि सुनफा योग कर्त्ता हो, तो पुरुष कुशल बुद्धि से युक्त, ग्राम तथा नगरों से नित्य पूजित, धन से युक्त और कार्य साधन में गुप्त तथा धीर होता है।

अनफा योग में ग्रह भेद से फल विचार—यदि मंगल अनफा योगकारक हो, तो पुरुष चोरों का स्वामी, धृष्ट, स्वकुल में मानी, रण में प्रवीण, क्रोधी तथा श्रेष्ठ प्रशंसा योग्य और सुन्दर होता है।

यदि बुध अनफा योगकारक हो, तो पुरुष गान विद्या तथा लेख में चतुर, कवि, प्रवक्ता, राजा से सम्मानित, सुन्दर शरीर तथा प्रसिद्ध कर्मों से युक्त होता है।

यदि बृहस्पति अनफाकारक हो, तो पुरुष गम्भीर, बल-बुद्धि तथा स्थान में रत, बुद्धिमान्, राजा से यश को प्राप्त तथा सद्गुण से युक्त होता है।

वहीं शुक्रोत्पन्न अनफा योग में पुरुष स्त्रियों का अत्यन्त प्रिय, राजा का सेवक, गौओं का स्वामी, प्रसिद्ध, सुन्दर तथा क़नक (सुवर्ण) से युक्त होता है।

तथा शनि अनफा योगकारक हो, तो पुरुष विस्तीर्ण बाहुवाला, नेता, मित्रवाक्यों का प्रयोग करने वाला, चतुष्पदों से युक्त तथा दुष्ट स्त्री का भक्त और गुणयुक्त होता है।

दुरुधरा योग में ग्रहों के भेद से फल विचार—यदि मंगल और बुध के मध्य में चन्द्रमा हो, तो पुरुष नृत्यवेत्ता, बहुत धन से युक्त, चतुर तथा अत्यन्त शठ और लोभी, वृद्धा स्त्री में प्रसक्त और कुलाग्रणी होता है।

बृहस्पति और मंगल के मध्य में चन्द्रमा हो, तो पुरुष प्रसिद्ध, कार्य में कुशल, बहुतजनों का बैरी होता हुआ भी अक्रोधी, पुष्ट तथा कुल का रक्षा करने वाला और संग्रहशील होता है।

यदि मंगल तथा शुक्र के मध्य में चन्द्रमा हो, तो पुरुष उत्तम कार्यकर्त्ता, सुन्दर, विवाद में कुशल, पवित्र तथा चतुर, व्यायाम करने वाला और युद्ध में वीरता से युक्त होता है।

यदि मंगल तथा शनि के मध्य में चन्द्रमा हो, तो पुरुष दुष्ट स्त्री में रमण करने वाला, बहुसञ्चय करने वाला, व्यसन से दग्ध, क्रोधी, परनिन्दक तथा शत्रुओं से युक्त होता है।

यदि बुध तथा गुरु के मध्य में चन्द्रमा हो, तो पुरुष धर्मधुरन्धर, शास्त्र-वेत्ता, वाचाल, सुन्दर, कवि तथा धन से युक्त, त्यागयुक्त (दानी) तथा प्रसिद्ध होता है।

यदि बुध व शुक्र के मध्य में चन्द्रमा हो, तो पुरुष प्रियभाषी, सुभग (सुन्दर), कान्त तथा नृत्य-गान-वाद्यादि का प्रिय, सेव्य (मालिक), शूर तथा मन्त्री होता है।

एवं यदि बुध व शनि के मध्य में चन्द्रमा हो, तो पुरुष धन से युक्त तथा साधारण विद्या से युक्त होकर देश-देश में भ्रमण करने वाला, अन्य जनों से पूजित तथा स्वजनों का विरोधी होता है।

यदि बृहस्पति तथा शुक्र के मध्य में चन्द्रमा हो, तो पुरुष धैर्य, बुद्धि तथा पराक्रम से युक्त, नीतिज्ञ, सुवर्ण तथा रत्न से परिपूर्ण, प्रसिद्ध तथा राजा का कार्य करने वाला होता है।

यदि बृहस्पति व शनि के मध्यगत चन्द्रमा हो, तो सुख, न्याय तथा विज्ञान से युक्त, प्रियभाषी, धुरन्धर तथा श्रेष्ठ विद्वान्, शान्त, धनी तथा सुन्दर रूप से युक्त होता है।

यदि शुक्र व शनि के मध्य में चन्द्रमा हो, तो प्राचीन वृद्धों का

अनुकरणकर्त्ता, कुल में श्रेष्ठ, निपुण, स्त्रियों का प्रिय तथा धन की वृद्धि करने वाला, राजा से सत्कृत तथा अत्यन्त धनी होता है।

सूर्य से केन्द्रादि स्थान स्थित चन्द्र का फल विचार—यदि सूर्य से चन्द्रमा केन्द्र १।४।७।१० स्थान में हों तो धन, बुद्धि, चातुर्य्य और विज्ञान अल्प होता है, पणफर २।५।८।११ में हो, तो मध्य और आपोक्लिम ३।६।९।१२ में हो, तो उत्तम होता है।

दृंश्यादृश्यस्थितिवशात्फल विचार—जन्म के समय उत्पातादि से प्रभावित क्षीण चन्द्रमा, यदि रात्रि में अदृश्य भाग में तथा दिन में दृश्यभाग में हो, तो भय-शोकादि होता है। एवं (अर्थात् उत्पातादि से रहित) स्थित हो, तो साधारण फल होता है। एवं और परिपूर्ण मूर्ति चन्द्रमा, यदि रात्रि में दृश्यभाग में तथा दिन में अदृश्य भाग में स्थित हो, तो जातक राजा होता है।

लग्न या चन्द्र से उपचय स्थान स्थित शुभग्रह फल विचार—जिसके जन्म समय बुध, बृहस्पति, शुक्र व चन्द्र सभी शुभ ग्रह लग्न से उपचय (३।६।१०।११) भाव में गत हो, वह पुरुष अत्यन्त धनी तथा पूर्वोक्त शुभग्रहों में से कोई दो ग्रह उपचयगत हो, तो मध्यमकोटि का धनी और यदि इनमें से एक ही ग्रह उपचयगत हो, तो अल्प (किञ्चिद्) धनी होता है तथा चन्द्रमा से भी इसी प्रकार आदेश करना चाहिये।

रवि योग का विचार—सूर्य से व्यय स्थान में चन्द्रमा को छोड़कर यदि अन्य ग्रह हों, तो वाशि नामक योग एवं द्वितीय स्थान में हो, तो वेशि नामक योग तथा द्वितीय व द्वादश दोनों स्थान में ग्रहस्थिति हों, तो उभयचरी नामक योग होता है।

वेशि योग फल विचार—वेशि योगोत्पन्न पुरुष मन्दाक्ष, रुक-रुककर बोलने वाला, अत्यन्त परिश्रमी और नीचे को झुका हुआ तथा उच्च कद का होता है।

वेशि योग में ग्रह भेद से फल विचार—यदि बृहस्पति वेशि योगकारक हो, तो पुरुष मित्रों के सहित धनसंचय करने वाला और धनी होता है। शुक्र हो, तो डरपोक, कार्य में उद्विग्न, लघुचेष्टा वाला और पराधीन होता है।

यदि बुध हो, तो परकार्य करने वाला, दरिद्र, मृदु और नम्रशील तथा सलज्ज होता है। मंगल हो, तो थोड़ा चलने वाला तथा परोपकारी होता है।

और यदि शनि वेशिस्थान में गत हो, तो पुरुष परदार रत, कठोर, वृद्धसदृश, मूर्ख, घृणायुक्त और धनी होता है।

वाशियोग फल विचार—वाशि योगोत्पन्न पुरुष श्रेष्ठ बोलने वाला, शास्त्रज्ञाता, उद्योगयुक्त, तिरछी दृष्टियुक्त तथा कटिभाग से पूर्व शरीर स्थूल तथा राजा सदृश होता है।

वाशि योग में ग्रह भेद से फल विचार—यदि बृहस्पति वाशि योगकारक हो, तो पुरुष धैर्यवान्, बलवान्, बुद्धिमान्, वायुबल से युक्त होता है। शुक्र हो, तो शूर, प्रसिद्ध, गुणी तथा यशस्वी होता है।

बुध हो, तो प्रियभाषी, सुन्दर शरीरयुक्त तथा पराज्ञाकारी होता है। मंगल हो, तो संग्राम में विख्यात तथा एक वाक्य बोलनेवाला होता है।

शनिश्चर हो, तो बनिया (व्यवसायी) जाति के स्वभाव से युक्त, परद्रव्य का हरणकर्त्ता, गुरुद्वेषी तथा अच्छी तलवार वाला होता है।

रवि तथा योगकारक ग्रहों का वस्तुतः बलाबल का विचार कर तथा तत्तद्ग्रह युक्त राशि नवांश का भी बलाबल विचार कर पूर्वोक्त योग का फलादेश करना चाहिये।

उभयचरी योग फल विचार—उभयचरी योगोत्पन्न पुरुष सर्वसाधारण से मिलनसार, सुन्दर, समशरीर वाला, सुस्थिर, अत्यन्त बली, नात्युच्च शरीर वाला परिपूर्ण और विद्वान् होता है।

सुन्दर, सुडोल, बहुत नौकर तथा धन से युक्त, भाइयों का आश्रय, राजा सदृश नित्योत्साही बली तथा ऐश्वर्यभोक्ता होता है।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का एकादश पुष्प रूप 'चन्द्र-सूर्य योग' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।११।।

१२
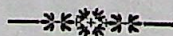
दो आदि ग्रह योग

द्विग्रह योग फल विचार—वृद्ध यवनाचार्यों से कथित द्विग्रह योगजनित फल को (जाति-धर्म, सम्प्रदाय इत्यादि का विचार त्याग कर) विशेष रूप से यहाँ उपस्थापित किया जाता है।

जन्मसमय में रवि व चन्द्रमा के योग से पुरुष स्त्रियों के वश में रहने वाला, उदण्ड, कूट (दिल्लगी) करने वाला, धनी, मद्यादि विक्रय में कुशल तथा अन्य कार्यों में भी निपुण होता है।

रवि व मंगल के योग से पराक्रमी, साहसी, मूर्ख, बलवान्, मिथ्याभाषी, पापबुद्धि व हिंसक तथा प्रचण्ड (उग्र) होता है।

रवि व बुध के योग से सेवा करने वाला, चञ्चल, धन से युक्त, प्रिय भाषी, यशस्वी, धनी, श्रेष्ठ, राजप्रिय, सज्जन तथा बलरूपादि से युक्त विद्वान् होता है।

जन्म समय सूर्य-बृहस्पति के योग से पुरुष अत्यन्त धार्मिक, राजमन्त्री, बुद्धियुक्त, मित्रों के आश्रय से धनलाभ करने वाला और उपाध्याय लब्ध पदवीक होता है।

रवि-शुक्र के योग से पुरुष शस्त्र चलाने की विद्या तथा शक्ति से युक्त तथा वृद्धावस्था में नेत्रशक्ति से क्षीण, नाटक का ज्ञाता तथा स्त्री की सहायता से भाइयों के धन को प्राप्त करता है।

रवि-शनि के योग से पुरुष गैरिकादि (स्वर्ण आदि) धातु का ज्ञाता, धर्मनिष्ठ, स्वकार्य में दत्तचित्त, स्त्री-पुत्र से हीन, निजकुल के गुणों से युक्त और अल्पशील से युक्त होता है।

चन्द्रमा-मंगल के योग से पुरुष शूर, संग्राम में प्रतापी, बाहु युद्ध करने वाला, खून के वेदना से युक्त, मृत्तिका चर्म तथा धातुओं की शिल्पकारी करने वाला, कूट (भेद) नीति का ज्ञाता होता है।

चन्द्रमा-बुध के योग से पुरुष काव्य कथादि में अत्यन्त निपुण, धन से युक्त, स्त्री संमति से युक्त, सुन्दर, रूपवान्, सबसे हंसकर बोलने वाला, धर्म में रुचि रखने वाला और विशेष गुणों से युक्त होता है।

चन्द्रमा-बृहस्पति के योग से पुरुष स्थिर मित्रों से युक्त, विनयशील भाइयों का मान करने वाला, धनवान्, शुभ, शीलयुक्त, देवता तथा ब्राह्मणों से कल्याणयुक्त होता है।

जन्म के समय चन्द्रमा-शुक्र के योग से पुरुष सर्वदा माला तथा धौत, वस्त्रादि से युक्त, कार्य में कुशल, कुलप्रिय, अत्यन्त आलसी तथा क्रय-विक्रय में कुशल होता है।

चन्द्रमा-शनि के योग से पुरुष वृद्धाङ्गनाओं में रमण करने वाला, हाथी-घोड़ों का पालन करने वाला, शीलरहित, पराधीन तथा दरिद्र और पराजित होता है।

जन्म के समय यदि मंगल-बुध युक्त हो, तो पुरुष दुर्भगास्त्री से युक्त, अल्पधनी, सुवर्ण-लोहादि का कर्म करने वाला और दुष्ट स्त्री-विधवादि स्त्रियों का स्वामी (पालन पोषणादि करने वाला) तथा निपुण वैद्य होता है।

मंगल-बृहस्पति के योग से पुरुष शिल्पज्ञ, शास्त्रज्ञ, वेदज्ञ तथा बुद्धिमान्, वचनपटु मतिमान् (आगामी सोचनेवाला), शस्त्रप्रिय तथा सेना नायक होता है।

मंगल-शुक्र के योग से पुरुष पूज्य, सेनानायक, गणितज्ञ, परायी स्त्रियों में रक्त, धूर्त्त, द्यूत, मिथ्याभाषण और शाठ्यकर्म में आरक्त तथा वैश्य का कर्म करने वाला होता है।

मंगल-शनि के योग से पुरुष धातु तथा इन्द्रजाल में कुशल, प्रवञ्चक (ठग), तस्कर कार्य में कुशल, विधर्मी, शस्त्र तथा विष का प्रयोग करने वाला और कलह में प्रवीण होता है।

बुध-बृहस्पति के योग से पुरुष नृत्यविधिज्ञ, नई-नई विधि का निर्माता, गाने बजाने में कुशल, आगामी बातों का सोचने वाला तथा सुख से युक्त होता है।

बुध-शनि के योग से पुरुष अत्यन्त धनवान्, न्यायकर्त्ता, अनेक शिल्पकारी का ज्ञाता, वेद को जानने वाला, सुन्दर बोलने वाला, गीतज्ञ तथा हास्य में प्रेम रखनेवाला और सुगन्धित द्रव्य तथा माल्यादि का प्रेमी होता है।

बुध-शनि के योग से पुरुष ऋणी, डम्भी, प्रपञ्ची, सुन्दर, कवि, भ्रमणशील, निपुण तथा सुन्दर वाक्य से युक्त होता है।

बृहस्पति-शुक्र के योग से पुरुष विशिष्ट धर्म में स्थित रहते हुए प्रमाणयुक्त, विद्या, विद्या सम्बन्धि वाद-विवाद द्वारा जीविका करता हुआ विशिष्ट स्त्री तथा मति से युक्त होता है।

बृहस्पति-शनि के योग से पुरुष शूर, धनसमृद्ध नगराधिपति, यशस्वी तथा गण, सभा और ग्राम समूहों का नायक होता है।

और शुक्र-शनि के योग से पुरुष काष्ठ चीरने-फाड़ने में कुशल और चित्र तथा पत्थर इत्यादि का कार्य करने वाला और शिल्पज्ञ (काष्ठलक्षण-पाषाणादि घटन नानावर्णनिर्मितमूर्त्यादि कल्पनज्ञ) तथा योद्धा भ्रमणशील व पशुओं का स्वामी (पोषक) होता है।

इस प्रकार यदि ग्रह परस्पर एक-दूसरे की राश्यादि में स्थित हों, तो पूर्वोक्त फल अविकल तथा नीचादि में स्थित हों, तो पूर्वोक्त फल विकृतियुक्त (यथार्थ नहीं) होता है।

त्रिग्रह योग विचार—सूर्य, चन्द्रमा व मंगल एकत्रित हों, तो पुरुष निर्लज्ज, पापकर्म में लीन, यन्त्रादि का ज्ञाता, शत्रुओं को मारने-पीटने में कुशल तथा पत्थर के कार्य में कुशल होता है।

सूर्य, चन्द्रमा व बुध के योग से पुरुष तेजस्वी, अत्यन्त चतुर, शास्त्र-कलाकौशल-सभा इत्यादि व मद्यादि पान में लीन तथा राजा का कार्य करने वाला और धीर होता है।

रवि, चन्द्रमा व बृहस्पति के योग से पुरुष क्रोधी, मायावी, सेवा कर्म में चतुर, विदेशवासी, बुद्धिमान् तथा चञ्चलमति का होता है।

रवि, चन्द्र व शुक्र के योग से पुरुष परधन हरण में कुशल, पराये स्त्री में रत और शास्त्र का ज्ञाता होता है।

रवि, चन्द्रमा व शनि के योग से पुरुष काम सम्बन्धी वादविवाद में कुशल, मूर्ख, पराधीन और दरिद्र होता है।

रवि, मंगल व बुध के योग से पुरुष प्रसिद्ध योद्धा, साहसी, निष्ठुर, निर्लज्ज तथा धन, पुत्र, स्त्री से रहित होता है।

सूर्य, मंगल व बृहस्पति के योग से पुरुष वचनपटु, धनी, राजमन्त्री अथवा स्वयं राजा सत्यवादी तथा प्रचण्ड (पराक्रमी) होता है।

सूर्य, मंगल व बुध के योग से पुरुष नेत्रकष्ट से आर्त्त, कुलीन, सुन्दर, वचनपटु और विभवी होता है।

सूर्य, मंगल व शनि के योग से पुरुष विकल शरीर से युक्त, धनरहित, नित्य रोगी, स्वजन रहित तथा मूर्ख होता है।

सूर्य, बुध व बृहस्पति के योग से पुरुष नेत्रकष्ट से आर्त्त, धनी, मूर्ख, शास्त्रादि शिल्प तथा काव्य में रत और लेखक होता है।

सूर्य, बुध व शुक्र के योग से पुरुष अत्यन्त दुःखी, वाचाल, भ्रमणशील, गुरु से ज्ञान प्राप्त और स्त्री के कारण दुःखी होता है।

सूर्य, बुध व शनि के योग से पुरुष क्लीबाचार से युक्त, सभी मनुष्यों का द्वेषी, सबसे पराजित तथा भाई-बन्धुओं से भी परित्यक्त होता है।

रवि, बृहस्पति व शुक्र के योग से पुरुष नेत्र से दुर्बल, शूर, बुद्धिमान्, दरिद्र, राजा का मन्त्री तथा हमेशा परकार्य में लीन रहता है।

सूर्य, बृहस्पति व शनि के योग से पुरुष समान अङ्ग से रहित, पूज्य, स्वजनों का द्वेषी तथा सुन्दर स्त्री, पुत्र और मित्र से युक्त एवं राजा का इष्ट (प्रधान) और भयरहित होता है।

सूर्य, शुक्र व शनि के योग से पुरुष शत्रु के भय से उद्वेगयुक्त, प्रतिष्ठा-कला-काव्यादि से रहित, कुचरित्र और कुष्ठी होता है।

चन्द्र, मंगल व बुध के योग से पुरुष पापकर्म करने वाला, नीचाचार से युक्त, स्वजन तथा मित्रों से रहित और केवल निज उदरपोषक होता है।

चन्द्र, मंगल व बृहस्पति के योग से पुरुष नम्र, शरीर से युक्त, स्त्रियों में लीन, स्त्रियों को चुराने वाला और स्त्रियों का स्वामी, मन्त्री तथा अत्यन्त क्रोधी होता है।

चन्द्र, मंगल व शुक्र के योग से पुरुष दुःशीला स्त्री का पुत्र और दुःशीला स्त्री का पति, भ्रमणशील तथा सर्दी के भय से युक्त होता है।

चन्द्र, मंगल व शनि के योग से पुरुष बाल्यावस्था ही में माता से रहित, क्षुद्र, कठोर तथा लोक (सभी मनुष्यों) का द्वेषी होता है।

चन्द्र, बुध व बृहस्पति के योग से पुरुष धनवान्, सुन्दर, मितवाक्य बोलने में प्रवीण, तेजस्वी, प्रसिद्ध, अत्यन्त कीर्ति से युक्त तथा बहुत भाईयों से युक्त होता है।

चन्द्र, बुध व शुक्र के योग से पुरुष विद्वान् होता हुआ भी नीचाचार से युक्त, सौम्य तथा धन का लोभी होता है।

चन्द्र, बुध व शनि के योग से पुरुष अस्वस्थ, विकलाङ्ग, बुद्धिमान्, वचन-पटु, पूजित (प्रतिष्ठायुक्त) तथा राजा होता है।

चन्द्र, बृहस्पति व शुक्र के योग से पुरुष साध्वी स्त्री का पुत्र, बुद्धिमान्, कलारहित, बहुत सुनने वाला, साधु (सज्जन) और सुन्दर होता है।

चन्द्र, बृहस्पति व शनि के योग से पुरुष शास्त्रार्थ की तत्त्वबुद्धि से युक्त, वृद्ध स्त्री में रमण करने वाला, निरोगी, ग्राम और संघ का स्वामी होता है।

चन्द्र, शुक्र व शनि के योग से पुरुष लेखक, पुराण का वाचक (व्यास), पुरोहित अथवा ज्योतिषी होता है।

मंगल, बुध व बृहस्पति के योग से पुरुष सत्कवि, पृथ्वीनाथ, सुन्दर युवति का पति, परोपकार में नित्य उद्यत और विद्या में कुशल होता है।

मंगल, बुध व शुक्र के योग से पुरुष अकुलीन, विकलाङ्ग, चञ्चल, दुष्ट, कटुभाषी तथा नित्य उत्साहित रहने वाला होता है।

मंगल, बुध व शनि के योग में मनुष्य सेवक काले नेत्रों से युक्त, प्रवासी, मुख का रोगी और प्रसन्नचित्त वाली स्त्री से रमण करने वाला होता है।

मंगल, बृहस्पति व शुक्र के योग में मनुष्य राजा का प्रिय, सुन्दर, पुत्र वाला, विलासिनी स्त्रियों से सर्वदा सुख प्राप्त करने वाला तथा सभी मनुष्यों को आनन्द देने वाला होता है।

मंगल, बृहस्पति व शनि के योग में मनुष्य राजा का मन्त्री, किसी अङ्ग से हीन, नीचाचार में रत, मित्रों से त्यक्त तथा निर्दयी होता है।

मंगल, शुक्र व शनि के योग में मनुष्य दुश्चरित्र स्त्री का पुत्र तथा रति सुख से रहित तथा नित्य परदेश में रहने वाला होता है।

बुध, बृहस्पति व शुक्र के योग में मनुष्य सुन्दर शरीर वाला, शत्रुओं को मर्दन करने वाला, राजा, सुन्दर, शोभा से युक्त, विपुल, कीर्ति से युक्त तथा सत्य बोलने वाला होता है।

बुध, बृहस्पति व शनि के योग में मनुष्य स्थान-धन तथा ऐश्वर्य से युक्त, बुद्धिमान्, अत्यन्त भोगी, स्वस्त्री में रत तथा धैर्य सुख से युक्त और सुन्दर यशस्वी होता है।

बुध, शुक्र व शनि के योग में मनुष्य कटुभाषी, धूर्त्त, मिथ्या बोलने वाला, परदार में रत, कठोर, कला-कौशल से अनभिज्ञ तथा स्वदेशवासी होता है।

बृहस्पति, शुक्र व शनि के योग में नीचकुल में भी जन्म लिया हुआ बालक अत्यन्त कीर्ति और शील सम्पन्न से युक्त राजा होता है तो राजकुलोत्पन्न की बात ही क्या?।

इस प्रकार यदि चन्द्रमा पापग्रहों से युक्त हो, तो प्रायः माता का, सूर्य पापग्रहों से युक्त हो, तो प्रायः पिता का अभाव कहना चाहिये। यदि शुभग्रहों से युक्त हों, तो शुभ तथा शुभग्रह पापग्रह दोनों से युक्त हों, तो मिश्रफल कहना चाहिये।

शुभग्रहों का योग प्रायः मनुष्यों को धन, ऐश्वर्य, यश, राजयोग तथा भूमण्डल में श्रेष्ठत्व को करता है।

एवं पापग्रहों का योग मनुष्य को मलिनता, दरिद्रता, कुरुपता, उग्रता आदि को देने वाला होता है।

चतुर्ग्रह योग विचार—र०चं०मं०बु० के योग में मनुष्य लेखक, चोर, कटुवचन भाषी तथा मायाप्रपञ्च में कुशल होता है।

र०चं०मं०बृ० के योग में मनुष्य धनवान्, निन्द्य भार्या से युक्त, तेजस्वी, नीतिज्ञ, शोकरहित, कार्य में समर्थ तथा कुशल होता है।

र०चं०मं०शु० के योग में मनुष्य श्रेष्ठ तथा उचित वाग् वृत्ति से युक्त, सुखी, निपुण, धनसंग्रहकर्त्ता तथा विद्या-स्त्री-पुत्र समेत होता है।

र०चं०मं०श० के योग में मनुष्य विषम शरीर से युक्त, ह्रस्व (छोटा कद का) धनरहित, भिक्षा माँगकर भोजन करने वाला, मूर्ख तथा सर्वगम्य होता है।

सू०चं०बु०गु० के योग में मनुष्य सुवर्ण का काम करने वाला, प्लुताक्ष (बुद्बुद् नेत्र वाला) या शिल्पकार, धनी, धीर और निरोगी होता है।

सू०चं०बु०शु० के योग में मनुष्य विकल, सुयशस्वी, वाग्मी (युक्तियुक्त बोलने वाला या नैयायिक), ह्रस्वकाय और राजा का मन्त्री होता है।

सू०चं०बु०श० के योग में मनुष्य माता-पिता से रहित, धनसुख से वर्जित, भ्रमण शील और भिक्षाटन करता हुआ भी मिथ्यावादी होता है।

र०चं०बृ०शु० के योग में मनुष्य जल, पक्षी और वन का स्वामी सुखी, पूज्य और सब कार्यों में निपुण होता है।

र०चं०बृ०श० के योग में पुरुष क्रोधयुक्त नेत्र वाला, तेजस्वी, बहुत पुत्र और धनादि से युक्त, वेश्याओं का स्वामी होता है।

र०चं०शु०श० के योग में पुरुष स्त्रियों के सदृश आचार वाला, अग्रगण्य, अत्यन्त क्षीण शरीर वाला तथा सर्वत्र भयभीत रहता है।

र०मं०बु०बृ० के योग में पुरुष शूर (वीर), लेखक, चक्रधारी, स्त्री तथा धन से रहित और दुःखरूपी समुद्र में गोता लगाने वाला होता है।

र०मं०बु०शु० के योग में पुरुष परदाररत, चोर, विषमाङ्ग, दुर्जन और बलहीन होता है।

र०मं० बु०श० के योग में मनुष्य योद्धा, बुद्धिमान्, तेजस्वी, नीचाचाररत, कवि, सेनापति या मन्त्री अथवा राजा होता है।

र०मं०बृ०शु० के योग में मनुष्य सुन्दर, सौन्दर्य से युक्त, लोक में प्रतिष्ठित, धनवान्, राजा की राय में रहने वाला, पृथ्वी में प्रख्यात और नीतिज्ञ होता है।

सू०मं०बृ०श० के योग में मनुष्य उन्मादयुक्त, गण (समुदाय) में मान्य, अभीष्ट की प्राप्ति करने वाला, भाई तथा मित्रों से मिलकर रहने वाला अथवा राजा का संमत होता है।

सू०मं०शु०श० के योग में मनुष्य विकल, नीचाचाररत, तिरछी दृष्टि वाला, भाइयों का द्वेषी और सर्वत्र से पराजित होता है।

सू०बु०बृ०शु० के योग से पुरुष धनवान्, सुखी, प्रधान (अग्रगण्य), स्व-वाञ्छित फल पाने वाला, भाइयों से युक्त तथा श्रेष्ठ होता है।

सू०बु०बृ०श० के योग से मनुष्य क्लीबाचारी (नपुंसकों की तरह आचार करने वाला), अभिमानी, झगड़ालू, भ्रातृवान् तथा उत्साह रहित होता है।

र०बु०शु०श० के योग में मनुष्य कडुआ बोलने वाला, सुन्दर, बुद्धिमान्, सुखी, बल तथा पवित्रता से युक्त, गम्भीर और मित्रों की सहायता करने वाला होता है।

र०बृ०शु०श० के योग में मनुष्य लोभी, कवि, अग्रगण्य, कारीगरों (बढ़ई, नाई, धोबी, जुलाहे आदि) का स्वामी तथा नीच जातियों का अधिपति तथा इष्ट (मान्य) होता है।

चं०मं०बु०बृ० के योग में जायमान पुरुष शास्त्रकुशल, राजा या बड़ा मन्त्री अथवा अत्यन्त बुद्धिमान् होता है।

चं०मं०बु०शु० के योग में मनुष्य झगड़ालू, निद्रालु, नीच, पुंश्चली, पति, सुन्दर और भाइयों से विद्वेष करने वाला तथा दुःखभागी होता है।

चं०मं०बु०श० के योग में मनुष्य शूर (वीर), माता तथा पिता से रहित, अकुलीन, बहुत स्त्री-पुत्र तथा मित्रादिकों से युक्त तथा अच्छे कर्म को करने वाला होता है।

चं०मं०बृ०श० के योग में मनुष्य विकल शरीर से युक्त, अच्छी स्त्री वाला, सहिष्णु, अत्यन्त प्रतिष्ठायुक्त, बुद्धिमान् तथा मित्रों से सुखी रहता है।

चं०मं०बृ०श० के योग में मनुष्य बधिर, धनवान्, शूर, उन्मादी, बोलने में चतुर, स्थिरप्रकृतियुक्त, मतिमान् तथा उदारचित्त वाला होता है।

चं०मं०शु०श० के योग में मनुष्य कुलटा का स्वामी, चतुर, सर्प की आँख की तरह आँख वाला तथा नित्य उद्वेगयुक्त रहता है।

चं०बु०बृ०श० के योग में मनुष्य विद्वान्, माता-पिता से रहित, सुन्दर, रूपवान्, धनी, अत्यन्त शोभा से युक्त तथा अजातशत्रु होता है।

चं०बु०बृ०श० के योग में मनुष्य धर्मिष्ठ, यशस्वी, अग्रगण्य, तेजस्वी, भाई-बन्धुओं का प्रिय, मतिमान्, राजमन्त्री तथा श्रेष्ठ कवि होता है।

चं०बु०शु०श० के योग में मनुष्य परदार में गमन करने वाला, शीलरहित स्त्री से युक्त, बन्धु रहित, बुद्धिमान् तथा लोकद्वेषी होता है।

चं०बृ०शु०श० के योग में मनुष्य माता से रहित, सुन्दर, चर्मरोग से युक्त, दुःखी, भ्रमणशील, बहुत बोलने वाला तथा सत्यभाषी होता है।

मं०बु०बृ०श० के योग में मनुष्य स्त्री तथा कलह में रुचि रखने वाला, धन का भोगी, लोक में पूज्य तथा शीलयुक्त और निरोगी होता है।

मं०बु०गु०श० के योग में मनुष्य शूर, विद्वान्, बोलने में चतुर, धनरहित, सत्य तथा शौच (पवित्रता) से सम्पन्न, विवादशील, वादी तथा मतिमान् होता है।

मं०बु०शु०श० के योग में मनुष्य योद्धा, दूसरे के गृह से पालन-पोषण में सक्त, कठोर शरीर वाला, युद्ध के घमण्ड से मतवाला, प्रसिद्ध तथा कुत्तों के साथ रमण करने वाला होता है।

मं०बृ०शु०श० के योग में मनुष्य तेजस्वी, धनवान्, स्त्री में रत, साहस प्रिय, चञ्चल तथा नपुंसक होता है।

एवं बु०बृ०शु०श० के योग में जायमान् पुरुष बुद्धिमान्, पित्रादि के श्राद्ध में नित्य लीन, स्त्रियों में आसक्ति वाला, आज्ञाकारी सेवकों से युक्त, स्त्रियों का भक्त तथा संयोग में तीक्ष्ण होता है।

पञ्चग्रह योग विचार—र०चं०मं०बु०बृ० के योग में उत्पन्न पुरुष अत्यन्त दुःखी, प्रपञ्ची तथा स्त्री विरह के कारण कृशित होता है।

र०चं०मं०बु०शु० के योग में पुरुष नित्य परकार्य में रत, भाई मित्रादि के कारण बल (धनादिबल) रहित तथा नपुंसकों का मित्र होता है।

र०चं०मं०बु०श० के योग में मनुष्य अल्पायु, जेल भोगने वाला, दरिद्र, स्त्री-पुत्रादि से रहित तथा सभी सुखों से वञ्चित होता है।

र०चं०मं०बृ०श० के योग में पुरुष जन्म ही से अन्धा, माता-पिता से त्यक्त और गायक होता है।

सू०चं०मं०बृ०शु० के योग में पुरुष युद्ध में कुशल, सामर्थ्यवान्, परधन हरण करने वाला, पराये को सताने वाला, आपस में फूट करने वाला और दुष्ट होता है।

सू०चं०मं०शु०श० के योग में पुरुष प्रतिष्ठा-धन-विभवादि से रहित, दूषित आचार से रहने वाला और पराङ्गना में सक्त होता है।

सू०चं०बु०बृ०शु० के योग में पुरुष यन्त्रज्ञ, अत्यन्त विभव से युक्त, राजा का मन्त्री अथवा दण्डादि देने का अधिकारी, प्रसिद्ध तथा उत्तम यशस्वी होता है।

सू०चं०बु०शु०श० के योग में पुरुष डरपोक, प्रिय से सन्त्यक्त, उन्मादयुक्त, ठगने में कुशल, कठोर तथा परान्नभोजी होता है।

सू०चं०बु०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष लम्बा कदवाला, अत्यन्त रोम से युक्त, सर्वदा मृत्यु के लिये उत्साही तथा पुत्र-धन और सुख से रहित होता है।

र०चं०बृ०शु०श० के योग में मनुष्य वचनपटु, इन्द्रजाल में सर्वदा, तत्पर, चञ्चल स्वभाव से युक्त, स्त्रियों का प्रिय, मतिमान्, बहुत शत्रुओं से युक्त रहता हुआ भी निर्भय होता है।

र०मं०बु०बृ०शु० के योग में उत्पन्न पुरुष कामी, बहुत घोड़ों से युक्त, स्वयं स्वीकृत सेनापति, शोकरहित, राजा का प्रिय, अत्यन्त सुन्दर व यशस्वी होता है।

र०मं०बु०बृ०श० के योग में उत्पन्न पुरुष सर्वदा व्याकुल, घर-घर से भिक्षा माँगकर खाने वाला व मैले-कुचैले वस्त्र पहिनने वाला होता है।

चं०मं०बु०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष वधबन्धन तथा रोग से पीड़ित, विद्वान्, लोक में पूजित, धनरहित तथा शरीर से सर्वदा व्याकुल रहता है।

सू०मं०बु०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष रोग तथा शत्रुओं से सर्वदा ग्रस्त स्थानभ्रष्ट, अत्यन्त दुःख से सन्तप्त तथा क्षुधा से पीड़ित होकर सर्वदा इधर-उधर घूमा करता है।

चं०मं०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष सेवक, मूर्ख, नपुंसक, मलिन आचार से रहने वाला, अति कुरुप, व्याकुल तथा दरिद्र होता है।

सू०मं०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष जलयन्त्र, धातु, पारा तथा रसायन में अत्यन्त कुशल तथा इसी से प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता भी होता है।

सू०बु०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष बहुत शास्त्र ज्ञान में कुशल, मित्रों का भलाई करने वाला, गुरुओं का प्रिय, धार्मिक तथा दयालु होता है।

चं०मं०बु०बृ०शु० के योग में उत्पन्न पुरुष सज्जन, निरोग, शरीर से युक्त, विद्या-धन, सत्यसुख से सम्पन्न, भाइयों का कल्याण करने वाला तथा बहुत मित्रों से युक्त होता है।

चं०मं०बु०बृ०श० के योग में उत्पन्न पुरुष रतौंधी रोग से युक्त, दरिद्र, सर्वदा दीन रहता हुआ परान्न का याचक तथा समस्त परिवार को दूषित करने वाला होता है।

जन्म के समय चं०मं०बु०शु०श० एक साथ एक राशि में हों, तो मनुष्य बहुत से शत्रु व मित्रों वाला, परकार्य साधक, विपरीत स्वभाव वाला तथा अति अभिमानी होता है।

चं०बु०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष राजा अथवा राजमन्त्री तथा जनसमुदाय का अधिपति, लोक में सर्वत्र प्रतिष्ठित होता है।

और मं०बु०बृ०शु०श० के योग में पुरुष प्रसन्नचित्त वाला, घमण्ड युक्त, राजा का प्रिय, शोकरहित, निद्रा से सर्वदा व्याकुल तथा दरिद्र होता है।

षड्ग्रह योग विचार—र०चं०मं०बु०बृ०शु० के योग में उत्पन्न पुरुष विद्या धन, धर्म में लीन, कृशित, बहुत बोलने वाला तथा अत्यन्त बुद्धिमान् होता है। एवं र०चं०मं०बु०बृ०श० के योग में उत्पन्न पुरुष दानी, परोपकारी, चञ्चल स्वभाव वाला, अत्यन्त शुद्ध, बल-युक्त तथा एकान्त में विचरने वाला होता है।

र०चं०मं०बु०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष चोर, पराये की स्त्री में लीन, कुष्ठी, स्वजनों से तिरस्कृत, मूर्ख, स्थान भ्रष्ट तथा पुत्ररहित होता है।

सू०चं०मं०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष नीच, दूसरे का कार्य करने वाला, क्षयरोग तथा कास-श्वास से व्याकुल तथा भाइयों में निन्दित होता है।

र०चं०बु०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष राजमन्त्री, सुन्दर, शान्तियुक्त, शोक से ग्रस्त, स्त्री तथा धनरहित होता है।

र०चं०बु०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष पुत्र तथा धन से रहित होकर सर्वदा तीर्थों में भ्रमण करने वाला तथा वन-पर्वतों में वास करने वाला होता है और चं०मं०बु०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष सर्वदा पवित्र, प्रतापी, बहुत स्त्रियों से युक्त, राजा का प्रिय, राजमन्त्री, धनपुत्र, सौभाग्य युक्त होता है।

इस प्रकार पाँच या छः ग्रहों के योग में उत्पन्न पुरुष प्रायः दरिद्र, दुःखी तथा मूर्ख होते हैं। परस्पर ग्रहों की दृष्टि सम्बन्ध में भी इन फलों को कहना चाहिये।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का द्वादश पुष्प रूप 'द्वि-आदि ग्रहयोग' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।१२।।

१३

मिश्रित योग

प्रव्रज्यायोग विचार—जन्म समय में चार या पाँच या छ: आदि ग्रहों के योग से तथा चतुरादि ग्रह के योग बिना भी जो प्रव्रज्यादि योग होता है, सबको यहा अधोलिखित प्रकार जा रहा है।

सू०चं०मं०बृ०शु० या सू०चं०मं०बु० अथवा सू०मं०बु०शु०श० यदि एकराशि में हों तो इन योगों में उत्पन्न पुरुष तपस्वी होता है।

सू०चं०मं०बु०बृ० या सू०चं०बु०श० अथवा सू०चं०मं०श० यदि एक-राशि स्थित हों, तो इन योगों में उत्पन्न पुरुष सन्यासी होता है।

सू०बु०बृ०श० अथवा सू०मं०बु०बृ० के योग में उत्पन्न पुरुष सर्वदा तपस्या में निरत रहता है।

सू०मं०शु०श० या सू०मं०बृ०श० या चं०मं०बृ०श० के योग में उत्पन्न पुरुष तपस्वी होता है। मं०बु०बृ०श० या सू०मं०बु०शु०श० अथवा र०चं० मं०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष व्रत (नियम) से सर्वदा संयुक्त रहता है।

सू०मं०बृ०शु०श० या चं०मं०बु०बृ०श० अथवा चं०मं०बु०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष सर्वदा वन पर्वत में रहने वाला तपस्वी होता है।

सू०चं०बु०शु० या चं०सू०बु०शु०मं० के योग में उत्पन्न पुरुष मनुष्य से पूजित, परन्तु निन्द्य मुनि होता है।

र०चं०मं०बु०बृ०शु० या सू०चं०मं०बु०बृ०श० अथवा सू०चं० मं०बु० शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष व्रती (नियम-पालन करने वाला) होता है।

सू०चं०मं०बृ०शु०श० या सू०चं०बु०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष यशस्वी मुनि होता है।

सू०मं०बु०बृ०शु०श० अथवा चं०मं०बु०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष तपस्वी होता है।

र०चं०बृ०श० या सू०चं०शु०श० अथवा र०बु०मं०बृ० के योग में उत्पन्न पुरुष फल-मूल का भोजन करने वाला तपस्वी होता है।९-१२।

सू०मं०बु०शु०. अथवा चं०मं०बु०बृ० के योग में उत्पन्न पुरुष बल्कल चीरधारी व्रती होता है।

चं०मं०बु०श० अथवा मं०बु०बृ०श० के योग में उत्पन्न पुरुष शान्त तपस्वी होता है।

बलवान् सू०चं०बु०शु० या मं०बु०शु०श० अथवा चं०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष फलाहार करने वाला संन्यासी होता है।

सू०चं०मं०शु० या सू०चं०मं०बु० या सू०बृ०शु०श० या चं०मं०बृ०शु० अथवा चं०मं०बु०शु० के योग में उत्पन्न पुरुष वन, पर्वत में रहने वाला, सभी से पूजित तपस्वी होता है।

चं०मं०बृ०शु०श० या चं०मं०बु०बृ०शु० अथवा सू०चं०मं० बु०बृ० के योग में उत्पन्न पुरुष दु:खी, दीन व सन्यासी होता है।

मं०बु०बृ०शु०श० या चं०मं०सू०बु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष जटाधारी तथा वल्कल धारण करनेवाला तपस्वी होता है।

सू०चं०मं०बु०बृ०शु० अथवा सू०चं०मं०बृ०शु०श० के योग में उत्पन्न पुरुष अवश्य तपस्वी होता है।

प्रव्रज्या योग में विशेष विचार—प्रव्रज्या कारक ग्रह यदि अस्त हो, तो मुक्तिमान् और अत्यन्त शक्त प्रव्रज्या होता है तथा प्रव्रज्या कारकग्रह यदि बलवान् हों तो स्थिर प्रव्रज्या से युक्त होता है; एवं यदि सभी प्रव्रज्या कारकग्रह युद्ध में पराजित हों, तो तत्तत् प्रव्रज्या से च्युत होता है तथा यदि कई ग्रह प्रबल हों, तो सबसे बलवान् ग्रह की प्रव्रज्या होती है।

यदि प्रव्रज्या का स्वामी सूर्यसान्निध्यवश अस्तंगत हो वा अन्य ग्रहों से दृष्ट हो तो याचित दीक्षा (दीक्षा के लिये प्रार्थना में तत्पर ही रह जाता है, प्राप्त नहीं करता है) होती है। ऐसा यवनाचार्यों के कथित वाक्यानुसार होता है।

यदि चन्द्रमा, जिस-किसी राशि में शनि के द्रेष्काण गत होकर मंगल व शनि अथवा सूर्य से दृष्ट हो अथवा मंगल के अंश में स्थित होकर शनि से दृष्ट हो, तो नवांशपति के सदृश्य प्रव्रज्या को करता है।

अथवा जिसका जन्मराशीश केवल शनि से दृष्ट हो, अन्य ग्रहों से नहीं, तो शनि स्वयं ही प्रव्रज्या को करता है; पूर्वोक्त (अस्तादि) का विचार सर्वत्र करना चाहिये।

अथवा जिसका जन्माधिपति बलहीन होकर केन्द्रस्थ तथा बलवान् शनि को देखता हो तो भी भाग्यहीन प्रव्रज्या योग को वह पुरुष प्राप्त करता है।

अथवा जिसके जन्मसमय बृहस्पति अथवा रवि या चन्द्रमा में से कोई एक ग्रह १।१०।१२ भाव में से किसी स्थान में स्थित हों और उच्चस्थ व बलवान् शनि से दृष्ट हो, तो वह पुरुष दुःख को भोगने वाला तपस्वी होता है।

अथवा यदि शुभग्रह के नवांश में स्थित बलवान् चन्द्रमा तथा

स्वोच्च स्थित शेष ग्रहों को बलवान् शनि देखता हो, तो वह पुरुष दीक्षित होकर स्वतन्त्र राजा (महंथ) होता है।

शुक्लपक्ष में पूर्ण बलवान् चन्द्रमा, बलहीन तथा रिक्त (ग्रहरहित) लग्नेश को देखता हो, तो ऐसे योग में उत्पन्न पुरुष धनजन से रहित होकर अन्नादि का कष्ट सहता हुआ दु:खित तथा शोक सन्तप्त तपस्वी होता है।

यदि शुभग्रह के नवांश में स्थित शनि, कुम्भ के नवांश में स्थित चन्द्रमा तथा शेष अन्य ग्रहों को देखता हो, तो वह पुरुष अवश्य दीक्षायुक्त होता है।

जिसका जन्म राशीश, एक राशि में स्थित सभी ग्रहों से देखा जाता हो, वह अवश्य दीक्षायुक्त होता है, ऐसा पुरातनों ने कहा है।

अब जबकि एक राशिगत चार या चार से अधिक ग्रहों के बीच बली ग्रह प्रव्रज्या कारक होता है, अत: सूर्यादि ग्रहों के क्रम से ऐसे मनुष्यों के लक्षण इस प्रकार कहें गये हैं—अग्निसेवक (पंचाग्नि वगैरह लेने वाले), पर्वत, नदी के तीर पर बसने वाले तपस्वी, सूर्य की आराधना में तत्पर तथा गणेश-गौरी के उपासक, वनादि में गायत्री के जप में तत्पर, गङ्गाश्रयी और कुमार ही अवस्था से व्रतपालन करने वाले का सूर्य स्वामी होता है।

वृद्धश्रावक, भस्म-धूलि धारण करने वाले शिवव्रत में लीन, बहिष्कृत पतित होकर तपस्या में लीन, भगवती (दुर्गा इत्यादि) के भक्त, एकान्तवासी सोमव्रत में निरत, कपाल धारण करने वाले तथा औघड़ी मत में स्थित, इनके चन्द्रमा स्वामी होते हैं।

बौद्ध, शिखारहित होकर श्वेताम्बरधारी, रक्तपटधारी तथा नागाओं का स्वामी मंगल है।

पेट-पोषण में रत, इन्द्रजालिक, समय व्यतीत करके केवल स्वरूपधारी गारुड़ विद्या में दीक्षित, मयूर के मांसभक्षण करने वाले, तन्त्र (वाममार्ग) में रत इनके स्वामी बुध है।

एक अथवा तीन दण्ड धारण करने वाले (त्रिदण्डी) कषाय वस्त्रधारी, मुनियों तथा वानप्रस्थ में गत, फल-दुग्ध केवल आधार करने वाले (पयहारी) अथवा गृहस्थ धर्म में स्थित, नियमी तथा ब्रह्मचर्य में स्थित (ब्रह्मचारी) तथा तीर्थादि में स्थित स्नातक (विद्यास्नातक, व्रतस्नातक) के स्वामी बृहस्पति हैं।

शिव की तपस्या-यज्ञ के दीक्षादि में स्थित तथा वैष्णव धर्म में स्थित मुनियों के स्वामी शुक्र हैं।

पाखण्ड व्रत निरत (सर्वलिङ्गी अथवा बौद्धादि क्षपणक सन्यासी) दिगम्बर भिक्षुक वासभाव में स्थित, वृक्ष आदि के नीचे मूल निवास करने वाले दु:तपस्वी का स्वामी शनि है।

प्रव्रज्या में विशेष विचार—पूर्वोक्त कथित मुनि योगों में यदि वक्ष्यमाण राजयोग हो, तो सभी अशुभ फलों का नाश कर साधुशील से युक्त दीक्षित पुरुष स्वतन्त्र राजा होता है।

नाभस योग विचार—यवनाचार्यों ने विस्तारपूर्वक नाभस योग का १८०० भेद स्वकृत ग्रन्थों में बतलाया है, परञ्च संक्षेप से उसे ३२ योगों द्वारा बतलाया जा रहा है।

नौ, छत्र, कूट, कार्मुक, शृङ्गाटक, वज्र, दामनी, पाश, वीणा, कमल, मुसल, वापी, हल, शर, समुद्र, चक्र, माला, सर्प, अर्धचन्द्र, यव, केदार, गदा, विहग, यूप, युगल, शकट, शूल, दण्ड, रज्जु, शक्ति, नल, गोल ये बत्तीस (३२) नाभस योग हैं।

इन्हीं ३२ नाभस योगों में सचराचर जगत् की उत्पत्ति होती है। इनमें से मुसल, नल, रज्जु ये माणिन्धाचार्य कथित योग आश्रय योग संज्ञक हैं।

गोल, युग, शूल, पाश, वीणा, केदार, दामनी ये सात योग संख्यायोग संज्ञक हैं।

तथा महर्षिपराशरोक्त भुजङ्ग (सर्प) और माला ये दो-दो योग अर्धयोग संज्ञक हैं और शेष २० बीस योग आकृति योग हैं।

आश्रयादि योग फल—आश्रय योग में उत्पन्न पुरुष सौख्य, लाभ तथा सुन्दर गुणों से युक्त होता है। यदि ग्रह अन्योन्य मिश्रित हो, तो आश्रय योग विफल होता है।

आकृति योग में उत्पन्न पुरुष अपने भाग्य से, राजा से लब्ध धन वाले, राजप्रिय, प्रसिद्ध प्राय: सौख्ययुक्त होकर आनन्द करते हैं।

संख्यायोग में उत्पन्न पुरुष परभाग्य से सुखी केवल धन-भाग्य ही से युक्त और सर्वदा विकल जीवन वाले होते हैं।

अर्धयोग में उत्पन्न पुरुष कहीं स्वभाग्य से, कहीं यों ही, कहीं राजा द्वारा, कहीं किसी अन्य व्यक्ति ही द्वारा सुख-दु:ख आदि भोगते हैं।

नौकूटच्छत्रकार्मुक योगों लक्षण—यदि लग्न से सात गृह के अन्तर्गत सभी ग्रह स्थित हों तो नौ योग, चतुर्थ से सात गृह के अन्तर्गत हो, तो छत्र

योग, सप्तम से सात गृह के अन्तर्गत हो, तो कूट और दशम से सात गृह के अन्तर्गत सभी ग्रह हों तो कार्मुक (धनु) योग होता है।

यूपशरशक्तिदण्डयोगों के लक्षण—यदि लग्न से चार गृह के अन्तर्गत सभी ग्रह हों, तो यूप, चतुर्थादि चार गृह के अन्तर्गत हों तो शर, सप्तमादि चार गृह के अन्तर्गत हों, तो शक्ति और दशमादि चार गृह के अन्तर्गत सभी ग्रह हों, तो दण्डयोग होता है।

अर्धचन्द्रगदा योगों के लक्षण—केन्द्र को छोड़कर अन्य फणफरादि तथा आपोक्लिमादि सात गृहों में यदि ग्रह स्थिति हों, तो अर्धचन्द्रयोग होता है। यह आठ ८ प्रकार का होता है—द्वितीयादि से अष्टम पर्यन्त एक (१), तृतीयादि से नवम पर्यन्त (२), पञ्चमादि से एकादश पर्यन्त (३), षष्ठादि से द्वादशान्त (४), अष्टमादि-द्वितीय पर्यन्त (५), द्वादशादि-षष्टान्त (८) तथा आसन्न केन्द्रों में सभी ग्रह हों, तो गदा योग होता है। इसके भी चार प्रकार हैं—लग्न-चतुर्थ (१), चतुर्थ-सप्तम (२), सप्तम-दशम (३), दशम-लग्न में (४), सभी ग्रह हों, तो गदा योग होता है।

वज्रयवपद्मवापीयोगों के लक्षण—यदि लग्न व सप्तम में शुभग्रह और चतुर्थ व दशम में पापग्रह हों, तो वज्र योग, लग्न व सप्तम में पापग्रह और चतुर्थ व दशम में शुभग्रह हों, तो यव योग होता है। यदि सभी शुभाशुभ ग्रह केन्द्र स्थानों में हो, तो पद्म (कमल) योग एवं केवल चारों पणफर स्थानों या आपोक्लिम स्थानों में सभी शुभाशुभ ग्रह हों, तो वापी योग होता है।

विशेष—उपरोक्त योगों (वज्र, यव, पद्म, वापी) की सिद्धि सूर्य को भी शुभ ग्रह के रूप में ग्रहण करने से ही सम्भव प्रतीत होता लगता है, पूर्वाचार्य के समय में सूर्य को शुभग्रह के रूप में मान्यता थी। जैमिकी सूत्र में भी प्रायः सूर्य शुभ ही माना गया है। विशेष पाठक स्वयं विचार करें।

शकट-विहग-हल-शृङ्गाटक योगों के लक्षण—यदि लग्न व सप्तम में सभी ग्रह हों, तो शकट योग, चतुर्थ व दशम में सभी ग्रह हों, तो विहग योग, लग्न को छोड़कर सभी ग्रह परस्पर त्रिकोण में हों, तो हल योग होता है। यह तीन प्रकार का होता है—द्वितीय षष्ठ दशम में (१), तृतीय सप्तम एकादश में (२), चतुर्थ अष्टम द्वादश में (३) प्रकार हैं। तथा यदि सभी ग्रह लग्न नवम पञ्चम में हों, तो शृंगाटक योग होता है।

चक्रसमुद्रयोगों के लक्षण—लग्नादि विषम स्थानों (अर्थात् लग्न,

तृतीय, पञ्चम, सप्तम, नवम, एकादश) में यदि सातों ग्रह हों, तो चक्रयोग एवं द्वितीय, चतुर्थ, षष्ठ, अष्टम, दशम सम स्थानों में सातों ग्रह हों, तो समुद्र योग होता है।

ये पूर्वोक्त २० योग आकृतिज योग हैं, अब आगे वृद्ध गर्गमुनि कथित आश्रय योगों को अपनी बुद्धि के अनुसार कहता हूँ।

नलमुसलरज्जुमालासर्प योगों के लक्षण—यदि सभी ग्रह द्विस्वभाव राशि में हों, तो नल, स्थिर राशि में हों, तो मुसल तथा चर राशि में हों, तो रज्जु योग होता है। एवं यदि केन्द्र स्थान में सभी शुभ ग्रह हों, तो माला तथा यदि सभी पापग्रह हों, तो सर्पयोग होता है, ये माला और सर्पयोग दल योग भी कहलाते हैं।

सात गोलादि संख्या योगों के लक्षण—यदि सभी ग्रह एक ही राशि में स्थित हों, तो गोल योग, दो राशि में युग योग, तीन राशि में शूल, चार राशि में केदार, पांच राशि में पाश योग, छः राशि में दामनी तथा यदि सातों ग्रह निरन्तर पृथक्-पृथक् सात राशि में स्थित हों, तो वीणायोग होता है। ये संख्यायोग कहलाते हैं।

नाभस योग फल प्राप्ति काल—पूर्वोक्त सभी नाभस योगों का लक्षण प्राचीन मुनि के कथनानुसार कहा गया है। ये सभी योग सर्वदा विशेषकर योगकारक ग्रह अपनी दशा के समयफलदायक होते हैं, अतः विद्वानों को इसका सावधानीपूर्वक विचार कर फल कथन करना चाहिए। अब आगे इनके फल का विचार किया जाता है।

नौकूटच्छत्रचाप योगों का फल—नौ योगोत्पन्न पुरुष जल सम्बन्धी जीविका व विभव से युक्त, अत्यन्त प्रसिद्ध, कृपण, बलवान् तथा लोभी होता है।

कूट योगोत्पन्न पुरुष असत्य बोलने वाला, धूर्त, बन्धनगृह का पालक, निःकिञ्चन (धनहीन), शठ, क्रूर तथा नित्य पहाड़-किला इत्यादि में वास करने वाला होता है।

छत्र योगोत्पन्न पुरुष स्वजनों का आश्रयदाता, दयावान्, दाता, राजप्रिय, अत्यन्त बुद्धिमान् तथा प्रथम और अन्त्य अवस्था में सुखी तथा भाग्यशाली होता है।

चाप योगोत्पन्न पुरुष असत्य बोलने वाला, गुप्तिपालक (जेलरक्षक), चोर, कपटी, वन में वास करने वाला तथा मध्यावस्था में भाग्यविहीन होता है।

अर्धचन्द्रवज्रयवकमलयोगों के फल—अर्धचन्द्राख्य योगोत्पन्न पुरुष सुन्दर, सेनानायक, दर्शनीय, राजप्रिय, बलवान् तथा मणि-सुवर्ण आभूषण आदि से युक्त होते हैं।

वज्र योगोत्पन्न पुरुष आद्य-अन्त अवस्था में सुखी, शूर, सुन्दर, निरोगी तथा भाग्यहीन और स्वजनों के विरोधी होते हैं।

यवयोगोत्पन्न पुरुष सर्वदा व्रत नियमादि तथा मङ्गल कार्य में तत्पर, मध्यावस्था में सुख धनादियुक्त, दाता और सदा स्थिर धन वाले होते हैं।

कमल योगोत्पन्न पुरुष नित्य विस्तृत यशस्वी, गुणों से युक्त, स्थिर आयु वाले (स्वस्थादीर्घजीवी), अधिक कीर्ति वाला, दर्शनीय, शुभ यशवाले और पृथ्वीश होते हैं।

वापीशकटविहगगदा योगों के फल—वापी योगोत्पन्न पुरुष धन-सम्पत्ति के कोशकरण (संग्रह करने) में अत्यन्त निपुण बुद्धि वाला, स्थिर धन व सुख से युक्त, सुन्दर, रूपवान् तथा नेत्रों को सुखी करने वाले होते हैं।

शकट योगोत्पन्न पुरुष रोगार्त्त, कुस्त्री से युक्त, मूर्ख, शकट वृत्ति से जीने वाले (गाड़ी चला कर जीविका पाने वाले), दरिद्र तथा स्वजनों और मित्रों से रहित होते हैं।

विहग योगोत्पन्न पुरुष सर्वदा भ्रमणशील रहना पसन्द करने वाले, नीच, दूत का काम करने वाला, सुख की वृत्ति से जीने वाला, धृष्ट तथा नित्य कलहप्रिय होता है।

गदायोगोत्पन्न पुरुष सर्वदा मान-धन-सम्पत्ति से युक्त, यज्ञ करने वाला, शास्त्र व योग में कुशल तथा धन सम्पत्ति सुवर्ण और रत्नादि सम्पत्ति से युक्त होता है।

शृङ्गाटकहलचक्रसमुद्रयोगों के फल—शृङ्गाटक योगोत्पन्न पुरुष प्रिय, कलह करने वाला, समर में साहसी, सुखी, राजा का प्रिय, सुन्दर स्त्रियों से युक्त, सम्पन्न और स्त्रियों का द्वेषी होता है।

हल योगोत्पन्न पुरुष बहुत भोजन करने वाला, दरिद्र, कृषक, दुःखी, उद्वेगयुक्त, भाई-बन्धु तथा मित्रों से त्यक्त तथा प्रेष्य (सेवक) होता है।

चक्र योगोत्पन्न पुरुष नम्रीभूत (विनम्र), समस्त राजाओं के मुकुट में

जड़ित रत्न की कान्ति से सुशोभित चरण वाला अर्थात् समस्त राजाओं से वन्दित चरण वाला, सम्राट होता है।

समुद्रयोगोत्पन्न पुरुष बहुत रत्न तथा धन से युक्त, पृथ्वीश, ऐश्वर्य-संपत्ति से युक्त, लोकप्रिय, स्थिर चित्त वाला और बलवान् होता है।

यूपशरशक्तिदण्डयोगों के फल—यूप योगोत्पन्न पुरुष सर्वदा निज आत्मरक्षा में लीन, दानी, धन-सौख्य-सम्पत्ति से युक्त, व्रत-नियम तथा सत्य में निरत और विशिष्ट पुरुष होता है।

शर योगोत्पन्न पुरुष बाण बनाने वाला, चोर, बन्धन भोगी, शिकार के लिये वन में रहने वाला, अति उन्मादी, हिंसक, कुशिल्प में निरत होता है।

शक्तियोग में उत्पन्न पुरुष धनरहित विकल, दुःखी, नीच, आलसी, दीर्घायु वाले, संग्राम-युद्ध में निपुण, स्थिर तथा सुन्दर होता है।

दण्ड योगोत्पन्न पुरुष सर्वदा स्त्री-पुत्र से रहित, दरिद्र, सर्वजनों से बहिष्कृत, स्वजनों से हीन, दुःखी, नीच और सेवक होता है।

मालासर्परज्जुमुसल योगों के फल—माला योगोत्पन्न पुरुष सर्वदा सुखप्रधानता वाला, वाहन-वस्त्र-धन और भोग से सम्पन्न (परिपूर्ण) तथा सुन्दर बहुत-सी स्त्रियों से युक्त होता है।

सर्पयोग जात पुरुष विषम, क्रूर, दरिद्र, नित्य दुःख से पीड़ित, दीन, पराये का भोजन करने वाला तथा मद्यपान में निरत रहता है।

रज्जु योग में उत्पन्न पुरुष भ्रमणशील, सुरुप, परदेश से धन पैदा करने वाला, क्रूर तथा खल स्वभाव का होता है।

मुसल योगोत्पन्न पुरुष सर्वदा मान, धन तथा ज्ञान से युक्त, कार्य में लीन, राजप्रिय, प्रसिद्ध तथा स्थिर चित्त वाला और शूर होता है।

नलगोलयुगशूलयोगों के फल—नल योगोत्पन्न पुरुष अङ्गहीनाधिक (असामान्य शरीर) वाला, धन-सञ्चयभागी, अतिनिपुण, भाई-बन्धुओं के हित साधक तथा सुरूपवान् होता है।

गोल योगोत्पन्न पुरुष दरिद्र, आलस्य से युक्त, विद्या-आज्ञा तथा मान से वर्जित, मलिन, सर्वदा दुःखी तथा दरिद्र होता है।

युग योग में उत्पन्न पुरुष पाखण्डी अथवा धनहीन या लोक में बहिष्कृत, पुत्र-मान और धर्म से रहित होता है।

शूल योगोत्पन्न पुरुष तीक्ष्ण स्वभाव वाला, आलसी, धनरहित, हिंसक, बहिष्कृत, महाशूर तथा सङ्ग्राम में कोलाहल पैदा करने वाला होता है।

केदारपाशदामिनीवीणायोगों के फल विचार—केदार योगोत्पन्न पुरुष बहुत जीवों का उपकारी, कृषक, सत्यवादी, सुखी, चलस्वभाव तथा धन से युक्त होता है।

पाश योगोत्पन्न पुरुष बन्धन भोगने वाला, सर्वदा कार्य में तत्पर, प्रपञ्ची, बहुभाषी, शीलरहित और बहुत भृत्यों से युक्त होता है।

दामिनी योगोत्पन्न पुरुष उपकारी, पश्वादिकों से युक्त, धनी, मूढ़, बहुत पुत्रादि तथा रत्नादि से युक्त, धीर तथा विद्वान् होता है।

वीणा योगोत्पन्न पुरुष मित्रों से युक्त, प्रियभाषी, शास्त्र में तत्पर, गान, वाद्य में लीन, सुख भोगने वाला तथा बहुत भृत्यों से युक्त होता है।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का त्रयोदश पुष्प रूप 'मिश्रित योग' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।१३।।

१४

राशि-भाव-ग्रह फल

पूर्व में बताया गया है कि मित्र, शत्रु आदि ग्रह की राशियों में बैठने से ग्रहों के फल में अन्तर पड़ जाता है। यहाँ पहले विभिन्न राशियों में स्थित ग्रहों का क्या-क्या फल होता है, इसे बता रहे हैं।

यदि कोई ग्रह किन्हीं और कारणों से जैसे अच्छे भाव में हो, अच्छे भावों का स्वामी हो आदि शुभ अवसर दिखाने वाला है तो वह उच्च राशि में अथवा अपनी स्वयं की राशि में भी हो तो अधिक शुभफल देता है। इसमें भी दो प्रकार का फल होगा :

१. यदि ग्रह शुभ है और उच्च राशि या अपनी ही राशि में हो तो वह (क) जिन भावों का स्वामी है उनका और (ख) जिस भाव में बैठा हो या देखता है, उन सबका अच्छा फल दिखाता है। (२) यदि क्रूर ग्रह उच्च या अपनी राशि में हो तो (क) जिन भावों का स्वामी है, उन भावों का शुभ प्रभाव प्रकट करता है; परन्तु (ख) जिस भाव में बैठा हो या जिस भाव को देखता है, उनके फल को कुछ सीमा तक नष्ट करता है।

यदि कोई ग्रह अपनी राशि में बैठा हो तो वह न केवल जिस राशि में बैठा है उस भाव का अपितु दूसरे भाव का भी (जहाँ उस ग्रह की दूसरी राशि है) शुभ फल प्रदान करता है।

उपरोक्त सिद्धान्तों के अपवाद भी है। दूसरे भाव से एकत्रित किया गया धन देखते हैं परन्तु दूसरे भाव का स्वामी (आयु के उत्तरार्द्ध में) मारक होता है। इसी प्रकार सातवें भाव से विवाह का विचार किया जाता है परन्तु वह मारकेश भी होता है। यही बात बारहवें भाव के स्वामी के लिए भी समझनी चाहिए। यदि दूसरे भाव का स्वामी दूसरे भाव में हो तो धन में तो बढ़ोत्तरी करता है; परन्तु मारकेश भी हो सकता है अथवा सातवें भाव का स्वामी सातवें भाव में हो तो विवाह, साझेदारी इत्यादि के लिए अच्छा फल करता है; परन्तु सातवें भाव में बैठने से बलवान मारकेश भी होता है। इसी प्रकार बारहवें भाव का स्वामी यदि बारहवें भाव में हो (और यदि क्रूर हो) तो अत्यधिक व्यय कराने वाला होता है।

इन विशेष अपवादों के अतिरिक्त किसी भी ग्रह का अपनी राशि में बैठना शुभ फलकारक ही होता है।

यदि और कारणों से ग्रह अच्छा फल करने वाला है तो वह अपने

अति मित्र की राशि में भी हो तो कुछ अधिक अच्छा फल करता है। इसी प्रकार अपने मित्र या सम राशि में भी अच्छा ही फल करेगा, परन्तु यदि शत्रु या अति शत्रु की राशि में हुआ तो उनका अच्छा फल काफी सीमा तक नष्ट हो जाएगा।

इसके विपरीत जो ग्रह किन्हीं और कारणों से अशुभ फल देने वाले हैं, वे यदि किसी अति मित्र या मित्र की राशि में हों तो उनका अशुभ फल अधिक मात्रा में नहीं होगा और यदि अति शत्रु या शत्रु की राशि में हों तो अधिक अशुभफलदायक हो जाता है।

अपनी नीच राशि में स्थित ग्रह बहुत कमज़ोर समझा जाता है। वह जिस भाव या भावों का स्वामी हो, उनका बहुत ही अल्प मात्रा में शुभ प्रभाव दिखाएगा। यदि क्रूर ग्रह नीच राशि में हो तो जिस भाव में बैठेगा या जिस भाव को देखता है, उसके फल को बहुत अधिक मात्रा में नष्ट कर देगा, परन्तु यदि शुभ हो (और अपनी नीच राशि में भी हो) तो जहां बैठा है या जिस भाव को देखता है, उसके फल को खराब नहीं करता है, परन्तु इसमें एक अपवाद है कि नीच राशि में (मकर में) स्थित बृहस्पति सातवें भाव में पत्नी की आयु को क्षीण कर देता है।

'यदि कोई ग्रह वक्री हो तो वह इतना अच्छा प्रभाव दिखाएगा, जैसे कि अपनी उच्चराशि में स्थित हो, हालांकि वह चाहे अपनी नीच राशि में हो अथवा शत्रु राशि में। इसी प्रकार जो ग्रह 'वर्गोत्तम' है उसका प्रभाव उतनी ही अच्छी मात्रा में होगा, जैसे वह अपनी राशि में बैठा हो।'

किन्हीं अन्य कारणों से भी नीच राशि स्थित ग्रह का अशुभ फल कम हो जाता है—

(१) यदि नीच राशि स्थित ग्रह उस ग्रह के साथ हो जो अपनी उच्च राशि में है। जैसे मंगल और बृहस्पति कर्क राशि में अथवा मकर राशि में। यहां नीच राशि स्थित ग्रह का खराब फल नहीं होता है, परन्तु इसके साथ ही उच्च राशि स्थित ग्रह का शुभ फल भी कुछ कम हो जाता है।

(२) यदि नीच राशि में बैठे हुए ग्रह को उस राशि का स्वामी पूर्ण रूप से देखता हो तो उसका खराब फल कम हो जाता है।

(३) यदि नीच राशि में कोई ग्रह बैठा हो और उस राशि का स्वामी चन्द्रमा या लग्न से केन्द्र में हो तो नीच राशि स्थित ग्रह का अशुभ फल नहीं होता है। इसी को नीच भङ्ग राजयोग कहते है।

अब यह बतलाते हैं कि ग्रहों का विभिन्न राशियों में क्या प्रभाव होता है। यह हमने 'वराहमिहिर' के 'होराशास्त्र' के अध्याय सोलह से उद्धृत किया है (वराहमिहिराचार्य लगभग दो हजार वर्ष पूर्व हुए हैं)।

जन्म लग्न या चन्द्रमा—भारतीय ज्योतिष में जन्म लग्न और जन्म चन्द्र राशि को बराबर का महत्त्व दिया जाता है। लग्न अथवा चन्द्रमा का विभिन्न राशियों में फल अधोलिखित प्रकार से कहा गया है—

मेष—बड़ी और गोल आंखें (ललाई लिए हुए), जातक मसालेदार भोजन और सब्जियां खाने का शौकीन होता है तथा बेहद जल्दी-जल्दी खाता है, पैदल घूमने का शौकीन और विभिन्न स्थानों की यात्रा करे, अति सन्तोषी, औसत व्यक्ति से ज्यादा कामी, स्त्रियों को पसन्द करने वाला, धन एकत्रित नहीं कर सकता, उसकी पसन्द और नापसन्द बदलती रहती है, घमण्डी और चुस्त, लड़ने में चालाक, गन्दे नाखून वला, पानी से डरने वाला, कभी-कभी अपने भाई-बहनों में सबसे बड़ा होता है।

वृषभ—बड़े चेहरे और जांघों वाला, मस्तानी चाल वाला, चेहरे पर या पीठ पर तिल अथवा और किसी प्रकार का चिह्न हो, दान देने में उदार, पुत्रों की अपेक्षा कन्यायें अधिक हों, कफ प्रकृति, पहले सम्बन्धियों से सम्बन्ध तोड़कर, नये सम्बन्ध बनाए, खूब भोजन करने वाला, क्षमाशील, हमेशा के लिए मित्र बनाने वाला, जीवन का बीच का औरं आखिर हिस्सा पहले हिस्से से अधिक अच्छा बीते।

मिथुन—काले नेत्र, बड़ी नाक, घुंघराले बाल और सुन्दर व्यक्तित्व, चञ्चल प्रकृति वाला और कामी, विद्वान्, दलाली के काम में अथवा संदेशवाहक के रूप में अच्छा कार्य करे, अति बुद्धिमान, मीठा बोलने वाला, जुआ खेलने में चतुर, गाने-बजाने में शौकीन, नाचने में प्रवीण, बहुत भोजन करने वाला, हिजड़ों से दोस्ती हो।

कर्क—अधिक लम्बा नहीं, मोटी गर्दन हो, टेढ़ा और जल्दी चले, जीवन के किसी भाग में अति धनवान हो तथा किसी भाग में बिल्कुल धन न हो—जिस प्रकार चन्द्रमा घटता और बढ़ता है, उसी प्रकार जातक का धन कम हो या बढ़े, मित्रों को पसन्द करने वाला और उनकी भलाई करे, ज्योतिष, बाग, बगीचे और झरने, तालाब इत्यादि का शौकीन, पत्नी तथा स्त्रियों के प्रभाव में रहने वाला, अच्छे मित्रों से युक्त, मकान हो, अच्छी सलाह को सुनने वाला।

सिंह—बडे चेहरे और भारी ठोड़ी वाला, पीले नेत्र वाला, भूख और

प्यास के कारण बीमारी हो, पेट और दांत में तथा मानसिक रोग हो, दान देने में उदार, जिद्दी, घमण्डी और बहादुर, अति क्रोधी और छोटी-छोटी बात पर क्रोध करने वाला, कम पुत्रों वाला, पत्नी तथा स्त्रियों से अच्छे सम्बन्ध न रहे, माता से लाड़-प्यार मिले।

कन्या—सुन्दर नेत्र तथा शर्मीली निगाहों वाला, लम्बे बाजू और ढीले कन्धे वाला, विद्वान्, बुद्धिमान, धार्मिक और कला इत्यादि में निपुण, मीठा बोलने वाला, प्रसन्न, कामी, दूसरे व्यक्तियों से धन और जायदाद का लाभ हो, अपनी मातृभूमि से दूर रहने वाला, सन्तान कम हो और उनमें भी कन्याएं अधिक।

तुला—लम्बा, दुबला और पतला, लम्बी नाक वाला, जल्दी-जल्दी बीमार पड़े, पांव में कमजोरी, बुद्धिमान, सफाईपसन्द, खरीदने-बेचने में होशियार, धनवान, अपने सम्बन्धियों के लिए अच्छा कार्य करे, परन्तु सम्बन्धी उससे नाराज़ रहें और छोड़ दें। ब्राह्मण, देवताओं और संन्यासियों की भक्ति करने वाला, पत्नी तथा स्त्रियों के प्रभाव में रहे, दो नाम हों—एक आध्यात्मिक और दूसरा लौकिक।

वृश्चिक—बड़े-बड़े नेत्र वाला, चौड़ी छाती, गोल जांघें, घुटने और पिण्डलियों वाला, पीलापन लिए हुए गोरा रंग हो, बचपन में बीमार रहे, पिता या धर्मगुरु से जल्दी अलग होने वाला, क्रूर विचार हो और क्रूर कर्म ही करे, राजाओं से सम्मान मिले, चोरी-छिपे पापकर्म करे। चालाक और शक्की मिजाज हो।

धनु—गर्दन और चेहरा बड़ा हो, मोटे-मोटे दांत, नीचे का होंठ बहुत मोटा हो, बड़े कान और बड़ी नाक, मांसल बांहें, झुके हुए कन्धे, खराब नाखून, बोलने में प्रवीण, बुद्धिमान, कला और कारीगरी में निपुण, बलवान और चालाक, हमेशा कार्य में व्यस्त रहे, सम्बन्धियों से शत्रुता रहे, पिता से विरासत में धन मिले, उदार प्रकृति का, ताक़त से वश में न किया जा सके, परन्तु नम्रता के सामने झुक जाए।

मकर—खूबसूरत आंखें, शरीर का निचला हिस्सा ऊपर के हिस्से के मुकाबले में कम उभरा हुआ, पतली कमर, आलसी, परन्तु भाग्यवान, ठंड सहन नहीं कर सके, इधर-उधर घूमने का शौकीन, ताकतवर और शक्तिशाली, दूसरों की सलाह मानने वाला, धार्मिक न हो परन्तु धार्मिकता का दिखावा करे, पत्नी और बच्चे में लिप्त रहे, बेशर्म, कठोर-हृदय और कंजूस, अपने किसी नजदीकी रिश्तेदार से यौन-सम्बन्ध हो।

कुम्भ—विशाल शरीर और उसके ऊपर सख्त रोएं,ऊंट के समान गर्दन, चेहरा, हाथ, पांव, पीठ और कमर अत्यधिक मोटे हों, दूसरीं स्त्रियों के साथ पापकर्म करे, ज्यादा बुद्धि न हो,कठोर परिश्रम करना पड़े, फूलों और सुगन्ध का शौकीन, मित्रों से दृढ़ सम्बन्ध रखें।

मीन—सुगठित शरीर, बड़ा सिर, बड़ी नाक, सुन्दर नेत्र, पत्नी से अच्छे सम्बन्ध हों, अच्छे वस्त्रों का शौकीन, पत्नी तथा स्त्रियों के प्रभाव में रहे, विदेश से व्यापार करने से लाभ हो, तरल पदार्थों द्वारा लाभ हो, शत्रुओं पर विजयी हो, जमीन से निकलने वाली वस्तुओं से लाभ हो, जातक बुद्धिमान और विद्वान होता है।

विशेष—स्त्रियों की जन्म-कुण्डली देखते समय, ऊपर जो बताया गया है, उसमें पाठकों को चाहिए कि अपनी बुद्धि से थोड़ा-बहुत परिवर्तन करें।

राशि-ग्रह स्थिति फल

सूर्य—यदि सूर्य मेष राशि में हो तो जातक यशस्वी, होशियार, घूमने का शौकीन होता है, परन्तु उसके पास धन नहीं होता है। वह अस्त्रों का कार्य करने में अथवा पुलिस और सेना में अधिक सफल होता है।

यदि वृषभ राशि में हो तो जातक कपड़े और सुगन्धित वस्तुओं का व्यापार करता है। गाने-बजाने का शौकीन होता है, परन्तु स्त्रियों से प्रेम नहीं करता है।

यदि सूर्य मिथुन राशि का हो तो जातक ज्योतिष विद्या का शौकीन, धनवान और विद्वान होता है।

यदि सूर्य कर्क राशि का हो तो चञ्चल प्रकृति का होता है। जल्दी-जल्दी कार्य करे, परन्तु धन नहीं जमा कर पाता। दूसरे व्यक्तियों के लिए कार्य करता है तथा उसे मानसिक और शारीरिक दुःख रहता है।

यदि सिंह राशि में सूर्य हो तो जातक जंगलों, पहाड़ों और जहां पशु रखे जाते हैं, उन स्थानों को पसन्द करता है। उसमें बहुत ताकत होती है तथा वह बुद्धिमान और बहादुर होता है।

यदि सूर्य कन्या राशि में हो तो जातक सुन्दर शरीर वाला और स्त्री के समान हो। वह विद्वान, गणित में प्रवीण और कला में निपुण होता है। वह साहित्य, कविता, पढ़ाई और चित्रकारी में विशेष सफल होता है।

यदि सूर्य तुला राशि में हो तो जातक तरल पदार्थों का कार्य करता है। वह यात्रा करने का शौकीन होता है। धन कमाने क लिए नीच कर्म करे।

यदि सूर्य वृश्चिक राशि में हो तो जातक क्रूर, हिम्मती और बहादुर

होता है। वह विद्वान होता है और जिन वस्तुओं में जहर का उपयोग होता है, उन वस्तुओं के (दवाइयां वगैरह) कार्यों से धन कमाए।

यदि सूर्य धनु राशि में हो तो जातक क्रोधी और चुस्त हो । उसे समाज में मान मिले। खेलने का शौकीन। एक जगह टिककर नहीं बैठ सकता है।

यदि सूर्य मकर राशि में हो तो वह अच्छा दुकानदार या कम कीमत की वस्तुओं का व्यापार करे। कंजूस और अच्छे या बुरे तरीके से दूसरे का धन हड़पने की इच्छा करे। वह बुद्धिमान नहीं होता और उसकी मेहनत दूसरों को धन देने वाली होती है। जीवन में आगे बढ़ने की इच्छा होती है।

यदि सूर्य कुम्भ राशि में हो तो जातक नीच बातें सोचने वाला, धनहीन, उसे पुत्रों से प्रसन्नता नहीं मिलती और भाग्य भी नष्ट हो जाता है।

यदि सूर्य मीन राशि में हो तो जातक को पानी से सम्बन्धित वस्तुओं से जैसे जहाजों के कार्यों से, समुद्री पदार्थों से, विदेश से व्यापार करने से उन्नति मिल। उसे स्त्रियों से सम्मान मिले।

मंगल—यदि मंगल मेष या वृश्चिक राशि में हो तो जातक को राजा या सरकार से सम्मान मिले। यात्रा करने का शौकीन। अच्छा व्यापारी और धनवान होता है। वह सेना के किसी विभाग का अथवा किसी दूसरी संस्था का अध्यक्ष होता है। उसके शरीर में चोट या घाव के चिह्न हों । वह शौकीन तबीयत का और शारीरिक सुखों के पीछे भागता है।

यदि मंगल वृषभ या तुला राशि का हो तो जातक परस्त्रीगामी और कम उम्र की स्त्रियो के वश में रहता है। मित्रों से शत्रुता रखता है। ऐसा जातक मन से डरपोक परन्तु जोश से बोलने वाला होता है। वह अत्यधिक चालाक और अपनी इच्छाओं को छुपाकर रखता है। अच्छे वस्त्र पहनने का शौकीन होता है।

यदि मंगल मिथुन या कन्या में हो तो जातक निडर और हिम्मती होता है। उसके पुत्र हों, धन हो, परन्तु मित्र नहीं होते। जो व्यक्ति उसके लिए अच्छा कार्य करते हैं, वह जीवनभर उनका ऋणी रहता है। वह संगीत व लड़ाई कला में निपुण होता है। वह दूसरों से मदद की आशा रखता है परन्तु कंजूस होता है।

यदि मंगल कर्क राशि में हो तो जातक धनवान होता है। वह जहाज, नौका इत्यादि के कार्यों से धन का उपार्जन करे, वह विद्वान होता

है, परन्तु उसके पैरों में कमजोरी अथवा कोई बीमारी हो। जातक बुरे चरित्र का होता है।

यदि मंगल सिंह राशि में हो तो जातक निडर और जंगलों में घूमने वाला होता है। वह अधिक मेहनत करने वाला होता है, परन्तु पत्नी और पुत्रों से उसे प्रसन्नता नहीं मिलती, धनवान होता है।

यदि मंगल धनु या मीन राशि में हो तो जातक ऊंचा स्थान प्राप्त करता है। उसमें काफी हिम्मत होती है और वह यशस्वी होता है। उसके पुत्र कम और शत्रु अधिक होते हैं।

यदि मंगल मकर राशि में हो तो जातक बहुत-से पुत्रों और धन से युक्त होता है। वह राजा के बराबर स्थान प्राप्त करे।

यदि मंगल कुम्भ में हो तो जातक धनवान, यात्रा करने का शौकीन, क्रूर और झूठ बोलने वाला होता है। वह मानसिक दुःख से पीड़ित रहता है।

बुध यदि मेष या वृश्चिक राशि में हो, तो नास्तिक, अधर्म या बुरे आचरण से धन कमाए, परन्तु फिर भी धनवान न हो। वह खाने, शराब पीने और जुए में रुचि ले। वह नीच स्त्री से सम्बन्ध रखे (चाहे वह उसकी स्वयं की पत्नी हो अथवा पर-स्त्री) । वह दिखावटी होता है।

यदि बुध वृषभ या तुला राशि में हो, तो अपने से बड़े व्यक्तियों—गुरु, माता-पिता की सेवा करे। उदार हो, धन एकत्रित करने में लगा रहे। पत्नी तथा स्त्रियों से सुख मिले। बहुत-से पुत्र हों। अच्छा वक्ता और लोगों के समक्ष बोलने में प्रवीण।

बुध मिथुन राशि में हो, तो आत्म-प्रशंसा करे। विद्वान और कला में प्रवीण। अच्छा और मीठा बोलने वाला तथा सुखमय जीवन व्यतीत करे।

यदि बुध कर्क राशि में हो, तो जातक पानी से उत्पन्न होने वाली वस्तुओं के व्यापार से धन कमावे। जहाज, नौका इत्यादि पानी में काम आने वाली वस्तुओं से लाभ हो। विदेशों से व्यापार लाभ देने वाला होता है। अपने लोगों के प्रति अच्छा व्यवहार न करे।

यदि बुध सिंह राशि में हो, तो यात्रा करने का शौकीन। जीवन में प्रसन्नता नहीं मिले। धन और पुत्रों से सुख न मिले। विद्वान न हो। अपने लोगों से निरादर पाए। स्त्रियों से सम्बन्ध बनाने की इच्छा रखे, परन्तु उनसे निरादर मिले और उनके द्वारा पसन्द न किया जाए।

कन्या राशि में बुध विशेष रूप से बलवान होता है। जातक बहुत-से गुणों से युक्त क्षमाशील होता है। निडर होता है। उदार प्रकृति का और प्रसन्नचित्त रहकर अच्छा जीवन बिताता है, बातचीत करने में बोलने में वकीलों के समान प्रवीण।

यदि बुध धनु राशि में हो, तो राजाओं द्वारा पसन्द किया जाए (अपने अफसरों द्वारा विशेष रूप से पसन्द किया जाये) । विद्वान हो और उसकी सलाह को ठीक और विद्धतापूर्ण समझा जाता है।

यदि बुध मीन राशि में हो, तो मित्र बनाने में कुशल (दूसरों को जीत लेता है) अपने मालिक की सेवा (अपने साथियों मुकाबले में) अधिक करता है। कारीगरी के काम में कुशल (ऐसी कारीगरी में जिसमें विशेष प्रतिभा की आवश्यकता न हो)।

यदि बुध मकर या कुम्भ राशि में हो, तो दूसरों का कार्य करने के लिए यात्रा करे। नीचा पद मिले। अपने कर्तव्य का पालन करे। शारीरिक परिश्रम करना पड़े। धन से हीन हो। कर्जे में डूबा रहे। वह कारीगरी में निपुण होता है।

बृहस्पति—यदि बृहस्पति मेष या वृश्चिक राशि में हो तो जातक सेनापति या उसके समान उच्च पद पाता है। वह धन, स्त्री, पुत्रों के सम्बन्ध में भाग्यशाली होता है। वह दयावान, दानी, बहादुर और बहुत-से अच्छे गुणों से युक्त होता है। उसे अच्छे सेवक मिलें।

यदि बृहस्पति वृषभ या तुला राशि में हो तो जातक स्वस्थ और अच्छे शरीर वाला होता है। बहु मित्रों और धन से युक्त हो। वह दूसरे व्यक्तियों द्वारा पसन्द किया जाए और सुखपूर्वक रहता है। वह उदार प्रकृति का होता है।

यदि बृहस्पति मिथुन या कन्या राशि में हो तो ऐसे जातक के पास अत्यधिक साज-सज्जा का सामान होता है। वह मित्रों और पुत्रों से सुख पाता है। वह सलाहकार के रूप में कार्य करे।

यदि बृहस्पति कर्क राशि में हो तो धन, पुत्रों, स्त्रियों (प्राचीन भारत में जब 'होराशास्त्र' की रचना हुई उस समय भी धनवान और ऊँची जाति के लोग बहुत-से विवाह करते थे), हीरे-जवाहरात इत्यादि से सम्पन्न होता है। वह बुद्धिमान, ज्ञानी और सुख से रहे।

यदि बृहस्पति सिंह राशि में हो तो जातक सेना में उच्च पद पाता है। इसके अतिरिक्त जो फल कर्क के बृहस्पति के लिए बताए गए हैं, वे भी होते हैं।

यदि बृहस्पति धनु या मीन राशि में बैठे तो जातक अपनी जाति का सरदार अथवा राजा का मन्त्री, सेनापति हो अथवा उसके बराबर उच्च पद प्राप्त करे।

यदि बृहस्पति मकर राशि में हो तो जातक के पास अधिक धन नहीं होता है। वह नीच कर्म करे।

यदि बृहस्पति कुम्भ राशि में हो तो उसके फल कर्क राशि में जो फल बताया गया है, वैसा ही होता है।

शुक्र—यदि शुक्र मेष या वृश्चिक राशि में हो तो जातक व्यभिचारी होता है। पर-स्त्रियों के आकर्षण के कारण उसका धन नष्ट हो जाए (उन पर व्यय करने के कारण अथवा उनके कार्यों में, जिसकी वजह से स्वयं को हानि हो)। परिवार का नाम खराब करता है।

यदि शुक्र वृषभ या तुला राशि में हो तो जातक निडर होता है। वह अपनी क्षमता और साहस के कारण धन का उपार्जन करता है और राजाओं से सम्मान पाता है। वह नाम और यश प्राप्त करता है तथा अपने लोगों का मुखिया होता है।

यदि शुक्र मिथुन में हो तो सरकारी नौकरी करे। ऐसा जातक कला और कारीगरी में निपुण होता है। धनवान हो। परन्तु शुक्र यदि कन्या राशि में हो तो जातक नीच कर्म करे, जीवन में उसे बहुत-सी कठिनता का सामना करना पड़े और उसके पास धन नहीं होता है।

यदि शुक्र कर्क राशि में हो तो जातक की दो पत्नियां हों (या एक पत्नी हो और दूसरी प्रेमिका)। बहुत कुछ भीरु स्वभाव का हो। दूसरे की सहायता लेने में तत्पर रहे। उसका परिश्रम निष्फल रहता है। मानसिक उदासिनता हो।

यदि शुक्र सिंह राशि में स्थित हो तो जातक उच्च परिवार में विवाह करता है, उसे पत्नी तथा स्त्रियों द्वारा लाभ होता है, परन्तु पुत्र कम होते हैं।

यदि शुक्र धनु राशि में हो तो जातक धनवान हो और अपनी जाति के लोगों में आदर पाता है। समाज और लोगों के द्वारा सम्मानित हो। यदि शुक्र मीन राशि में हो तो जातक देखने में सुन्दर, विद्वान् और धनवान होता है। उसे राज्य से सम्मान मिले।

जब शुक्र मकर या कुम्भ राशि में स्थित हो तो जातक आकर्षक स्वरूप वाला और स्त्रियों के वश में रहने वाला होता है। वह निर्गुण (नीच श्रेणी) स्त्री के वश में रहे।

शनि—यदि शनि मेष राशि में हो तो जातक बुद्धिमान नहीं होता है। वह निरर्थक घूमता रहता है। अच्छे मित्रों से हीन होता है। धोखा देने वाला और दिखावटी स्वभाव का होता है।

यदि शनि वृश्चिक राशि में हो तो जातक को शारीरिक चोट लगे। मेहनत के कार्य करने पड़े। अत्यधिक चुस्त तो हो, परन्तु क्रूरता से युक्त।

यदि शनि मिथुन या कन्या राशि में हो तो जातक धन और प्रसन्नता से हीन तथा उसे पुत्रों से भी सुख नहीं मिलता है।

वह बड़े-बड़े व्यक्तियों अथवा राज्य की नौकरी करे। व्यक्तियों या जायदाद का रखवाला हो, लिखने में बार-बार गलती हो। उसे बिलकुल भी शर्म नहीं होती है।

यदि शनि वृषभ राशि में हो तो जातक का वर्जित स्त्रियों से (बहुत पास की सम्बन्धी या खराब चरित्र वाली) यौन सम्बन्ध होता है। उसके पास धन तो नहीं होता, परन्तु बहुत-सी स्त्रियों से विवाह या प्रेम-सम्बन्ध होता है।

यदि शनि कर्क-राशि में हो तो जातक की माता की आयु कम होती है। उसके दांत अलग-अलग होते हैं।

यदि शनि सिंह राशि में हो तो जातक की प्रकृति नीच होती है और उसे जीवन में सुख नहीं मिलता है। उसे पुत्रों से भी सुख नहीं मिलता और नित्य श्रम करना पड़ता है।

यदि शनि धनु या मीन राशि में स्थित हो तो उसको जीवन के तीसरे भाग में ही सुख और समृद्धि मिलती है। वह ऊंचे व्यक्तियों का विश्वास प्राप्त करता है। उसके अच्छी पत्नी और पुत्र होते हैं। वह लोगों का अध्यक्ष अथवा ऊंचा स्थान प्राप्त करे। वह धनवान होता है।

यदि शनि मकर या कुम्भ राशि में हो तो जातक दूसरों की स्त्रियों और धन का उपभोग करता है। हमेशा समृद्धशाली होता है। वह बहुत धन का उपार्जन करे और आराम के लिए व्यय भी करे। उसके नेत्र कमज़ोर हों और वह गन्दा रहे।

राहु और केतु—राहु मेष, वृषभ, मिथुन, कर्क, कन्या या मकर राशि में बैठ कर शुभ फल देता हैं। इसलिए केतु हमेशा ही राहु के सामने रहने के कारण तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, मीन और कर्क राशि में अच्छा फल देता है। (राहु-केतु का फल उस ग्रह पर निर्भर क़रता है, जिसके साथ राहु-केतु बैठे हों अथवा जिस ग्रह की राशि में हों—जिस प्रकार पानी जिस

पात्र में डाला जाता है, उसी पात्र का स्वरूप और गुण ले लेता है, उसी प्रकार ये दोनों छाया ग्रह भी अपना प्रभाव ग्रहों के अनुरूप बदलते रहते हैं।

यूरेनस—यूरेनस को ही हर्शल कहते हैं क्योंकि हर्शल नाम के व्यक्ति ने ही सर्वप्रथम इसकी खोज की थी। वर्तमान ज्योतिषि इसे कुम्भ राशि का स्वामी मानते हैं। भारतीय ज्योतिष और पश्चिमि ज्योतिष विद्या समझने वाले कुम्भ राशि का स्वामी शनि को भी मानते हैं। जिस व्यक्ति की राशि में यूरेनस की प्रधानता हो वह विचित्र (अजीबो-गरीब) स्वभाव वाले, कभी किसी से नहीं दबने वाला, अनवेषण और नये-नये कार्यों में दक्ष, दकियानूसी या रूढ़ीवादी सिद्धान्तों से विद्रोह करने वाला होता है। यह ग्रह अकस्मात ही कार्यों को पूर्ण करने वाला, अकस्मात ही मित्रता व शत्रुता पैदा करता है। जिस भी ग्रह से अच्छा सम्बन्ध करे तो उसे बढ़ाता है। अच्छे सम्बन्ध न होने से ग्रहों को खराब फल देने वाला बनाता है।

हर्शल (यूरेनस) मेष राशि में घमण्डी, स्वतन्त्र, कठिनाई का सामना करने वाला, परिवर्तनशील, जिद्दी और शारीरिक शक्ति से युक्त होता है।

वृषभ राशि में ईर्ष्यालु, स्वार्थी, कार्यों में निपुण और चिड़चिड़े स्वभाव वाला होता है।

मिथुन राशि में नये-नये कार्यों को आरम्भ करे, विज्ञान में रुचि हो, भीरु, विलक्षण प्रतिभा वाला।

कर्क राशि में अति संवेदनशील, मानसिक कमजोरी हो, इच्छाशक्ति कम हो, क्रोधी और अन्तःप्रेरणा से युक्त होता है।

सिंह राशि में दूसरे को आकर्षित करे, बहुत मीन-मेख निकालने वाला, अव्यावहारिक, अपनी प्रभुता जमाने वाला, क्षणिक क्रोधी, बिना वजह दूसरों का विरोध करे, अकस्मात् धनलाभ हो।

कन्या राशि में जातक विचारवान, धन का सदुपयोग करने वाला, नौकरी में सफलता मिले, अन्तःप्रेरणा से सम्पन्न नये कार्य करे, अच्छा भोजन करने में रुचि रखे।

तुला राशि में अच्छे स्वरूप वाला, पारिवारिक सुख से हीन, अधिक प्रेम सम्बन्ध हों, घूमने का शौकीन, सुख की वस्तुओं में धन का व्यय हो।

वृश्चिक राशि में अत्यधिक व्यय करे और कर्जे में डूबा रहे। चालाक, धोखा देने वाला, बदले की भावना से पूर्ण, क्रूर स्वभाव और बहुत से चमत्कारिक गुणों वाला होता है।

धनु राशि में स्नायुमण्डल कमजोर हो,बहुत सोचने वाला, घमण्डी, क्रूर, अपनी बात काटा जाना पसन्द न करे।

मकर राशि में विचारवान और अपनी जिम्मेदारी समझने वाला, लड़ने वाला, किसी के नीचे कार्य करने में असमर्थ, झगड़ालू।

कुम्भ राशि में अच्छे स्वभाव वाला, दूसरों की भलाई में लगा रहे, मानसिक और शारीरिक कार्यों में रुचि रखे।

मीन राशि में अन्त:प्रेरणा से युक्त, कला में निपुण, बदलते स्वभाव वाला अर्थात् किसी भी कार्य को स्थिर रूप से न कर सके। अकस्मात जेल जाना पड़े।

नेप्च्यून—मेष—शक्तिशाली, चुस्त, सुधार कार्यों में लगा रहे, किसी के महत्त्व को स्वीकार न करे।

वृषभ—मिलनसार, दूसरों के द्वारा पसन्द किया जाए, सुन्दर बोलने वाला, गाने-बजाने का शौकीन, कामी।

मिथुन—अति श्रेष्ठ, बुद्धिवाला, चालाक, किसी भी कार्य को शीघ्र सीखने वाला।

कर्क—अत्यधिक अन्त:प्रेरणा से युक्त, विभिन्न प्रकार के डरों से परेशान,. पानी से डरने वाला, अपने-आप से ही दुखी रहे, मानसिक रोगों से युक्त।

सिंह—दयावान परन्तु डरपोक, अकस्मात् कार्य करे, अच्छी वस्तुओं को पसन्द करे, स्वार्थी।

कन्या—भविष्य जानने वाला, दूसरों की बुराई करे, गलती निकाले, लोगों द्वारा पसन्द नहीं किया जाए, जिस बीमारी के बारे में पढ़े अपने-आपको उसी से पीड़ित समझता है, बुद्धि में विकार रहे।

तुला—देखने में सुन्दर, सुशील और कला में निपुण पत्नी हो, आध्यात्मिक कार्यों में रुचि रखे।

वृश्चिक—चालाक, शक्तिशाली, बुरे स्वभाव वाला, धनवान, सुन्दर नेत्र हों।

धनु—मन्दिर, अस्पताल इत्यादि का निर्माण करवाए। उच्च विचारों को रखे। किसी प्रकार के डर से युक्त हो। सच्चाई और स्वतन्त्रता का प्रेमी।

मकर—अति सोचने-विचारने वाला, चित्रकारी में निपुण,ठण्डे स्वभाव

वाला, धनवान, धैर्यवान परन्तु किसी भी प्रकार से विश्वास प्राप्त करने के योग्य नहीं, अपने स्वार्थ के लिए अपनी बातों से भी फिर जाए।

कुम्भ—स्वतन्त्र, लोगों द्वारा पसन्द किया जाए, मित्रों से हानि हो, स्वयं दूसरों के हितों के लिए कार्य करे, उसकी सज्जनता का दूसरे व्यक्तियों द्वारा अनुचित लाभ उठाया जाता है।

मीन—शान्त, दार्शनिक, अस्पताल और जेल इत्यादि के कार्यों में निपुण, उदासीन प्रकृति का होता है।

यहाँ सूर्य, चन्द्र आदि सब ग्रहों का विभिन्न राशियों में क्या फल होता है, यह ऊपर बताया है। प्लूटो का फल अभी तक पूर्ण रूप से निश्चित नहीं किया जा सका है, इसी कारण हमने उसे यहां नहीं बताया है। पाठकों से निवेदन है कि विभिन्न प्रकार के फलों को ध्यान में रखकर ही तारतम्य से फलादेश करें। अब भावों में स्थित ग्रहों का फल प्रदर्शित करते हैं—

भावस्थ ग्रह फल—प्रत्येक ग्रह का विभिन्न भावों में फल कहते हैं; परन्तु उसके पहले पाठकों से निवेदन है कि वे राशि और भाव में क्या भेद है, इसे भली-भांति समझ लें। जैसा पहले बताया जा चुका है, एक महीने तक सूर्य एक राशि में (०° से ३०° तक) रहता है। वह एक दिन में करीब १° चलता है, परन्तु सूर्य एक भाव से दूसरे में करीब २ घण्टे में चला जाता है, क्योंकि पृथ्वी अपनी धुरी पर २४ घण्टे में एक परिक्रमा पूरी कर लेती है।

पहले ही लग्न का तथा ग्रहों की राशियों में स्थिति के आधार पर व्यक्तियों का स्वभाव और स्वरूप बतलाया है। यहाँ पर किस ग्रह का किस भाव में क्या फल होता है, यह बताते हैं। यह फल उस समय कुछ दूसरे प्रकार का होगा जब कि कोई अन्य ग्रह साथ में बैठा हो या उसे देखता हो। इस बात को अच्छी तरह बताते हैं।

मान लीजिए, जन्म-कुण्डली में चन्द्रमा कन्या राशि में बैठा हुआ है। यदि इस चन्द्रमा के साथ बृहस्पति हो या बृहस्पति उसे देखता हो तो चन्द्रमा का प्रभाव बहुत अच्छा हो जाएगा, क्योंकि बृहस्पति अत्यधिक शुभ है। दूसरी तरफ यदि बृहस्पति के बदले शनि देखता हो या उसके साथ बैठा हो तो चन्द्रमा का प्रभाव दूषित हो जाएगा। इसका कारण यह है कि शनि क्रूर ग्रह है और जिस प्रकार सफेद रंग में काला रंग डालने से उसकी सफेदी नहीं रहती, उसी प्रकार एक ग्रह के साथ दूसरे ग्रह का सम्बन्ध रहने पर उसका प्रभाव कुछ सीमा तक बदल जाता है।

जन्म-लग्न या जन्म-राशि (चन्द्रमा जिस राशि में हो) का फलादेश

करते समय लग्नेश या चन्द्र राशि के स्वामी का भी विचार करना चाहिए। मान लीजिए, धनु लग्न में किसी का जन्म हुआ। बृहस्पति धनु का स्वामी है। इसलिए बृहस्पति यदि अच्छी और बलवान राशि में हो जैसे मीन राशि में (जो कि इसकी स्वयं की है) या शुभ ग्रहों के साथ हो या दृष्ट हो तो ऐसी अवस्था में धनु लग्न या धनु राशि के लिए जो फल कहे गये हैं, उनका अच्छा प्रभाव अधिक मात्रा में होगा। परन्तु दूसरी तरफ यदि बृहस्पति नीच राशि का हो (मकर में) अथवा क्रूर ग्रहों के साथ हो या दृष्ट हो तो जो अच्छा प्रभाव बताया गया है, वह उस सीमा तक नहीं होगा।

ज्योतिष में फलादेश का विशेष महत्त्व है, क्योंकि इसमें विभिन्न प्रकार के तथ्यों और प्रभावों का विश्लेषण करके ही निष्कर्ष निकालना पड़ता है। व्यावहारिक अनुभव उत्पन्न करने से ही इसमें सफलता मिलेगी। अब उदाहरण के लिए देखिए कि यदि जन्म के समय एक ग्रह किसी वजह से अच्छा प्रभाव दिखलाने वाला है और दूसरी वजह से अशुभ प्रभाव दिखलाने वाला है तो दोनों ही प्रकार का प्रभाव एक-दूसरे को रोक देगा। यदि अच्छा प्रभाव अधिक है तो यह अल्प मात्रा में होगा और यदि अशुभ प्रभाव अधिक है तो यह भी कुछ कम होगा। यह सिद्धान्त उसी समय लागु समझा जाएगा, जबकि एक ही ग्रह के दोनों प्रकार के फल हों। परन्तु यहां भी यह परिणाम जीवन के दो भागों के हैं तो दोनों ही भागों को प्रभावित करता है, जैसे वृषभ लग्न वाले जातक के लिए मंगल और शनि कन्या में पांचवें भाव में बैठे हों। यहां इन दोनों का एकसाथ बैठना धन, मान-सम्मान के लिए अच्छा है (मंगल सातवें भाव का स्वामी है और शनि नवें और दसवें भाव का स्वामी है और इन दोनों का सम्बन्ध यहां राजयोग कारक है; परन्तु पांचवें भाव में बैठने से यह पेट में खराबी करे, सन्तान को नष्ट करे। यह इनके क्रूर ग्रह होने के कारण से होगा।

जो ज्योतिष के सिद्धान्त से पूर्ण रूप से परिचित नहीं है। उन्हें यह बात सुनने में विचित्र लगे कि एक ही ग्रह किस प्रकार से दो तरह का प्रभाव दिखलाता है। एक अच्छा और एक बुरा या तो अच्छा ही प्रभाव दिखाए या खराब ही दिखाए; परन्तु ज्योतिष में ऐसा नहीं होता है। कोई ग्रह स्वभाव से क्रूर हो परन्तु अच्छे भावों का स्वामी हो या नैसर्गिक शुभ या किसी खराब भाव में या किसी नीच, शत्रु राशि में बैठा हो तो उसका मिश्रित फल ही होगा, जैसे करेले को कितना ही साफ किया जाए उसमें कड़वाहट का कुछ अंश रह ही जाता है अथवा चन्दन अपनी सुगन्ध कभी नहीं खोता। हां,

उसकी तीव्रता जरूर कम हो जाती है। किसी भी ग्रह का फलादेश करते समय हमको इन सब बातों का ध्यान रखना चाहिए—

(१) किस भाव या भावों का स्वामी है, (२) किस राशि में बैठा है, (३)किस भाव में बैठा है, (४) किन ग्रहों के साथ बैठा है या देखा जाता है, (५) किन ग्रहों से सम्बन्धित है, (६) नैसर्गिक शुभ है या क्रूर।

अब यह देखने के लिए कि जब दो ग्रह अलग-अलग प्रकार के प्रभाव दिखलाते हैं—जैसे बृहस्पति धन को और शनि गरीबी तो ये दोनों प्रकार के प्रभाव क्या एक-दूसरे को कम कर देंगे या मिटा देंगे? जी नहीं, ऐसा नहीं होता। जब बृहस्पति का प्रभाव रहेगा तो धन आएगा और जब शनि का प्रभाव होगा तो धन कम हो जाएगा और गरीबी रहेगी।

जातक के ऊपर किस ग्रह का प्रभाव जीवन के किस भाग में होगा, इसे आगे बताएंगे। ग्रहों के फलादेश के लिए ऊपर की भूमिका के बाद हम प्रत्येक भाव में ग्रहों का फल बतलाते हैं।

पहला भाव

सूर्य—जातक हिम्मत वाला, क्रूर, अपने विचारों पर दृढ़ रहने वाला, परन्तु नेत्रों में कष्ट हो। यदि मेष राशि का सूर्य हो तो अत्यधिक धनवान और यश वाला होता है। यदि सिंह का सूर्य हो तो बुढ़ापे में रतौंधी हो। यदि कर्क में हो तो नेत्र में धब्बा हो। यदि तुला में हो तो धन नष्ट हो जाता है और बुढ़ापे में नेत्रों की ज्योति भी नष्ट हो जाती है। जातक पारिजात में लिखा है कि यदि सूर्य पहले भाव में हो तो पुत्र कम होते हैं। जातक कठोर हृदय होता है, परन्तु आराम की जिन्दगी जीता है। वह कम खाता है और उसे नेत्रों की पीड़ा रहती है। अपनी प्रशंसा स्वयं करता है, परन्तु तौर-तरीके में अच्छा होता है। यदि सूर्य मीन राशि का हो तो जातक में काफी शक्ति होती है और उसकी स्त्रियों से मित्रता रहती है। नेत्रों में पीड़ा होती है। 'फलदीपिका' में लिखा है कि पहले भाव में सूर्य काफी हिम्मत देता है।

चन्द्रमा—यदि कृष्णपक्ष की चतुर्दशी या अमावस्या का चन्द्रमा पहले भाव में हो तो जातक बहरा, बुद्धु हो या उसके पांव में खराबी हो। यदि ऐसा चन्द्रमा किसी क्रूर ग्रह के साथ बैठा हो तो जातक अधिक जीवित नहीं रहता और दूसरों के नीचे काम करता है, परन्तु यदि पूर्णिमा का चन्द्रमा हो तो जातक दीर्घायु और बुद्धिमान होता है। मेष, वृष या कर्क का चन्द्रमा धन, नाम और यश तथा सुन्दरता देता है।

मंगल—जातक हिम्मत वाला, क्रूर, चुस्त और यात्रा करने का शौकीन होता है। उसका स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता है। सिर में चोट लगने का भय रहे, परन्तु बुढ़ापे में भी जवान दिखता है। यदि मंगल मेष, सिंह, वृश्चिक, धनु या मकर में ही हो तो बहुत अच्छा फल देता है।

बुध—जातक विद्वान्, धनवान, धार्मिक और अच्छे कार्य करने वाला होता है। बुद्धिमान और चुस्त होता है। मिथुन या कन्या का बुध विशेष रूप से अच्छा फल दिखाता है।

बृहस्पति—जातक विद्वान और बुद्धिमान होता है। वह दीर्घायु और समृद्धिवान होता है। उसका स्वरूप मन को प्रसन्न करने वाला होता है। यदि कर्क, धनु या मीन राशि का बृहस्पति हो तो बहुत अच्छा फल करता है।

शुक्र—जातक स्वरूपवान होता है। वह स्त्रियों में अनुरुक्त और गाने-बजाने का शौकीन होता है। उसका जीवन सुखमय होता है। जातक स्त्री, पुत्र से युक्त और धनवान होता है। वृषभ, तुला या मीन राशि का शुक्र अच्छा प्रभाव दिखाता है।

शनि—गरीब, रूक्ष, कठोर हृदय और चालाक, कामी, नीच कर्म करने वाला, बचपन में बीमार रहे, साफ-साफ न बोल पाए, नाक बहती रहे, जवानी में भी बूढ़ा दिखे, परंन्तु यदि तुला, धनु या मीन का शनि हो तो उसमें ऊपर की बताई गई बातें नहीं होंगी, परन्तु अच्छे गुणों से युक्त होता है और जीवन में बहुत उठता है। ऐसा जातक बुद्धिमान, दृढ़, नये कार्य करने वाला और राजा के समान होता है। मकर या कुम्भ का शनि भी अच्छा प्रभाव दिखाता है और जातक जीवन में तरक्की करता है।

राहु—जातक क्रूर, नास्तिक, बीमार, दया-माया से रहित होता है और ऊपरी भाग में बीमारी होती है। परन्तु राहु यदि मेष, वृषभ या कर्क का हो तो दीर्घायु करता है।

केतु—जातक बुरे कार्य करने वाला, कृतघ्न, पीठ पीछे बुराई करने वाला होता है। उसे जीवन में प्रसन्नता नहीं मिलती।

नोट—यदि शुभ ग्रह पहले भाव में बैठे हों या उसे देखते हों तो राहु और केतु का अशुभ प्रभाव नहीं होता, अपितु अच्छा प्रभाव होता है। जातक पारिजात में लिखा है कि पहले भाव में सिंह राशि का राहु धन और अच्छी वस्तुयें देता है। मकर या मीन का केतु पहले भाव में पुत्र और अत्यधिक धन देता है।

दूसरा भाव—

सूर्य—अत्यधिक खर्च करने वाला, हीरे, जवाहरात और स्वर्ण से युक्त, बोलने में प्रभावशाली, अत्यधिक धन हो, परन्तु उसमें से कुछ हिस्सा सरकार लेले (कर द्वारा), मुंह या नेत्र में बीमारी हो, यदि सूर्य सिंह राशि के अलावा किसी दूसरी राशियों में हो।

चन्द्रमा—अति कामी, मीठी वाणी वाला, सुन्दर शरीर, दूसरों से जल्दी सीखने वाला, विद्या पढ़ने का शौकीन, समृद्धि वाला होता है। उसका परिवार भी बड़ा होता है।

मंगल—अधिक धन हो, परन्तु खर्चा भी अधिक हो। नेत्र, दांत और मुख में बीमारी हो, यात्रा करने का शौकीन, दूकान करे, खेतीबाड़ी या धातुओं का कार्य करें। ऐसा व्यक्ति क्रोधी और कठोर वचन बोलने वाला, अच्छा भोजन नहीं करता ।

बुध—अपनी व्यापार-कुशलता और बुद्धिमानी से धन का उपार्जन करता है। अच्छे स्वभाव और तौर-तरीके वाला पुरुष होता है और धनवान होता है।

बृहस्पति—मीठी वाणी बोलने वाला, बोलने में प्रभावशाली और विद्वान, मिलनसार, अच्छा और भरपूर भोजन करने वाला, अत्यधिक धनवान और अत्यधिक ही खर्च करने वाला होता है।

शुक्र—विद्वान, कामकला में निपुण, जीवन का आनन्द लेने वाला, बहुत धनवान और अपनी बातचीत से दूसरों को मोहने वाला।

शनि—झूठ बोलने वाला, दूसरों को धोखा देने में तत्पर, चुस्त और यात्रा करने का शौकीन, परन्तु यदि शनि अपनी राशि या उच्च या शुभ ग्रहों से दृष्ट न हो तो जातक धन जमा नहीं कर पाएगा। उसके मुंह और नेत्रों में बीमारी हो और राज्य को आर्थिक हरजाना देना पड़े।

राहु—झगड़ालू, झूठ बोलने वाला, ऐसे जातक का धन चोरी या अविवेकपूर्ण कार्यों में (धन लगाने से) नष्ट हो जाता है।

केतु—गन्दे वचन बोलने वाला, बेकार में दूसरों की बातों को काटता है और अपने कठोर वचनों से शत्रु पैदा करता है, उसका धन चोरों द्वारा चुरा लिया जाता है या नौकरों के द्वारा नष्ट हो।

तीसरा भाव—

सूर्य—बुद्धिमान और बहादुर, उसके नौकर और नीचे कार्य करने वाले शैतान होते हैं। जातक धनवान और दार्शनिक विचारों का होता है।

चन्द्रमा—विचारवान और अच्छे कार्य करने वाला, परन्तु स्वभाव में कुछ क्रूरता हो, अपने सम्बन्धियों में प्रिय हो, परन्तु अधिक धनवान न हो।

मंगल—बुद्धिमान और बहादुर, बलवान और यश प्राप्त करने वाला, अस्त्र धारण करे, सीधा स्वभाव और अच्छे विचार वाला।

बुध—बाहर से नम्र (स्वभाव से या धन की कमी के कारण), परन्तु अन्दर से घुटा हुआ, ऐसा जातक दिखावट करके दूसरों को धोखा देने में तत्पर रहता है, परन्तु यदि मिथुन या कन्या का बुध हो तो चरित्र में ये बुराइयां नहीं होती हैं।

बृहस्पति—कंजूस परन्तु फिर भी उसका धन नाश हो जाए, पत्नी या स्त्रियों के प्रभाव में रहे, अच्छे आचरण वाला नहीं होता है। लेखन कार्य करें।

शुक्र—उसकी वाणी में क्रोध रहे, अपनी पत्नी के प्रभाव में रहे, पापी रहे, धन खर्च करने में कंजूस। तीसरे भाव में शुक्र सूर्य के आगे रहे तो खराब प्रभाव नहीं देता है (सूर्य जिस भाव में हो, उसके आगे के भाव में शुक्र हो)। इस स्थिति में शुक्र बहुत अच्छा प्रभाव दिखाता है। तुला राशि का शुक्र संगीत-प्रेमी बनाता है।

शनि—कम खाना खाता है, धनवान होता है, अच्छे तौर-तरीके वाला और अच्छे परिवार का होता है, बुद्धिमान और बहादुर होता है।

राहु—धनवान और उच्चाभिलाषी होता है।

केतु—धनवान और अच्छे गुणों से युक्त होता है।

चौथा भाव—

सूर्य—क्रूर, धनहीन, बुद्धिमान, मानसिक रूप से दुखी, कम प्रसन्नता मिले परन्तु यदि सूर्य सिंह या वृश्चिक राशि का हो तो अच्छा फल दिखलाता है।

चन्द्रमा—बुद्धिमान, मिलनसार, सुख और आराम की जिन्दगी बिताने वाला परन्तु बुढ़ापे में स्थान-परिवर्तन हो, विरासत में धन मिले परन्तु मुकदमेबाजी के बाद। हृदय-रोग से पीड़ित, परस्त्रीगामी।

मंगल—प्रसन्नता से हीन और निराशावादी, अपनी पत्नी या स्त्रियों के प्रभाव में रहे, उसके सम्बन्धी उसे धोखा दें, बहादुर, सवारी से गिरकर चोट लगे, मकान, जायदाद इत्यादि परेशानी के कारण हों, जमीन और मकान के मुकद्दमें जीतता है, परन्तु यदि मेष, वृश्चिक या मकर का मंगल हो तो खराब प्रभाव नहीं दिखाता है।

बुध—विद्वत्ता-प्राप्ति में तत्पर रहे, अधिक धनवान हो, परन्तु उसे सम्बन्धियों से प्रसन्नता न मिले।

बृहस्पति—बोलने में प्रवीण, शारीरिक रूप से बलवान, अच्छे स्वरूप वाला, धन और यश वाला होता है, अच्छी और खुशहाल जिन्दगी बिताने वाला, परन्तु उसके विचार और रुझान बुरी बातों में होते हैं।

शुक्र—बुद्धिमान, विद्वान, बोलने में प्रवीण, सुन्दर चेहरे वाला, अच्छा और सुखमय जीवन व्यतीत करे, स्त्रियों के वश में रहे।

शनि—प्रसन्नता से हीन, अत्यधिक दुखी, बुरे विचार वाला; झूठ बोलकर धोखा देने वाला, माता के लिए कष्टकर, बचपन में बीमार रहे।

राहु—पूर्ण प्रसन्न न रहे, अल्पायु, इस भाव में यदि राहु पांचवें या नवें भाव के स्वामी के साथ न हो तो दुःख देने वाला होता है।

केतु—माता से सुख न मिले, मकान, सवारी, जायदाद और पशु नष्ट हो जाएं। यदि केतु के साथ चौथे, पांचवें या नवें भाव का स्वामी हो तो अच्छा प्रभाव दिखाता है।

पांचवा भाव—

सूर्य—सन्तान की आयु को कम करे, धनहीन, विदेश में रहने की इच्छा वाला, ढिलमिल स्वभाव का, राज्य से सम्मान मिले। पुत्र सुख नष्ट करता है।

चन्द्रमा—धनवान, दयावान और धार्मिक कार्यों में खर्च करने वाला, वेदपाठी, धैर्य वाला, पुत्र वाला।

मंगल—यदि मंगल अपने भाव में न हो तो किसी सन्तान को बीमारी या क्षीण आयु। यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो मंगल का दुष्प्रभाव कम हो जाता है, वरना पेट में गड़बड़ रहती है। क्रूर, धनवान, यात्रा करने का शौकीन, हिम्मत वाला और चुस्त, ज्यादा धार्मिक न हो।

बुध—नाम, यश और विद्या से युक्त,अच्छी पत्नी और सन्तान से युक्त, धनवान और बलवान, शत्रुओं का नाश करने वाला, पूजा-पाठ और धार्मिक कृत्यों द्वारा अपने कार्यों को पूर्ण करे (मन्त्र-तन्त्र) उच्च स्थान प्राप्त करे, जैसे मन्त्री पद (यदि सूर्य के साथ बुध पांचवें भाव में हो तो अवश्य ही ऊंचा स्थान प्राप्त करता है)।

बृहस्पति—बुद्धिमान, अच्छे कार्य करने वाला, बहुत-से गुणों से युक्त, समृद्धिशाली, परन्तु पुत्र कम हों।

शुक्र—देखने में सुन्दर, अच्छे पुत्र, मित्र और धनवाला, सवारी और नौकरों से युक्त, आराम की जिन्दगी बिताने वाला।

शनि—घमण्डी, दीर्घायु, अत्यधिक चुस्त परन्तु प्रसन्नता से हीन, शत्रु पर विजयी हो, धार्मिक और अच्छा कार्य करे, धन और सन्तान के लिए अच्छा न हो परन्तु यदि मकर और कुम्भ का शनि हो तो अच्छा होगा।

राहु—डरपोक, धनहीन, दूसरे का ध्यान रखने वाला।

केतु—पेट के रोग से निरन्तर परेशान, पानी से डरने वाला, पापी और देखने में बदसूरत, सन्तान गर्भ में ही नष्ट हो जाए। ब्राह्मण के शाप से दुखी हो।

छठा भाव—

सूर्य—जातक घमण्डी, धनवान, नाम और यश वाला होता है, राजा से सम्मान मिले, बलवान हो और दुश्मनों पर विजय प्राप्त करे।

चन्द्रमा—कफ-प्रकृति और मोटा, अधिक न खा सकने वाला, काम-कला में कमजोर, आलसी, क्रोधवाला, शत्रुओं से युक्त। यदि अमावस्या के बाद का जन्म हो तो अल्पायु, यदि पूर्णिमा का जन्म हो तो दीर्घायु होता है और जीवन में सुख पाता है।

मंगल—जातक बलवान और कार्यकुशल,शत्रुओं पर विजय प्राप्त करे, पाचनशक्ति अच्छी हो, बहुत-से व्यक्ति उसके नीचे कार्य करें, परन्तु स्वयं भी किसी के नीचे कार्य करने में अधिक सफल रहे, नाम और यश प्राप्त करे।

बुध—शत्रु न हों, बहुत बोलने वाला, पढ़ने-लिखने का शौकीन, स्वभाव में विनम्रता न हो, झगड़ालू, किसी भी सम्बन्धी की याद नहीं करता है।

बृहस्पति—कामी, अधिक बलवान न हो परन्तु फिर भी अपने शत्रुओं पर विजयी हो, परन्तु यदि सिंह या वृश्चिक लग्न हो तो सन्तान के लिए कष्टकर (विशेष रूप से पुत्र के लिए)।

शुक्र—दुश्मनों को दबा देता है, दुखी, नाम में धब्बा लगे, वैवाहिक सुख न मिले, विशेष रूप से उस समय जब कि मेष या वृश्चिक लग्न हो,पर-स्त्रियों से सम्बन्ध रहे।

शनि—हमेशा ही दुश्मनों से पीड़ित रहे; परन्तु अन्त में उन पर विजय प्राप्त करे, पाचनशक्ति अच्छी रहे, अधिक भोजन करने वाला, धनवान और कामी, गन्दे स्वभाव वाला।

राहु—परिवार का नाम रोशन करे, दीर्घायु, अच्छा जीवन बिताने वाला, शत्रु पर विजय प्राप्त करने वाला।

केतु—अच्छा नाम प्राप्त करे, सम्बन्धियों का मददगार, विद्वान, बहुत से अच्छे गुणों से युक्त।

सातवां भाव—

सूर्य—बेइज्जत किया जाए, स्त्रियों से पीड़ा मिले, बुरी प्रकृति और क्रोध से युक्त, स्त्रियों से दुश्मनी रखने वाला। यदि सूर्य अपनी राशि में न हो तो स्त्रियों की जन्म-कुण्डली में पति से मतभेद रहता है।

चन्द्रमा—अति कामी और ईर्ष्यालु, पत्नी तथा स्त्रियों के वश में रहे, दयावान, यात्रा करने का शौकीन, जीवन में सुख मिले।

मंगल—पत्नी तथा स्त्रियों से मतभेद या उनके द्वारा कष्ट मिले। यदि कुछ और कारण भी हो (जैसे शुक्र-पीड़ित हो) तो विवाह में सम्बन्ध-विच्छेद हो जाए, लड़ने का शौकीन, विरोधियों के विरुद्ध अस्त्र धारण करे, दवाई के कार्यों में लाभ।

बुध—धार्मिक ज्ञान से भरपूर और शुद्ध आचरण वाला, कला में निपुण, हंसमुख और चालाक, पांव में किसी प्रकार की कमजोरी या बीमारी रहे, नपुंसक।

बृहस्पति—धर्म, विद्या इत्यादि में पिता से बढ़कर हो, परन्तु पितृभक्त न हो, न ही गुरु की सेवा करे, धैर्यवान, अच्छी पत्नी मिले।

शुक्र—आकर्षक और सुन्दर, अति कामी और काम-कला में निपुण, झगड़ालू, वेश्याओं द्वारा पसन्द किया जाए, पांव में कमजोरी हो।

शनि—बहुत-सी स्त्रियों से सम्बन्ध हो, परन्तु स्त्रियों के कारण या उनके द्वारा बेइज़्ज़त हो, शारीरिक श्रम करना पड़े, बहुत-से लोगों के साथ मिलकर मेहनत का कार्य करे।

राहु—घमण्डी, बीमार रहे, अनुचित सम्बन्ध करे, यात्रा में कष्ट।

केतु—बेवकूफ, आलसी और हमेशा सोने वाला, यात्रा का शौकीन, गन्दी भाषा वाला, पत्नी बीमार रहे। यह क्रूर प्रभाव है और वैवाहिक जीवन को नष्ट कर देता है।

आठवां भाव—

सूर्य—पुत्र कम हों, आंखों की रोशनी खराब हो जाए, लड़ने और बातचीत करने में निपुण, अच्छे स्वरूप वाला, हमेशा कमी महसूस करता रहे।

चन्द्रमा—बुद्धिमान परन्तु बीमार रहे, लड़ने का शौकीन, दान करने वाला, खुशमिजाज, मानसिक कार्यों में व्यस्त, सूर्योदय से सूर्यास्त तक दिन और सूर्यास्त से सूर्योदय तक रात्रि समझना और कृष्णपक्ष में दिन में जन्म हो और रात के समय शुक्ल पक्ष में जन्म हो तो दीर्घायु रहे वरना अल्पायु।

मंगल—कम पुत्रवाला, नेत्रों में कष्ट,खर्चीला, कर्ज में डूबा रहे, जननेन्द्रियों में बीमारी, पुराने वस्त्र पहने, बहुत-से व्यक्तियों पर शासन करे। 'जातक पारिजात' में लिखा है कि ऐसा व्यक्ति धनवान हो परन्तु हमारे अनुभव में चाहे अपना कितना भी धन हो लेकिन वह कर्ज लेता है। कटु वचन बोलने वाला।

बुध—अपने अच्छे गुणों के कारण यश और मान-सम्मान प्राप्त करे, नेता, धनवान और नम्र स्वभाव का, बहुत बालने वाला।

बृहस्पति—अपने परिवार के मुकाबले नीच कार्य करे, बुद्धिमान, दीर्घायु, अच्छी याददाश्त वाला।

शुक्र—शारीरिक रूप से बलवान, सांसारिक वस्तुओं से भरपूर, धनवान, आराम की जिन्दगी जीने वाला, परन्तु अपने कार्यों की वजह से बदनाम। यदि शुक्र वृषभ या तुला का न हो तो पेशाब सम्बन्धी रोग हों।

शनि—यदि कन्या या तुला लग्न हो तो पुत्र हों वरना सन्तान कम होती है,नेत्रों की बीमारी हो, धनवान और कमजोर, परन्तु दीर्घायु हो। जल्दी क्रोध करे, परन्तु दूसरों का ध्यान रखने वाला श्वास-सम्बन्धी रोग हो।

राहु—देखने में बीमार-सा, जीवन में बहुत-सी परेशानियां आए, बदनाम हो।

केतु—दूसरों की पत्नी और धन का उपयोग करे, बीमार-सा, अति लोभी, बुरे आचरण वाला, परन्तु यदि आठवां भाव शुभ ग्रह से दृष्ट हो तो ऐसा जातक धनवान और दीर्घायु होता है।

नवां भाव—

सूर्य—पिता और गुरु से शत्रु भाव रखे, धर्म-परिवर्तन करे, धनवान, बहुत-से पुत्र हों, सुखपूर्ण और अच्छा जीवन बिताए।

चन्द्रमा—पिता और देवता का भक्त,पुत्र, मित्र और सम्बन्धियों से युक्त,धनवान और भाग्यवान, दूसरों का ध्यान रखने वाला, ज्योतिषशास्त्र में रुचि रखे, समुद्र के किनारे रहने का शौकीन, विदेश से धन मिले।

मंगल—पापी, पिता से अनबन या वियोग, नाम और यश प्राप्त

करे, धर्म-परिवर्तन करे, धार्मिक विचारों के कारण कठिनाइयां। गिरे हुओं का मददगार।

बुध—पुत्र और धन से युक्त, प्रसन्न और खुशहाल जीवन जीने वाला, धार्मिक और अच्छे आचरण वाला, विद्वान हो, अच्छे कार्यों के कारण सराहा जाए।

बृहस्पति—धार्मिक और बुद्धिमान, देवता और गुरु की सेवा करने वाला, राजाओं के बराबर पद प्राप्त हो, सोलहवें वर्ष में विदेश यात्रा करे।

शुक्र—धन और बुद्धि से युक्त, अच्छी पत्नी और पुत्रों से युक्त, धनवान, धार्मिक, सांसारिक समृद्धि हो, भक्ति और गाने-बजाने में रुचि हो।

शनि—धनवान, पुत्रों से युक्त, आराम की जिन्दगी जीने वाला, दार्शनिक, अपने कार्य में कुशल और उसमें विख्यात, वैवाहिक सुख कम हो। यहां शनि का विशेष प्रभाव रहता है। यदि शनि बलवान हो तो वह व्यक्ति संन्यासी हो जाता है।

राहु—विख्यात और धनवान, धार्मिक कार्यों में रुचि न रखे, अपना स्वयं का धर्म बनाए, दूसरों की बात काटने वाला, पिता से शत्रुता हो। पत्नी अच्छे कुल से हो।

केतु—अच्छा बोलने वाला, घमण्डी और बहादुर, क्रोध करे, दूसरों की बुराई में तत्पर, पिता से अनबन रहे, धार्मिक स्वभाव न हो।

विशेष—हमारा अपना अनुभव है कि कोई भी ग्रह नवें स्थान में धर्म में रुचि अवश्य देता है, परन्तु भिन्न-भिन्न रूप में। जैसे शुक्र देवताओं में भक्ति और श्रीकृष्ण की आराधना, मंगल धर्म-परिवर्तन कराए अथवा हनुमानजी में प्रीति, बुध विष्णु की उपासना, बृहस्पति ब्रह्मा की अथवा जातक भगवान का सशरीर देखने का इच्छुक, शनि संन्यास में रुचि रखने वाला, सूर्य और चन्द्रमा अग्नि और शिव के उपासक तथा राहु और केतु तन्त्र-मन्त्र में विश्वास रखने वाले होते हैं। अधिक ज्ञान के लिए 'सारावली' का दसवां अध्याय देखिए।

दसवां भाव—

सूर्य—अच्छे चाल-चलन और अच्छे कार्य करने वाला, विद्वान, बहादुर और बलवान, पिता की ओर से विरासत में धन मिले, उच्च स्थिति प्राप्त हो, प्रसन्न और खुशहाल जीवन हो।

चन्द्रमा—धार्मिक और उच्च स्वभाव का, धनवान और बुद्धिमान,

अपने कार्यों में सफल हो, कला में रुचि रखे, जीवन में सुख और समृद्धि मिले।

मंगल—बहुत धनवान और आराम का जीवन जीने वाला, फौज या पुलिस के कार्यों में सफलता प्राप्त करे, फैक्टरी में कार्य करे, बहुत बहादुर और दुश्मनों के हृदय में भय पैदा करने वाला, अपने कार्यों के कारण विख्यात हो। यदि मेष, वृश्चिक या मकर का मंगल न हो तो पिता के लिए खराब फलकारक होता है। मंगल यहां विशेष रूप से बलवान होता है।

बुध—बहादुर, खुशमिज़ाज, धनवान, विख्यात, विद्वान और राजनीति में निपुण, प्राध्यापक का कार्य करे, बोलने में प्रवीण।

बृहस्पति—अपने कार्यों में सफल हो, धार्मिक और अच्छे आचरण वाला, धनवान और आदर-सम्मान प्राप्त करे, विद्वान।

शुक्र—खेती या स्त्रियों से धन मिले, जातक को जीवन में ऊंचा स्थान मिले और सुख प्राप्त करे।

शनि—धनवान, समृद्धिशाली, बहुत बहादुर और घमण्डी, कठोर अनुशासक, जीवन में ऐसी ऊंची पदवी मिले जहाँ से दूसरों को दण्डित कर सके, परिवार का नाम रोशन करे। शनि यदि दशम में उच्च का हो तो धार्मिक कारणों से यश मिले।

राहु—राजनीति में रुचि रखे, जीवन में तेज तथा बिल्कुल भी मिलनसार न हो, अन्याय से धन प्राप्त करे, हमेशा लड़ने-भिड़ने के लिए तैयार रहे।

केतु—यात्रा में रुचि रखे, बलवान, लोगों द्वारा पसन्द किया जाए, दूसरों का मुकाबला करने वाला, कला में निपुण, आध्यात्मिक ज्ञान में रुचि हो।

ग्याहरवां भाव—

सूर्य—बहुत धनवान्, पत्नी, पुत्रों, नौकरों से युक्त, अच्छा जीवन बिताए, राज्य से लाभ मिले अथवा बड़े-बड़े व्यक्तियों से सम्पर्क हो।

चन्द्रमा—समृद्धि हो जनसाधारण से धन प्राप्त करे, स्त्रियों से और सफेद वस्तुओं से लाभ हो, मानसिक अस्थिरता रहे और बिना वजह के चिन्ता हो, बहुत विख्यात हो।

मंगल—हिम्मती, धनवान, बातचीत में निपुण, अतिकामी, सन्तान को कष्ट हो।

बुध—अपनी व्यापार-कुशलता के कारण धन और यश प्राप्त करे, बहुत धनवान।

बृहस्पति—बहुत धन कमाने वाला, बड़े-बड़े लोगों से मित्रता और उनसे लाभ,बुद्धिमान, विद्वान और विख्यात।

(यदि दिन का जन्म हो और सूर्य ग्यारहवें भाव में हो या रात्रि का जन्म हो और चन्द्रमा ग्यारहवें भाव में हो तो यह लम्बी आयु के लिए अच्छा कारण होता है।)

शुक्र—सिनेमा, संगीत, कला की वस्तुएं, सफेद वस्तुयें, चांदी, जवाहरात, हाथी दांत, खुशबूदार और उच्च स्तर की वस्तुओं से प्रेम, स्त्रियों के द्वारा धन प्राप्त करे, यात्रा में रुचि हो, परस्त्रीगामी, आराम की जिन्दगी जीने वाला।

शनि—सब प्रकार के सुख भोगने वाला, राज्य, जन साधारण, तेल, लोहे, पेट्रोल, खेती, खानों इत्यादि से लाभ हो, बहुत धनवान।

राहु—अपने कार्य में कुशल, विद्वान और धनवान, सब प्रकार से धन का उपार्जन करे (रिश्वत इत्यादि से भी), बहरा हो (या सुनने में कठिनाई हो)।

केतु—दूसरे लोगों से आदर मिले और पसन्द किया जाए,अच्छे कार्य करे, दूसरों पर शासन करे, विख्यात, सन्तोषी, ज्यादा सुख न हो।

बारहवाँ भाव—

सूर्य—अच्छे आचरण से गिरे, किसी भी कार्य को लगातार करता रहे जब तक कार्य पूर्ण न हो जाए, नेत्रों में कष्ट, अधिक खर्चा हो, बड़े व्यक्तियों से अनबन हो, जीवन के उत्तरार्द्ध में सफलता अधिक मिले, पांव में खराबी हो, यात्रा करने का शौकीन, पुत्र से युक्त, जेल जाए।

चन्द्रमा—विदेश में काफी समय तक रहे, संकुचित मन का, शरीर में कष्ट।

मंगल—जातक के कार्य नीच प्रकार के हों, नेत्रों और आंखों में कष्ट, न्यायालय द्वारा दण्डित किया जाए, कर्जे में डूबा रहे, बेकार में दूसरों की बातें काटे, स्त्री-पुत्र से सुख न मिले।

बुध—सम्बन्धियों से शत्रुता, अधिक बुद्धि न हो, सीधा आचरण न हो।

बृहस्पति—यात्रा में रुचि, अति धार्मिक न हो (यदि कर्क, धनु और मीन का बृहस्पति हो तो धार्मिक होता है), दूसरो पर दया नहीं दिखाए, अच्छे कार्यों में धन व्यय करे, शत्रुओं को भी मित्र बना ले।

शुक्र—सम्बन्धियों से सुख न मिले, बुरे स्वभाव वाला, व्यभिचारी और अपने ऊपर व्यय करने वाला, जीवन में सुख भोगे।

(सारावली के चिद्धर्षिणी टीका के ३४वें अध्याय के ७०वें श्लोक) में लिखा है कि यदि बुध, बृहस्पति और शुक्र बारहवें भाव में हों तथा मंगल से न देखे जाएं तो ऐसा जातक धन का संग्रह करता है। यह इस सिद्धान्त पर आधारित है कि बारहवें भाव में शुभ ग्रह अच्छा फल करते हैं।

शनि—धन से हीन, उद्वेग रहे, नेत्रों में कष्ट, दांत कम उम्र में ही गिर जाएं, ज्यादा बुद्धिमान न हो, अच्छे आचरण से गिर जाए, झूठ बोलने वाला, नास्तिक, दिखावट के लिए धर्म में रुचि और यदि बृहस्पति से सम्बन्ध करे तो मुक्ति हो।

राहु—धनवान, अच्छे कार्य करे, परन्तु स्वभाव झगड़ालू हो, पांव में कष्ट हो।

केतु—विरासत में मिला हुआ और पूर्वजों का जमा किया हुआ धन नष्ट कर दे, यात्रा में रुचि परन्तु आचरण अच्छा न रहे, धर्म में रुचि और यदि बृहस्पति से सम्बन्ध करे तो मुक्ति हो।

विशेष—क्रूर ग्रह विशेष रूप से मंगल, शनि और राहु बारहवें भाव में अच्छा फल नहीं दिखाते हैं। जीवन के किसी भाग में जेल जाना पड़े अथवा रोग के कारण अस्पताल में रहे। यदि शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो खराब फल कुछ सीमा तक कम हो जाता है। यहां यह भी ध्यान रखना चाहिए कि ग्रह किस राशि में बैठा है। यदि अपनी राशि में, मित्र की राशि में या अति मित्र की राशि में तो उसका प्रभाव अच्छा ही होगा, अर्थात् खराब प्रभाव भी अल्प मात्रा में है। यदि शत्रु राशि में हो तो अत्यधिक खराब फल करे।

जिन पाठकों को अधिक अनुभव नहीं है वे इस बात का ध्यान रखें कि किसी प्रकार का अनुचित सम्बन्ध, व्यभिचार, रिश्वत इत्यादि का फलादेश न करे क्योंकि यदि किसी भी प्रकार शुभ ग्रहों से खराब फल देने वाले ग्रह का सम्बन्ध होगा तो वह अच्छा ही फल देगा। पाश्चात्य देशों में कई विवाह (एक के बाद एक), अनुचित सम्बन्ध इत्यादि का प्रचलन है, परन्तु भारत में मध्यम परिवार के लोगों में बहुधा ये बातें नहीं होती हैं। इसीलिए ज्योतिषशास्त्र का नियम है कि देश, काल और पात्र का विचार करके ही फलादेश करें। उदाहरण के लिए भारत में पहले (और अभी भी कुछ परिवारों में) बाल-विवाह का प्रचलन था। बचपन में विवाह का योग आने पर विवाह हो सकता था, परन्तु अब समय के अनुसार इसमें परिवर्तन पड़ गया है, इसलिए विवाह का विचार उसी आयु में किया जाए जो परिवार

(देश) में प्रचलित है। हमारा निवेदन है कि ग्रहों का फल देश, काल और पात्र के आधार पर ही कहा जाए।

अब नीचे हम यूरेनस और नेप्च्यून का विभिन्न भावों में क्या फल होता है, यह बतलाते हैं—

यूरेनस—

पहला भाव—स्वतन्त्र विचारों वाला अनवेषक, अकस्मात फैसला करे, बिजली के यन्त्रों, कम्प्यूटर इत्यादि में रूझान हो, अजीबो-गरीब प्रकृति वाला। स्नायुमण्डल की बीमारी हो अथवा भूत-प्रेत बाधायें। बिजली से या ट्रेन से खतरा।

दूसरा भाव—अकस्मात धन-लाभ और खर्च, विदेशें से लाभ, सरकारी संस्थाओं से, रेलवे से, यात्रा से धन लाभ हो।

तीसरा भाव—तन्त्र शास्त्र का ज्ञाता, लेखन कार्य में सफलता, सम्बन्धियों से मतभेद।

चौथा भाव—पहाड़ों में रहने का इच्छुक, माता का पूर्ण सुख न मिले। बार-बार और अक्सर स्थान परिवर्तन हो, घर से दूर रहे।

पाचवां भाव—हमेशा प्रेम में लिप्त रहें। मदिरा सेवन की इच्छा रखें, पढ़ाई में बाधायें आये, बच्चे थोड़े हों अथवा समस्याओं से घिरे रहें।

छठा भाव—बिजली के यन्त्रों से झटका लगे, अपने साथ व नीचे कार्य करने वाले के कारण समस्यायें आयें। मानसिक द्वन्द्व के कारण बीमारी हो।

सातवां भाव—वैवाहिक जीवन में विचित्रता, पत्नी पति के अतिरिक्त किसी दूसरे व्यक्ति के प्रति आकर्षण, कष्ट मिले, व्यापार में समस्यायें हों, अकस्मात विवाह और सम्बन्ध विच्छेद हों। पत्नी को मानसिक रोग हो।

आठवां भाव—अकस्मात लाभ अथवा हानि, ट्रेन दुर्घटनायें, विरासत तें धन न मिले, यात्राओं में कठिनाई, जेल जाना पड़े।

नवां भाव—धर्म विरोधी अथवा नास्तिक, जिद्दी प्रकृति वाला, दूर देशों की लम्बी-लम्बी यात्रायें हों, नये स्थानों की खोज करे, विवाह के द्वारा सम्बन्धियों से विरोध रहे।

दसवां भाव—कार्य में और कार्यक्षेत्रों में निरन्तर परिवर्तन। ज्योतिष तन्त्रशास्त्र में विशेष रुचि, पिता से दूर रहने पर भाग्योदय हो, अपने ऊपर कार्य करने वालों से मतभेद हो।

ग्यारहवां भाव—विलक्षण स्वभाव वाले मित्र हों, उन पर निर्भर रहने पर अथवा उनकी सलाह लेने पर हानि हो।

बारहवां भाव—अकस्मात हानि और दुर्घटनायें हो, छुपे दुश्मनों से परेशनी पैदा की जाये। जेल जाना पड़े। विदेश में रहना पड़े, बुढ़ापे में कष्ट, पहला विवाह टूट जाये या एक से अधिक प्रेम सम्बन्ध हो।

नेपच्यून—

पहला भाव—अत्यधिक दवाओं के सेवन का दुष्प्रभाव, कला में प्रवीणता, स्वभाव में बेचैनी, अन्तर्द्वन्द्व, धोखा देने में और धोखा खाने से अपयश, स्वभाव में अस्थिरता।

दूसरा भाव—झूठे मुकद्दमों में फँसाया जाय। धन की चोरी या चालाक व्यक्तियों द्वारा हानि, परिवार में दाग, समुद्र पार के देशों से, जहाज के कार्य अथवा अस्पताल, जेल इत्यादि के कार्यो से लाभ हो, डाक्टरों से, कलाकारों से धन का लाभ हो।

तीसरा भाव—मायावी व झूठी दुनिया में खोया रहे, सम्बन्धियों से हानि, छोटी-छोटी यात्राओं से लाभ, निरर्थक अथवा सारहीन लेखन और रचनाओं में समय नष्ट करे। कविता करे।

चौथा भाव—परिवार के व्यक्तियों से लाभ और अच्छे सम्बन्ध हों, आध्यात्मिक कारणों से धर्म में रुचि, सुन्दर स्थान रहने को मिले, बेनामी सम्पत्ति खरीदने पर सम्पत्ति की हानि, अनेक बार स्थान परिवर्तन हो।

पाचवां भाव—सट्टे के कारोबार से अत्याधिक हानि, व्यापार में, पढ़ाई में रुकावट, पिता को न समझ में आने वाली बीमारी, बिना विवाह सन्तान हो अथवा किसी और की सन्तान का पालन करना पड़े।

छठा भाव—अकेले रहने की इच्छा, नौकरों के कारण जीवन को खतरा, लोगों की सेवा करने की तीव्र इच्छायें, परन्तु खराब स्वास्थ के कारण यह भावनायें काफी सीमित रहे।

सातवां भाव—बिना विवाह के ही साथ रहना अच्छा लगे। बार-बार वैवहिक जीवन में परिवर्तन, अपयश मिले, दो या अधिक सम्बन्ध एक ही समय में हों।

आठवां भाव—पानी से खतरा, अपयश, अकस्मात या यात्रा के दौरान शारीरिक कष्ट, पैसे की बातों लेकर मतभेद।

नवां भाव—आध्यात्मिक, धार्मिक और परोपकार की भावनायें

अधिक हों, घटनाओं का पूर्वाभास, समुद्र या नदी के किनारे पर घर हो, यात्रायें अधिक हों, परन्तु उनसे हानि हो।

दसवां भाव—ऊँचा स्थान पाने की क्षमता, नेतृत्त्व और पूर्वजों से धन व जायदाद प्राप्त हो, घर में विरोधाभास, अपनी जिम्मेदारी न समझने के कारण अपयश और हानि, जीवन के ४२वें वर्ष से ४४वें वर्ष तक अत्यधिक उतार और चढ़ाव।

ग्यारहवां भाव—मीठे और सुन्दर स्वभाव के कारण बहुत से मित्र हों, परन्तु इनमें से अधिकतर अच्छे नहीं होते हैं, धन हो परन्तु मित्रों द्वारा नष्ट किया जाय।

बारहवां भाव—जासूसी के कार्यों से, समाज सेवा से अस्पताल या जेल के कार्यों से लाभ हो, जातक पसन्द न किया जाँय, बुढ़ापे में अकेले अर्थात् परिवार से दूर रहना पड़े।

फलादेश विवेक—प्रत्येक ग्रह का राशि और भाव में फल बतलाया जा चुका है, उन सबका निचोड़ निकालना चाहिए, क्योंकि एक ग्रह धन दे सकता है और दूसरा ग्रह धन नाश करने वाला हो तो उनमें से किस ग्रह की प्रधानता रहेगी? जिस जातक की जन्म-कुण्डली का विचार किया जाए, उसके देश, परिवार और समय इत्यादि को ध्यान में रखकर फलादेश किया जाए। दो बच्चों का जन्म एक अस्पताल के दो बराबर के कमरों में एक ही समय में हुआ हो, परन्तु उनमें शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक समानता नहीं होती है। उनके गुण और आर्थिक क्षमता अलग-अलग धरातल पर होते हैं। ऐसा क्यों होता है? इसका कारण यह है कि जिस वातावरण में वे पैदा हुए हैं, जो गुण या दोष उन्हें विरासत में मिले हैं, वे अलग-अलग तरह के होते हैं। हम इन शब्दों से शुरू करके जन्म-कुण्डली के विचार के लिए कुछ निर्देश बताते हैं।

पाठक को प्रत्येक भाव का विचार एक के बाद एक का करना चाहिए। प्रत्येक भाव शरीर के किसी अंग को, किसी सम्बन्ध को या जीवन के किसी उद्देश्य को दर्शाता है। साधारणतया यदि कोई भाव बलवान् है तो उससे सम्बन्धित वस्तुओं में वृद्धि होगी। यहां एक प्रश्न उठता है। दशम स्थान से पिता का विचार करते हैं तथा इससे जीवन में ऊपर उठने का फल भी विचार किया जाता है। परन्तु कई बार देखने में आता है कि किसी व्यक्ति के पिता का स्वर्गवास तो बहुत ही कम उम्र में हो जाता है और इस प्रकार उसको पितृ-सुख नहीं मिला, परन्तु अपने जीवन में उसे अत्यधिक सफलता

मिली या दूसरा उदाहरण लीजिए। दूसरे स्थान से दाहिनी आंख और धन का विचार भी किया जाता है। ऐसा जातक बहुत धनवान हो, परन्तु नेत्रहीन भी हो सकता है। या एक उदाहरण और देखिए। पञ्चम स्थान से, बुद्धि, विद्या और सन्तान का विचार किया जाता है। हमारे देखने में आता है कि बहुत-से व्यक्ति ऐसे हैं जिनका बुद्धि का विकास अधिक नहीं, विद्या में भी प्रवीण नहीं, परन्तु उनके कई पुत्र होते हैं।

इन मतभेदों का विचार बाद में किया जाएगा, अर्थात् विभिन्न बातों के फल का एक ही भाव से अलग-अलग प्रकार का परिणाम क्यों होता है? पहले हम इस साधारण सिद्धान्त कि यदि कोई भाव बलवान हो तो उस भाव-सम्बन्धी बातें फलीभूत होती हैं और कमज़ोर हो तो उनका अनिष्ट फल होता है। निम्नलिखित बातों से भाव को बलवान समझना चाहिए :

(क) भाव का स्वामी बलवान हो, (ख) भाव बलवान हो (जिस भाव का विचार किया जाए उसमें शुभ ग्रह हो, भाव के स्वामी से देखा जाता है, उसमें किसी त्रिकोण का स्वामी हो अथवा लग्नेश ही उस भाव में हो), (ग) भाव का कारक बलवान हो। इस अध्याय में आगे हम बताएंगे कि कौन-कौन से ग्रह किन वस्तुओं के कारक होते हैं। पाठकों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया जाता है कि इस संस्कृत शब्द 'कारक' का ध्यान रखें, यह अनेक बार प्रयोग किया जाएगा।

अब बताते हैं कि किस प्रकार (क) भाव के स्वामी का, (ख) भाव का और (ग) कारक का विचार किया जाए कि वे बलवान हैं कि नहीं। इनमें से क्रमशः एक-एक को लीजिए।

भावेश विचार—निम्नलिखित कारणों से भावेश अर्थात् भाव का स्वामी को बलवान् समझना चाहिए। यदि भाव का स्वामी बलवान हो तो उस भाव का अवश्य ही शुभ फल होगा। यदि स्वामी कमज़ोर हो या पीड़ित हो (यानी पाप-ग्रह के साथ हो, पाप-ग्रह से दृष्ट हो या स्वयं नीच या शत्रु राशि का हो) तो उन भाव सम्बन्धी बातों का शुभ फल नहीं होता या फल पूर्ण रूप से नष्ट हो जाता है।

भावेश अर्थात् भाव के स्वामी से हमारा क्या तात्पर्य है, यह पहले बताया जा चुका है और यहाँ फिर से बताते हैं कि भावेश का तात्पर्य है कि भाव का स्वामी या उस राशि के स्वामी को कहते हैं, जो उस भाव में पड़ी हो। उदाहरण के लिए आगे दी गई जन्म कुण्डली देखना चाहिए—

इस जातक का जन्म सिंह लग्न में हुआ, अर्थात् प्रथम भाव में सिंह राशि हुई और सिंह राशि का स्वामी सूर्य है तो प्रथम भाव का विचार सूर्य से किया जाए। दूसरे भाव में कन्या राशि है, इसका स्वामी बुध है तो बुध द्वितीय भाव का स्वामी हुआ। इसी प्रकार शुक्र तीसरे भाव का स्वामी, मंगल चौथे भाव का इत्यादि।

निम्नलिखित बातों से भाव के स्वामी को बलवान् समझना चाहिए।

(१) अपने उच्च स्थान या अपनी ही राशि में हो। अपनी राशि में होने से भी जिस भाव में वह राशि है उस भाव का अधिक अच्छा फल होगा। जैसे वृश्चिक लग्न में बृहस्पति धनु या मीन में हो। ये दोनों ही बृहस्पति की अपनी राशियाँ हैं। किसी भी राशि में होने से बृहस्पति-बलवान हुआ और साथ ही द्वितीय और पंचम स्थान बलवान होगा। परन्तु धनु राशि में होने से दूसरे भाव में भी हुआ तो पंचम भाव के बजाय द्वितीय भाव का अधिक अच्छा फल देगा। यदि मीन में हो तो पंचम भाव का फल द्वितीय भाव के फल से अधिक अच्छा होगा। यदि ग्रह किसी अति मित्र या मित्र की राशि में हो तो भी बलवान् होता है। यदि ग्रह किसी सम राशि में हो (अर्थात् जिस राशि में बैठा हो उसका स्वामी न मित्र हो न शत्रु) तो वह ग्रह न तो बलवान होता है न कमज़ोर, परन्तु हम उसे कमज़ोर ही मानेंगे। यदि वह शत्रु राशि में हो तो कुछ भी अच्छा फल नहीं दिखाता अपितु अच्छे फल को खराब ही करता है। यदि अति शत्रु या नीच राशि में हो तो अति कमज़ोर होता है और अत्यधिक हानिकारक फल करता है।

(२) ऊपर जो कुछ ग्रह की राशि के बारे में कहा गया है, वैसा ही फल नवांश राशि में भी समझना चाहिए।

(३) निम्नलिखित जिससे भलीं भांति समझ में आ सके इस लिए हम पाठकों को राशीश का तात्पर्य समझाते हैं। ग्रह जिस राशि में बैठा हो उस राशि के स्वामी को हम उसका राशीश कहते हैं। मान लीजिए, चन्द्रमा मीन में है तो बृहस्पति जो मीन राशि का स्वामी है, चन्द्रमा का राशीश हुआ। मान लीजिए, मंगल सिंह के ११° पर हो तो वह कर्क नवांश में हुआ। कर्क राशि का स्वामी चन्द्रमा है इसलिए नवांश में मंगल का राशीश हुआ। ग्रह बलवान है या नहीं, इनका विचार करने के लिये यदि नवांश और राशीश

दोनों बलवान हुए तो ग्रह बलवान होगा वरना कमज़ोर । इसलिए ग्रह की राशि और नवांश के अतिरिक्त राशीश का भी विचार करना चाहिए।

(४) भाव का स्वामी किसी अशुभ स्थान में न हो। जन्म लग्न से छठा, आठवां और बारहवां स्थान त्रिक कहलाता है। इस संस्कृत शब्द का अर्थ 'तींन अशुभ घर' और ज्योतिष में इसका प्रयोग छठे, आठवें और बारहवें स्थान के लिए किया जाता है। ज्योतिषशास्त्र में इसको बहुत ही अनिष्टकारक माना गया है।

'प्रश्न मार्ग' (एक प्राचीन भारतीय ज्योतिष ग्रंथ के अध्याय चौदह श्लोक उनतीस) में लिखा है, मुनियों ने छठे, आठवें, बारहवें भावों को अशुभ फल देने वाला कहा है। इन तीनों भावों के स्वामी भी जिन भावों में हों या जिन पर दृष्टि डालें वे भी अशुभ हो जाते हैं। जिन भावों के स्वामी इनके स्वामी के साथ हों या इनके स्वामी से दृष्ट हों उनका अपना भी अच्छा फल नष्ट हो जाता है। इन तीनों भावों में भी आठवें को सबसे अधिक अशुभ फल देने वाला कहा गया है। यही सिद्धान्त 'जातकादेश मार्ग' के दसवें अध्याय श्लोक चौंतीस में भी कहा गया है।

यहाँ छठे, आठवें और बारहवें का विचार न सिर्फ लग्न से अपितु जिस भाव का विचार कर रहे हैं। उस भाव से भी करना चाहिए (जैसे कर्क लग्न में पांचवें भाव का विचार करना है तो पांचवें भाव से छठा, आठवां और बारहवां मेष, मिथुन और तुला हुआ। इसलिए पञ्चम भाव सम्बन्धी फल के लिए जन्म लग्न से छठे, आठवें और बारहवें भावों के अतिरिक्त दसवें, बारहवें और चौथे भाव और इनके स्वामी को भी देखना चाहिए। ग्रह यदि अपने भाव को देखे तो अच्छा फल देता है। इसलिए यदि ग्रह किसी ऐसे स्थान में बैठा हो जहां से वह अपने भाव को नहीं देख सकता तो अपने भाव का अच्छा फल नहीं करेगा। उदाहरण के लिए कर्क लग्न उदय हो तो कर्क से मीन नवां स्थान हुआ। यह पहले बताया है कि बृहस्पति मीन का स्वामी है और बृहस्पति अपने स्थान से पांचवें, सातवें और नवें स्थान को पूर्ण रूप से देखता है। इसलिए बृहस्पति यदि कर्क, कन्या या वृश्चिक में हो तो वहां से अपनी मीन राशि को पूर्ण रूप से देखेगा (मीन राशि इस उदाहरण में नवम स्थान है)। जन्म लग्न या जिस भाव का विचार कर रहे हैं, उस भाव से। इन दोनों में जन्म लग्न से जो बलवान हो उसे ज्यादा प्रधानता देनी चाहिए। यदि ग्रह दोनों ही स्थानों से खराब स्थानों में हो तो अत्यधिक अशुभ फल ही देगा।

इसमें कुछ अपवाद भी है—

(१) यह अच्छा होता है यदि (क) छठे भाव का स्वामी आठवें या बारहवें में हो, (ख) आठवें का स्वामी छठे या आठवें में हो, (ग) बारहवें का स्वामी छठे या आठवें में हो,

(२) यदि पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवें, सातवें, नवें, दसवें और ग्यारहवें भाव के स्वामी किसी केन्द्र या त्रिकोण या ग्यारहवें घर में हों। इन सब भावों के शुभ स्वामी (सप्तम के अलावा) को दूसरे भावों में भी बलवान समझना चाहिए।

(३) भाव का स्वामी शुभ ग्रह के साथ हो या शुभ ग्रहों से दृष्ट हो। यदि भाव का स्वामी क्रूर ग्रहों के साथ एक ही राशि में बैठा हो या उनसे दृष्ट हो तो उसका अच्छा फल नष्ट हो जाता है। इसमें भी एक अपवाद है—यदि एक ग्रह केन्द्र का स्वामी हो और दूसरा ग्रह त्रिकोण का स्वामी हो तो उनका एक राशि में होना अच्छा होता है, चाहे उनमें से एक या दोनों ही क्रूर हों। किसी भी भाव के स्वामी का (छठे, आठवें और बारहवें के अतिरिक्त) लग्नेश के साथ बैठना अच्छा फलदायक होता है, चाहे लग्नेश नैसर्गिक शुभ ग्रह हो अथवा क्रूर ग्रह हो।

(४) भाव का स्वामी अस्त न हो। सूर्य कभी अस्त नहीं होता, परन्तु दूसरे ग्रह जब सूर्य के बहुत पास होते हैं तो वे दिखाई नहीं देते। तब उन्हें अस्त कहते हैं। अस्त हुए ग्रह का कुछ अच्छा फल नष्ट हो जाता है। क्रूर ग्रह यदि अस्त भी हो तो अधिक खराब फल करता है। पञ्चाङ्ग में देखने पर पता चल जाएगा कि कोई ग्रह जन्म के समय अस्त है या नहीं।

(५) भावस्थ राशि का स्वामी क्रूर ग्रहों के मध्य में न हो। मध्य में का मतलब है कि ग्रह के आगे और पीछे की राशियों में क्रूर ग्रह न हो। मान लीजिए मंगल सिंह राशि के १३° में हो, चन्द्रमा २०° और शनि २८° अंश हो तो चन्द्रमा को दो क्रूर ग्रहों के मध्य में कहा जायगा। परन्तु यदि ऊपर दिये गये उदाहरण में सिंह राशि के १५ अंश में बृहस्पति हो जो चन्द्रमा के सबसे नजदीक शनि और बृहस्पति होंगे और चन्द्रमा क्रूर ग्रहों के मध्य में नहीं कहलाएगा। दूसरा उदाहरण लीजिए—यदि सिंह राशि के १३° पर शुक्र, २०° में चन्द्रमा और २८° पर बृहस्पति हो तो चन्द्रमा का शुभ ग्रहों के मध्य में कहलाएगा। परन्तु यदि कोई क्रूर ग्रह जैसे शनि सिंह राशि में हो तो चन्द्रमा को शुभ ग्रह के मध्य में नहीं कहा जाएगा, क्योंकि चन्द्रमा के सबसे करीब में शनि और बृहस्पति हुए। मतान्तर से ग्रह के पहले और बाद की राशियाँ देखें।

अब एक और उदाहरण देखिए। मान लीजिए, मंगल तुला में सूर्य वृश्चिक में और शनि धनु में हो तब भी सूर्य क्रूर ग्रहों के मध्य में कहा जाएगा क्योंकि जिस राशि में सूर्य है उसकी पहली और बाद की राशि में क्रूर ग्रह है। परन्तु इसका उतना अशुभ फल नहीं होगा जितना कि यदि तीनों ग्रह—एक ग्रह और उसके दोनों सबसे करीब के ग्रह—एक ही राशि में हो। यदि मध्य में आया हुआ ग्रह दो क्रूर ग्रहो के पूर्ण मध्य में हो (मंगल तुला के १३° में, सूर्य वृश्चिक के १८° में और शनि धनु के २३° में तो सूर्य, मंगल और शनि के बीच में ३५° मंगल से और ३५° ही शनि से होगा) तो इसका फल या तो बहुत अच्छा (यदि शुभ ग्रहों के बीच में हो) या बहुत ही खराब (यदि क्रूर ग्रहों के मध्य में हो) होता है।

भाव बल विचार—यह देखने के लिए कि भाव बलवान् हैं, निम्न-लिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए।

(१) भाव में शुभ ग्रह बैठे हों और क्रूर ग्रह न हों। किन-किन ग्रहों को शुभ मानना चाहिए और किन ग्रहों को क्रूर, इसके विचार के लिए दो बातों का ध्यान करना चाहिए—

(अ) चन्द्रमा (पांच या उससे अधिक कला का हो अर्थात् शुक्ल पक्ष की पञ्चमी से कृष्ण पक्ष की पंचमी तक), बुध, बृहस्पति और शुक्र शुभ-ग्रह कहलाते हैं, सूर्य, मंगल, शनि, राहु और केतु क्रूर ग्रह हैं।

(ब) छठे, आठवें और बारहवें घर के स्वामी अशुभ समझे जाते हैं जबकि शेष भावों के स्वामी शुभ होते हैं। मान लीज़िए, वृषभ लग्न है। तब बृहस्पति नैसर्गिक शुभ ग्रह होता हुआ भी अच्छा नहीं समझा जाएगा और वृश्चिक में (सातवें भाव में जिससे विवाह का विचार किया जाता है) अशुभ फल देगा, क्योंकि बृहस्पति आठवें भाव का स्वामी होते हुए सप्तम में बैठेगा। मान लीजिए, कन्या लग्न में मंगल सप्तम स्थान में मीन राशि में बैठा हुआ है। यहां मंगल अत्यधिक खराब फल देगा क्योंकि मंगल एक तो नैसर्गिक क्रूर ग्रह है और कन्या लग्न वाले के लिए तीसरे और आठवें घर का स्वामी भी है। जन्म-कुण्डली के फलादेश में इन सब बातों का ध्यान रखना चाहिए।

(२) भाव पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो और क्रूर ग्रहों की दृष्टि न हो। यहां भी नैसर्गिक शुभ ग्रह जो अच्छे भाव के स्वामी हैं, प्रथम श्रेणी में आते हैं और शुभ ग्रह जो अशुभ भावों के स्वामी होंगे, द्वितीय श्रेणी में आते हैं। नैसर्गिक क्रूर ग्रहों की दृष्टि अशुभ फल देने वाली है, परन्तु यदि क्रूर ग्रह स्वयं अच्छे भावों के स्वामी होंगे तो जिस जन्म-कुण्डली का विचार किया

जा रहा है उसमें उतना खराब फल नहीं देंगे। परन्तु यदि क्रूर ग्रह अशुभ भावों के स्वामी भी होंगे तो ज्यादा खराब फल देने वाले होंगे। यहां एक अपवाद भी है। यदि किसी भाव का स्वामी चाहे वह शुभ हो या क्रूर, अपने भाव पर दृष्टि डाले तो अच्छा ही फल करता है। लग्नेश की दृष्टि और संबंध भी हमेशा अच्छा फल करने वाली होती है।

(३) जिस भाव का विचार किया जा रहा है, वह क्रूर ग्रहों के मध्य में हो तो भाव बिगड़ जाता है। इसके विपरीत यदि शुभ ग्रहों के मध्य में हो तो उसका अच्छा फल बढ़ जाता है। मान लीजिए, हम सिंह लग्न में चौथे भाव का विचार कर रहे हैं। वृश्चिक राशि चौथे भाव में हुई अब यदि बृहस्पति तुला के १३° में हो और बुध धनु के २०° में हो तो चौथा भाव वृश्चिक शुभ ग्रहों के मध्य में होगा। परन्तु यदि ऊपर दिए गए उदाहरण में मंगल तुला के २८° में हो तो वृश्चिक शुभ ग्रह के मध्य में नहीं होगा, क्योंकि इसके सबसे करीब में मंगल तुला में हुआ न कि बृहस्पति। इस बात का ध्यान भी उसी प्रकार रखना चाहिए, जैसा कि शुभ अथवा अशुभ ग्रहों के बीच में बैठे हुए ग्रहों के बारे में कहा गया है।

(४) मन्त्रेश्वर ने अपनी 'फलदीपिका' के पन्द्रहवें अध्याय के दूसरे, छठे और सातवें श्लोकों में कहा है कि शुभ ग्रह दूसरे, चौथे, पांचवें, सातवें, नवें और दसवें भाव में (जिस भाव का विचार कर रहे हों, उस भाव से) शुभ फल को बढ़ाते हैं। किसी भाव से चौथे, पांचवें, आठवें, नवें और बारहवें में क्रूर ग्रह उस भाव को खराब कर देते हैं। किसी भी भाव से तीसरे, छठे, ग्यारहवें स्थान में क्रूर ग्रह भाव के शुभ फल को बढ़ाते हैं।

'जातकादेशमार्ग' (एक प्राचीन फलित ज्योतिष का ग्रन्थ) में लिखा है कि यदि क्रूर ग्रह (क) दूसरे और बारहवें, (ख) चौथे और आठवें, (ग) पांचवें और नवें में हों तो भाव के शुभ फल को नष्ट कर देते हैं और यदि इन्हीं स्थानों में शुभ ग्रह हों तो भाव के शुभ फल को बढ़ाते हैं।

चन्द्र राशि से भाव विचार—चन्द्र राशि से तात्पर्य है कि जन्म के समय चन्द्रमा जिस राशि में हो। भारतीय ज्योतिष में जन्म राशि और लग्न को बराबर की प्रधानता दी गई है। रुद्र ने अपनी संस्कृत टीका 'होराशास्त्र' के पृष्ठ २३ पर कहा है कि ५० प्रतिशत प्रभाव लग्न से होता है और ५० प्रतिशत फल चन्द्र राशि से होता है। अपने अनुभव से यह देखा है कि यदि हम सिर्फ लग्न से ही भावों का और ग्रहों का विचार करें तो कभी-कभी जातक के जीवन में फल नहीं मिल पाता। जब हम जन्म राशि से गिनकर भाव का विचार करें तो हमारा निष्कर्ष ज्यादा ठीक बैठता है। यहां चन्द्रमा

से दशम में मंगल, केतु और नवम में सूर्य, बुध और शुक्र हैं। लग्न से भी सूर्य, बुध और शुक्र का एक साथ बैठना राजयोग है। यह एक प्रसिद्ध डाक्टर है। इन्हें पद्मश्री और पद्मभूषण से सम्मानित किया गया है । इसलिए हमने जो कुछ सिद्धान्त भावों के स्वामी और भाव का लग्न से बतलाये है वहीं सिद्धान्त चन्द्र राशि से भी करने चाहिए और जब दोनों प्रकार से (१) लग्न से, (२) चन्द्र से एक ही फल आएं तो उसका फल अवश्य ही होगा अन्यथा इसके विपरीत समझना।

कारक विचार—कारक का विचार भी उतना ही महत्त्व रखता है जितना कि भाव का और भाव के स्वामी का। यह पहले पृष्ठों में बतलाया है कि कौन-कौन से ग्रह किन-किन बातों के कारक (द्योतक) होते हैं। महर्षि पराशर अपने होराशास्त्र में और मन्त्रेश्वर ने अपनी फलदीपिका के पन्द्रहवें अध्याय के सत्रहवें श्लोक में बारह भावों के कारक इस प्रकार प्रस्तुत किये हैं—(१) सूर्य, (२) बृहस्पति, (३) मंगल, (४) चन्द्रमा और बुध, (५) बृहस्पति, (६) मंगल और शनि, (७) शुक्र, (८) शनि, (९) सूर्य और बृहस्पति, (१०) सूर्य, बुध, बृहस्पति और शनि, (११) बृहस्पति और (१२) शनि इसकी चर्चा कुण्डली प्रसंग में भी किया गया है।

इसलिए जब आप प्रथम भाव का विचार करते हैं तो प्रथम भाव के स्वामी के अतिरिक्त सूर्य का भी विचार करें।

जब दूसरे भाव का विचार करें तो न सिर्फ दूसरे भाव और उसके स्वामी का अपितु बृहस्पति का भी विचार भी उस समय करना चाहिए। कारक बलवान है अथवा कमजोर, इसके लिए भी जो सिद्धान्त ऊपर (१) से (५) तक भावों के स्वामी के लिए पिछले पृष्ठों में बताए हैं, वही सिद्धान्त यहां भी समझने चाहिए। उन्हें यहाँ फिर से नहीं दे रहे हैं। इसके अतिरिक्त भाव का स्वामी भाव के कारक से छठे, आठवें और बारहवें भाव में न बैठा हो। साधारण तौर से भाव के कारक का उसी भाव में बैठना अच्छा फल नहीं देता। जैसे कि बृहस्पति पुत्रकारक है और पांचवें में बैठे अथवा शुक्र पत्नी का कारक है और सातवें में बैठ जाए (परन्तु यदि ग्रह अपनी ही राशि में हों तो अच्छा और पूर्ण फल ही करेंगे)। इसमें कुछ अपवाद भी है—जैसे मंगल और शनि छठे स्थान में, शनि अष्टम में, बृहस्पति नवम में और सूर्य,

बुध, बृहस्पति और शनि दशम भाव में हों तो उन स्थानों के कारक होते हुए भी अच्छा फल करेंगे।

इस प्रसङ्ग में यह कि कारक, अपने सम्बन्धित भाव में बैठे अर्थात् वह जिस भाव का कारक है, उस भाव में स्थित हो, तो जीव की हानि और अजीव की वृद्धि करता है।

अब कुछ खास-खास बातों का विचार करने के लिए कुछ सिद्धान्त बताते हैं—यद्यपि वे फलादेश के साधारण सिद्धान्त के रूप में पिछले पृष्ठों में भी बतला चुके हैं।

शरीर—प्रथम भाव से, उसके स्वामी से और प्रथम भाव में जो ग्रह बैठे हों या जिन ग्रहों की उस पर दृष्टि पड़ती हो, शरीर का विचार करना चाहिए। जातक का कद, रूप और शारीरिक अनुपात उसके ऊपर निर्भर करता है। परन्तु यदि चन्द्रमा, बृहस्पति और शुक्र पहले स्थान में बैठे हों तो जातक को लावण्यवान बनाएंगे। प्रथम भाव में मंगल गेहुआं रंग देता है, जबकि शनि, राहु और केतु कुछ श्याम वर्ण करते हैं । प्रथम भाव में बुध स्फूर्ति और चंचलता देता है। शरीर का अनुपात प्रथम भाव (लग्न) के स्वामी और जन्म लग्न में जो नवांश हो, उसके स्वामी पर निर्भर करता है।

उसके अंग—शरीर के विभिन्न अंगों का सम्बन्ध जन्म-कुण्डली के बारह भावों से (एक से बारह तक) है। शरीर के किस हिस्से का जन्म-कुण्डली के किस भाव से विशेष सम्बन्ध है, यह नीचे दिया जाता है—

भाव	शरीर के अङ्ग
१	सिर
२	चेहरा, नेत्र, मुख, जीभ के साहित
३.	कण्ठ, कन्धे बाजू और कान
४	दिल
५	पेट
६.	नाभि
७.	बस्ति
८.	जननेन्द्रिय
९.	जांघ
१०.	घुटने
११.	पिण्डली
१२.	पैर

विशेष—नाभि से लिंग मूल तक एक सीधी रेखा खींची जाये और उसके दो भाग किये जाये तो ऊपर का भाग बस्ति होता है।

दूसरे भाव से छठे भाव तक का शरीर के दाहिने भाग पर अधिकार है जबकि बायां हिस्सा आठवें भाव से बारहवें भाव के अधिकार में है। इसके अतिरिक्त लग्न के दूसरे आधे हिस्से का (अर्थात् १६° से ३०°) तथा सप्तम भाव के पहले आधे हिस्से का (०°-१५°) शरीर के दाहिने भाग पर अधिकार है। बायें भाग पर लग्न के पहले आधे भाग का (०°—१५° तक) और सातवें भाव के दूसरे आधे हिस्से का (१६°—३०°) अधिकार रहता है।

पाश्चात्य ज्योतिषी गले और गर्दन का विचार दूसरे भाव से करते हैं, परन्तु भारतीय ज्योतिषी गले और गर्दन को तीसरे भाव से देखते हैं।

मेष, वृषभ, कुम्भ और मीन छोटी राशियां हैं (इसका तात्पर्य यह है कि इन राशियों का उदय काल दो घण्टे से कम है)। मिथुन, कर्क, धनु और मकर मध्यम राशियां हैं, जबकि सिंह, कन्या, तुला और वृश्चिक बड़ी राशियां हैं (इनका उदय काल दो घण्टे से अधिक का होता है)। इन बारह राशियों में प्रत्येक में ३०॰ होती है। यदि कोई छोटी राशि किसी भाव में पड़े, तथा उस भाव का स्वामी स्वयं भी किसी छोटी राशि में हो तो शरीर का वह हिस्सा, जो उस भाव के अधिकार में है, छोटा होगा। मेष लग्न में मंगल मीन राशि में बैठा हो तो मेष और मीन दोनों ही राशियां छोटी हैं तथा मेष से सिर का विचार होता है तो ऐसे जातक का सिर छोटा होगा।

स्वभाव—सामान्य तौर पर किसी का स्वभाव जानने के लिए पूर्ण जन्म-कुण्डली का विचार करना चाहिए (कौन-सा ग्रह किस राशि में है तथा किस भाव में है), परन्तु विशेष बल प्रथम भाव, उसके स्वामी को तथा जो ग्रह प्रथम भाव में हो अथवा उसे देखता हो, देना चाहिए।

सूर्य अक्खड़पन दिखाता है। चन्द्र नम्रता का कारक है। मंगल क्रोध दिखाता है। बुध से हंसी-मज़ाक पसन्द होता है। बृहस्पति बुद्धि और धार्मिक स्वभाव देता है। शुक्र मिलनसार बनाता है और शान-शौकत दिलाता है, जबकि शनि शक्की स्वभाव और उदासीन प्रवृत्ति देता है। इन सब अलग-अलग लक्षणों को, चन्द्रमा की राशि, चन्द्रमा किस भाव में पड़ा है, किस ग्रह या ग्रहों के साथ बैठा है और कौन-से ग्रहों से दृष्ट है, देखकर निष्कर्ष निकालना चाहिए।

रोग निर्णय—क्रूर ग्रह की जिस भाव पर दृष्टि हो या जिस भाव में बैठा हो, उस भाव से शरीर के जिस हिस्से का बोध होता है, उस हिस्से में बीमारी होती है। यह देखने के लिए कि शरीर का कौन-सा अंग किस भाव में आता है, पिछले अध्याय में देखिए। दूसरे और बारहवें घर में क्रूर ग्रह हों

अथवा क्रूर ग्रह आठवें और छठे स्थान में हों तो क्रमश: दूसरे और बारहवें भावों पर दृष्टि डालेंगे। इससे आंखों की ज्योति खराब हो जाती है। सूर्य और शुक्र या चन्द्रमा और शुक्र एक साथ छठे या बारहवें स्थान में बाईं आंख को जबकि आठवें और दूसरे स्थान में दाहिनी आंख की रोशनी को खराब करता है (शुक्र शुभ ग्रह है, परन्तु नेत्रों के स्थान में बैठने पर अथवा उन पर दृष्टि डालने से नेत्रों की खराबी करता है)। बारहवें भाव से दांतों को देखते हैं।

क्रूर ग्रह यदि पांचवें स्थान में हो या ग्यारहवें स्थान में हो (ग्यारहवें स्थान से पञ्चम पर पूर्ण दृष्टि डालेंगे) तो पेट में विकार पैदा करेंगे। अष्टम स्थान में क्रूर ग्रह विशेषकर मंगल जननेन्द्रियों में रोग देते हैं—रक्त-विकार, बवासीर, भगन्दर इत्यादि। चन्द्रमा अथवा चौथा भाव यदि खराब हो तो हृदय रोग होता है। कुम्भ का सूर्य लग्न में हृदय रोग देता है। बुध यदि दूषित हो (क्रूर ग्रहों के स्थान में बैठा हो,विशेष कर शनि के साथ या शनि से देखा जाता हो) तो स्नायुमण्डल के रोग, मानसिक रोग, मानसिक विकार। यदि चन्द्रमा और बुध दोनों ही पीड़ित हों तो पागलपन दें, मंगल से फोड़े-फुन्सी, जख्म, बुखार, चोट लगने से पीड़ा, शुक्र से पेशाब सम्बन्धी बीमारियां, गुदा सम्बन्धी रोग। बृहस्पति से रक्तचाप, अधिक भोजन करने के कारण रोग होता है अर्थात् यथेष्ट मात्रा में भोजन इत्यादि की कमी रहे। आयुर्वेद में बीमारियों का कारण वात, पित्त और कफ का बिगड़ जाना है। किन ग्रहों से कौन-सा तत्व देखना चाहिए, यह नीचे बताया गया है।

सूर्य और मंगल से पित्त, चन्द्रमा और शुक्र से वात और कफ दोनों ही, बुध से वात, पित्त और कफ शनि से वात। राहु शनि के समान है और केतु मंगल के समान (मान लीजिए, जन्म-कुण्डली में शनि रोग का कारक है तो ऐसे व्यक्ति को शनि की महादशा-अन्तर्दशा अथवा शनि के गोचर में वात विकार होगा) । यदि कोई ग्रह दूसरे, तीसरे, छठे, आठवें, ग्यारहवें और बारहवें भाव का स्वामी है और कमज़ोर हो अथवा खराब स्थान में बैठा हो, क्रूर ग्रहों से देखा जाता हो और विशेष रूप से देखने वाला ग्रह यदि किसी खराब घर का स्वामी हो तो जातक को जो ग्रह-पीड़ित हो,उसके तत्व के विकार से रोग होगा।

पाठकों को चाहिए कि रोग विचार के लिए मंगल, शनि और छठे भाव तथा छठे भाव के स्वामी का विचार करें। यदि प्रथम भाव का स्वामी छठें, आठवें या बारहवें भाव में किसी क्रूर ग्रह के साथ बैठा हो तो स्वास्थ्य को खराब या कमजोर कर देता है। इसके अतिरिक्त राशियों से शरीर के

अङ्गों का विचार हम पूर्व में कर चुके हैं। उदाहरण के लिए यदि मेष राशि में क्रूर-ग्रह हों और उन पर क्रूर ग्रहों की ही दृष्टि पड़ती हो तो मस्तक में रोग हो या चोट लगे अथवा मस्तिष्क रोग हो।

जिस राशि में लग्न का उदय हो उससे भी रोग का विचार करना चाहिए।

मेष—अत्यधिक श्रम, क्रोध, मस्तिष्क रोग।

वृषभ—अत्यधिक आराम करना, चिन्ता और उद्वेग, जिससे तात्कालिक बीमारियों को बल मिलता है

मिथुन—चञ्चल प्रवृत्ति, घबराहट।

कर्क—मानसिक दुर्बलता और तनाव—इसका कारण परिवार के लोग अथवा स्वयं की अपेक्षा दूसरे लोग ही होते हैं।

सिंह—अत्यधिक श्रम हो, इनकी बीमारी का कारण है रक्त विकार।

कन्या—पाचन-क्रिया की एक खराबी जिसके कारण पेट में गैस इत्यादि बने।

तुला—थकान, अंतड़ियों की बीमारियां, किसी भी कारण से गुर्दे की खराबी।

वृश्चिक—चिन्ता के कारण शरीर में आवश्यक तत्त्वों का कम हो जाना। बस्ति में रोग।

धनु—जोड़ो का दर्द, व्यग्रता, चोट लगना।

मकर—डर, बचपन की किसी घटना का जीवन के उत्तरार्द्ध में मानसिक दबाव पैदा करना। चर्म रोग।

कुम्भ—हृदय-सम्बन्धी रोग, ठण्ड लगना, नसों में दर्द या विकार।

मीन—अत्यधिक मानसिक तनाव, गर्मी तथा मानसिक और शारीरिक क्षमता का पूर्ण मात्रा में न होना।

धन प्राप्ति विचार—धन का विचार करने के लिए दूसरे, चौथे, पांचवें, नवें और ग्यारहवें भावों को तथा बृहस्पति को देखिए। यदि ग्रहों में सम्बन्ध हो तथा लग्नेश उनमें से एक हो तो जीवन में धन मिलता है। ज्योतिष में 'सम्बन्ध' का अर्थ है कि यदि 'अ' और 'ब' दो ग्रह हैं और वे (१) अ और ब एक ही राशि में हों, (२) अ और ब एक-दूसरे को परस्पर देखते हों, (३) अ ब के घर में बैठा हो और ब अ के घर में बैठा हो अर्थात् परिवर्तन हो, (४) यदि 'अ' 'ब' की राशि में बैठा हो और ब द्वारा देखा जाता हो।

पाठक इस 'सम्बन्ध' शब्द का ध्यान रखेंगे, क्योंकि आगे इसका बार-बार विचार किया है। भावों के स्वामी जिनका परस्पर सम्बन्ध होने से धन होता है,वह नीचे बताया गया है—

१ और २, १ और ४, १ और ५, १ और ९, १ और १०, १ और ११, २ और ४, २ और ५, २ और ९, २ और १०, २ और ११, ४ और ५, ४, और ९, ४ और १०, ४ और ११, ५ और ९, ५ और १०, ५ और ११, ९ और १०, ९ और ११, १० और ११।

ये ग्रह भाव और राशि में जितने बलवान हों तथा जितने अधिक शुभ ग्रहों से दृष्ट हों, उतना ही अधिक धन देते हैं।

धनहीनता का विचार—निम्नलिखित भावों के स्वामियों में यदि परिवर्तन हो, एक ही राशि में बैठे हों, या एक दूसरे को पूर्ण रूप से देखते हों तो ऐसा जातक गरीब या धनहीन होता है।

१ और ६, २ और ६, ३ और ६, ४ और ६, ५ और ६, ७ और ६, ८ और ६, ९ और ६, १० और ६, ११ और ६, १२ और ६, ८ और १२, १ और १२, २ और १२, ३ और १२, ४ और १२ और ५ और १२, ७ और १२, ९ और १२, १० और १२ तथा ११ और १२।

किसी भी जन्म-कुण्डली में सिर्फ अच्छे या बुरे सम्बन्ध ही हों,ऐसा नहीं होता है। इसलिए पाठकों को तारतम्य से निष्कर्ष निकालना चहिए। कभी ऐसा भी होता है कि जीवन के किसी भाग में ऐसे ग्रह की दशा हो, तब धन रहता है। परन्तु दूसरे भाग में अशुभ ग्रहों की दशा-अन्तर्दशा में धन का नाश हो और निर्धनता रहे। यह जानने के लिए कि दशा-अन्तर्दशा का क्या फल होगा, आगे देखें।

यदि चन्द्रमा, शुक्र और बृहस्पति कमज़ोर हों या क्रूर ग्रहों से सम्बन्धित हों, तब भी धन की कमी रहती है। ११वां भाव लाभ स्थान है, दूसरा भाव जमा किया हुआ धन, नवम स्थान भाग्य से प्राप्त धन और चौथा भाव जमीन-जायदाद से, पंचम भाव अकस्मात धन लाभ और अष्टम से विरासत इत्यादि को बताता है। पहले और दूसरे भाव में शुभ ग्रह हों तो धन आता है। ग्यारहवें भाव में जो भी ग्रह होगा, चाहे शुभ या क्रूर धन देता है। १२वें भाव में शुभ ग्रह खराब फल नहीं दिखाते हैं परन्तु क्रूर ग्रह धन का नाश करते हैं। दूसरे भाव में क्रूर ग्रह (यदि छठे, आठवें और बारहवें भाव के स्वामी हों तो विशेष) धन को नष्ट कर देते हैं। (हमारा अपना अनुभव है कि यदि मंगल दूसरे स्थान में हो तो वह व्यक्ति अपने पराक्रम से धनवान

बन जाता है, परन्तु जीवन के किसी भाग में उस धन के कारण क्लेश उत्पन्न हो या कर-अधिकारियों द्वारा परेशान किया जाए)।

अचल सम्पत्ति विचार—अचल सम्पत्ति के विचार के लिए मंगल, चौथे भाव और चौथे भाव के स्वामी का विचार करते हैं। यदि चौथा भाव कमजोर हो और आठवां भाव बलवान हो तो जातक अपनी पैतृक सम्पत्ति को बेच देता है और नया घर बनाता है। यदि पहले भाव का स्वामी चौथे भाव के स्वामी के साथ बैठा हो (विशेष रूप से चौथे ही भाव में) तो अचानक अचल सम्पत्ति दिलाता है।

वाणी विचार—दूसरे भाव और बुध से बोलने में प्रवीणता और बातचीत करने की क्षमता का पता चलता है। यदि बुध और दूसरा भाव दोनों ही बलवान हों और शुभ ग्रहों से सम्बन्धित हों तो बातचीत करने की क्षमता होती है। यदि शुभ ग्रह दूसरे भाव में बैठे हों या उसे देखते हों तो मीठी वाणी और मिलनसार स्वभाव देते हैं जब कि क्रूर ग्रह जातक को कठोर वचन बोलने वाला बनाता है। अष्टम स्थान में यदि बुध बैठा हो तो दूसरे भाव को पूर्ण दृष्टि से देखेगा—ऐसा जातक अत्यधिक बोलता है।

भाई और बहन का विचार—तीसरे भाव से और इसके कारक मंगल से भाई और बहन का विचार किया जाता है। यदि तीसरा भाव और इसका स्वामी बलवान हों परन्तु मंगल पीड़ित हो तो भाई-बहन से सुख साधारण रहता है। यदि मंगल स्वयं बलवान हो परन्तु तीसरा भाव कमज़ोर हो तो भी साधारण सुख ही बताता है। यदि दोनों ही कमजोर हों तो भाईयों से अच्छे सम्बन्ध नहीं रहते हैं। तीसरे भाव में क्रूर ग्रह पराक्रम में वृद्धि करते हैं परन्तु भाई-बहनों की आयु को घटाते हैं तथा उनसे मतभेद कराते है। पुरुष ग्रह तीसरे भाव में बैठे या उसे देखे तो अधिक भाई होंगे। स्त्रीकारक ग्रह या नपुंसक ग्रह बहनें ज्यादा देते हैं। (ग्यारहवें भाव से भी बड़े भाई-बहन का विचार करना चाहिए। शनि यदि नवम स्थान में बैठा हो या अष्टम भाव में मंगल हो तो ग्यारहवें और तीसरे दोनों ही स्थानों को देखेगा और जीवन के किसी काल में भाईयों से धोखा मिलेगा, सप्तम में बृहस्पति भी ग्यारहवें और तीसरे भाव को पूर्ण दृष्टि से देखेगा। यह भाईयों से मधुर सम्बन्ध रखेगा)।

माता का विचार—चन्द्रमा और चौथे भाव से माता का विचार किया जाए। यदि दोनों ही दूषित हों तो माता की आयु को क्षीण कर देते हैं। यदि क्रूर ग्रह चौथे भाव में बैठे हों तो माता से सम्बन्धों को बिगाड़ते हैं। ऐसा ही उस समय भी होता है जब चन्द्रमा अशुभ स्थानों में हो अथवा क्रूर ग्रहों से

सम्बन्धित हो। इसके अतिरिक्त पहले और चौथे भाव के स्वामियों के सम्बन्ध को भी देखना चाहिए। (एक-दूसरे के मित्र हैं या एक-दूसरे से किस भाव में बैठे हैं। एक-दूसरे से छठे-आठवें हों तो खराब सम्बन्ध करते हैं)।

वाहन का विचार—चौथे भाव और शुक्र से सवारी का विचार किया जाता है। किसी व्यक्ति के पास मोटर होगी अथवा साईकिल होगी, इसमें इस बात का विचार करना चाहिए कि उसका धन-स्थान या उसका सामाजिक स्तर क्या है? कुछ व्यक्तियों लिए वर्ष में एक या दो गाड़ियां खरीद लेना साधारण-सी बात है और कुछ लोगों के लिए तो बिलकुल ही नामुमकिन। इसलिए धन भाव का विचार भी करना चाहिए।

मित्र का विचार—पाश्चात्य ज्योतिष में ग्यारहवें भाव से मित्र का विचार किया जाता है, परन्तु भारतीय ज्योतिष में बुध और चतुर्थ भाव से मित्र का विचार करते हैं। शुक्र का विचार भी करना चाहिए, क्योंकि जन्म-कुण्डली में दूसरों से सहयोग कैसा रहेगा (विशेष तौर से स्त्रियों के साथ), वह शुक्र ही बताएगा। यदि लग्नेश बलवान हो और अच्छे स्थान में बैठा हो तथा शुभ ग्रह से सम्बन्धित हो तो ऐसे जातक का बड़े-बड़े व्यक्तियों से सम्पर्क होता है और यदि लग्नेश कमजोर हो और अच्छे स्थान में न बैठे तथा कमजोर क्रूर ग्रहों से सम्बन्धित हो तो अपने मुकाबले में छोटे व्यक्तियों (सामाजिक स्तर में) से मित्रता कराता है। उसके मित्र भी विश्वास करने योग्य नहीं होते।

सुख का विचार—जीवन में अच्छे घर और प्रसन्नता का विचार चौथे भाव से किया जाता है। यदि लग्नेश और चौथे भाव बलवान हों, शुभ ग्रहों से-सम्बन्धित हों तो जातक को प्रसन्नता मिलती है। क्रूर ग्रह पहले भाव में बैठा हो, पहले भाव के स्वामी को देखता हो और चन्द्रमा पर दृष्टि डाले तो ऐसा व्यक्ति जीवन में दुखी और हमेशा असन्तुष्ट रहता है। यदि शुक्र बलवान हो तो ऐसे व्यक्ति को जीवन में आनन्द मिलता है, जिससे प्रसन्नता का आभास होता है। शुक्र के दोषी होने से जीवन में भोग-विलास की कमी होती है, यद्यपि ऐसे जातक के पास धन और सामर्थ्य दोनों ही होते हैं। इसके अतिरिक्त अच्छी महादशा में प्रसन्नता रहती है और अशुभ महादशा में दुःख मिलता है। (दशा-अन्तर्दशा के लिए कृपया दसवें अध्याय को देखें)।

विद्या का विचार—पांचवें भाव और उसके स्वामी से विद्या का विचार किया जाता है। बृहस्पति से ज्ञान और बुध से बुद्धि का विचार करते हैं। इन दोनों ग्रहों का, पांचवें भाव में बैठे हुए ग्रहों का तथा जो उन्हें देखे

इन सबका विचार करना चाहिए। पांचवें भाव के स्वामी का बल विचार भी करना चाहिए। दक्षिण भारत में चौथे भाव से विद्या का विचार करते हैं।

सन्तान का विचार—पांचवें भाव, उसके स्वामी और बृहस्पति से सन्तान का विचार किया जाता है। पांचवें भाव में यदि क्रूर ग्रह बैठे या उसे देखे तो सन्तान या तो नष्ट हो जाती है या उनका स्वास्थ्य खराब हो जाता है। यदि लग्नेश और पांचवें भाव के स्वामी परस्पर मित्र हैं, एक-दूसरे को देखते हैं या एक साथ बैठे हों, अति मित्र हों, तो जातक और उसके बच्चों में कुछ अच्छे सम्बन्ध रहते हैं। यदि अति शत्रु हों या एक-दूसरे से छठे-आठवें में बैठे हों तो सन्तान से सम्बन्ध बिगड़ जाते हैं। या ऐसे व्यक्ति के बच्चे अलग रहते हैं। यदि पांचवें और सातवें दोनों ही भावों में क्रूर ग्रह हो तो सन्तान के लिए अधिक खराब फल होता है।

शेयर सट्टे से लाभ—सट्टा, घुड़दौड़, लॉटरी, जुआ, अचानक धन-लाभ (विरासत के अतिरिक्त)—इन सबका विचार पांचवें भाव और उन सबके स्वामी से करना चाहिए। परन्तु यह देखें कि धन होगा कि नहीं? यदि पांचवां घर बलवान हो, शुभ ग्रह से दृष्ट हो अथवा शुभग्रह वहां बैठा हो, पांचवें घर का स्वामी भी बलवान हो, दूसरे या ग्यारहवें भाव में बैठा हो, शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो ऐसे जातक को अचानक धन-लाभ होता है। परन्तु यदि उसके विपरीत हो, जैसे पांचवां भाव और पांचवें भाव का स्वामी अशुभ ग्रहों से सम्बन्धित हों या बारहवें भाव में बैठे तो सट्टे में नुकसान होता है। चन्द्रमा और राहु पांचवें भाव में सट्टा करने की तीव्र रुचि प्रदान करते हैं। शनि पांचवे भाव में सट्टे से हानि करता है।

शत्रु का विचार—शत्रुओं का विचार छठें भाव, इसके स्वामी मंगल और शनि से किया जाता है। यदि ये बलवान हों तो साधारणतया शत्रु पर लग्न विजय मिलेगी, परन्तु इनके साथ लग्न और लग्नेश को बलवान होना चाहिए। यदि लग्न और लग्नेश तो कमजोर हों और इनके मुकाबले में छठे भाव का स्वामी बलवान हो तो जीवन में शत्रु हमेशा ही परेशान करते रहेंगे। यदि मंगल बलवान है तो ऐसा बालक शत्रुओं का नाश कर देता है। ऐसा ही शनि भी करता है। (पहला भाव कमजोर और छठा भाव बलवान हो तो जन्म-कुण्डली में देखिए की छठे भाव के मुकाबले में कौन-सा भाव बलवान है। उस भाव से जिस व्यक्ति का बोध होता हो उस व्यक्ति की सहायता से ही जातक अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर सकेगा। जैसे दसवां भाव बलवान हो तो पिता या राज्य की सहायता से शत्रु परास्त होंगे)। छठे में केतु प्रशस्त होता है।

पत्नी का विचार—शुक्र, सप्तम भाव और उसके स्वामी से पत्नी का विचार करें। बलवान शुक्र सुख और आनन्द देता है। सप्तम भाव से स्त्री-सुख का विचार भी करते हैं। यदि शुक्र, सातवां भाव और इसका स्वामी ये तीनों ही कमज़ोर हों तो ऐसे व्यक्ति को वैवाहिक सुख नहीं मिलता है। स्त्रियों से आनन्द प्राप्त होगा कि नहीं? इसके लिए बारहवें भाव का विचार करना चाहिए। बारहवें भाव में शुक्र आनन्द देता है। यदि पहले भाव का स्वामी सातवें भाव के स्वामी से कमज़ोर हो तो जातक का विवाह अपने परिवार से अच्छे परिवार में होता है। पहले, दसूरे, चौथे, सातवें, आठवें और बारहवें भाव में क्रूर ग्रह बैठे हों तो ऐसे जातक की पत्नी का समय से पहले ही सम्बन्ध विच्छेद हो जाता है। यदि इसी प्रकार के ग्रह दोनों कुण्डलियों में हों तो इसका अशुभ फल नहीं होता है। पति का विचार करने के लिए भी ऊपर दिए गए सिद्धान्तों से निष्कर्ष निकालें। इसके साथ ही बृहस्पति का भी विचार करें। बृहस्पति पति का कारक है।

आयु का विचार—प्राचीन ग्रन्थों में आयु का निर्णय करने के लिए विशेष गणनाएं और सिद्धान्त बतलाए गए हैं, परन्तु उन सबका इस पुस्तक में देना सम्भव नहीं है, इसलिए पाठकों को नीचे दिए गए सिद्धान्तों (जिनसे अच्छी आयु का पता चलता है) पर ध्यान देना चाहिए—

(१) लग्न और लग्नेश दोनों बलवान हों और शुभ ग्रहों से देखे ज़ाते हों।

(२) शुभ ग्रह बलवान हों और केन्द्र या त्रिकोण में बैठे हों।

(३) क्रूर ग्रह तीसरे, छठे और ग्यारहवें में हों।

(४) अष्टमेश बलवान हो परन्तु लग्नेश से अधिक नहीं। अष्टमेश शुभ ग्रहों के साथ या शुभ ग्रहों से दृष्ट हो।

(५) आठवें भाव पर शुभ ग्रहों की दृष्टि पड़े।

(६) चन्द्रमा बलवान हो, शुभ ग्रह के साथ हो अथवा शुभ ग्रहों से देखा जाता है। यदि चन्द्रमा कमजोर और दूषित हो तो बचपन में मृत्यु करता है अथवा बचपन में जातक बीमार रहे।

(७) अष्टमेश लग्न से तीसरे भाव में या लग्न से आठवें भाव में शनि, दीर्घायु करता है।

आयु कब पूर्ण होगी (मृत्यु का समय) इसका ठीक-ठीक निर्णय करना अनुभवी ज्योतिषियों के लिए भी कठिन है। परन्तु यदि ऊपर दिए गए

सिद्धान्तों को ध्यान में रखें तो पाठकों के लिए यह निर्णय करना आसान रहेगा कि किसी जातक की अल्पायु, मध्यायु या दीर्घायु होगी। ग्रहों की महादशा और अन्तर्दशा से मृत्यु का समय कब होगा, यह हम दसवें अध्याय में बताएगें। (अच्छे कार्य करने से, धार्मिक कार्यों से, खाने-पीने का ध्यान रखने से आयु बढ़ती है और बद्दुआओं से दुष्कर्मों से आयु और सुख दोनों ही कम हो जाते हैं। मान लीजिए, किसी व्यक्ति को अत्यधिक शराब पीने की आदत है तो जन्म-कुण्डली में दीर्घायु योग भी मध्यायु में बदल जाएगा और मध्यायु अल्पायु में)।

विरासत का विचार—विरासत में धन इत्यादि का लाभ होगा कि नहीं, इसके लिए पहले यह देखना चाहिए कि जातक के सम्बन्धियों में से क्या कोई धनवान् भी है जिससे जातक को धन मिलने की आशा हो। अधिकतर लोग माता-पिता, पति-पत्नी या नजदीकी रिश्तेदारों से, जिनके वे वारिस हैं, धन प्राप्त करते हैं। परन्तु यदि यह लाभ साधारण ही है तो जन्म-कुण्डली गें शायद इसका योग न मिले। अष्टम भाव और उसके स्वामी से विरासत का (जो विरासत कहलाने योग्य हो) आभास होगा। यदि ये दोनों ही बलवान हों तो विरासत में धन मिले। अष्टम भाव का स्वामी दूसरे, ग्यारहवें भाव में या दूसरे.ग्यारहवें भाव का स्वामी बलवान हो और आठवें भाव में बैठे या शुभ ग्रहों की दृष्टि आठवें भाव और उसके स्वामी पर हो तो विरासत में धन इत्यादि का लाभ होगा।

धार्मिक प्रकृति का विचार—कुछ व्यक्ति दूसरों की अपेक्षा अधिक धार्मिक प्रवृत्ति के होते हैं। कुछ व्यक्ति नास्तिक होते हैं।यह बहुत कुछ देश और समय पर निर्भर करता है। कम्युनिस्ट देशों में अधिकतर लोग भगवान् पर विश्वास नहीं करते हैं। भारतवर्ष के लोग स्वभाव से धार्मिक होते हैं। इन सबका ध्यान रखते हुए ही नवें भाव से धर्म और पांचवें भाव से भक्ति का निर्णय किया जाए। बृहस्पति धर्म का कारक है। यदि ये सब बलवान हों तो जातक धार्मिक होगा। नवें भाव में शनि और राहु बैठे हों तो ऐसा जातक धार्मिक (या दार्शनिक प्रवृति का) होता है। शनि की दृष्टि से भी ऐसा ही होता है। लग्न, तीसरे, पांचवें या नवं भाव में बृहस्पति बैठे या चन्द्रमा-गुरु एक साथ हों या बृहस्पति, चन्द्रमा से मवें भाव को देखे तो ऐसे जातक का धार्मिक स्वभाव होगा। नवें या दसवें भाव में उच्च का शनि धर्म के कार्य में बहुत मान-सम्मान दिलाता है।

विदेश यात्रा का विचार—विदेश यात्रा का विचार नवें और बारहवें

भाव से किया जाता है। नवें भाव में शुभ ग्रह बैठे हों तो विदेश और विदेशियों से लाभ होता है। यदि बारहवें भाव का स्वामी नवें में अथवा नवें भाव का स्वामी बारहवें भाव में हो, तो ऐसा जातक विदेश जाता है। अष्टम भाव में शुभग्रह बलवान होकर बैठे तो समुद्र पार के देशों से लाभ होता है। पंचमेश यदि नवें भाव में बैठे तो विदेश में विद्यालाभ और सन्तान होती है।

पिता का विचार—सूर्य और दशम भाव से पिता का विचार करते हैं। दसवां भाव और इसके स्वामी तथा सूर्य बलवान हों तो पिता दीर्घायु होता है। दसवें भाव में क्रूर ग्रह हो या उसे देखे अथवा दशमेश पीड़ित हो या सूर्य क्रूर ग्रहों से पीड़ित हो तो पिता की आयु को क्षीण करते हैं (जातक का अपने पिता से मतभेद रहता है)। लग्नेश और दशमेश के परस्पर सम्बन्ध से जातक और उसके पिता के सम्बन्धों का पता चलता है। यदि दोनों एक-दूसरे से छठे-आठवें हों तो पिता-पुत्र में अच्छे सम्बन्ध नहीं होते हैं। तुला राशि में सूर्य नीच राशि का होता है इसलिए तुला के सूर्य में जन्मे हुए बालक के अपने पिता से अच्छे सम्बन्ध नहीं होते (या ऐसा जातक पिता से अलग रहता है)। दक्षिण भारत के ज्योतिषी नवें भाव से पिता का विचार करते हैं।

व्यवसाय का विचार—व्यवसाय को चार मुख्य भागों में बांटा जा सकता है—(१) खेती-बाड़ी, (२) नौकरी, (३) स्वतन्त्र कार्य और (४) दुकानदारी और व्यापार। प्राचीन भारत में व्यवसाय वंश-क्रमानुगत होता था। अब ज्यादातर लोग तरह-तरह के कार्यों को अपना रहे हैं, परन्तु तब भी व्यवसाय का निर्णय करने के लिए वंश का, योग्यता और रुझान का तथा पृष्ठभूमि का ध्यान रखना चाहिए।

यदि चौथे भाव या उसके स्वामी का दूसरे, नवें अथवा ग्यारहवें भाव के स्वामी से कुछ भी सम्बन्ध हो तो ऐसे जातक को खेती के कार्य में सफलता मिलेगी। शुक्र से गीली जमीन और शनि से खेती का विचार करते हैं। भारतीय पुराणों में मंगल को 'भूमिपुत्र' कहा गया है। इसलिए इन सबका विचार करना चाहिए।

नौकरी का विचार तीसरे, छठे और दसवें भाव और इनके स्वामियों से किया जाता है। लग्नेश यदि तीसरे या छठे भाव में हो तो नौकरी की तरफ झुकाव रहेगा। तीसरे भाव में बैठे हुए ग्रह भी ऐसा ही करते हैं। तीसरे भाव का स्वामी या छठे भाव का स्वामी दसवें या ग्यारहवें भाव में हो तो नौकरी से लाभ मिलता है।

प्राय: देखा गया है कि वृश्चिक लग्न या वृश्चिक राशि वाले नौकरी में सफल होते हैं। लग्न, तीसरे और दसवें भाव में मंगल हो या मंगल किसी भी भाव में बलवान हो तो ऐसा जातक सेना अथवा पुलिस में (जहां हथियार आदि का उपयोग होता है) कार्य करता है। कभी ऐसा कार्य करता है, जहां लोहे की ढलाई, आग, बिजली का काम हो।

दुकानदारी, व्यापार या स्वतंत्र कार्य, जैस डॉक्टर, वकील इत्यादि के लिए कोई निश्चित नियम नहीं है। जिस जातक का सातवां भाव कमजोर हो अथवा सप्तमेश-पीड़ित हो, उसे साझेदारी में व्यवसाय नहीं करना चाहिए।

साधारण तौर से नवें भाव, दसवें भाव और इनके स्वामी बलवान हों तो जातक को अपने व्यवसाय में अच्छा स्थान मिलता है। राजनीति के लिए सूर्य बलवान होना चाहिए। जनप्रतिनिधित्व के लिए (चुनाव में सफलता के लिए, जहां जनता का समर्थन चाहिए, चन्द्रमा बलवान होना चाहिए) सूर्य से बड़े-बड़े व्यक्तियों और चन्द्रमा से जनसाधारण का विचार किया जाता है।

शुभ योग विचार—साधारण नियम बताने के बाद हम अब जन्म-कुण्डली के कुछ 'योग' बताते हैं। योग से मतलब दो या अधिक वस्तुओं का जोड़ (यहां दो या दो से अधिक ग्रह जब सम्बन्धित हों) है। दूसरा शब्द 'राजयोग' है, जिसका मतलब दो या अधिक ग्रहों के योग से है जिंसके द्वारा जातक जीवन में उच्च स्थान प्राप्त करता है।

निम्नलिखित भावों के स्वामियों में सम्बन्ध हों, जैसे—(१) १ और ५, (२) १ और ९, (३) १ और ४, (४) १ और ७, (५) १ और १०, (६) ४ और ५, (७) ४ और ९, (८) ५ और ७, (९) ५ और १०, (१०) ७ और ९, (११) ९ और १०, तो यह बहुत अच्छे राजयोग कहलाते हैं। परन्तु यदि तीसरे, छठे, आठवें और ग्यारहवें भाव के स्वामियों के साथ भी सम्बन्ध करें तो राजयोग का फल नहीं होता है। सम्बन्ध से हमारा क्या तात्पर्य है? इसे पारिभाषिक शब्द विवेचन के अन्त में देखना चाहिए।

मेष लग्न वाले जातक के लिए मंगल और शनि का योग (पहले और दसवें भावों के स्वामी) अच्छा राजयोग है, परन्तु मंगल और शनि दोनों क्रूर ग्रह पञ्चम स्थान में बैठने से सन्तान होने की सम्भावना को नष्ट कर देंगे (पांचवें भाव से सन्तान का विचार होता है)। इसलिए एक योग कुछ कारणों के लिए तो अच्छा होगा, परन्तु किन्हीं कारणों के लिए अच्छा नहीं रहेगा। इन पेंचीदगियों को ध्यान में रखना चाहिए।

(२) यदि चन्द्रमा से दूसरे, बारहवें अथवा दूसरे और बारहवें दोनों ही भावों में शुभ ग्रह हों।

(३) सूर्य से बारहवें भाव में शुभ ग्रह (चन्द्रमा के अलावा), सूर्य से दूसरे भाव में (चन्द्रमा के अलावा) शुभ ग्रह हों अथवा सूर्य से दूसरे और बारहवें दोनों ही भावों में शुभ ग्रह हों। चन्द्रमा इन स्थानों में न तो योग को बिगाड़ता है और न बनाता है।

उपरोक्त बताए हुए (२) और (३) संख्यक योग में मंगल या शनि सूर्य या चन्द्रमा जिस राशि में हों, उसके दोनों तरफ की राशियों में या किसी भी तरफ की राशि में बैठें हो तो योग तो बनाएंगे परन्तु शुभ ग्रहों का होना (क्रूर ग्रह की अपेक्षा) योग के लिए अच्छा है।

(४) लग्न से तीसरे, छठे, ग्यारहवें भाव में शुभ ग्रह हो।

(५) चन्द्र राशि से तीसरे, छठे, ग्यारहवे भाव में शुभ ग्रह हो।

उपरोक्त (४) और (५) संख्यक योग में सबसे अधिक अच्छा फल उस समय होगा जबकि शुभ ग्रह एक साथ या अलग-अलग उन सब भावों में बैठे हों। यदि सिर्फ दो ग्रह ही होंगे तब भी अच्छा ही फल होगा। यदि सिर्फ एक ही शुभ ग्रह हो तो अल्प मात्रा में फल प्राप्त होगा, समझना चाहिए।

(६) यदि चन्द्रमा अपने नवांश में हो या अपने अति मित्र के नवांश में हो और उस पर (अ) दिन में जन्म हो और बृहस्पति की दृष्टि पड़े। (ब) रात्रि में जन्म हो और शुक्र की दृष्टि पड़े (सूर्योदय से सूर्यास्त तक का समय दिन कहलाता है, सूर्यास्त से सूर्योदय तक का समय रात्रि)।

(७) यदि लग्न से छठे, सातवें और आठवें भाव में बुध, बृहस्पति और शुक्र बैठे हों।

(८) यदि चन्द्रमा जिस राशि में हो उससे छठे, सातवें, आठवें भावों में बुध, बृहस्पति और शुक्र बैठे हों।

उपरोक्त (७) और (८) संख्यक योग में यह आवश्यक नहीं है कि बुध, बृहस्पति और शुक्र क्रमशः छठे, सातवें या आठवें में हों। यहाँ दो या तीनों ही ग्रह किसी भी भावों में हो सकते हैं।

(९) पुरुष की जन्म-कुण्डली में (अ) जन्म-दिन के समय में हो, (ब) लग्न, सूर्य, चन्द्रमा—ये तीनों ही विषम संज्ञक राशियों में हों।

(१०) स्त्रियों की जन्म-कुण्डली में (अ) यदि रात्रि में जन्म हो, (ब) लग्न, सूर्य, चन्द्रमा—ये तीनों ही समसंज्ञक राशियों में हों।

उपरोक्त (९) और (१०) संख्यक योग में सब परिस्थिति हो तो 'महाभाग्य योग' कहलाता है।

(११) बुध, बृहस्पति और शुक्र ये तीनों ही लग्न से केन्द्र में हों (अर्थात् पहले, चौथे, सातवें, दसवें) । एक या अधिक ग्रह एक साथ भी हो सकते हैं। यदि इनके अलावा मंगल भी दसवें भाव में हों तब बहुत अच्छा होता है।

(१२) लग्न या चन्द्रमा से मंगल (मेष, वृश्चिक या मकर राशि में बैठकर) पहले, चौथे, सातवें या दसवें भाव में बैठा हो।

(१३) लग्न या चन्द्रमा से बुध (मिथुन या कन्या राशि) पहले, चौथे, सातवें या दसवें भाव में बैठा हो।

(१४) लग्न या चन्द्रमा से बृहस्पति (कर्क, धनु या मीन में हो) और पहले, चौथे, सातवें या दसवें भाव में हो।

(१५) लग्न या चन्द्रमा से शुक्र (तुला, वृषभ या मीन राशि में हो) और पहले, चौथे, सातवें या दसवें भाव में हों।

(१६) लग्न या चन्द्रमा से शनि (तुला, मकर या कुम्भ राशि में हो) और पहले, चौथे, सातवें या दसवें भाव में बैठा हो।

(१७) चन्द्रमा और मंगल एक ही राशि में बैठे हों।

(१८) चन्द्रमा से पहले, चौथे, सातवें या दसवें भाव में बृहस्पति (किसी भी राशि में) बैठा हो।

कर्क राशि में चन्द्रमा और बृहस्पति यदि पहले या चौथे भाव में बैठे हों, तो बहुत बलवान योग करते हैं, क्योंकि चन्द्रमा अपनी स्वयं की राशि में होता है और बृहस्पति वहां अपनी उच्च राशि का। इसके अलावा यह दो अच्छे भाव के स्वामियों का योग है। परन्तु मान लीजिए, चन्द्रमा वृश्चिक का हो और बृहस्पति वृषभ राशि का तो ये दोनों एक-दूसरे से केन्द्र में होंगे परन्तु चन्द्रमा अपनी नीच राशि में और बृहस्पति अपने नैसर्गिक शत्रु की राशि में। इसलिए इन पेंचीदगियों का ध्यान रखना आवश्यक है।

(१९) राहु या केतु केन्द्र में हों (पहले, चौथे, सातवें या दसवें भाव में) और इनके साथ केन्द्र में पांचवें या नवें भाव के स्वामी बैठे हों।

(२०) राहु या केतु त्रिकोण में (लग्न से पांचवें या नवें भाव में) हो और उनके साथ किसी केन्द्र का स्वामी बैठा हो।

(२१) बृहस्पति यदि दूसरे, पांचवें या ग्यारहवें भाव का स्वामी हो तथा उसके साथ दूसरे, नवें या ग्यारहवें भाव का कोई स्वामी चन्द्रमा से केन्द्र में हो।

(२२) सूर्य वर्गोत्तम (तुला राशि के अलावा) और चन्द्रमा कर्क राशि में।

(२३) यदि चन्द्रमा या बृहस्पति अपनी-अपनी राशियों में हों और केन्द्र या त्रिकोण में हों (एक केन्द्र में और दूसरा त्रिकोण में)।

(२४) यदि पूर्णिमा का चन्द्रमा केन्द्र में हो और उस पर बृहस्पति और शुक्र दोनों की दृष्टि पड़े।

(२५) यदि पूर्णिमा का चन्द्रमा वृषभ राशि में हो।

उपरोक्त सभी पच्चीस योग जीवन में धन, समृद्धि और उच्च स्थान देते हैं परन्तु किस मात्रा में इन योगों का फल मिलता है। उसके लिए पहले बताए हुए सिद्धान्त (भावों के स्वामियों के फल का निर्णय) लागू करने से समझ आ जा सकेगा।

इन सब योगों के अतिरिक्त चन्द्रमा को प्रधान मानकर और योग भी हैं। चन्द्रमा कमजोर समझा जा सकता है,यदि नीचे बताए गए कारणों में से कोई हो और अच्छे योग का फल अल्प ही रह जाता है। यदि दोनों ही लागू हों तो अच्छा फल बिल्कुल नष्ट हो जाता है।

(१) यदि जातक की जन्म कृष्णपक्ष की दसवीं से शुक्ल पक्ष की पञ्चमी के अन्तर्गत हुआ हो।

(२) यदि दिन का जन्म हो और चन्द्रमा उदित हो। (लग्न के अंश से सप्तम भाव के अंश तक अस्त भाग और सप्तम भाव के अंश से लग्न के अंश तक का भाग गणना करने से उदित भाग होता है)।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का चतुर्दश पुष्प रूप 'राशि-भाव-ग्रह फल' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।१४।।
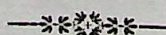
विंशोत्तरी दशा

जन्मनक्षत्र से दशेश ज्ञान प्रकार—जन्म नक्षत्र की संख्या में से २ घटाकर शेष में ९ से भाग दें, एकादि शेष से सूर्यादि दशेश जानना चाहिए। यथा १ शेष से सूर्य, २ शेष से चन्द्र, ३शेष से मंगल, ४ शेष से राहु, ५ शेष से गुरु, ६ शेष से शनि, ७ शेष से बुध, ८ शेष से केतु ९ या ० शेष से शुक्र की दशा समझनी चाहिए।

ग्रहदशा वर्ष और भुक्त भोग्य वर्ष ज्ञान प्रकार—विंशोत्तरी दशा क्रम में सूर्य का दशा वर्ष = ६, चन्द्र = १० मंगल = ७, राहु =१८, गुरु = १६, शनि = १९, बुध = १७, केतु = ७ और शुक्र = २० वर्ष होता है।

अब जन्म नक्षत्र के भयात व भभोग की पूर्ववत् गणना कर भयात में जन्म नक्षत्र वश ज्ञात दशेश ग्रह की दशा वर्ष से गुणा कर भभोग से भाग देने पर जो लब्धि होती है, उसे दशा वर्ष और शेष में १२ से गुणा कर भभोग से भाग देने पर लब्धि मास तथा शेष में क्रम से ३०, ६०, ६० से गुणा और भभोग से भाग देने पर दिन, घटि व पल भी प्राप्त होते हैं। इस प्रकार प्राप्त वर्षादि ग्रह दशा भुक्तवर्षादि होती है। दशा वर्ष से घटाने पर भोग्य वर्षादि हो जाती है। जैसे—

पूर्व उदाहरण (१५) में साधित पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र का भयात = २१।०१ व भभोग = ६०।५३ हैं

इससे शुक्र दशा का भुक्तवर्षादि इस प्रकार साधन करना चाहिए—

$$\text{भुक्तवर्षादि} = \frac{\text{भयातपलात्मक} \times \text{ग्रह दशा वर्ष}}{\text{भभोगपलात्मक}}$$

$$\text{शुक्र भुक्तवर्षादि} = \frac{\text{१२६१} \times \text{२० शुक्र दशा}}{\text{३६५३}}$$

= ६ वर्ष १० मास २५ दिन २४ घटि ३३ पल

अतः शुक्र भोग्यादि वर्ष = २० वर्ष – ६।१०।२५।२४।३३

= १३ । १।४ ।३५।२७

इस प्रकार भुक्त व भोग्य वर्षादि साधन कर विंशोत्तरी दशा चक्र और अन्तर्दशा चक्र का लेखन करना चाहिए।

विंशोत्तरी दशा में ग्रहों के नक्षत्र-क्रम—विंशोत्तरी दशा क्रम में कृत्तिकादि भरणी पर्यन्त २७ नक्षत्रों (अभिजित् को छोड़कर) को तीन

आवृत्तियों में क्रम से सूर्य, चन्द्र, मंगल, राहु, गुरु, शनि, बुध, केतु और शुक्र; इन ९ ग्रहों के कहे गए हैं। दशा व अन्तर्दशा, उसके स्वामियों के नाम, उनके नक्षत्र और वर्षादि संख्या अग्रलिखित चक्र से स्पष्ट ज्ञात होगा।

सारिणी द्वारा विंशोत्तरी दशा साधन—साधारण प्रयास से दशासाधन के लिये सारिणी का उपयोग किया जाता है। इसके पहले गणित द्वारा दशा साधन दिखाया गया है। यहाँ सरलता से दशा साधन का क्रम दिखाया जायेगा। दशा साधन में स्पष्ट चन्द्र की आवश्यकता रहती है। सारिणी में ऊपर राशि तथा बांये तरफ अंश दिये हैं। अभीष्ट स्पष्टचन्द्र की राशि अंश के सम्मुख कोष्ठक में लब्ध फल दशा का भुक्त वर्षादि होगा। जो दशा दो अंशों के भीतर समाप्त होती है। अत: १३ अंश सम्बन्धि फल ६-६-२७ तथा उस दशा के समाप्ति के वर्ष ७ एक ही कोष्ठक में दिये हैं। इसका ध्यान दशा साधन में रखना चाहिये।

इस दूसरी तालिका में कला-विकला सम्बन्धि दशा फल के लिये एक विस्तृत कला-विकला सारिणी दी है। इसमें प्रति कला-विकला सघ्म्बन्धि फल अनायास प्राप्त हो जाता है। इन सब फलों का योग दशा का भुक्तमान बन जाता है। इसे ग्रह दशा वर्ष में घटाने से दशा का भोग्यमान प्राप्त होगा।

उदाहरण—स्पष्ट चन्द्र ४।१७।५६।९ पर से दशा साधन ऊपर लिखे नियमानुसार सारिणी द्वारा किया जाता है। जातक का जन्म भौम दशा में हुआ है।

व. मा. दि. घ. प.

५ । ६ । ० । ०।० राशि ४ अंश १७ सम्बन्धि फल

१६।२४। ०।० कला ५६ सम्बन्धि फल

\+ १।२४।० विकला ०९ सम्बन्धि फल

६।१०।३५।२४।० भौम भुक्त दशा वर्षादि

इसे शुक्र के दशा वर्ष सात में घटाने से भोग्य दशा वर्षादि ३।९।१८।५।५१ प्राप्त हुए। इस प्रकार अन्य उदाहरणों का साधन करना चाहिये।

अन्तर्दशा ज्ञान प्रकार—अपनी प्राप्त दशा वर्ष को ३ से गुणा कर प्राप्त फल में जिस ग्रह की अन्तर्दशा लानी हो, उसकी दशा वर्ष से पुन: गुणा करके ३० से भाग देने से अन्तर्दशा वर्ष, मास, दिन आदि में प्राप्त होता है और प्रत्यन्तर्दशा और प्रत्यन्र्दशा सारिणी देखनी चाहिए।

प्रकृत उदाहरण कुण्डली में जातक का जन्म दिनाङ्क २।४।२००४ पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र और शुक्र महादशा की भुक्तवर्षादि ६।१०।२५ तथा भोग्य वर्षादि १३।१।५ के अनुसार विंशोत्तरी दशा का चक्र अधोलिखित प्रकार बनाना चाहिए—

अथ विंशोत्तरी महादशा चक्रमिदम्

ग्रह	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरु	शनि	बुध	केतु
वर्ष	१३	६	१०	७	१८	१६	१९	१७	७
मास	१	*	*	*	*	*	*	*	*
दिन	५	*	*	*	*	*	*	*	*
सन्-ईसवी २००४	२०१७	२०२३	२०३३	२०४०	२०५८	२०७४	२०९३	२११०	२११७
मास ०४	०५	०५	०५	०५	०५	०५	०५	०५	०५
दिनांक ०२	०७	०७	०७	०७	०७	०७	०७	०७	०७

उपरोक्त प्रकार महादशा चक्र बनाने के बाद आवश्यकतानुसार सूर्यादि नवग्रहों के महादशान्तर्दशा चक्र अधोलिखित प्रकार बनाना चाहिए। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि जन्मकालिक महादशा में अन्तर्दशा लगाते समय अन्तर्दशा भुक्त वर्षादि की सूक्ष्मता से ज्ञान कर लेना चाहिए।

अथ विंशोत्तरी दशा चक्रमिदम्

ग्रह	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरु	शनि	बुध	केतु
.....	.	.	.	भो. ०	.	.	.	.	.
.....	.	.	.	३	.	.	.	.	.
....	.	.	.	४	.	.	.	.	.
सन्-ईसवी २००४	भुक्तम्			२००४	२००७	२०२०	२०२३	२२२६	२०२७
मास ४				०७	०७	०३	०५	०३	०५
दिनांक २				०३	०३	०३	०३	०३	०७

चन्द्रभोग्य से विंशोत्तरी दशा साधन राश्यंश तालिका

अं.	मे. सिं ध.				वृ. क. म.				मि. तु. कुं.				क. वृ. मी.			
		व.	मा.	दि.		व.	मा.	दि.		व.	मा.	दि.		व.	मा.	दि.
०		०	०	०		१	६	०		३	६	०		१२	०	०
१	के.	०	६	९	सू.	१	११	१२	मं.	४	०	९	वृ.	१३	२	१२
२		१	०	१८		२	४	२४		४	६	१८		१४	४	२४
३		१	६	२७		२	१०	६		५	०	२७		१५	७	६
३/२०														१६	०	०
४		२	१	६		३	३	१८		५	७	६	श.	०	११	१२
५		२	७	१५		३	९	०		६	१	१५		२	४	१५
६		३	१	२४		४	२	१२		६	७	२४		३	९	१८
६/४०										७	०	०				
७		३	८	९		४	७	२४	रा.	०	५	१२		५	२	२१
८		४	२	१२		५	१	६		१	९	१८		६	७	२४
९		४	८	२१		५	६	१८		३	१	२४		८	०	२७
१०		५	३	०		६	०	०		४	६	०		९	६	०
११		५	९	९	चं.	०	९	०		५	१०	६		१०	११	३
१२		६	३	१८		१	६	०		७	२	१२		१२	४	६
१३		६	९	२७		२	३	०		८	६	१८		१३	९	९
१३/२०		७	०	०												
१४	शु.	१	०	०		३	०	०		९	१०	२४		१५	२	१२
१५		२	६	०		३	९	०		११	३	०		१६	७	१५
१६		४	०	०		४	६	०		१२	७	६		१८	०	१८
१६/४०														१९	०	०
१७		५	६	०		५	३	०		१३	११	१२	बु.	०	५	३
१८		७	०	०		६	०	०		१५	३	१८		१	८	१२
१९		८	६	०		६	९	०		१६	७	२४		२	११	२१
२०		१०	०	०		७	६	०		१८	०	०		४	३	०
२१		११	६	०		८	३	०	वृ.	१	२	१२		५	६	९
२२		१३	०	०		९	०	०		२	४	२४		६	९	१८
२३		१४	६	०		९	९	०		३	७	६		८	०	२७
२३/२०						१०	०	०								
२४		१६	०	०	मं.	०	४	६		४	९	१८		९	४	६
२५		१७	६	०		०	१०	१५		६	०	०		१०	७	१५
२६		१९	०	०		१	४	२४		७	२	१२		११	१०	२४
२६/४०		२०	०	०												
२७	सू.	०	१	२४		१	११	३		८	४	२४		१३	२	३
२८		०	७	६		२	५	१२		९	७	६		१४	५	१२
२९		१	०	१८		२	११	२१		१०	९	१८		१५	८	२१
३०	सू.	१	६	०	मं.	३	६	०	वृ.	१२	०	०	बु.	१७	०	०

चन्द्रभोग्य से विंशोत्तरी दशा साधन कला-विकला तालिका

	सूर्य						चन्द्र						मंगल केतु					
	कला			विकला			कला			विकला			कला			विकला		
	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.
१	०	२	४२	०	२	४२	०	४	३०	०	४	३०	०	३	९	०	३	९
२	०	५	२४	०	५	२४	०	९	०	०	९	०	०	६	१८	०	६	१८
३	०	८	६	०	८	६	०	१३	३०	०	१३	३०	०	९	२७	०	९	२७
४	०	१०	४८	०	१०	४८	०	१८	०	०	१८	०	०	१२	३६	०	१२	३६
५	०	१३	३०	०	१३	३०	०	२२	३०	०	२२	३०	०	१५	४५	०	१५	४५
६	०	१६	१२	०	१६	१२	०	२७	०	०	२७	०	०	१८	५४	०	१८	५४
७	०	१८	५४	०	१८	५४	१	१	३०	०	३१	३०	०	२२	३	०	२२	३
८	०	२१	३६	०	२१	३६	१	६	०	०	३६	०	०	२५	१२	०	२५	१२
९	०	२४	१८	०	२४	१८	१	१०	३०	०	४०	३०	०	२८	२१	०	२८	२१
१०	०	२७	०	०	२७	०	१	१५	०	०	४५	०	१	१	३०	०	३१	३०
११	०	२९	४२	०	२९	४२	१	१९	३०	०	४९	३०	१	४	३९	०	३४	३९
१२	१	२	२४	०	३२	२४	१	२४	०	०	५४	०	१	७	४८	०	३७	४८
१३	१	५	६	०	३५	६	१	२८	३०	०	५८	३०	१	१०	५७	०	४०	५७
१४	१	७	४८	०	३७	४८	२	३	०	१	३	०	१	१४	६	०	४४	६
१५	१	१०	३०	०	४०	३०	२	७	३०	१	७	३०	१	१७	१५	०	४७	१५
१६	१	१३	३२	०	४३	३२	२	१२	०	१	१२	०	१	२०	२४	०	५०	२४
१७	१	१५	५४	०	४५	५४	२	१६	३०	१	१६	३०	१	२३	३३	०	५३	३३
१८	१	१८	३६	०	४८	३६	२	२१	०	१	२१	०	१	२६	४२	०	५६	४२
१९	१	२१	१८	०	५१	१८	२	२५	३०	१	२५	३०	१	२९	५१	०	५९	५१
२०	१	२४	०	०	५४	०	३	०	०	१	३०	०	२	३	०	१	३	०
२१	१	२६	४२	०	५६	४२	३	४	३०	१	३४	३०	२	६	९	१	६	९
२२	१	२९	२४	०	५९	२४	३	९	०	१	३९	०	२	९	१८	१	९	१८
२३	२	२	६	१	२	६	३	१३	३०	१	४३	३०	२	१२	२७	१	१२	२७
२४	२	४	४८	१	४	४८	३	१८	०	१	४८	०	२	१५	३६	१	१५	३६
२५	२	७	३०	१	७	३०	३	२२	३०	१	५२	३०	२	१८	४५	१	१८	४५
२६	२	१०	१२	१	१०	१२	३	२७	०	१	५७	०	२	२१	५४	१	२१	५४
२७	२	१२	५४	१	१२	५४	४	१	३०	२	१	३०	२	२५	३	१	२५	३
२८	२	१५	३६	१	१५	३६	४	६	०	२	६	०	२	२८	१२	१	२८	१२
२९	२	१८	१८	१	१८	१८	४	१०	३०	२	१०	३०	३	१	२१	१	३१	२१
३०	२	२१	०	१	२१	०	४	१५	०	२	१५	०	३	४	३०	१	३४	३०

चन्द्रभोग्य से विंशोत्तरी दशा साधन कला-विकला तालिका

	सूर्य						चन्द्र						मंगल केतु					
	कला			विकला			कला			विकला			कला			विकला		
	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.
३१	२	२३	४२	१	२३	४२	४	१९	३०	२	१९	३०	३	७	३९	१	३७	३९
३२	२	२६	२४	१	२६	२४	४	२४	०	२	२४	०	३	१०	४८	१	४०	४८
३३	२	२९	६	१	२९	६	४	२८	३०	२	२८	३०	३	१३	५७	१	४३	५७
३४	३	१	४८	१	३१	४८	५	३	०	२	३३	०	३	१७	६	१	४७	६
३५	३	४	३०	१	३४	३०	५	७	३०	२	३७	३०	३	२०	१५	१	५०	१५
३६	३	७	१२	१	३७	१२	५	१२	०	२	४२	०	३	२३	२४	१	५३	२४
३७	३	९	५४	१	३९	५४	५	१६	३०	२	४६	३०	३	२६	३३	१	५६	३३
३८	३	१२	३६	१	४२	३६	५	२१	०	२	५१	०	३	२९	४२	१	५९	४२
३९	३	१५	१८	१	४५	१८	५	२५	३०	२	५५	३०	४	२	५१	२	२	५१
४०	३	१८	०	१	४८	०	६	०	०	३	०	०	४	६	०	२	६	०
४१	३	२०	४२	१	५०	४२	६	४	३०	३	४	३०	४	९	९	२	९	९
४२	३	२३	२४	१	५३	२४	६	९	०	३	९	०	४	१२	१८	२	१२	१८
४३	३	२६	६	१	५६	९	६	१३	३०	३	१३	३०	४	१५	२७	२	१५	२७
४४	३	२८	४८	१	५८	४८	६	१८	०	३	१८	०	४	१८	३६	२	१८	३६
४५	४	१	३०	२	१	३०	६	२२	३०	३	२२	३०	४	२१	४५	२	२१	४५
४६	४	४	१२	२	४	१२	६	२७	०	३	२७	०	४	२४	५४	२	२४	५४
४७	४	६	५४	२	६	५४	७	१	३०	३	३१	३०	४	२८	३	२	२८	३
४८	४	९	३६	२	९	३६	७	६	०	३	३६	०	५	१	१२	२	३१	१२
४९	४	१२	१८	२	१२	१८	७	१०	३०	३	४०	३०	५	४	२१	२	३४	२१
५०	४	१५	०	२	१५	०	७	१५	०	३	४५	०	५	७	३०	२	३७	३०
५१	४	१७	४२	२	१७	४२	७	१९	३०	३	४९	३०	५	१०	३९	२	४०	३९
५२	४	२०	२४	२	२०	२४	७	२४	०	३	५४	०	५	१३	४८	२	४३	४८
५३	४	२३	६	२	२३	६	७	२८	३०	३	५८	३०	५	१६	५७	२	४६	५७
५४	४	२५	४८	२	२५	४८	८	३	०	४	३	०	५	२०	६	२	५०	६
५५	४	२८	३०	२	२८	३०	८	७	३०	४	७	३०	५	२३	१५	२	५३	१५
५६	५	१	१२	२	३१	१२	८	१२	०	४	१२	०	५	२६	२४	२	५६	२४
५७	५	३	५४	२	३३	५४	८	१६	३०	४	१६	३०	५	२९	३३	२	५९	३३
५८	५	६	३६	२	३६	३६	८	२१	०	४	२१	०	६	२	४२	३	२	४२
५९	५	९	१८	२	३९	१८	८	२५	३०	४	२५	३०	६	५	५१	३	५	५१

चन्द्रभोग्य से विंशोत्तरी दशा साधन कला-विकला तालिका

	राहु कला			राहु विकला			गुरु कला			गुरु विकला			शनि कला			शनि विकला		
	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.
१	०	८	६	०	८	६	०	७	१२	०	७	१२	०	८	३३	०	८	३३
२	०	१६	१२	०	१६	१२	०	१४	२४	०	१४	२४	०	१७	६	०	१७	६
३	०	२४	१८	०	२४	१८	०	२१	३६	०	२१	३६	०	२५	३९	०	२५	३९
४	१	२	२४	०	३२	२४	०	२८	४८	०	२८	४८	१	४	१२	०	३४	१२
५	१	१०	३०	०	४०	३०	१	६	०	०	३६	०	१	१२	४५	०	४२	४५
६	१	१८	३६	०	४८	३६	१	१३	१२	०	४३	१२	१	२१	१८	०	५१	१८
७	१	२६	४२	०	५६	४२	१	२०	२४	०	५०	२४	१	२९	५१	०	५९	५१
८	२	४	४८	१	४	४८	१	२७	३६	०	५७	३६	२	८	२४	१	८	२४
९	२	१२	५४	१	१२	५४	२	४	४८	१	४	४८	२	१६	५७	१	१६	५७
१०	२	२१	०	१	२१	०	२	१२	०	१	१२	०	२	२५	३०	१	२५	३०
११	२	२९	६	१	२९	६	२	१९	१२	१	१९	१२	३	४	३	१	३४	३
१२	३	७	१२	१	३७	१२	२	२६	२४	१	२६	२४	३	१२	३६	१	४२	३६
१३	३	१५	१८	१	४५	१८	३	३	३६	१	३३	३६	३	२१	९	१	५१	९
१४	३	२३	२४	१	५३	२४	३	१०	४८	१	४०	४८	३	२९	४२	१	५९	४२
१५	४	१	३०	२	१	३०	३	१८	०	१	४८	०	४	८	१५	२	८	१५
१६	४	९	३६	२	९	३६	३	२५	१२	१	५५	१२	४	१६	४८	२	१६	४८
१७	४	१७	४२	२	१७	४२	४	२	२४	२	२	२४	४	२५	२१	२	२५	२१
१८	४	२५	४८	२	२५	४८	४	९	३६	२	९	३६	५	३	५४	२	३३	५४
१९	५	३	५४	२	३३	५४	४	१६	४८	२	१६	४८	५	१२	२७	२	४२	२७
२०	५	१२	०	२	४२	०	४	२४	०	२	२४	०	५	२१	०	२	५१	०
२१	५	२०	६	२	५०	६	५	१	१२	२	३१	१२	५	२९	३३	२	५९	३३
२२	५	२८	१२	२	५८	१२	५	८	२४	२	३८	२४	६	८	६	३	८	६
२३	६	६	१८	३	६	१८	५	१५	३६	२	४५	३६	६	१६	३९	३	१६	३९
२४	६	१४	२४	३	१४	२४	५	२२	४८	२	५२	४८	६	२५	१२	३	२५	१२
२५	६	२२	३०	३	२२	३०	६	०	०	३	०	०	७	३	४५	३	३३	४५
२६	७	०	३६	३	३०	३६	६	७	१२	३	७	१२	७	१२	१८	३	४२	१८
२७	७	८	४२	३	३८	४२	६	१४	२४	३	१४	२४	७	२०	५१	३	५०	५१
२८	७	१६	४८	३	४६	४८	६	२१	३६	३	२१	३६	७	२९	२४	३	५९	२४
२९	७	२४	५४	३	५४	५४	६	२८	४८	३	२८	४८	८	७	५७	४	७	५७
३०	८	३	०	४	३	०	७	६	०	३	३६	०	८	१६	३०	४	१६	३०

चन्द्रभोग्य से विंशोत्तरी दशा साधन कला-विकला तालिका

	राहु						गुरु						शनि					
	कला			विकला			कला			विकला			कला			विकला		
	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.	मा.	दि.	घ.	दि.	घ.	प.
३१	८	११	६	४	११	६	७	१३	१२	३	४३	१२	८	२५	३	४	२५	३
३२	८	१९	१२	४	१९	१२	७	२०	२४	३	५०	२४	९	३	३६	४	३३	३६
३३	८	२७	१८	४	२७	१८	७	२७	३६	३	५७	३६	९	१२	९	४	४२	९
३४	९	५	२४	४	३५	२४	८	४	४८	४	४	४८	९	२०	४२	४	५०	४२
३५	९	१३	३०	४	४३	३०	८	१२	०	४	१२	०	९	२९	१५	४	५९	१५
३६	९	२१	३६	४	५१	३६	८	१९	१२	४	१९	१२	१०	७	४८	५	७	४८
३७	९	२९	४२	४	५९	४२	८	२६	२४	४	२६	२४	१०	१६	२१	५	१६	२१
३८	१०	७	४८	५	७	४८	९	३	३६	४	३३	३६	१०	२४	५४	५	२४	५४
३९	१०	१५	५४	५	१५	५४	९	१०	४८	४	४०	४८	११	३	२७	५	३३	२७
४०	१०	२४	०	५	२४	०	९	१८	०	४	४८	०	११	१२	०	५	४२	३
४१	११	२	६	५	३२	६	९	२५	१२	४	५५	१२	११	२०	३३	५	५०	३
४२	११	१०	१२	५	४०	१२	१०	२	२४	५	२	२४	११	२९	६	५	५९	३
४३	११	१८	१८	५	४८	१८	१०	९	३६	५	९	३६	१२	७	३९	६	७	३
४४	११	२६	२४	५	५६	२४	१०	१६	४८	५	१६	४८	१२	१६	१२	६	१६	१२
४५	१२	४	३०	६	४	३०	१०	२४	०	५	२४	०	१२	२४	४५	६	२४	१
४६	१२	१२	३६	६	१२	३६	११	१	१२	५	३१	१२	१३	३	१८	६	३३	१
४७	१२	२०	४२	६	२०	४२	११	८	२४	५	३८	२४	१३	११	५१	६	४१	५
४८	१२	२८	४८	६	२८	४८	११	१५	३६	५	४५	३६	१३	२०	२४	६	५०	२
४९	१३	६	५४	६	३६	५४	११	२२	४८	५	५२	४८	१३	२८	५७	६	५८	५
५०	१३	१५	०	६	४५	०	१२	०	०	६	०	०	१४	७	३०	७	७	३
५१	१३	२३	६	६	५३	६	१२	७	१२	६	७	१२	१४	१६	३	७	१६	
५२	१४	१	१२	७	१	१२	१२	१४	२४	६	१४	२४	१४	२४	३६	७	२४	
५३	१४	९	१८	७	९	१८	१२	२१	३६	६	२१	३६	१५	३	९	७	३३	
५४	१४	१७	२४	७	१७	२४	१२	२८	४८	६	२८	४८	१५	११	४२	७	४१	
५५	१४	२५	३०	७	२५	३०	१३	६	०	६	३६	०	१५	२०	१५	७	५०	
५६	१५	३	३६	७	३३	३६	१३	१३	१२	६	४३	१२	१५	२८	४८	७	५८	
५७	१५	११	४२	७	४१	४२	१३	२०	२४	६	५०	२४	१६	७	२१	८	७	
५८	१५	१९	४८	७	४९	४८	१३	२७	३६	६	५७	३६	१६	१५	५४	८	१५	
५९	१५	२७	५४	७	५७	५४	१४	४	४८	७	४	४८	१६	२४	२७	८	२४	

चन्द्रभोग्य से विंशोत्तरी दशा साधन कला-विकला तालिका

	बुध		शुक्र			बुध		शुक्र	
	कला	विकला	कला	विकला		कला	विकला	कला	विकला
	मा. दि. घ.	दि. घ. प.	मा. दि.	दि. घ.		मा. दि. घ.	दि. घ. प.	मा. दि.	दि. घ.
१	० ७ ३९	० ७ ३९	० ९	० ९	३१	७ २७ ९	३ ५७ ९	९ ९	४ ३९
२	० १५ १८	० १५ १८	० १८	० १८	३२	८ ४ ४८	४ ४ ४८	९ १८	४ ४८
३	० २२ ५७	० २२ ५७	० २७	० २७	३३	८ १२ २७	४ १२ २७	९ २७	४ ५७
४	१ ० ३६	० ३० ३६	१ ६	० ३६	३४	८ २० ६	४ २० ६	१० ६	५ ६
५	१ ८ १५	० ३८ १५	१ १५	० ४५	३५	८ २७ ४५	४ २७ ४५	१० १५	५ १५
६	१ १५ ५४	० ४५ ५४	१ २४	० ५४	३६	९ ५ २४	४ ३५ २४	१० २४	५ २४
७	१ २३ ३३	० ५३ ३३	२ ३	१ ३	३७	९ १३ ३	४ ४३ ३	११ ३	५ ३३
८	२ १ १२	१ १ १२	२ १२	१ १२	३८	९ २० ४२	४ ५० ४२	११ १२	५ ४२
९	२ ८ ५१	१ ८ ५१	२ २१	१ २१	३९	९ २८ २१	४ ५८ २१	११ २१	५ ५१
१०	२ १६ ३०	१ १६ ३०	३ ०	१ ३०	४०	१० ६ ०	५ ६ ०	१२ ०	६ ०
११	२ २४ ९	१ २४ ९	३ ९	१ ३९	४१	१० १३ ३९	५ १३ ३९	१२ ९	६ ९
१२	३ १ ४८	१ ३१ ४८	३ १८	१ ४८	४२	१० २१ १८	५ २१ १८	१२ १८	६ १८
१३	३ ९ २७	१ ३९ २७	३ २७	१ ५७	४३	१० २८ ५७	५ २८ ५७	१२ २७	६ २७
१४	३ १७ ६	१ ४७ ६	४ ६	२ ६	४४	११ ६ ३६	५ ३६ ३६	१३ ६	६ ३६
१५	३ २४ ४५	१ ५४ ४५	४ १५	२ १५	४५	११ १४ १५	५ ४४ १५	१३ १५	६ ४५
१६	४ २ २४	२ २ २४	४ २४	२ २४	४६	११ २१ ५४	५ ५१ ५४	१३ २४	६ ५४
१७	४ १० ३	२ १० ३	५ ३	२ ३३	४७	११ २९ ३३	५ ५९ ३३	१४ ३	७ ३
१८	४ १७ ४२	२ १७ ४२	५ १२	२ ४२	४८	१२ ७ १२	६ ७ १२	१४ १२	७ १२
१९	४ २५ २१	२ २५ २१	५ २१	२ ५१	४९	१२ १४ ५१	६ १४ ५१	१४ २१	७ २१
२०	५ ३ ०	२ ३३ ०	६ ०	३ ०	५०	१२ २२ ३०	६ २२ ३०	१५ ०	७ ३०
२१	५ १० ३९	२ ४० ३९	६ ९	३ ९	५१	३२ ० ९	६ ३० ९	१५ ९	७ ३९
२२	५ १८ १८	२ ४८ १८	६ १८	३ १८	५२	१३ ७ ४८	६ ३७ ४८	१५ १८	७ ४८
२३	५ २५ ५७	२ ५५ ५७	६ २७	३ २७	५३	१३ १५ २७	६ ४५ २७	१५ २७	७ ५७
२४	६ ३ ३६	३ ३ ३६	७ ६	३ ३६	५४	१३ २३ ६	६ ५३ ६	१६ ६	८ ६
२५	६ ११ १५	३ ११ १५	७ १५	३ ४५	५५	१४ ० ४५	७ ० ४५	१६ १५	८ १५
२६	६ १८ ५४	३ १८ ५४	७ २४	३ ५४	५६	१४ ८ २४	७ ८ २४	१६ २४	८ २४
२७	६ २६ ३३	३ २६ ३३	८ ३	४ ३	५७	१४ १६ ३	७ १६ ३	१७ ३	८ ३३
२८	७ ४ १२	३ ३४ १२	८ १२	४ १२	५८	१४ २३ ४२	७ २३ ४२	१७ १२	८ ४२
२९	७ ११ ५१	३ ४१ ५१	८ २१	४ २१	५९	१५ १ २१	७ ३१ २१	१७ २१	८ ५१
३०	७ १९ ३०	३ ४९ ३०	९ ०	४ ३०					

विंशोत्तरी दशा ज्ञानार्थ महादशान्तर्दशा चक्र

सूर्य महादशा वर्ष ६ कृत्तिका उत्तरा फा. उत्तराषा. भरणी अन्तर्दशा				चन्द्र महादशा वर्ष १० रोहिणी हस्त श्रवण अन्तर्दशा				भौम महादशा वर्ष ७ मृगशिर चित्रा धनिष्ठा अन्तर्दशा			
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	ग्रह	वर्ष	मास	दिन
रवि	०	३	१८	चन्द्र	०	१०	०	भौम	०	४	२७
चन्द्र	०	६	०	भौम	०	७	०	राहु	१	०	१८
भौम	०	४	६	राहु	१	६	०	गुरु	०	११	६
राहु	०	१०	२४	गुरु	१	४	०	शनि	१	१	९
गुरु	०	९	१८	शनि	१	७	०	बुध	०	११	२७
शनि	०	११	१२	बुध	१	५	०	केतु	०	४	२७
बुध	०	१०	६	केतु	०	७	०	शुक्र	१	२	०
केतु	०	४	६	शुक्र	१	८	०	रवि	०	४	६
शुक्र	१	०	०	रवि	०	६	०	चन्द्र	०	७	०

राहु महादशा वर्ष १८ आर्द्रा स्वाती शततारका अन्तर्दशा				गुरु महादशा वर्ष १६ पुनर्वसु विशाखा पूर्वाभाद्रपदा अन्तर्दशा				शनि महादशा वर्ष १९ उत्तराभाद्रपदा पुष्य अनुराधा अन्तर्दशा			
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	ग्रह	वर्ष	मास	दिन
राहु	२	८	१२	गुरु	२	१	१८	शनि	३	०	३
गुरु	२	४	२४	शनि	२	६	१२	बुध	२	८	९
शनि	२	१०	६	बुध	२	३	६	केतु	१	१	९
बुध	२	६	१८	केतु	०	११	६	शुक्र	३	२	०
केतु	१	०	१८	शुक्र	२	८	०	रवि	०	११	१२
शुक्र	३	०	०	रवि	०	९	१८	चन्द्र	१	७	०
रवि	०	१०	२४	चन्द्र	१	४	०	भौम	१	१	९
चन्द्र	१	६	०	भौम	०	११	६	राहु	२	१०	६
भौम	१	०	१८	राहु	२	४	२४	गुरु	२	६	१२

बुध महादशा वर्ष १७ आश्लेषा ज्येष्ठा रेवती अन्तर्दशा				केतु महादशा वर्ष ७ मघा मूल अश्विनी अन्तर्दशा				शुक्र महादशा वर्ष २० पूर्वाफाल्गुनी पूर्वाषाढ़ा भरणी अन्तर्दशा			
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	ग्रह	वर्ष	मास	दिन
बुध	२	४	२७	केतु	०	४	२७	शुक्र	३	४	०
केतु	०	११	२७	शुक्र	१	२	०	सूर्य	१	०	०
शुक्र	२	१०	०	सूर्य	०	४	६	चन्द्र	१	८	०
सूर्य	०	१०	६	चन्द्र	०	७	०	भौम	१	२	०
चन्द्र	१	५	०	भौम	०	४	२७	राहु	३	०	०
भौम	०	११	२७	राहु	१	०	१८	गुरु	२	८	०
राहु	२	६	१८	गुरु	०	११	६	शनि	३	२	०
गुरु	२	३	६	शनि	१	१	९	बुध	२	१०	०
शनि	२	८	९	बुध	०	११	२७	केतु	१	२	०

विंशोत्तरी सूर्य महादशा की अन्तर्दशा में सबका प्रत्यन्तर

सूर्यान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
रवि	०	०	५	२४
चन्द्र	०	०	९	०
भौम	०	०	६	१८
राहु	०	०	१६	१२
गुरु	०	०	१४	२४
शनि	०	०	१७	६
बुध	०	०	१५	१८
केतु	०	०	६	१८
शुक्र	०	०	१८	०

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
चन्द्र	०	०	१५	०
भौम	०	०	१०	३०
राहु	०	०	२७	०
गुरु	०	०	२४	०
शनि	०	०	२८	३०
बुध	०	०	२५	३०
केतु	०	०	१०	३०
शुक्र	०	१	०	०
रवि	०	०	९	०

भौमान्तर मे प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
भौम	०	०	७	२१
राहु	०	०	१८	५४
गुरु	०	०	१६	४८
शनि	०	०	१९	५७
बुध	०	०	१७	५१
केतु	०	०	७	२१
शुक्र	०	०	२१	०
रवि	०	०	६	१८
चन्द्र	०	०	१०	३०

राह्वन्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
राहु	०	१	१८	३६
गुरु	०	१	१३	१२
शनि	०	१	२१	१८
बुध	०	१	१५	५४
केतु	०	०	१८	५४
शुक्र	०	१	२४	०
रवि	०	०	१६	१२
चन्द्र	०	०	२७	०
भौम	०	०	१८	५४

गुर्वन्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
गुरु	०	१	८	२४
शनि	०	१	१५	३६
बुध	०	१	१०	४८
केतु	०	०	१६	४८
शुक्र	०	१	१८	०
रवि	०	०	१४	२४
चन्द्र	०	०	२४	०
भौम	०	०	१६	४८
राहु	०	१	१३	१२

शन्यन्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
शनि	०	१	२४	९
बुध	०	१	१८	२७
केतु	०	०	१९	५७
शुक्र	०	१	२७	०
रवि	०	०	१७	६
चन्द्र	०	०	२८	३०
भौम	०	०	१९	५७
राहु	०	१	२१	१८
गुरु	०	१	१५	३६

बुधान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
बुध	०	१	१३	२१
केतु	०	०	१७	५१
शुक्र	०	१	२१	०
रवि	०	०	१५	१८
चन्द्र	०	०	२५	३०
भौम	०	०	१७	५१
राहु	०	१	१५	५४
गुरु	०	१	१०	४८
शनि	०	१	१८	२७

केत्वन्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
केतु	०	०	७	२१
शुक्र	०	०	२१	०
रवि	०	०	६	१८
चन्द्र	०	०	१०	३०
भौम	०	०	७	२१
राहु	०	०	१८	५४
गुरु	०	०	१६	४८
शनि	०	०	१९	५७
बुध	०	०	१७	५१

शुक्रान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
शुक्र	०	२	०	०
रवि	०	०	१८	०
चन्द्र	०	१	०	०
भौम	०	०	२१	०
राहु	०	१	२४	०
गुरु	०	१	१८	०
शनि	०	१	२७	०
बुध	०	१	२१	०
केतु	०	०	२१	०

विंशोत्तरी चन्द्र महादशा की अन्तर्दशा में सबका प्रत्यन्तर

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राह्वन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
चन्द्र	०	०	२५	०	भौम	०	०	१२	१५	राहु	०	२	२१	०
भौम	०	०	१७	३०	राहु	०	१	१	३०	गुरु	०	२	१२	०
राहु	०	१	१५	०	गुरु	०	०	२८	०	शनि	०	२	२५	३०
गुरु	०	१	१०	०	शनि	०	१	३	१५	बुध	०	२	१६	३०
शनि	०	१	१७	३०	बुध	०	०	२९	४५	केतु	०	१	१	३०
बुध	०	१	१२	३०	केतु	०	०	१२	१५	शुक्र	०	३	०	०
केतु	०	०	१७	३०	शुक्र	०	१	५	०	रवि	०	०	२७	०
शुक्र	०	१	२०	०	रवि	०	०	१०	३०	चन्द्र	०	१	१५	०
रवि	०	०	१५	०	चन्द्र	०	०	१७	३०	भौम	०	१	१	३०

गुर्वन्तर में प्रत्यन्तर					शन्यन्तर में प्रत्यन्तर					बुधान्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
गुरु	०	२	४	०	शनि	०	३	०	१५	बुध	०	२	१२	१५
शनि	०	२	१६	०	बुध	०	२	२०	४५	केतु	०	०	२९	४५
बुध	०	२	८	०	केतु	०	१	३	१५	शुक्र	०	२	२५	०
केतु	०	०	२८	०	शुक्र	०	३	०	०	रवि	०	०	२५	३०
शुक्र	०	२	२०	०	रवि	०	०	२	३०	चन्द्र	०	१	१२	३०
रवि	०	०	२४	०	चन्द्र	०	१	१७	३०	भौम	०	०	२९	४५
चन्द्र	०	१	१०	०	भौम	०	१	३	१५	राहु	०	२	१६	३०
भौम	०	०	२८	०	राहु	०	२	२५	३०	गुरु	०	२	८	०
राहु	०	२	१२	०	गुरु	०	२	१६	०	शनि	०	२	२०	४५

केत्वेन्तर में प्रत्यन्तर					शुक्रान्तर में प्रत्यन्तर					सूर्यान्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
केतु	०	०	१२	१५	शुक्र	०	३	१०	०	रवि	०	०	९	०
शुक्र	०	१	५	०	रवि	०	१	०	०	चन्द्र	०	०	१५	०
रवि	०	०	१०	३०	चन्द्र	०	१	२०	०	भौम	०	०	१०	३०
चन्द्र	०	०	१७	३०	भौम	०	१	५	०	राहु	०	०	२७	०
भौम	०	०	१२	१५	राहु	०	३	०	०	गुरु	०	०	२४	०
राहु	०	१	१	३०	गुरु	०	२	२०	०	शनि	०	०	२८	३०
गुरु	०	०	२८	०	शनि	०	३	५	०	बुध	०	०	२५	३०
शनि	०	१	३	१५	बुध	०	२	२५	०	केतु	०	०	१०	३०
बुध	०	०	२९	४५	केतु	०	१	५	०	शुक्र	०	१	०	०

विंशोत्तरी कुज महादशा की अन्तर्दशा में सबका प्रत्यन्तर

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राह्वन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
भौम	०	०	८	१५	राहु	०	१	२६	४२	गुरु	०	१	१४	४८
राहु	०	०	२२	३	गुरु	०	१	२०	२४	शनि	०	१	२३	१२
गुरु	०	०	१९	३६	शनि	०	१	२९	५१	बुध	०	१	१७	३६
शनि	०	०	२३	१६	बुध	०	१	२३	३३	केतु	०	०	१९	३६
बुध	०	०	२०	५०	केतु	०	०	२२	३	शुक्र	०	१	२६	०
केतु	०	०	८	३४	शुक्र	०	२	३	०	रवि	०	०	१६	४८
शुक्र	०	०	२४	३०	रवि	०	०	१८	५४	चन्द्र	०	०	२८	०
रवि	०	०	७	२१	चन्द्र	०	१	१	३०	भौम	०	०	१९	३६
चन्द्र	०	०	१२	१५	भौम	०	०	२२	३	राहु	०	१	२०	२४

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राह्वन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
शनि	२	३	१०	३०	बुध	१	२०	३४	३०	केतु	०	८	३४	३०
बुध	१	२६	३१	३०	केतु	०	२०	४९	३०	शुक्र	०	२४	३०	०
केतु	०	२३	१६	३०	शुक्र	१	२९	३०	०	रवि	०	७	२१	०
शुक्र	२	६	३०	०	रवि	०	१७	५१	०	चन्द्र	०	१२	१५	०
रवि	०	१९	५७	०	चन्द्र	०	२९	४५	०	भौम	०	८	३४	३०
चन्द्र	१	३	१५	०	भौम	०	२०	४९	३०	राहु	०	२२	३	०
भौम	०	२३	१६	०	राहु	१	२३	३३	०	गुरु	०	१९	३६	०
राहु	१	२९	५१	०	गुरु	१	१७	३६	०	शनि	०	२३	१६	३०
गुरु	१	२३	१२	०	शनि	१	२६	३१	३०	बुध	०	२०	४९	३०

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राह्वन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
शुक्र	०	२	१०	०	रवि	०	०	६	१८	चन्द्र	०	०	१७	३०
रवि	०	०	२१	०	चन्द्र	०	०	१०	३०	भौम	०	०	१२	१५
चन्द्र	०	१	५	०	भौम	०	०	७	२१	राहु	०	१	१	३०
भौम	०	०	२४	३०	राहु	०	०	१८	५४	गुरु	०	०	२८	०
राहु	०	२	३	०	गुरु	०	०	१६	४८	शनि	०	१	३	१५
गुरु	०	१	२६	०	शनि	०	०	१९	५७	बुध	०	०	२९	४५
शनि	०	२	६	३०	बुध	०	०	१७	५१	केतु	०	०	१२	१५
बुध	०	१	२९	३०	केतु	०	०	७	२१	शुक्र	०	१	५	०
केतु	०	०	२४	३०	शुक्र	०	०	२१	०	रवि	०	०	१०	३०

विंशोत्तरी राहु महादशा की अन्तर्दशा में सबका प्रत्यन्तर

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राह्वन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
राहु	०	४	२५	४८	गुरु	०	३	२५	१२	शनि	०	५	१२	२७
गुरु	०	४	९	३६	शनि	०	४	१६	४८	बुध	०	४	२५	२१
शनि	०	५	३	५४	बुध	०	४	२	२४	केतु	०	१	२९	५१
बुध	०	४	१७	४२	केतु	०	१	२०	२४	शुक्र	०	५	२१	०
केतु	०	१	२६	४२	शुक्र	०	४	२४	०	रवि	०	१	२१	१८
शुक्र	०	५	१२	०	रवि	०	१	१३	१२	चन्द्र	०	२	२५	३०
रवि	०	१	१८	३६	चन्द्र	०	२	१२	०	भौम	०	१	२९	५१
चन्द्र	०	२	२१	०	भौम	०	१	२०	२४	राहु	०	५	३	५४
भौम	०	१	२६	४२	राहु	०	४	९	३६	गुरु	०	४	१६	४८

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राह्वन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
बुध	०	४	१०	३	केतु	०	०	२२	३	शुक्र	०	६	०	०
केतु	०	१	२३	३३	शुक्र	०	२	३	०	रवि	०	१	२४	०
शुक्र	०	५	३	०	रवि	०	०	१८	५४	चन्द्र	०	३	०	०
रवि	०	१	१५	५४	चन्द्र	०	१	१	३०	भौम	०	२	३	०
चन्द्र	०	२	१६	३०	भौम	०	०	२२	३	राहु	०	५	१२	०
भौम	०	१	२३	३३	राहु	०	१	२६	४२	गुरु	०	४	२४	०
राहु	०	४	१७	४२	गुरु	०	१	२०	२४	शनि	०	५	२१	०
गुरु	०	४	२	२४	शनि	०	१	२९	५१	बुध	०	५	३	०
शनि	०	४	२५	२१	बुध	०	१	२३	३३	केतु	०	२	३	०

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राह्वन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
रवि	०	०	१६	१२	चन्द्र	०	१	१५	०	भौम	०	०	२२	३
चन्द्र	०	०	२७	०	भौम	०	१	१	३०	राहु	०	१	२६	४२
भौम	०	०	१८	५४	राहु	०	२	२१	०	गुरु	०	१	२०	२४
राहु	०	१	१८	३६	गुरु	०	२	१२	०	शनि	०	१	२९	५१
गुरु	०	१	१३	१२	शनि	०	२	२५	३०	बुध	०	१	२३	३३
शनि	०	१	२१	१८	बुध	०	२	१६	३०	केतु	०	०	२२	३
बुध	०	१	१५	५४	केतु	०	१	१	३०	शुक्र	०	२	३	०
केतु	०	०	१८	५४	शुक्र	०	३	०	०	रवि	०	०	१८	५४
शुक्र	०	१	२४	०	रवि	०	०	२७	०	चन्द्र	०	१	१	३०

विंशोत्तरी गुरु महादशा की अन्तर्दशा में सबका प्रत्यन्तर

चन्द्रान्तर मे प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राहन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
गुरु	०	३	१२	२४	शनि	०	४	२४	२४	बुध	०	३	२५	३६
शनि	०	४	१	३६	बुध	०	४	९	१२	केतु	०	१	१७	३६
बुध	०	३	१८	४८	केतु	०	१	२३	१२	शुक्र	०	४	१६	०
केतु	०	१	१४	४८	शुक्र	०	५	२	०	रवि	०	१	१०	४६
शुक्र	०	४	८	०	रवि	०	१	१५	३६	चन्द्र	०	२	८	०
रवि	०	१	८	२४	चन्द्र	०	२	१६	०	भौम	०	१	१७	३६
चन्द्र	०	२	४	०	भौम	०	१	२३	१२	राहु	०	४	२	२४
भौम	०	१	१४	४८	राहु	०	४	१६	४८	गुरु	०	३	१८	४८
राहु	०	३	२५	१२	गुरु	०	४	१	३६	शनि	०	४	९	१२

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राहन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
केतु	०	०	१९	३६	शुक्र	०	५	१०	०	रवि	०	०	१४	२४
शुक्र	०	१	२६	०	रवि	०	१	१८	०	चन्द्र	०	०	२४	०
रवि	०	०	१६	४८	चन्द्र	०	२	२०	०	भौम	०	०	१६	४८
चन्द्र	०	०	२८	०	भौम	०	१	२६	०	राहु	०	१	१३	१२
भौम	०	०	१९	३६	राहु	०	४	२४	०	गुरु	०	१	८	२४
राहु	०	१	२०	२४	गुरु	०	४	८	०	शनि	०	१	१५	३६
गुरु	०	१	१४	४८	शनि	०	५	२	९	बुध	०	१	१०	४८
शनि	०	१	२३	१२	बुध	०	४	१६	०	केतु	०	०	१६	४८
बुध	०	१	१७	३६	केतु	०	१	२६	०	शुक्र	०	१	१८	०

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राहन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
चन्द्र	०	१	१०	०	भौम	०	०	१९	३६	राहु	०	४	९	३६
भौम	०	०	२८	०	राहु	०	१	२०	२४	गुरु	०	३	२५	१२
राहु	०	२	१२	०	गुरु	०	१	१४	४८	शनि	०	४	१६	४८
गुरु	०	२	४	०	शनि	०	१	२३	१२	बुध	०	४	२	२४
शनि	०	२	१६	०	बुध	०	१	१७	३६	केतु	०	१	२०	२४
बुध	०	२	८	०	केतु	०	०	१९	३६	शुक्र	०	४	२४	०
केतु	०	०	२८	०	शुक्र	०	१	२६	०	रवि	०	१	१३	१२
शुक्र	०	२	२०	०	रवि	०	०	१६	४८	चन्द्र	०	२	१२	०
रवि	०	०	२४	०	चन्द्र	०	०	२८	०	भौम	०	१	२०	२४

विंशोत्तरी शनि महादशा की अन्तर्दशा में सबका प्रत्यन्तर

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर						भौमान्तर में प्रत्यन्तर						राह्वन्तर में प्रत्यन्तर					
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	पल	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	पल	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	पल
शनि	०	५	२१	२८	३०	बुध	०	४	१७	१६	३०	केतु	०	०	२३	१६	३०
बुध	०	५	३	२५	३०	केतु	०	१	२६	३१	३०	शुक्र	०	२	६	३०	०
केतु	०	२	३	१०	३०	शुक्र	०	५	११	३०	०	रवि	०	०	१९	५७	०
शुक्र	०	६	०	३०	०	रवि	०	१	१८	२७	०	चन्द्र	०	१	३	१५	०
रवि	०	१	२४	९	०	चन्द्र	०	२	२०	४५	०	भौम	०	०	२३	१६	३०
चन्द्र	०	३	०	१५	०	भौम	०	१	२६	३१	३०	राहु	०	१	२९	५१	०
भौम	०	२	३	१०	३०	राहु	०	४	२५	३१	०	गुरु	०	१	२३	१२	०
राहु	०	५	१२	२७	०	गुरु	०	४	९	१२	०	शनि	०	२	३	१०	३०
गुरु	०	४	२४	२४	०	शनि	०	५	३	२५	३०	बुध	०	१	२६	३१	३०

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राह्वन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
शुक्र	०	६	१०	०	रवि	०	०	१७	६	चन्द्र	०	१	१७	३०
रवि	०	१	२७	०	चन्द्र	०	०	२८	३०	भौम	०	१	३	१५
चन्द्र	०	३	५	०	भौम	०	०	१९	५७	राहु	०	२	२५	३०
भौम	०	२	६	३०	राहु	०	१	२१	१८	गुरु	०	२	१६	०
राहु	०	५	२१	०	गुरु	०	१	१५	३६	शनि	०	३	०	१५
गुरु	०	५	२	०	शनि	०	१	२४	९	बुध	०	२	२०	४५
शनि	०	६	०	३०	बुध	०	१	१८	२७	केतु	०	१	३	१५
बुध	०	५	११	३०	केतु	०	०	१९	५७	शुक्र	०	३	५	०
केतु	०	२	६	३०	शुक्र	०	१	२७	०	रवि	०	०	२८	३०

राह्वन्तर में प्रत्यन्तर						गुर्वन्तर में प्रत्यन्तर					शन्यन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	पल	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
राहु	०	०	२३	१६	३०	गुरु	०	५	३	५४	शनि	०	४	१	३६
गुरु	०	१	२९	५१	०	शनि	०	४	१६	४८	बुध	०	४	२४	२४
शनि	०	१	२३	१२	०	बुध	०	५	१२	२७	केतु	०	४	९	१२
बुध	०	२	३	१०	०	केतु	०	४	२५	२१	शुक्र	०	१	२३	१२
केतु	०	१	२६	३१	३०	शुक्र	०	१	२९	५१	रवि	०	५	२	०
शुक्र	०	०	२३	१६	३०	रवि	०	५	२१	०	चन्द्र	०	१	१५	३६
रवि	०	२	६	३०	०	चन्द्र	०	१	२१	१८	भौम	०	२	१६	०
चन्द्र	०	०	१९	५७	०	भौम	०	२	२५	३०	राहु	०	१	२३	१२
भौम	०	१	३	१५	०	राहु	०	१	२९	५१	गुरु	०	४	१६	४८

विंशोत्तरी बुध महादशा की अन्तर्दशा में सबका प्रत्यन्तर

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	पल
बुध	०	४	२	४९	३०
केतु	०	१	२०	३४	३०
शुक्र	०	४	२४	३०	०
रवि	०	१	१३	२१	०
चन्द्र	०	२	१२	१५	०
भौम	०	१	२०	३४	३०
राहु	०	४	१०	३	०
गुरु	०	३	२५	३६	०
शनि	०	४	१७	१६	३०

भौमान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	पल
केतु	०	०	२०	४९	३०
शुक्र	०	१	२९	३०	०
रवि	०	०	१७	५१	०
चन्द्र	०	०	२९	४५	०
भौम	०	०	२०	४९	३०
राहु	०	१	२३	३३	०
गुरु	०	१	१७	३६	०
शनि	०	१	२६	३१	३०
बुध	०	१	२०	३४	३०

राह्वन्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
शुक्र	०	५	२०	०
रवि	०	१	२१	०
चन्द्र	०	२	२५	०
भौम	०	१	२९	३०
राहु	०	५	३	०
गुरु	०	४	१६	०
शनि	०	५	११	३०
बुध	०	४	२४	३०
केतु	०	१	२९	३०

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
रवि	०	०	१५	१८
चन्द्र	०	०	२५	३०
भौम	०	०	१७	५१
राहु	०	१	१५	५४
गुरु	०	१	१०	४८
शनि	०	१	१८	२७
बुध	०	१	१३	२१
केतु	०	०	१७	५१
शुक्र	०	१	२१	०

भौमान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
चन्द्र	०	१	१२	३०
भौम	०	०	२९	४५
राहु	०	२	१६	३०
गुरु	०	२	८	०
शनि	०	२	२०	४५
बुध	०	२	१२	१५
केतु	०	०	२९	४५
शुक्र	०	२	२५	०
रवि	०	०	२५	३०

राह्वन्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घंटा	पल
भौम	०	०	२०	४९	३०
राहु	०	१	२३	३३	०
गुरु	०	१	१७	३६	०
शनि	०	१	२६	३१	३०
बुध	०	१	२०	३४	३०
केतु	०	०	२०	४९	३०
शुक्र	०	१	२९	३०	०
रवि	०	०	१७	५१	०
चन्द्र	०	०	२९	४५	०

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
रवि	०	४	१७	४२
चन्द्र	०	४	२	२४
भौम	०	४	२५	२१
राहु	०	४	१०	३
गुरु	०	१	२३	३३
शनि	०	५	३	०
बुध	०	१	१५	५४
केतु	०	२	१६	३०
शुक्र	०	१	२३	३३

भौमान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
चन्द्र	०	३	१८	४८
भौम	०	४	९	१२
राहु	०	३	२५	३६
गुरु	०	१	१७	३६
शनि	०	४	१६	०
बुध	०	१	१०	४८
केतु	०	२	८	०
शुक्र	०	१	१७	३६
रवि	०	४	२	२४

राह्वन्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घंटा	पल
भौम	०	५	३	२५	३०
राहु	०	४	१७	१६	३०
गुरु	०	१	२६	३१	३०
शनि	०	५	११	३०	०
बुध	०	१	१८	२७	०
केतु	०	२	२०	४५	०
शुक्र	०	१	२६	३१	३०
रवि	०	४	२५	२१	०
चन्द्र	०	४	९	१२	०

विंशोत्तरी केतु महादशा की अन्तर्दशा में प्रत्यन्तर

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	पल
केतु	०	०	८	३४	३०
शुक्र	०	०	२४	३०	०
रवि	०	०	७	२१	०
चन्द्र	०	०	१२	१५	०
भौम	०	०	८	३४	३०
राहु	०	०	२२	३	०
गुरु	०	०	१९	३६	०
शनि	०	०	२३	१६	३०
बुध	०	०	२०	४९	३०

भौमान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
शुक्र	०	२	१०	०
रवि	०	०	२१	०
चन्द्र	०	१	५	०
भौम	०	०	२४	३०
राहु	०	२	३	०
गुरु	०	१	२६	०
शनि	०	२	६	३०
बुध	०	१	२९	३०
केतु	०	०	२४	३०

राहून्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
रवि	०	०	६	१८
चन्द्र	०	०	१०	३०
भौम	०	०	७	२१
राहु	०	०	१८	५४
गुरु	०	०	१६	४८
शनि	०	०	१९	५७
बुध	०	०	१७	५१
केतु	०	०	७	२१
शुक्र	०	०	२१	०

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
चन्द्र	०	०	१७	३०
भौम	०	०	१२	१५
राहु	०	१	१	३०
गुरु	०	०	२८	०
शनि	०	१	३	१५
बुध	०	०	२९	४५
केतु	०	०	१२	१५
शुक्र	०	१	५	०
रवि	०	०	१०	३०

भौमान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	पल
भौम	०	०	८	३४	३०
राहु	०	०	२२	३	०
गुरु	०	०	१९	३६	०
शनि	०	०	२३	१६	३०
बुध	०	०	२०	४९	३०
केतु	०	०	८	३४	३०
शुक्र	०	०	२४	३०	०
रवि	०	०	७	२१	०
चन्द्र	०	०	१२	१५	०

राहून्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
राहु	०	१	२६	४२
गुरु	०	१	२०	२४
शनि	०	१	२९	५१
बुध	०	१	२३	३३
केतु	०	०	२२	३
शुक्र	०	२	३	०
रवि	०	०	१८	५४
चन्द्र	०	१	१	३०
भौम	०	०	२२	३

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
गुरु	०	१	१४	४८
शनि	०	१	२३	१२
बुध	०	१	१७	३६
केतु	०	०	१९	३६
शुक्र	०	१	२६	०
रवि	०	०	१६	४८
चन्द्र	०	०	२८	०
भौम	०	०	१९	३६
राहु	०	१	२०	२४

भौमान्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	पल
शनि	०	२	३	१०	३०
बुध	०	१	२६	३१	३०
केतु	०	०	२३	१६	३०
शुक्र	०	२	६	३०	०
रवि	०	०	१९	५७	०
चन्द्र	०	१	३	१५	०
भौम	०	०	२३	१६	३०
राहु	०	१	२९	५१	०
गुरु	०	१	२३	१२	०

राहून्तर में प्रत्यन्तर

ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	पल
बुध	०	१	२०	३४	३०
केतु	०	०	२०	४९	३०
शुक्र	०	१	२९	३०	०
रवि	०	०	१७	५१	०
चन्द्र	०	०	२९	४५	०
भौम	०	०	२०	४९	३०
राहु	०	१	२३	३३	०
गुरु	०	१	१७	३६	०
शनि	०	१	२६	३१	३०

विंशोत्तरी शुक्र महादशा की अन्तर्दशा में सबका प्रत्यन्तर

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राह्वन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
शुक्र	०	६	२०	०	रवि	०	०	१८	०	चन्द्र	०	१	२०	०
रवि	०	२	०	०	चन्द्र	०	१	०	०	भौम	०	१	५	०
चन्द्र	०	३	१०	०	भौम	०	०	२१	०	राहु	०	३	०	०
भौम	०	२	१०	०	राहु	०	१	२४	०	गुरु	०	२	२०	०
राहु	०	६	०	०	गुरु	०	१	१८	०	शनि	०	३	५	०
गुरु	०	५	१०	०	शनि	०	१	२७	०	बुध	०	२	२५	०
शनि	०	६	१०	०	बुध	०	१	२१	०	केतु	०	१	५	०
बुध	०	५	२०	०	केतु	०	०	२१	०	शुक्र	०	३	१०	०
केतु	०	२	१०	०	शुक्र	०	२	०	०	रवि	०	१	०	०

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राह्वन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
भौम	०	०	२४	३०	राहु	०	५	१२	०	गुरु	०	४	८	०
राहु	०	२	३	०	गुरु	०	४	२४	०	शनि	०	५	२	०
गुरु	०	१	२६	०	शनि	०	५	२१	०	बुध	०	४	१६	०
शनि	०	२	६	३०	बुध	०	५	३	०	केतु	०	१	२६	०
बुध	०	१	२९	३०	केतु	०	२	३	०	शुक्र	०	५	१०	०
केतु	०	०	२४	३०	शुक्र	०	६	०	०	रवि	०	१	१८	०
शुक्र	०	०	१०	०	रवि	०	१	२४	०	चन्द्र	०	२	२०	०
रवि	०	०	२१	०	चन्द्र	०	३	०	०	भौम	०	१	२६	०
चन्द्र	०	१	५	०	भौम	०	२	३	०	राहु	०	४	२४	०

चन्द्रान्तर में प्रत्यन्तर					भौमान्तर में प्रत्यन्तर					राह्वन्तर में प्रत्यन्तर				
ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी	ग्रह	वर्ष	मास	दिन	घटी
शनि	०	६	०	३०	बुध	०	४	२४	३०	केतु	०	०	२४	३०
बुध	०	५	११	३०	केतु	०	१	२९	३०	शुक्र	०	२	१०	०
केतु	०	२	६	३०	शुक्र	०	५	२०	०	रवि	०	०	२१	०
शुक्र	०	६	१०	०	रवि	०	१	२१	०	चन्द्र	०	१	५	०
रवि	०	१	२७	०	चन्द्र	०	२	२५	०	भौम	०	०	२४	३०
चन्द्र	०	३	५	०	भौम	०	१	२९	३०	राहु	०	२	३	०
भौम	०	२	६	३०	राहु	०	५	३	०	गुरु	०	१	२६	०
राहु	०	५	२१	०	गुरु	०	४	१६	०	शनि	०	२	६	३०
गुरु	०	५	२	०	शनि	०	५	११	३०	बुध	०	१	२९	३०

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का पञ्चदश पुष्प रूप 'विंशोत्तरी दशा' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।१५।।

१६

दशा-अन्तर्दशा फल विवेचन

सूर्य महादशा में सभी ग्रहों की अन्तर्दशा फल—

सूर्य महादशा में सूर्यान्तर का फल—सूर्य उच्चराशि में या अपनी राशि में या केन्द्र (१-४-७-१०) में या लाभ अथवा त्रिकोण (५-९) में रहे तो वह अपनी दशा और अन्तर्दशा में धन-धान्य का लाभ कराता है, यदि नीचादि अशुभ राशि में स्थित हो तो अशुभ फल देता है।

सूर्य यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो उसकी दशा अन्तर्दशा में अपमृत्यु (मरणतुल्य कष्ट) का भय होता है। अपमृत्यु दोष के निवारण हेतु मृत्युञ्जय का जप तथा सूर्य की पूजा आदि शान्ति क्रिया करानी चाहिये।

सूर्य महादशा में चन्द्रान्तर्दशा का फल—चन्द्र यदि केन्द्र त्रिकोण (१-४-७-१०) में हो तो सूर्यदशा में चन्द्र की अन्तर्दशा आने पर विवाहादि उत्सव एवं धन-सम्पत्ति-गृह-भूमि-पशु-वाहन आदि की वृद्धि होती है। चन्द्रमा यदि स्वोच्च, स्वराशि में हो तो स्त्रीसुख धन पुत्रादि का लाभ तथा राजा महाराजा की कृपा से अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है।

चन्द्रमा यदि क्षीण या पापग्रह से युक्त हो तो स्त्री पुत्रादि को पीड़ा-कार्यहानि-लोगो से विवाद-नौकर सेवक का नाश-राजा से विरोध तथा धन धान्यादि का भी नाश होता है। यदि ६, ८, १२ में चन्द्र रहे तो जलभय-मनोव्यथा-बन्धन-रोगभय-स्थानहानि-बन्धुओं से विवाद-कदन्नभोजन-चोर आदि से पीड़ा-राजा का कोप तथा मूत्र कृच्छ्रादि रोग से शरीर में कष्ट होता है।

दशाधिपति से ११, ९ तथा केन्द्रस्थान में शुभग्रह हो तो सूर्यदशा के चन्द्रान्तर में भोग-भाग्योदय-सन्तोष-स्त्री व पुत्र सुख की वृद्धि-राज्यलाभ-स्थानलाभ-विवाहयज्ञोपवीतादि उत्सव-वस्त्र-भूषण-वाहन का लाभ तथा पुत्र पौत्रादि का सुख होता है॥११-१२॥

दशेश से ६, ८, १२ में चन्द्र हो अथवा बलहीन हो तो कदन्नभोजन तथा देशान्तरगमन होता है। मारकेश (द्वितीयेश-सप्तमेश) की अन्तर्दशा में अपमृत्युभय भी होता है। उसकी शान्ति के लिये श्वेता गौ एवं महिषी का दान करना चाहिए।

सूर्यमहादशा में भौमान्तर्दशा का फल—मङ्गल यदि स्वोच्च-स्वराशि-केन्द्र या त्रिकोण में हो तो सूर्यदशा में मङ्गल की अन्तर्दशा आने पर

भूमिलाभ-कृषि से धन धान्य की वृद्धि-गृह क्षेत्रादि का लाभ व रक्तवस्त्र की प्राप्ति होती है। भौम लग्नेश से युक्त हो तो सौख्य-शत्रुनाश-मन दृढ़ता-राजसम्मान-कुटुम्बसुख तथा भाईयों की वृद्धि होती है।

दशेश से १२, ८ में भौम स्थित हो और पापग्रह से युत या दृष्ट होकर अधिकार तथा बल से हीन हो तो उसकी अन्तर्दशा में क्रूरबुद्धि-मानसिक रोग-कारागार-बन्धुनाश-भाईयों में विरोध और कार्यनाश होता है।

भौम यदि नीचराशि में हो या दुर्बल हो तो राजा के द्वारा धननाश तथा यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शारीरिक और मानसिक कष्ट होता है। वेदपाठ-जप-दान-वृषोत्सर्ग आदि शान्ति कार्य करने से आयु-आरोग्य की वृद्धि और कार्य में सिद्धि प्राप्त होती है।

सूर्यमहादशा में राहु अन्तर्दशाफल—सूर्य की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो और राहु लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में रहे तो आरम्भ में २ मास तक धनहानि-चौर सर्प और व्रण का भय तथा स्त्री पुत्र को कष्ट होता है इसके बाद सुखलाभ होता है। राहु यदि शुभग्रह से युत हो या शुभनवांश में स्थित हो तो आरोग्य-सन्तोष-राजा से सम्मान प्राप्ति और सुख होता है। लग्न से उपचय (३, ६, १०, ११) स्थान में यदि राहु योग कारक ग्रह से युत हो या दशेश से शुभस्थान में स्थित हो तो राजा से सम्मानप्राप्ति-भाग्यवृद्धि-यशलाभ-स्त्रीपुत्र को कष्ट तथा पुत्र पौत्र जन्म आदि उत्सव से घर में कल्याण व शोभा होती है।

सूर्य से १२, ८ में स्थित होकर राहु यदि बलहीन हो तो बन्धन-स्थाननाश-चोर व सर्प का भय तथा व्रण होता है। स्त्री पुत्र की उन्नति-पशु-घर-कृषि का नाश तथा गुल्म-क्षय-अतिसार आदि रोग से पीड़ा होती है।

राहु यदि २, ७ में स्थित हो या इन स्थान के अधिपतियों से युक्त हो तो उसकी अन्तर्दशा में अपमृत्यु तथा सर्प का भय होता है। इसकी शान्ति हेतु दुर्गा का पूजन-जप तथा छाग-कृष्णागौ-महिषी आदि का दान करना चाहिए।

सूर्यमहादशा में गुरु अन्तर्दशा का फल—सूर्य महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो तथा गुरु लग्न से केन्द्र-त्रिकोण में या स्वोच्च-स्वगृह या मित्रगृह या मित्रके वर्ग में स्थित हो तो स्त्रीप्राप्ति, राजा की कृपा, धन धान्य-पुत्रसुख-महाराज की कृपा से अभीष्ट कार्यसिद्धि एवं विप्रों से सम्मान् और वस्त्रादि का लाभ होता है।

यदि बृहस्पति भाग्येश और दशमेश हो तो राज्यलाभ-पालकी आदि वाहन का लाभ तथा स्थानप्राप्ति होती है। दशेश से शुभस्थान में गुरु रहे तो भाग्यवृद्धि-धर्मकार्य-देवपूजा-गुरुभक्ति आदि पुण्यकार्य एवं मनोकामना सिद्ध होती हैं।

यदि दशापति से गुरु ६, ८ में हो या नीचस्थान में हो या पापग्रह से युत हो तो स्त्री-पुत्र को कष्ट-शरीर में पीड़ा-राजकोप-भय-इष्टकार्य की हानि-महाभय-पापकर्म से धननाश-शरीर में कष्ट तथा मानसिक व्यथा होती है। इसमें सुवर्ण दान, कपिला गौ का दान तथा इष्टदेव की पूजा करने से आरोग्य होता है।

सूर्यमहादशा में शन्यन्तर्दशा का फल—लग्न से केन्द्र त्रिकोण में शनि हो तो सूर्य की महादशा में शनि की अन्तर्दशा आने पर शत्रुनाश-पूर्णसुख-स्वल्प अन्न व द्रव्य का लाभ और घर में विवाहादि शुभ कार्य होते हैं। शनि यदि स्वोच्च-स्वगृह या मित्रराशि में या मित्रग्रह से युक्त हो तो कल्याण-सम्पत्तिवृद्धि, राजा से सम्मान-कीर्ति तथा विविध प्रकार से वस्त्र व धन का लाभ होता है।

यदि शनि दशेश से ८, १२ में हो या पापग्रह से युत हो तो वात-शूल-ज्वर-अतिसार आदि रोग से पीड़ा-बन्धन-कार्यहानि-धननाश-कलह तथा स्वजनों से विग्रह होता है।

सूर्यमहादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो प्रारम्भ में मित्रहानि, मध्य में शुभ तथा अन्त में क्लेश होता है। शनि नीचस्थ हो तो भी इसी प्रकार माता-पिता का वियोग तथा भ्रमण कार्य होता है। यदि शनि द्वितीयेश-सप्तमेश हो तो अपमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति हेतु गौ-महिषी और छाग का दान तथा मृत्युञ्जय जप करना चाहिए।

सूर्यमहादशा में बुधान्तर्दशा का फल—सूर्य महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो और बुध यदि उच्च-स्वगृह या लग्न से केन्द्र त्रिकोण में हो तो राज्यलाभ-उत्साह-स्त्री-पुत्रादि का सुख-राजा की कृपा से वाहन वस्त्र आभूषण की प्राप्ति-पुण्यतीर्थ दर्शन व गौ आदि पशुधन का लाभ होता है।

यदि बुध भाग्येश लाभेश से युक्त हो तो लाभ व वृद्धि कारक होता है। ९-५-१० स्थान में बुध हो तो लोक में सम्मान-सुकर्म व धर्म की वृद्धि-गुरु व देवता में भक्ति-धनधान्य की वृद्धि-विवाह तथा पुत्र जन्म होता है।

यदि उच्चराशि या त्रिकोणादि शुभस्थान बुध में हो तो विवाह-यज्ञ-

दान-धर्मानुष्ठान-अपने नाम की कीर्ति या यश से दूसरा उपनाम-सुभोजन-वस्त्र-आभूषण की प्राप्ति सहित इन्द्र के समान वह मनुष्य सुखी होता है।

बुध यदि दशेश से ६, ८, १२वें स्थान में या नीचराशि में हो तो शरीरकष्ट-मन में सन्ताप तथा स्त्री पुत्र को कष्ट होता है। इसकी अन्तर्दशा के प्रारम्भ में कष्ट, मध्य में स्वल्प सुख तथा अन्त में राजभय और देशान्तरगमनागमन होता है। बुध यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शरीरकष्ट व ज्वररोग होता है। इसकी शान्ति हेतु विष्णुसहस्रनाम का पाठ, अन्न तथा चाँदी की प्रतिमा का दान करना चाहिये।

सूर्यमहादशा में केत्वन्तर्दशा का फल—सूर्य की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो तो शरीर में पीड़ा-मनोव्यथा-धनहानि-राजभय और बन्धुओं से कष्ट होता है। केतु यदि लग्नेश से युत हो तो प्रारम्भ में सुख-मध्य में कष्ट और अन्त में मृत्यु सम्बन्धि समाचार प्राप्त होता है।

दशेश से ८, १२ स्थान में पापग्रह हो तो कपोल या दाँत में रोग, मूत्रकृच्छ्ररोग-स्थाननाश-धननाश-मित्र की हानि-पिता का मरण-विदेश यात्रा तथा शत्रु से कष्ट होता है।

लग्न से उपचय स्थान ३, ६, १०, ११ में योगकारक ग्रह से युक्त अथवा शुभवर्ग से युक्त केतु हो तो शुभकर्म फलोदय-स्त्री-पुत्र सुख-सन्तोष-मित्रों की वृद्धि-वस्त्रादि का लाभ और सुयश की वृद्धि होती है। केतु यदि २, ७ स्थान के स्वामी से युत हो तो अपमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति हेतु दुर्गाजी की आराधना तथा छागदान करना चाहिये।

सूर्यमहादशा में शुक्रान्तर्दशा का फल—केन्द्रत्रिकोणस्थित या स्वोच्च-स्ववर्ग-मित्रवर्ग-स्थित शुक्र हो तो सूर्य की महादशा में उसकी अन्तर्दशा आने पर इच्छानुसार स्त्रीसुख-सम्पत्ति-ग्रामान्तर गमन-विप्र और राजा का दर्शन-राज्यलाभ-उत्साह-वैभव-घर में शुभकृत्य-मिष्टान्न भोजन-मोती आदि रत्न-वस्त्र-पशु-धन-धान्य-उत्साह और सुयश की वृद्धि तथा विविध वाहनों का लाभ होता है।

यदि शुक्र लग्न या दशापति से ६, ८, १२ में हो या निर्बल हो तो उसकी अन्तर्दशा में राजकोप-मन में सन्ताप और स्त्री-पुत्रादि को कष्ट होता है। इसकी अन्तर्दशारम्भ में मध्यमफल, दशामध्य में उत्तमफल और अन्त में अपयश-स्थाननाश-बन्धुओं में द्वेष तथा सुख की हानि होती है। शुक्र सप्तमेश हो तो शरीर में कष्ट एवं रोगभय होता है।

षष्ठेश-अष्टमेश से युक्त शुक्र हो तो अपमृत्यु का भय होता है। दोषों की शान्ति हेतु मृत्युञ्जयजप-कपिला गौ का दान-महिषीदान तथा रुद्र का जप करना चाहिए। इस तरह करने पर शंकर जी की प्रसन्नता से सुख शान्ति की प्राप्ति होती है।

चन्द्रमहादशा में सभी ग्रहों की अन्तर्दशा फल-

चन्द्रमहादशा में चन्द्रान्तर्दशा का फल—यदि स्वोच्च-स्वराशि-केन्द्र त्रिकोण स्थित चन्द्र हो, अथवा दशमेश-नवमेश से युक्त हो तो उसकी महादशा अन्तर्दशा में हाथी-घोड़ा-वस्त्रादि का लाभ-देव और गुरुओं में भक्ति-भगवद्भजन-राज्यलाभ-परमसुख-यश की वृद्धि और शरीर सुख होता है। चन्द्रमा यदि पूर्णबली हो तो सेनापतित्व आदि का अधिकार एवं सुख प्राप्त होता है।

चन्द्रमा यदि नीचराशि में हो, पापयुक्त हो, ६, ८, १२ में हो तो उसकी अन्तर्दशा में धननाश-स्थानहानि-आलस्य-सन्ताप-राजा व मन्त्री से विरोध,माता को कष्ट-बन्धन व बन्धुओं का नाश होता है। चन्द्र यदि २, ७ स्थान का स्वामी हो या १२, ८ के स्वामी से युक्त हो तो शरीर में कष्ट व अपमृत्युभय होता है। उसके निवारण हेतु कपिला गौ और महिषी का दान करना चाहिये।

चन्द्रमहादशा में भौमान्तर्दशा का फल--चन्द्र की महादशा में भौम की अन्तर्दशा हो तथा भौम केन्द्रत्रिकोण में हो तो भाग्यवृद्धि-राजा से सम्मान-वस्त्राभूषण का लाभ-यत्न से कार्य में सिद्धि होती है इसमें संशय नहीं, गृह और कृषि में वृद्धि तथा व्यवहार में विजय होता है, यदि स्वोच्च-स्वराशि में हो तो कार्यलाभ व महत्सौख्य होता है।

भौम यदि ६, ८, १२ में हो या पापयुक्त हो अथवा दशापति से अशुभ (६, ८, १२) स्थान में शत्रु से दृष्ट हो तो शरीर में कष्ट-घर और कृषि में हानि, व्यवहार में हानि, सेवक और राजा से कलह, स्वजनों से बन्धुओं से वियोग तथा क्रोध की वृद्धि होती है। भौम यदि २, ७ का स्वामी हो ८ स्थान में हो या अष्टमेश हो तो अशुभ फल होता है, उसके दोषशमन हेतु ब्राह्मणों का सत्कार करना चाहिये।

चन्द्रमहादशा में राह्वन्तर्दशा का फल—चन्द्र की महादशा में केन्द्र त्रिकोण में स्थित राहु की अन्तर्दशा हो तो प्रारम्भ में कुछ शुभ बाद में चोर सर्प और राजा का भय-पशुओं को कष्ट-बन्धु और मित्रों की हानि-माननाश और मनस्ताप होता है।

राहु यदि शुभग्रह से दृष्ट युत हो अथवा लग्न से ३, ६, १०, ११ स्थान में हो या योगकारक ग्रह से युक्त हो तो उसकी अन्तर्दशा में सभी कार्यों में सिद्धि, नैर्ऋत्य और पश्चिम दिशा में स्थित राजा आदि से वाहन-वस्त्रादि का लाभ तथा अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है।

दशेश से राहु यदि ८, १२वें में हो और निर्बल हो तो स्थानहानि, मनोव्यथा, पुत्रकष्ट, कभी स्त्री को कष्ट तो कभी शरीर में रोगभय-बिच्छू सर्प चोर राजा आदि से भय और पीड़ा होती है।

यदि दशेश से राहु केन्द्र,त्रिकोण या ३, ११ में हो तो तीर्थभ्रमण, देवदर्शन, परोपकार व धर्मकार्य में प्रवृत्ति होती है। राहु यदि २, ७ स्थान में हो तो शरीर में कष्ट होता है। दोष निवाराणार्थ रुद्रजप और छागदान करना चाहिये इससे शरीर निरोग रहता है।

चन्द्रमहादशा में जीवान्तर्दशा का फल—चन्द्र की महादशा हो और गुरु यदि लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में या स्वगृह में या स्वोच्च में हो तो उसकी अन्तर्दशा में राज्यलाभ, घर में उत्सव, वस्त्र भूषण प्राप्ति राजा से प्रतिष्ठा, इष्टदेव की प्रसन्नता, पुत्रलाभ धन भूमि वाहन का लाभ, राजा की कृपा से सब कार्य की सिद्धि और सुखप्राप्ति होती है।

गुरु यदि ६, ८, १२वें स्थान में हो, अस्त हो नीचराशि में या पापयुत होकर अशुभ हो तो गुरु (पिता, चाचा आदि) या पुत्र का नाश, स्थानत्याग-मनोसन्ताप-कलह, गृह कृषि तथा वाहन का नाश होता है। यदि दशेश से केन्द्र-त्रिकोण या ३, ११ में गुरु हो तो अन्न, वस्त्र, पशु, भ्रातृसुख, सम्पत्ति, पराक्रम, धैर्य, यज्ञ, व्रत, विवाहादि उत्सव, राज्य लाभ आदि का योग होता है।

गुरु यदि दशापति से ६, ८, १२वें स्थान में हो और बलहीन हो तो कुभोजन व परदेश गमन होता है। अन्तर्दशा के आरम्भ में शुभफल और बाद में कष्ट होता है। गुरु यदि लग्न से २, ७ स्थान का स्वामी रहे तो अपमृत्युभय होता है। इन दोषों के शमन हेतु शिवसहस्त्रनामजप तथा सुवर्ण का दान करने से सब कष्टों का नाश होता है।

चन्द्रमहादशा में शन्यन्तर्दशा का फल—चन्द्र की दशा में शनि की अन्तर्दशा हो और शनि यदि लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में या स्वराशि में या स्वनवांश में या स्वोच्च में शुभग्रह से दृष्टयुत हो या लाभस्थान में बली हो तो पुत्र, मित्र, धन सम्पत्ति का लाभ, शूद्र मित्रों के सहयोग से व्यवसाय

में लाभ, गृह व कृषि की वृद्धि, पुत्रलाभ और राजा की कृपा से वैभववृद्धि होती है।

यदि शनि ६, ८, १२वें स्थान में हो या नीच स्थान में या धनस्थान में हो तो उसकी अन्तर्दशा में पुण्यतीर्थ का दर्शन व स्नानादि होता है। बहुत लोगों से संत्रास व शत्रुओं से पीड़ा होती है।

दशेश से केन्द्र या त्रिकोण स्थान में शनि हो या बलवान हो तो कभी-कभी सुख, कभी धन का लाभ तथा कभी स्त्री पुत्र से विरोध भी होता है। यदि २, ७, ८ में शनि हो तो शारीरिक कष्ट होता है। उसके शान्त्यर्थ मृत्युञ्जय जप, कृष्णा गौ का दान और महिषदान करना चाहिये, इससे आरोग्य होता है।

चन्द्रमहादशा में बुधान्तर्दशा फल—चन्द्र की महादशा में बुध की अन्र्दशा हो तथा बुध यदि केन्द्र त्रिकोण में या स्वराशि या स्वनवांश या शुभराशि या स्वोच्च में हो बलवान हो तो उसकी अन्तर्दशा में धनलाभ, राजा से सम्मान, वस्त्रादि लाभ, शास्त्रचर्चा, सत्सङ्ग से ज्ञानवृद्धि, सुख सन्तान की प्राप्ति, सन्तोष, व्यापार में लाभ तथा वाहन-छत्र और आभूषण का लाभ होता है।

दशेश से बुध यदि केन्द्र या त्रिकोण या ११, २ में हो तो उसकी अन्तर्दशा में विवाह-यज्ञ-दान-धर्म आदि शुभकार्य होते हैं। राजा से प्रेम, विद्वानों का संग, मोती, मणि, मूँगा, वाहन, वस्त्र, भूषण, आरोग्य, प्रीति, सुख और सोमरसपान आदि सुख होते हैं।

दशेश से ६, ८, १२ में या नीचराशि में बुध हो तो उसकी अन्तर्दशा में शरीर कष्ट, कृषि में हानि, बन्धन तथा स्त्री-पुत्र को कष्ट होता है। यदि बुध द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो ज्वर रोग से विशेष भय होता है। इसके शान्त्यर्थ छागदान और विष्णुसहस्रनाम का जप पाठ करना चाहिये।

चन्द्रमहादशा में केत्वन्तर्दशा का फल—चन्द्र की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो और केतु यदि लग्न से केन्द्र या त्रिकोण या तृतीय में हो या बली हो तो धनलाभ, सुख, पुत्र, स्त्री आदि को सुख तथा धर्मकार्य में प्रवृत्ति होती है। अन्तर्दशा के प्रारम्भ में कुछ हानि तथा बाद में सुखलाभ होता है।

दशापति से केतु यदि केन्द्र त्रिकोण या एकादश में हो या बली हो तो अन्तर्दशारम्भ में सुख-धन, पशु आदि का लाभ होता है। दशा के अन्त में धननाश होता है।

दशेश से ८, १२ में केतु हो या पापग्रह से युत दृष्ट हो तो शत्रु द्वारा कार्यहानि और कलह होता है। यदि केतु २, ७ स्थान में हो तो शरीर में रोग का भय होता है। अत: सब सुख-सम्पत्ति देने वाला महामृत्युञ्जय का जप करना चाहिए इससे 'शंङ्कर' की कृपा से सुख शान्ति होती है।

चन्द्रमहादशा में शुक्रान्तर्दशा का फल—चन्द्र की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो तथा शुक्र यदि लग्न से केन्द्र या ११, ५, ९ में, स्वोच्च में या स्वराशि में हो तो राज्यलाभ, राजा की कृपा से वाहन-वस्त्र-भूषण-पशु आदि का लाभ, स्त्री-पुत्र को सुख-नूतनभवन, नित्य मिष्टान्न भोजन, सुगन्ध, सुन्दर स्त्री का सङ्ग तथा आरोग्य लाभ होता है।

शुक्र यदि दशापति (चन्द्रमा) से युत हो तो शुक्र की अन्तर्दशा में शारीरिक सुख, सुयश-सम्पत्ति तथा गृहभूमि आदि की वृद्धि होती है।

शुक्र यदि नीचराशि में हो, अस्त हो, पापग्रह से युत दृष्ट हो तो भूमि-पुत्र-मित्र-स्त्री-पशु की हानि और राजा से विरोध होता है।

शुक्र यदि द्वितीय भाव में स्वोच्च या स्वराशि में हो तो निधि (गड़ा हुआ धन), भूमि व सुख का लाभ तथा पुत्रोत्पत्ति होती है। नवमेश या एकादशेश से युत शुक्र हो तो भाग्य की वृद्धि, राजा की कृपा से सुख और अभीष्ट कार्य सिद्धि, देव-ब्राह्मण में भक्ति तथा मोती मूँगा आदि रत्नों का लाभ होता है।

दशेश से केन्द्र त्रिकोण में शुक्र हो तो गृह लाभ, कृषि की वृद्धि, धन का लाभ और सुख होता है।

दशापति से ६, ८, १२ में शुक्र हो या पापग्रह से युत दृष्ट हो तो विदेशवास से दु:ख, मृत्यु और चोरभय होता है।

शुक्र यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो उसकी अन्तर्दशा में अपमृत्यु (महाकष्ट) का भय होता है। इस दोष की शान्ति के लिये रुद्रीजप, कपिला गोदान तथा चाँदी का दान करने से शङ्कर की कृपा से सुख और शान्ति की प्राप्ति होती है।

चन्द्रमहादशा में सूर्यान्तर्दशा का फल—चन्द्र की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो और सूर्य यदि स्वोच्च, स्वराशि-केन्द्र या ५, ९, ११, २, ३ में हो तो उसकी अन्तर्दशा में नष्टराज्य और धन की प्राप्ति, घर में कल्याण, मित्र और राजा की कृपा से ग्राम और भूमि का लाभ, पुत्रजन्म तथा घर में लक्ष्मी की कृपा होती है। अन्तर्दशा के अन्त में शरीर में आलस्य और ज्वर से कष्ट होता है।

दशेश से सूर्य यदि ८, १२ में हो या पापग्रह से युत हो तो राजा, चोर और सर्प से भय, ज्वर आदि रोग तथा विदेशगमन से कष्ट होता है। सूर्य यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो उसकी अन्तर्दशा में ज्वर से कष्ट होता है। इसके शान्त्यर्थ श्री शङ्कर की पूजा करनी चाहिए।

भौममहादशा में सभी ग्रहों की अन्तर्दशा फल—

भौममहादशा में भौमान्तर्दशा का फल—भौम की दशा में भौम की अन्तर्दशा हो और भौम यदि लग्न से केन्द्र में या ५, ९, ११, ३, २ में हो, लग्नेश से युत हो, शुभग्रह से युत हो तो राजा की कृपा से धनलाभ, लक्ष्मी की कृपा, नष्टराज्य व धन का लाभ, पुत्रजन्म आदि उत्सव और गौ महिष आदि दुधारू पशुओं की वृद्धि होती है।

भौम यदि स्वोच्च, स्वराशि, स्नवांश में रहकर, बली हो तो गृह, भूमि, गौ, महिष आदि का लाभ तथा राजा की कृपा से अभीष्टसिद्धि होती है।

भौम यदि ८, १२ भाव में हो या पापग्रह से युत दृष्ट हो तो मूत्रकृच्छ्र आदि रोग से कष्ट, व्रण, चौर, सर्प और राजा का भय तथा धन-धान्यादि का ह्रास होता है।

भौम यदि द्वितीयेश-सप्तमेश हो तो देह में कष्ट और मन में व्यथा होती है। दोषशान्त्यर्थ रुद्र का जप तथा वृषभ दान करने पर शंकर की कृपा से आरोग्य व सब सम्पत्ति का लाभ होता है।

भौममहादशा में राह्वन्तर्दशा का फल—भौम की दशा में राहु की अर्न्तदशा हो तथा राहु यदि अपने मूलत्रिकोण, स्वोच्चादि में हो या लग्न से केन्द्र में या ११, ५, ९ में हो और शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो उस समय में राजा से सम्मान, गृह, भूमि, आदि का लाभ, पुत्र स्त्री को सुख, व्यापार में अधिक लाभ, गङ्गा आदि तीर्थ में स्नान और विदेशगमन होता है।

राहु यदि लग्न से ८, १२ में या पापग्रह से युत दृष्ट रहे तो उसकी अन्तर्दशा में चौर, सर्प, व्रणरोग, पशुओं की हानि, वात, पित्त से रोग तथा बन्धन होता है। द्वितीय स्थान में राहु हो तो धननाश, सप्तम भाव में हो तो अपमृत्यु का महाभय कहना चाहिये। इसमें नाग की पूजा, ब्राह्मण भोजन, मृत्युञ्जय का जप कराने से आयु तथा आरोग्य लाभ होता है।

भौममहादशा में जीवान्तर्दशा का फल—भौम की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो तथा गुरु यदि लग्न से त्रिकोण में या केन्द्र में या ११ या २ में हो, अपने उच्चनवांश या स्वांश में हो तो सुयश, राजसम्मान, धन-धान्यवृद्धि, घर में कल्याण, सम्पत्ति तथा स्त्री-पुत्रादि को लाभ होता है।

दशापति ''भौम'' से गुरु यदि त्रिकोण में या केन्द्र में या ११ में हो, नवमेश-दशमेश-चतुर्थेश या लग्नेश से युत हो, शुभ नवमांश आदि में स्थित हो तो उसकी अन्तर्दशा में गृह-भूमि की वृद्धि, कल्याण, सम्पत्ति, आरोग्य, सुयश, पशुओं का लाभ, व्यवसाय में वृद्धि, स्त्री पुत्र को सुख और राजा से आदर व धन का लाभ होता है।

गुरु यदि ६, ८, १२ में हो या नीचराशि में या अस्त हो, पापग्रह से युक्त हो, निर्बल हो तो चोर, सर्प, राजभय, पित्तरोग, प्रेतबाधा तथा नौकरों और सहोदरों का नाश होता है। यदि गुरु द्वितीयेश हो तो अपमृत्युभय व ज्वरपीड़ा होती है। दोषशान्त्यर्थ शिव सहस्रनाम का जप करना चाहिये।

भौममहादशा में शनि की अन्तर्दशा का फल—भौम की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तथा शनि यदि केन्द्र में त्रिकोण में या अपने मूलत्रिकोण, उच्च या स्वनवांश में हो, लग्नेश या शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो राजा से आदर, यश की वृद्धि, धनधान्यवृद्धि, पुत्र पौत्रादि से सुख, गोधन की वृद्धि, विशेषकर शनिवार व शनि के मास (माघ-फाल्गुन) में पुत्रादि की वृद्धि होती है।

शनि यदि नीच या शत्रुराशि में या ८, १२ भाव में हो तो उसकी अन्तर्दशा में म्लेच्छा राजाओं से भय, धननाश, कारागार में बन्धन, रोगभय तथा कृषि आदि की हानि होती है।

यदि शनि द्वितीयेश या सप्तमेश हो और पापग्रह से युत हो तो महाभय, धननाश, राजा का कोप, मनोव्यथा, चोर, अग्नि, राजा से पीड़ा, सहोंदरों का नाश, कुटुम्बों से द्वेष, पशुओं की हानि, मृत्युभय, पुत्र स्त्री को कष्ट तथा कारागारादि राजदण्ड होता है।

शनि यदि दशेश से केन्द्र में या ११, ५, ९ में रहे तो विदेशयात्रा, अपयश, जीवहिंसादि दुष्कर्म, भूमि आदि के विक्रय से हानि, स्थाननाश, मनोव्यथा, युद्ध में पराजय तथा मत्रकृच्छ्र रोग का भय होता है।

यदि दशेश से ८ या १२वाँ स्थान पापग्रह से युक्त हो तो उसकी अन्तर्दशा में मरण, राजा-चौर आदि से भय, वातरोग, शूलरोग और बन्धुओं तथा शत्रुओं से भय होता है। दोष शान्ति हेतु मृत्युञ्जय का जप करने पर शङ्कर की कृपा से सुखप्राप्त होता है।

भौममहादशा में बुधान्तर्दशा का फल—भौम की महादशा में बुध का अन्तर हो और बुध यदि लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में हो तो सत्सङ्ग, अजपा जप, दान-धर्म में रत, सुयश-नीति में प्रवृत्ति, मिष्टान्न भोजन,

वाहन-वस्त्र-पशु आदि का लाभ, राजा के दरबार में अधिकार से सुख तथा कृषिकार्य में सफलता प्राप्त होती है।

बुध यदि नीचराशि में हो या अस्तङ्गत हो अथवा ६, ८, १२ स्थान में हो तो उसकी अन्तर्दशा में हृदयरोग, बन्धन, बन्धुनाश, स्त्री-पुत्र को कष्ट तथा धन व पशुओं का नाश होता है।

बुध यदि दशेश से युत हो तो शत्रुओं की वृद्धि, विदेशगमन, विविध रोग व राजा से विरोध तथा स्वजनों से कलह होता है।

बुध यदि दशेश से केन्द्र-त्रिकोण में हो या अपने उच्चराशि-स्वराशि में हो तो अभीष्ट मनोरथ की सिद्धि, धन धान्य लाभ, राजा से सम्मान, राज्यलाभ, वस्त्र, आभूषण की प्राप्ति, अनेक वाद्य (मृदङ्ग आदि) में प्रेम, सेनापतित्व, शास्त्रपुराण की चर्चा, घर में स्त्री-पुत्र आदि का सुख और लक्ष्मी की कृपा होती है।

बुध यदि भौम से ६, ८, १२वें स्थान में हो या पापग्रह से युक्त हो तो उसकी अन्तर्दशा में माननाश, पापबुद्धि, कटुवाणी, चौर-अग्नि और राजा से भय, मार्ग में चोर डाकुओं का भय और अकारण कलह होता है इसमें कोई सन्देह नहीं।

बुध यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो उसकी अन्तर्दशा में भयङ्कर रोग होता है। इसमें अश्वदान, विष्णुसहस्रनाम का पाठ करने से सब सम्पत्तियों की प्राप्ति तथा कष्टों का नाश होता है।

भौममहादशा में केत्वन्तर्दशा का फल—भौम की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो तथा केतु यदि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या ३, ११ में हो या शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो उस अन्तर्दशा में राजा की कृपा से सुख, धनलाभ, दशारम्भ में अल्पसुख, भूमिलाभ, पुत्रजन्म, राजकार्य और पशुओं का लाभ होता है।

यदि बुध योगकारक स्थान में हो और बलवान हो तो उसकी अन्तर्दशा में पुत्रलाभ, यशोवृद्धि, लक्ष्मी की कृपा, नौकरों से धनलाभ, सेनापति का अधिकार, राजा से मैत्री, यज्ञक्रिया और वस्त्र आभूषण आदि का लाभ होता है।

दशेश से ६, ८, १२वें स्थान में अथवा पापग्रह से युत यदि केतु हो तो उसकी अन्तर्दशा में कलह, दन्तरोग, चौर से, हिंसक जीवों आदि से पीड़ा, ज्वर अतिसार, कुष्ठादि रोगभय तथा स्त्री पुत्रादि को कष्ट होता है।

लग्न से २, ७ स्थान में केतु हो तो रोग, अपमान, मनोसन्ताप और धनहानि होती है।

भौममहादशा में शुक्रान्तर्दशा का फल—भौम की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो, शुक्र यदि लग्न से केन्द्रस्थान में, स्वोच्च में, स्वराशि में हो या शुभस्थान (१, ५, ९) का स्वामी हो तो उस अन्तर्दशा में राज्यलाभ, परमसुख, हाथी, घोड़ा, वस्त्र, आभूषण का लाभ, यदि लग्नेश से सम्बन्ध हो तो पुत्र स्त्री का सुख और आयु, ऐश्वर्य तथा भाग्य की वृद्धि होती है।

दशेश से केन्द्र में या ५, ९, ११, २ में यदि शुक्र हो तो उसकी अन्तर्दशा में सम्पत्ति, पुत्रजन्मोत्सव, सुखवृद्धि अपने स्वामी से धनलाभ, सुख, राजा की कृपा से भूमि-गृह-ग्राम आदि का लाभ होता है। अन्तर्दशा के अन्त में गीत,नृत्य, तथा तीर्थस्नान का फल प्राप्त होता है। यदि दशमेश से शुक्र का सम्बन्ध हो तो कूप-तड़ाग आदि का निर्माण, पुण्य कार्य दया और धर्म में प्रवृति होती है।

दशेश से ६, ८, १२ में शुक्र हो या पापग्रह से युक्त हो तो दुःख, शरीर में कष्ट, धनहानि, राजा-चोर आदि का भय, गृह में कलह, स्त्री पुत्र को कष्ट और पशधन का नाश होता है।

शुक्र यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो उसकी अन्तर्दशा में देहकष्ट होता है। दोषशान्त्यर्थ गोदान, महिषदान करने पर आयु, आरोग्य की वृद्धि होती है।

भौममहादशा में सूर्यान्तर्दशा का फल—भौम की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो और सूर्य यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या केन्द्र में या त्रिकोण में या लाभभाव में भाग्येश अथवा दशमेश से युक्त हो तो उस अन्तर्दशा में वाहनलाभ, सुयश, पुत्रजन्म, धनवृद्धि, गृह में कल्याण, आरोग्य, धैर्य, राजसम्मान, व्यापार में विशेषलाभ, विदेशयांत्रा और राजदर्शन होता है।

दशेश से ६, ८, १२वें स्थान में सूर्य यदि पापग्रह से युत हो तो उसकी अन्तर्दशा में शरीरकष्ट, मनोसन्ताप, कार्यहानि, भय, मष्तिकरोग, ज्वर, अतिसार आदि रोग होता है।

यदि सूर्य द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो सर्प, विष और ज्वर से भय तथा पुत्र को क्लेश होता है। यदि उससमय सूर्य की आराधना विधिपूर्वक की जाय तो निरोगता और धनलाभ होता है।

भौममहादशा में चन्द्रान्तर्दशा का फल—भौम की महादशा में चन्द्र

की अन्तर्दशा हो और चन्द्र यदि उच्च में या स्वराशि में या केन्द्र में हो अथवा ९, ४, १०, १ इन भावों के स्वामी से युत हो तो सुगन्ध, माल्य, वस्त्रादि का पूर्णलाभ, तालाब, गोशाला आदि का निर्माण, घर में विवाहादि उत्सवकार्य, स्त्री-पुत्र को सुख, माता-पिता से सुख, लक्ष्मी की कृपा, राजा की कृपा से अभीष्ट कार्यसिद्धि होती है। चन्द्रमा यदि पूर्ण हो तो पूर्णफल और क्षीण हो तो अल्पफल होता है।

चन्द्र यदि नीचराशि में या शत्रुराशि में अथवा या लग्न या दशापति से ६, ८ में हो तो मृत्यु, स्त्रीपुत्र को कष्ट, भूमि का नाश, पशु और धन की हानि तथा चौर व युद्धभय होता है। चन्द्र यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्यु, शरीर कष्ट तथा मन में सन्ताप होता है। दोषशान्त्यर्थ दुर्गाजी और लक्ष्मी जी का जप, गोदान और महिषदान करने पर आरोग्य और सुख होता है।

राहुमहादशा में सभी ग्रहों की अन्तर्दशा फल—

राहुमहादशा में राह्वन्तर्दशा का फल—कर्क, वृश्चिक, कन्या और धनु राशि में राहु हो तो उसकी दशा में राजसम्मान-वस्त्र वाहन भूषण की प्राप्ति, व्यापार में वृद्धि, चतुष्पद वाहन का लाभ, पश्चिम में यात्रा से वाहन वस्त्रादि का लाभ होता है। लग्न से ३, ६, १०, ११ में या योगकारक ग्रह के साथ अपने उच्चांश में या मित्रांश में राहु यदि शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो राहु की दशा और अन्तर्दशा में राज्यलाभ, उत्साह, राजा से प्रेम, स्त्री, पुत्र आदि से सुख तथा सम्पत्ति की वृद्धि होती है।

राहु यदि लग्न से ८, १२ में हो या पापग्रह से युत दृष्ट हो तो चौरभय, व्रण से कष्ट, राजाधिकारी से द्वेष, इष्ट बन्धुओं का नाश तथा स्त्री-पुत्रादि को कष्ट होता है।

राहु यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो या इन दोनों (२, ७) स्थान में हो तो रोग और कष्ट होता है। उस समय जप दानादि शान्ति करने से आरोग्यादि लाभ होता है।

राहुमहादशा में गुर्वन्तर्दशा का फल—राहु की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो तथा गुरु यदि स्वोच्च या स्वराशि या स्वांश या उच्चांश में या लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में हो तो स्थानलाभ, मानसिक स्थिरता, शत्रुनाश, सुख, राजा से प्रीति, शुक्लपक्ष के चन्द्र समान दिनोंदिन सम्पत्ति की वृद्धि, वाहन, गोधन का लाभ, नैर्ऋत्य और पश्चिम दिशा की यात्रा, राजा का दर्शन, अभीष्ट कार्यसिद्धि, पुनः स्वदेश आगमन, ब्राह्मणों पर उपकार,

तीर्थयात्रा, ग्राम का लाभ, देव-ब्राह्मण में भक्ति, पुत्र पौत्रादि से संतुष्टि और नित्य मिष्टान्न भोजन होता है।

गुरु यदि नीचराशि में या, अस्त में, या लग्न से ६, ८, १२ में या शत्रुराशि में या पापग्रह से युक्त दृष्ट हो तो उसकी अन्तर्दशा में धनहानि, कार्य में बाधा, मानहानि, स्त्रीपुत्र को कष्ट, हृदयरोग और राज अधिकार प्राप्त होता है।

दशेश से केन्द्र में या कोण में या ११, २, ३ में गुरु हो या बली अवस्था में हो तो उसकी अन्तर्दशा में भूमिप्राप्ति, सुभोजन,पशु आदि का लाभ और दान-धर्मादि में प्रवृत्ति होती है। अन्तर्दशा के अन्तसमय में दो मास तक शरीरकष्ट तथा बड़े भाई व माता-पिता को कष्ट होता है।

दशेश से गुरु यदि ६, ८, १२वें स्थान में हो या पापग्रह से युत हो तो उसकी अन्तर्दशा में धनहानि तथा शरीर को कष्ट होता है। यदि गुरु द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्युभय होता है। शान्ति हेतु शङ्कर की सोने की प्रतिमा बनाकर पूजा करनी चाहिए इससे शिवजी की कृपा से आरोग्य सुख होता है।

राहुमहादशा में शन्यन्तर्दशा का फल—राहु की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो और शनि यदि केन्द्र में या त्रिकोण में या स्वोच्च में या स्वराशि में या मूलत्रिकोण में या ३, ११ भाव में हो तो उसकी अन्तर्दशा में राजा की सेवा से कृपा प्राप्ति, घर में विवाहादि उत्सव कार्य, पुण्यकर्म, तालाबनिर्माण, शूद्र वर्ण के धनी व्यक्ति से पशु आदि का लाभ, पश्चिमदिशा की यात्रा से राजा द्वारा धनहानि, आलस्य से अल्पलाभ तथा पुनः स्वदेश में आगमन होता है।

शनि यदि नीचराशि में, शत्रुराशि या लग्न स्थान से ८, १२ में हो तो उसकी अन्तर्दशा में नीचलोगों से, शत्रु से और राजा से भय, स्त्री-पुत्र को कष्ट, अपने बन्धुओं में कलह, सन्ताप, दायादों से कलह, कार्य व्यापार में भी कलह तथा अचानक आभूषणलाभ भी होता है।

दशेश से ६, ८, १२ स्थान में या पापग्रह से युत शनि हो तो उसकी अन्तर्दशा में हृदय रोग, मानहानि, कलह, शत्रुभय, विदेशभ्रमण, गुल्मरोग, कुभोजन तथा जातिवर्ग से दुःख और भय होता है। शनि यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्यु होती है। दोषशमनार्थ कृष्णा गौ का तथा महिष का दान करने से आरोग्य होता है।

राहुमहादशा में बुधान्तर्दशा का फल—राहु की महादशा में बुध की

अन्तर्दशा हो और बुध अपने उच्चराशि में या स्वराशि में या लग्न से केन्द्र स्थान में या पंचम में हो या बली हो तो उस अन्तर्दशा में राजयोग, घर में कल्याण, व्यापार में धनलाभ, उत्तम वाहनसुख, विवाहादि उत्सव कार्य तथा पशुवृद्धि उत्तम रूप से होता है। बुध के मास तथा बुध के वार में सुख, राजा की कृपा से सुगन्ध-पुष्पशय्या-स्त्रीसुख, धन और यश का लाभ होता है।

दशापति से बुध यदि केन्द्रस्थान में या ११, ३, ९, १०स्थान में हो तो शरीर में आरोग्य, इष्ट कार्य की सिद्धि, पुराण इतिहास का श्रवण, विवाह, यज्ञ, दान आदि कार्य तथा धर्म व दया का उदय होता है।

यदि बुध ६, ८, १२स्थान में हो और शनि से युत दृष्ट हो तो उस समय में देव और ब्राह्मणों की निन्दा, भाग्यहानि, मिथ्याभाषण, दुर्बुद्धि, चौर, सर्प और राजा से कष्ट, अकारण कलह, गुरु पुत्रादि का नाश, स्त्री पुत्रादि को कष्ट, राजकोप और धननाश होता है।

बुध यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्यु का भय होता है। दोषशान्त्यर्थ विष्णु सहस्रनाम का जप करना चाहिये।

राहुमहादशा में केत्वन्तर्दशा का फल—राहु की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो तो विदेशभ्रमण, राजभय, वातज्वर आदि रोग तथा पशुओं की हानि होती है। केतु यदि अष्टमेश से युक्त हो तो शरीर में पीड़ा व मनोव्यथा होती है तथा शुभग्रह से युक्त और दृष्ट हो तो सुख, धनलाभ, राजसम्मान, आभूषण लाभ एवं गृह में शुभकार्य होता है।

यदि केतु का लग्नेश से सम्बन्ध हो तो इष्टकार्य सिद्धि और यदि लग्नेश से योग हो तो निश्चय ही धनलाभ होता है। यदि केन्द्र या त्रिकोण में केतु हो तो निश्चय ही पशुओं की वृद्धि होती है।

केतु यदि लग्न से ८, १२ में बलहीन होकर रहे तो उसकी अन्तर्दशा में रोग चौर और सर्प का भय, व्रण से पीड़ा, माता-पिता का वियोग, बन्धुओं से द्वेष और मानसिकव्यथा होती है। यदि केतु द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शरीर में कष्ट होता है। दोष की शान्ति हेतु छागदान करना चाहिये।

राहुमहादशा में शुक्रान्तर्दशा का फल—राहु की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो और शुक्र यदि लग्न से केन्द्र, त्रिकोण या ११ में हो और बली हो तो ब्राह्मणों के द्वारा धनलाभ, पशुओं की वृद्धि, पुत्रजन्मोत्सव, कल्याण, राजसम्मान तथा राज्यलाभ आदि उत्तमसुख होता है।

शुक्र यदि अपने उच्च में या स्वराशि में या उच्चांश में या स्वांश

में हो तो नवीन गृहनिर्माण, मिष्टान्न भोजन, पुत्र-पुत्री से सुख, मित्र का सङ्ग, सुभोजन, अन्नदानादि धार्मिक कार्य, राजा की कृपा से वाहन-वस्त्रादि का लाभ, व्यवसाय से विशेष लाभ विवाह, उपनयन आदि उत्सव कार्य होता है।

यदि शुक्र लग्न से ६, ८, १२वें स्थान में या नीच में अथवा शत्रुराशि में हो, शनि मङ्गल या राहु से युक्त हो तो उसकी अन्तर्दशा में रोग, कलह, पिता या पुत्र का वियोग, बन्धुओं को कष्ट, जाति वर्ग से कलह, स्वामी या अपनी ही मृत्यु, स्त्री-पुत्र को पीड़ा और शूल आदि रोग की सम्भावना होती है।

शुक्र यदि दशेश से केन्द्र में या त्रिकोण में या ११, १० स्थानों में हो तो राजा से सुख, सुगन्ध शय्या गान आदि से सुख तथा छत्र चामर आदि अभीष्ट वस्तुओं की प्राप्ति होती है।

यदि शुक्र दशेश से ६, ८, १२ में हो या पापग्रह से युत हो तो विप्र, सर्प, चोर और राजा से भय, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, रुधिरविकारादि रोग, कदन्न भोजन, शिर में कष्ट, कारावास तथा राजदण्ड से धननाश होता है। शुक्र यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो स्त्री-पुत्र को कष्ट तथा स्वयं को भी अपमृत्युभय होता है। शान्ति हेतु श्री दुर्गा व श्री लक्ष्मी जी का जप-पाठ करना चाहिए, इससे सुख प्राप्ति होती है।

राहुमहादशा में सूर्यान्तर्दशा का फल—राहु की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो और सूर्य यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या केन्द्र में या त्रिकोण में या ११ भाव में या उच्चांश में या स्वांश में शुभग्रह से दृष्ट युत रहे तो राजा से प्रेम, धन धान्य की वृद्धि, स्वल्प सम्मान, स्वल्पसुख, अल्पग्रामाधिपत्य एवं स्वल्पलाभ होता है।

यदि सूर्य भाग्येश-लग्नेश अथवा कर्मेश से युत या दृष्ट हो तो राजाश्रय से सुयश, विदेशयात्रा, देश का आधिपत्य, हाथी, घोड़े, वस्त्र, आभूषण का लाभ, अभीष्ट सिद्धि तथा पुत्र को सुख होता है।

दशेश से १२, ८, ६ स्थान में या स्वनीचराशि में सूर्य हो तो ज्वर, अतिसाररोग, कलह, राजा से विग्रह, व्यर्थ भ्रमण, शत्रुभय और राजा-चोर-अग्नि से पीड़ा होती है।

सूर्य यदि दशेश से केन्द्र, त्रिकोण या ३, ११ भाव में रहे तो विदेश में राजा से सम्मान तथा सब प्रकार से कल्याण होता है।

सूर्य यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो महारोग होता है। अशुभफल शान्त्यर्थ सूर्य की आराधना करनी चाहिये।

राहुमहादशा में चन्द्रान्तर्दशा का फल—राहु की महादशा में चन्द्र की अन्तर्दशा हो और चन्द्र यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या केन्द्र में या त्रिकोण में या ११ में या मित्रकी राशि में शुभग्रह से युत हो तो राज्यलाभ, राजा से सम्मान, धनलाभ, आरोग्य, वस्त्राभूषणलाभ, मित्र, स्त्री, पुत्रादि से सुख, वाहन से सुख तथा गृह-भूमि की वृद्धि होती है। चन्द्र यदि पूर्णबली हो तो पूर्णफल और क्षीण हो तो कुछ न्यूनफल होता है।

चन्द्रमा यदि दशापति से ५, ९ में या केन्द्र में या ११ में रहे तो घर में लक्ष्मी की कृपा से कल्याण, सर्वकार्य की सिद्धि, धनधान्य की वृद्धि, लोक में सुयश धनलाभ व सम्मान प्राप्ति तथा देव्याराधन होता है।

दशेश से चन्द्र यदि ६, ८, १२ में हो और बलहीन हो तो उसकी अन्तर्दशा में पिशाच, व्याघ्र आदि हिंसक जन्तुओं से गृह और कृषि में उपद्रव, मार्ग में चौरभय तथा व्रण और उदर रोग होता है। चन्द्र यदि द्वितीयेश या द्वादशेश हो तो अपमृत्यु भय होता है। दोषशान्ति हेतु श्वेत गौदान तथा महिषदान करना चाहिए इससे चन्द्रमा की प्रसन्नता द्वारा सुखप्राप्ति होती है।

राहुमहादशा में भौमान्तर्दशा का फल—राहु की महादशा में भौम का अन्तर हो तथा भौम यदि लग्न से ११, ५, ९ या केन्द्र में हो या स्वोच्च में या स्वराशि में या शुभग्रह से युक्त हो तो नष्टराज्य व धन का लाभ, गृह और कृषि में वृद्धि, इष्टदेव की प्रसन्नता से सन्तानसुख, उत्तमभोजन तथा आभूषण वस्त्रादि से बहुत सुख होता है।

भौम यदि दशेश से केन्द्र में या ५, ९, ३, ११ में रहे तो रक्तवस्त्र आदि का लाभ, यात्रा, राजदर्शन, पुत्रवर्ग और अपने स्वामीवर्ग को सुख, सेनापतित्व, उत्साह और बन्धुवर्ग द्वारा धनप्राप्ति होती है।

यदि भौम दशेश से ८, १२, ६ में स्थित होकर पापग्रह युत हो तो पुत्र, स्त्री और सहोदरों को कष्ट, स्थानच्युति, बन्धु-पुत्र-स्त्री से विरोध, चोर-सर्प और व्रण का भय तथा शरीर में पीड़ा होती है। अन्तर्दशा के प्रारम्भ काल में क्लेश तथा मध्य और अन्तकाल में सुख प्राप्त होता है।

भौम यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शरीर में आलस्य और महाभय होता है। इसकी शान्ति हेतु वृषभदान और गोदान करंनाा चाहिए इससे सुख की प्राप्ति होती है।

गुरुमहादशा में सभी ग्रहों की अन्तर्दशा फल—

गुरुमहादशा में गुर्वन्तर्दशा का फल—स्वोच्च में या स्वराशि में या लग्न से केन्द्र में त्रिकोण में स्थित गुरु की महादशा में गुरु की ही अन्तर्दशा हो तो अनेक राजाओं का स्वामी या धन-धान्य से युक्त अथवा राजा से पूजित होता है। पशु-वस्त्र-भूषण-वाहनादि का लाभ, नवीनगृहनिर्माण, अनेक मंजिल का भवन निर्माण, समस्त ऐश्वर्य की प्राप्ति, भाग्योदय, कार्यों में सफलता, आदरपूर्वक ब्राह्मण और राजा का दर्शन, स्वामी से विशेष लाभ तथा स्त्री-पुत्रादि को सुख होता है।

गुरु यदि नीचराशि में या नीच नवांश में या लग्न से ६, ८, १२ में रहे तो नीचजनों से मैत्री, महाकष्ट, जातिवर्ग से कलह, स्वामी का कोप, अपमृत्यु का भय, स्त्री-पुत्र से वियोग और धन-धान्य का नाश होता है।

गुरु यदि सप्तमेश हो तो शरीर में कष्ट होता है। दोषशान्त्यर्थ शिवसहस्रनाम या रुद्र का जप तथा गोदान करना चाहिए इससे अभीष्ट (कार्य) सिद्ध होता है।

गुरुमहादशा में शन्यन्तर्दशा का फल—गुरु की महादशा में शनि का अन्तर हो और शनि यदि स्वराशि में या स्वोच्च में या लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में बली होकर रहे तो उस समय में राज्यलाभ-वस्त्र-आभूषण, धनधान्य-स्त्री-वाहन-पशु तथा स्थान का लाभ, पुत्र मित्रादि से सुख, नील अश्व एवं नील वस्त्रादि का लाभ, पश्चिम दिशा की यात्रा तथा राजा का दर्शन एवं धन का लाभ होता है।

यदि शनि लग्न से ६, ८, १२ में हो नीच अस्त या शत्रुराशि में स्थित हो तो धननाश, ज्वरपीड़ा, मनोव्यथा, स्त्री-पुत्र को व्रणादि से कष्ट, घर में अशुभकार्य, पशुओं और नौकरों की हानि तथा बन्धुवर्ग से द्वेष होता है।

यदि शनि दशेश से केन्द्र, त्रिकोण या ११, २ स्थान में हो तो भूमि-धन-पुत्र-पशु आदि का लाभ तथा नीच जाति से धनप्राप्ति होती है।

यदि दशेश से ६, ८, १२ में पापग्रह से युक्त शनि हो तो धननाश, बन्धुओं से विरोध, उद्योग में बाधा, शरीर में कष्ट तथा कुटुम्बादि से भी भय होता है।

यदि शनि द्वितीयेश या सप्तमेश रहे तो अपमृत्यु से भय होता है। शान्ति हेतु विष्णुसहस्रनाम का जप, कृष्णा गौ का दान तथा महिषदान करना चाहिए। इससे शनि की प्रसन्नता से निश्चय ही आरोग्य लाभ होता है।

गुरुमहादशा में बुधान्तर्दशा का फल—गुरु की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो, बुध यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में या दशापति से युत हो तो धनलाभ, शरीरसुख, राज्यलाभ, राजा की कृपा से अभीष्ट सिद्धि, वाहन-वस्त्र तथा पशु आदि का लाभ होता है।

बुध यदि भौम से दृष्ट हो तो उसकी अन्तर्दशा में शत्रुवृद्धि, सुखनाश, कार्यव्यापार में हानि, ज्वर तथा अतिसारजन्य पीड़ा होती है।

बुध यदि दशेश से त्रिकोण में या केन्द्र में या स्वोच्च में हो तो स्वदेश में ही धनलाभ, पिता-माता से सुख तथा राजा की कृपा से वाहनादि का विशेष सुख होता है।

बुध यदि दशेश से ६, ८, १२ वें भाव में हो और पापग्रह से युक्त एवं शुभग्रह से अदृष्ट रहे तो धननाश, विदेशयात्रा, मार्ग में चौरभय, व्रण-दाह-नेत्रकष्ट और विदेश भ्रमण होता है।

यदि बुध लग्न से ६, ८, १२ में हो और पापग्रह से युत हो तो अकारण कलह, क्रोध, पशुहानि, व्यापार में क्षति और अपमृत्युभय होता है।

बुध यदि शुभग्रह से दृष्ट और पापग्रह से युत हो तो अन्तर्दशा के प्रारम्भ में स्त्रीसुख, धनलाभ, वाहन-वस्त्र आदि का लाभ होता है। अन्तर्दशा के अन्त में धनहानि और शारीरिक कष्ट होता है।

यदि बुध द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्यु का भय होता है। इसकी शान्ति हेतु सर्वसुखदायक, आयुवृद्धिकारक विष्णुसहस्रनाम का जप करना चाहिये।

गुरुमहादशा में केतु की अन्तर्दशा का फल—गुरु की महादशा में केतु का अन्तर हो और केतु यदि शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो अल्पसुख, अल्पधनलाभ, कदन्न परान्न या श्राद्धान्न का भोजन तथा कुकर्म से धनप्राप्ति होती है।

केतु यदि दशेश से ६, ८, १२वें स्थान में पापग्रह से युत हो तो राजा के कोप से धनहानि, बन्धन, रोग व बल का नाश, पिता और बन्धु से द्वेष तथा मानसिक पीड़ा होती है।

केतु यदि दशेश से ५, ९,४, १०वें स्थान में हो तो पालकी, हाथी-घोड़ा आदि सवारी का एवं वस्त्र का सुख, राजा की कृपा से इष्टकार्यसिद्धि, व्यवसाय में अधिक लाभ, पशुओं की वृद्धि तथा यवन राजा से धन-वस्त्रादि का लाभ होता है।

यदि केतु द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो कष्ट होता है। दोष शान्ति हेतु छागदान और विधिविधान से मृत्युञ्जय जप करना चाहिये।

गुरुमहादशा में शुक्रान्तर्दशा का फल—गुरु की महादशा में शुक्र की अन्तर की दशा हो और शुक्र यदि लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में या ११ में या अपनी राशि में शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो उस समय पालकी हाथी आदि सवारी का सुख, राजा की कृपा से धनलाभ व बहुत सुख, पूर्व दिशा की यात्रा से विशेष धनलाभ, गृह में कल्याण, माता-पिता से सुख, देवता व गुरु में भक्ति, अन्नदान तथा जलाशय, गोशाला निर्माण आदि धर्मकार्य होता है।

यदि शुक्र दशेश से या लग्न से ६, ८, १२ में रहे या अपने नीच में रहे तो कलह, बन्धुविरोध तथा स्त्री-पुत्र को कष्ट होता है। शनि यदि राहु से युक्त हो तो कलह, राजभय, स्त्री से द्वेष, श्वशुर से कलह, सोदरविवाद और धनहानि होती है।

शुक्र यदि दशेश से केन्द्र में या त्रिकोण में या द्वितीय में हो तो धनलाभ, स्त्री से सुख, राजदर्शन, वाहन, पुत्र और पशुओं की वृद्धि, गीत वाद्य सुख, विद्वान् से सङ्गति, मिष्टान्न भोजन तथा बन्धु पालन पोषण आदि का सुख होता है।

शुक्र द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो धनहानि, अपमृत्युभय तथा स्त्री से कलह होता है। शान्ति हेतु श्वेत गो का दान व महिषदान करना चाहिए इससे शुक्र की प्रसन्नता द्वारा सुखलाभ होता है।

गुरुमहादशा में सूर्यान्तर्दशा का फल—गुरु की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो, सूर्य यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में या ३, ११, २ में बलयुक्त रहे तो धनलाभ, राजसम्मान, वाहन, वस्त्र, पशु, भूषण, पुत्र आदि से सुख तथा राजा की मैत्री से सभी कार्य की सिद्धि होती है।

लग्न स्थान से या दशेश से ६, ८, १२ में सूर्य हो तो उसकी अन्तर्दशा में शिरोव्यथा, ज्वर, सत्कर्म में आलस्य, पापकर्मवृद्धि, सभी से द्वेष, बन्धुवियोग और अकारण कलह होता है।

सूर्य यदि द्वितीयेश या सप्तमेश रहे तो शरीर में पीड़ा होती है। शान्ति हेतु आदित्यहृदय का पाठ करने से श्रीसूर्य की कृपा से सब कष्टों का निवारण होता है।

गुरुमहादशा में चन्द्रान्तर्दशा का फल—गुरु की महादशा में चन्द्र की अन्तर्दशा हो और चन्द्र यदि लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में या ११ में या स्वोच्च में या स्वराशि में पूर्णबली हो और दशापति से शुभस्थान में हो तो उस समय राजा से सम्मान, ऐश्वर्य, स्त्री-पुत्रादि से सुख, पायस आदि सुभोजन, सत्कर्म से सुयश, पुत्र-पौत्रों की वृद्धि, राजा की कृपा से सर्वसुख और दान तथा धर्म में रूचि होती है।

चन्द्र यदि लग्न से या दशेश से ६, ८, १२ में पापग्रह से युत व निर्बल रहे तो धन और बन्धुवर्ग की हानि, विदेश-भ्रमण, राजा और चोर का भय, बान्धवों से कलह, मामा का वियोग तथा माता को क्लेश होता है।

चन्द्र यदि द्वितीयेश या षष्ठेश हो तो देहकष्ट होता है। दोष के शान्त्यर्थ सप्तशतीदुर्गापाठ करना चाहिये॥६४॥

गुरुमहादशा में भौमान्तर्दशा का फल—गुरु की महादशा में भौम की अन्तर्दशा हो और भौम यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या उच्च में या स्वनवांश में हो तो घर में विवाहादि उत्सव, ग्राम-भूमि का लाभ, जनसामर्थ्य की प्राप्ति और सर्वकार्य की सिद्धि होती है।

दशेश से केन्द्र में या त्रिकोण में या ११, २ भाव में शुभग्रह से युत दृष्ट यदि मङ्गल हो तो धन-धान्यादि की वृद्धि, मिष्टान्न भोजन, राजा की प्रसन्नता; स्त्री-पुत्र से सुखप्राप्ति और पुण्य कार्य होता है।

दशेश से भौम यदि ८, १२ में या नीच में या पापग्रह से युत दृष्ट हो तो धन और गृह का नाश तथा नेत्ररोग आदि अनेक दुःख होते हैं। दशा के पूर्वार्ध में विशेष कष्ट होता है; परन्तु अन्त में सुख भी होता है। भौम यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शरीर में कष्ट व मानसिक व्यथा होती है। शान्ति हेतु सर्व-सम्पत्तिप्रदायक वृषभ का दान करना चाहिये।

गुरुमहादशा में राहुअन्तर्दशा का फल—गुरु की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो और राहु यदि स्वोच्च, स्वराशि, मूलत्रिकोण या लग्न से केन्द्र त्रिकोण में केन्द्रस्वामी से या शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो योगक्रिया में रुचि, प्रारम्भ में पाँच मास तक धन-धान्य की वृद्धि, देश या ग्राम का आधिपत्य, अन्यजातीय राजा से भेंट, सेनापतित्व, गृह में कल्याण, दूर देश की यात्रा, तीर्थ स्नानादि पुण्यकार्य और सुख का संग्रह होता है।

यदि दशेश से ८, १२ में पापग्रह से युत राहु हो तो चोर, सर्प और

राजा का भय, व्रण से कष्ट, गृहकार्य में हानि, सहोदर और बन्धुवर्ग से विरोध, दु:स्वप्नदर्शन, अकारण कलह और रोग से क्लेश होता है।

यदि द्वितीय या सप्तम स्थान में राहु हो तो शरीर में क्लेश होता है। राहु दोष शान्ति हेतु मृत्युञ्जय का जप व छागदान तथा देवपूजा करने पर राहु की प्रसन्नता से सब सुखों की प्राप्ति होती है।

शनिमहादशा में सभी ग्रहों की अन्तर्दशा फल—

शनिमहादशा में शन्यन्तर्दशा का फल—शनि की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो, शनि यदि स्वराशि, उच्च या परमोच्चांश में अथवा लग्न से केन्द्र-त्रिकोण में हो अथवा राजयोगकारक हो तो उस समय राज्यलाभ, स्त्री-पुत्रादि का सुख, हाथी-घोड़ा आदि की सवारी, वस्त्रलाभ, राजा की कृपा से सेनापतित्व, पशु-ग्राम और भूमि-लाभ होता है।

शनि यदि लग्न से ८-१२ में हो या नीचराशि में हो या पापग्रह से युत हो तो अन्तर्दशा के आरम्भ में राजभय, विष-शस्त्रभय तथा रक्तस्त्राव-गुल्म-अतिसारादि रोग होता है। दशा के मध्य में चोर आदि का भय, देशत्याग, मानसिकव्यथा होती है तथा दशा के अन्त में शुभफल प्राप्त होता है।

यदि शनि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्यु भय होता है। उस दोष के शान्ति हेतु मृत्यृञ्जय जप करना चाहिए इससे शंकर की प्रसन्नता से सुखप्राप्ति होती है।

शनिमहादशा में बुधान्तर्दशा का फल—शनि की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो और बुध यदि केन्द्र- त्रिकोण में हो तो लोक में सम्मान-यश-विद्यालाभ-धनलाभ और वाहन आदि का सुख होता है साथ ही यज्ञादिकार्य में रुचि, राजसुख, देहसुख, उत्साह, घर में कल्याण, सेतुस्नान, तीर्थयात्रा, व्यापार से लाभ, धर्मानुष्ठान, पुराणकथाश्रवण, अन्नदानादि धर्मकार्य तथा सुस्वादुभोजन की प्राप्ति होती है।

बुध यदि लग्न या दशेश से ६, ८, १२ में अथवा सूर्य-भौम या राहु से युत हो तो अन्तर्दशा के आरम्भ में राज्यलाभ, धनलाभ और ग्राम का स्वामित्व होता है; किन्तु मध्य और अन्त में रोग से कष्ट, सभी कार्य में हानि, चित्त में व्यग्रता और भय होता है।

यदि बुध द्वितीयेश या सप्तमेश रहे तो शरीर मे कष्ट होता है। दोष शान्त्यर्थ विष्णुसहस्त्रनाम का जप तथा अन्नदान करने पर सभी सुखों की प्राप्ति होती है।

शनिमहादशा में केत्वन्तर्दशा का फल—शनि की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो, केतु स्वोच्च या स्वराशि या शुभराशि में अथवा केन्द्र या त्रिकोण में हो, शुभग्रह से युत दृष्ट हो तब भी उसकी दशा में स्थाननाश, भय, दरिद्रता, कष्ट, विदेशयात्रा आदि अशुभ फल होते हैं। यदि केतु का लग्नेश से सम्बन्ध हो तो दशारम्भ में सुख-धनलाभ-गङ्गादि तीर्थस्नान और देवदर्शन होता है।

यदि केतु दशेश से केन्द्र में या त्रिकोण में या ३, ११ भाव में रहे तो, सामर्थ्यता, धर्म में रुचि, राजा का दर्शन तथा सर्वसुख होता है।

यदि केतु दशेश या लग्न से ८, १२ में रहे तो अपमृत्युभय, कदन्न भोजन, शीतज्वर, अतिसार, व्रण, चौरभय तथा स्त्री-पुत्र का वियोग होता है।

यदि केतु लग्न से द्वितीय या सप्तम स्थान में रहे तो शरीरकष्ट होता है। शान्ति हेतु छागदान करने पर केतु की प्रसन्नता से सुख और शान्ति प्राप्त होती है।

शनिमहदशा में शुक्र अन्तर्दशा का फल—शनि की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो, शुक्र यदि केन्द्र-त्रिकोण-स्वोच्च-स्वराशि में या११ भाव में शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो स्त्री-पुत्र-धनलाभ-आरोग्य-गृह में कल्याण, राज्यलाभ, राजा की कृपा से सुख-सम्मान, विविध वस्त्र, आभूषण, वाहनादि. अभीष्ट वस्तुओं का लाभ होता है। उस समय बृहस्पति अनुकूल रहे तो भाग्योदय व सम्पत्ति की वृद्धि होती है। शनिगोचर से अनुकूल रहे तो योगक्रिया की सिद्धि होती है।

यदि शुक्र नीचराशि में हो या अस्त हो या ६, ८, १२ में हो तो स्त्रीकष्ट, स्थाननाश, मानसिक व्यथा और स्वजनों से कलह होता है।

यदि शुक्र दशेश से ९, ११ या केन्द्र में हो तो राजा की कृपा से अभीष्टसिद्धि, दान, धर्म, तीर्थयात्रा, शास्त्र में प्रवृत्ति, काव्यरचना, वेदान्तादि कथा श्रवण तथा स्त्री-पुत्रादि से सुखलाभ होता है।

यदि शुक्र दशेश से १२, ६, ८ में हो तो नेत्रकष्ट, ज्वर, आचरणहीनता, दन्तरोग, हृदय, गुह्यभाग में शूल, जल में डूबने और वृक्ष पर से गिरने का भय, राजपुरुष और सहोदर से कलह होता है।

यदि शुक्र द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शरीरकष्ट होता है। दोष शान्त्यर्थ दुर्गासप्तशती का पाठ-गोदान-महिषदान करने पर दुर्गा की प्रसन्नता से आरोग्य और सुख होता है।

शनिमहादशा में सूर्यान्तर्दशा का फल—शनि की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो और सूर्य अपने उच्च में या गृह में या भाग्येश से युत हो या लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो स्वामी से सुख, गृह में कल्याण, पुत्रादि से सुख तथा वाहन, पशु आदि का लाभ होता है।

यदि सूर्य लग्न से या दशेश से ८, १२ में हो तो हृदयरोग, मानहानि, स्थान-नाश, मानसिक व्यथा, बन्धुवियोग, उद्यम में अवरोध, ज्वर, ताप, व्याकुलता, भय, सम्बन्धियों का तथा प्रियवस्तु का नाश होता है।

यदि सूर्य द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शरीर में कष्ट होता है। दोष शान्त्यर्थ सूर्य की पूजा करनी चाहिये।

शनिमहादशा में चन्द्रान्तर्दशा का फल—शनि की महादशा में चन्द्र की अन्तर्दशा हो और चन्द्रमा स्वोच्च, स्वगृह या लग्न से केन्द्र-त्रिकोण या ११ में बलवान हो या शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो राजा की कृपा से वाहन, वस्त्र, आभूषण का लाभ, सुख-सौभाग्य की वृद्धि, नौकरों का पालन, मातृकुल-पितृकुल में सुख और पशुओं की वृद्धि एवं सुख होता है।

यदि चन्द्रमा क्षीण हो या पापग्रह से युतदृष्ट हो, नीच-क्रूर ग्रह के नवांश या क्रूरग्रह की राशि में हो तो उसकी अन्तर्दशा में घोरकष्ट, राजकोप, धनहानि, मातृ-पितृ वियोग, सन्तानकष्ट, व्यापार में हानि, असमय भोजन और औषधसेवन होता है। दशारम्भ में धनलाभ और सुख होता है।

यदि चन्द्र दशेश से केन्द्र में त्रिकोण में या ११ में हो तो वाहन, वस्त्र और बन्धुओं से सुख, पिता, माता, स्त्री, मित्र, स्वामी आदि से भी इष्ट सिद्धि और सर्वसुख होता है।

यदि चन्द्र दशेश से १२, ८ में हो या निर्बल हो तो निद्रा, आलस्य, स्थाननाश, सुखनाश, शत्रुवृद्धि और बन्धुओं से द्वेष होता है।

यदि चन्द्र द्वितीयेश या द्वादशेश हो तो शरीरकष्ट और आलस्य होता है। दोष शान्त्यर्थ तिल से हवन,. गुड़, घी, दधिमिश्रित तण्डुल, गौ तथा महिष का दान करने से आयुवृद्धि होती है।

शनिमहादशा में भौमान्तर्दशा का फल—शनि की महादशा में भौम की अन्तर्दशा हो और भौम स्वोच्च, स्वराशि में या दशेश से या लग्नेश से युत हो तो उस समय दशारम्भ से ही सुख, धनलाभ, राजसम्मान, वाहन, वस्त्र, आभूषण का लाभ, सेनापतित्व, कृषि, पशुओं की वृद्धि, नूतन गृहनिर्माण और भ्रातृवर्ग को सुख होता है।

यदि भौम अपने नीच में हो अस्तङ्गत या लग्न से ८, १२ में पापग्रह से युत दृष्ट हो तो उस समय धनहानि, चोर, सर्प, व्रण, शस्त्र तथा गठिया रोग से भय, पिता और भाई को कष्ट, बन्धुवर्ग में कलह, पशुओं की हानि, कदन्न भोजन, विदेशगमन और अनावश्यक खर्च होता है।

यदि भौम अष्टमेश-सप्तमेश या द्वितीयेश हो तो अपमृत्युभय, विविध कष्ट और पराभव होता है। दोष शान्ति हेतु होम और वृष का दान करना चाहिये।

शनिमहादशा में राह्वन्तर्दशा का फल—शनि की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो और राहु यदि उच्चादि स्थानों में नहीं हो तो कलह, मानसिक व्यथा, शरीरकष्ट, सन्ताप, पुत्रों से द्वेष, रोगभय, अपव्यय, राजभय, स्वजनों से कलह, विदेशयात्रा तथा गृह और कृषि में हानि होती है।

यदि राहु लग्नेश या योगकारक ग्रह से युत हो या स्वोच्च में, स्वराशि में, लग्न या दशेश से केन्द्र में या, ११ भाव में हो तो अन्तर्दशारम्भ काल में सुख-धनलाभ-कृषि में वृद्धि-देव और ब्राह्मणों में भक्ति-तीर्थयात्रा-पशुओं की वृद्धि और घर में कल्याण होता है। दशा के मध्यकाल में राजा से भय और पुत्र-मित्रादि से विरोध होता है।

राहु यदि मेष-कन्या-कर्क-वृष-मीन-धनु या कन्याराशि में हो तो पूर्ण ऐश्वर्य की वृद्धि, राजा से मित्रता तथा दिव्य वस्त्रादि से सुख होता है।

राहु यदि द्वितीयेश या सप्तमेश से युत हो तो शरीरकष्ट होता है। दोष शान्त्यर्थ मृत्युञ्जय जप, छागदान तथा वृषदान करना चाहिये।

शनिमहादशा में गुर्वन्तर्दशा का फल—शनि की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो और गुरु यदि लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में या लग्नेश से युत हो या स्वक्षेत्र या स्वोच्च में हो तो सभी कार्यों की सिद्धि, घर में कल्याण, राजा की कृपा से धन-वाहन-भूषण-वस्त्रलाभ-सम्मान की प्राप्ति-देव व गुरु में भक्ति-विद्वानों का सङ्ग और स्त्री-पुत्रादि से सुख होता है।

गुरु यदि लग्न से ६, ८, १२ स्थानों में, स्वनीच में या पापग्रह से युत हो तो सम्बन्धियों का नाश, धनहानि, राजकर्मचारियों से द्वेष, कार्य में क्षति, विदेश गमन और कुष्ठादि रोग का भय होता है।

यदि गुरु दशेश से केन्द्र में या ५, ९, २, ११ स्थानों में रहे तो ऐश्वर्य, स्त्रीसुख, राजा द्वारा धनलाभ, भोजन-वस्त्रादि का सुख तथा दान-धर्म

में प्रवृत्ति होती है। साथ ही वेद-वेदान्त का ज्ञान, यज्ञकर्म, अन्नदान आदि से देश में कीर्ति होती है।

यदि गुरु दशेश से ६, ८, १२ में हो या बलहीन हो तो बन्धुओं से द्वेष, मानसिक व्यथा-कलह-स्थान-त्याग-कुभोजन-कार्य में क्षति-राजदण्ड से धनहानि-बन्धन तथा पुत्र-स्त्री को कष्ट होता है।

यदि गुरु द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शरीरकष्ट-मनसन्ताप और अपने परिजनों का नाश होता है। दोष शान्त्यर्थ शिवसहस्रनाम का जप और सुवर्णदान करना चाहिये।

बुधमहादशा में सभी ग्रहों की अन्तर्दशा फल—

बुधमहादशा में बुधान्तर्दशा का फल—बुध की महादशा में बुध की ही अन्तर्दशा हो तथा बुध यदि स्वोच्चादि शुभस्थान में हो तो उस काल में मोती आदि रत्नों की प्राप्ति, ज्ञान-कर्म और सुख का विकाश, विद्या-कीर्ति की वृद्धि, नवीन राजाओं से भेंट तथा धन-स्त्री-पुत्र, पिता-माता आदि से सुख प्राप्त होता है। बुध यदि अपने नीचादि स्थान में या ६, ८, १२ में हो, पापग्रह से युत हो तो धन और पशु का नाश, बन्धुओं से वैर, शूल आदि रोग तथा राजकार्य में व्यग्रता होती है।

यदि बुध द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो स्त्रीकष्ट, सम्बन्धियों का मरण तथा वात व शूल रोग होता है। दोष शान्त्यर्थ विष्णुसहस्रनाम का जप करना चाहिए।

बुधमहादशा में केतु अन्तर्दशा का फल—बुध की महादशा में केतु की अन्तर्दशा हो और केतु यदि लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में हो अथवा शुभग्रह से या लग्नेश से या योगकारक ग्रह से युत दृष्ट हो तो अथवा दशेश से केन्द्र स्थान में या ११ में हो तो देहसुख, स्वल्पधन लाभ, बन्धुवर्ग से प्रेम, पशुओं की वृद्धि, उद्योग से धनलाभ, विद्या-कीर्ति-सम्मान, राजदर्शन और भोजन-वस्त्र आदि का सुख होता है।

यदि केतु दशेश से ८-१२ में हो या पापग्रह से युत हो तो सवारी से पतन, पुत्र को कष्ट, चौर और राजा से भय, पापकर्म में प्रवृत्ति, विषैले जीवों से भय, नीचों से कलह, शोक-रोग आदि क्लेश और नीचों का सङ्गत होता है।

यदि केतु द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शरीरकष्ट होता है। दोष शान्त्यर्थ छागदान करना चाहिये।

बुधमहादशा में शुक्रान्तर्दशा का फल—बुध की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो और शुक्र यदि लग्न से केन्द्रस्थान में या ११, ५, ९ में हो तो धर्मकार्य में रुचि, मित्र और राजा के द्वारा कार्यसिद्धि, कृषि और सुख में वृद्धि होती है। शुक्र यदि दशेश से केन्द्रस्थान में या ५, ९, ११ में हो तो राज्य-धन-सम्पत्ति का लाभ, जलाशय खनन, दान-धर्म में तत्परता और व्यवसाय से धन-धान्य का विशेष लाभ होता है।

यदि शुक्र दशेश से ६, ८, १२ में होकर निर्बल रहे तो हृदयरोग-मानहानि-ज्वर-अतिसार-बन्धुवियोग-शरीरकष्ट और मनसन्ताप होता है।

यदि शुक्र द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्युभय होता है। दोष शान्त्यर्थ दुर्गा मन्त्र का जप करने से सुख प्राप्त होता है।

बुधमहादशा में सूर्यान्तर्दशा का फल—बुध की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो और सूर्य यदि स्वोच्च-स्वराशि-केन्द्र-त्रिकोण या २, ११ में या उच्चांश या स्वनवांश में हो तो राजा की कृपा से भाग्योदय और मित्रों से सुख होता है। यदि सूर्य पर भौम की दृष्टि हो तो भूमिलाभ और लग्नेश की यदि दृष्टि हो तो भोजन व वस्त्र का सुख होता है।

सूर्य यदि लग्न या दशेश से ६, ८, १२ में हो या शनि-भौम राहु से युत होकर बलहीन हो तो चोर-अग्नि और शस्त्र से भय, पित्तरोग, शिर में पीड़ा, मानसिक व्यथा तथा इष्ट-मित्रों से वियोग होता है।

सूर्य यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्युभय होता है। दोष शान्त्यर्थ सूर्य की आराधना करनी चाहिये।

बुधमहादशा में चन्द्रान्तर्दशा का फल—बुध की महादशा में चन्द्र की अन्तर्दशा हो और चन्द्रमा यदि लग्न से केन्द्र-त्रिकोण या स्वोच्च में या स्वराशि में या गुरु से दृष्ट हो या बुध से योग करे तो योग की प्रबलता होती है। उस समय में स्त्री-पुत्र-वस्त्र-आभूषण आदि का लाभ होता है।

नूतनगृह, मधुरभोजन, गाना-बजाना, शास्त्र का अध्ययन, दक्षिण दिशा की यात्रा, विदेश से वस्त्रादि का लाभ तथा मोती आदि रत्नों की प्राप्ति होती है।

यदि चन्द्र स्वनीच या शत्रुराशि में हो तो देह में कष्ट होता है। यदि दशेश से केन्द्र, त्रिकोण या ३, ११ में चन्द्र हो तो आरम्भ में तीर्थ-देवता का दर्शन, धैर्य, उत्साह, और विदेश से धनलाभ होता है।

यदि चन्द्र दशेश से ६, ८, १२ में पापग्रह से युत हो तो चौर, अग्नि व राजा से भय, स्त्री वर्ग से अपयश और धननाश तथा खेती व पशुओं का नाश होता है।

यदि चन्द्र द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शरीर में क्लेश होता है। दोष शान्त्यर्थ दुर्गाजप और वस्त्रदान करने पर दुर्गा की कृपा से आयुवृद्धि तथा सुखप्राप्ति होती है।

बुधमहादशा में भौमान्तर्दशा का फल—बुध की महादशा में भौम की अन्तर्दशा हो और भौम यदि स्वोच्च, स्वराशि में या लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में या लग्नेश से युत रहे तो राजा की कृपा से घर में कल्याण, धन की वृद्धि, नष्ट राज्यादि का लाभ, पुत्रजन्म, मन में सन्तोष, पशु, खेती, वाहन आदि का लाभ तथा स्त्रीसुख होता है।

भौम यदि स्वनीचराशि में या लग्न से ८, १२ में हो या पापग्रह से दृष्ट हो तो शरीरकष्ट, मानसिक व्यथा, उद्योग में बाधा, धननाश, गठिया रोग, शस्त्र-व्रण का भय तथा ताप और ज्वर होता है।

भौम यदि दशेश से केन्द्र स्थान में या ५, ९, ११ में या शुभग्रह से दृष्ट हो तो धनलाभ, शरीरसुख, पुत्रलाभ तथा बन्धुप्रेम होता है।

दशेश से ८, १२ में भौम यदि पापग्रह से युत हो तो दशा के प्रारम्भ में कष्ट, बन्धुवर्ग में भय, राजा-चोर-अग्नि का प्रकोप, पुत्र से विरोध तथा स्थानहानि होती है। दशा के मध्य में सुख-धनलाभ और दशान्त में राजभय व स्थाननाश होता है।

यदि भौम द्वितीयेश या तृतीयेश हो तो अपमृत्युभय होता है। दोष शान्त्यर्थ गोदान और मृत्युञ्जय जप करने पर शङ्कर की कृपा से सुख होता है।

बुधमहादशा में राह्वन्तर्दशा का फल—बुध की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो और राहु यदि लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में हो या मेष-कुम्भ-कन्या-वृष राशि में हो तो राजा से सम्मान, सुयश, धनलाभ-तीर्थ-देव का दर्शन, यज्ञ, सम्मान और वस्त्रलाभ होता है। दशा के प्रारम्भ में कुछ कष्ट होता है; किन्तु दशान्त में सुख होता है।

यदि राहु लग्न से ८, १२ में रहे तो उसकी अन्तर्दशा में धननाश, शरीर में कष्ट, वात-ज्वर और अजीर्ण रोग से क्लेश होता है।

यदि राहु लग्नस्थान से ३, ६, १०, ११ में हो तो राजा से वार्ता, यदि शुभग्रह से युत हो तो नवीन राजा का दर्शन होता है।

यदि राहु दशेश से ८, १२ में पापग्रह से युत हो तो राजकार्य में श्रम, स्थान की क्षति, भय, बन्धन, रोग, अपने और बन्धुओं को क्लेश, हृदयरोग, सम्माननाश और धनहानि होती है।

यदि राहु द्वितीय या सप्तम भाव में हो तो अपमृत्युभय होता है। दोष शान्त्यर्थ दुर्गा और लक्ष्मी का मन्त्रजप, कपिला गौ का दान और महिषदान करने पर जगदम्बा की कृपा से सुख प्राप्त होता है।

बुधमहादशा में गुर्वन्तर्दशा का फल—बुध की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो और गुरु यदि लग्न से केन्द्र मे या त्रिकोण में या ११, २ भाव में या स्वोच्च में या स्वराशि में हो तो शरीरसुख-धनलाभ-राजा की कृपा-घर में विवाहादि उत्सव-मिष्टान्न भोजन-पशुओं की वृद्धि-पुराणादिश्रवण-देव-गुरु में भक्ति-दान-धर्म-यज्ञ में प्रवृत्ति और शङ्कर की आराधना होती है।

यदि गुरु नीचराशि में हो, अस्तङ्गत हो, लग्न से ६, ८, १२ में हो या शनि-भौम से दृष्ट युत हो तो स्वजनों और राजा से कलह, चोर आदि से कष्ट, मातृ-पितृ मरण, मानहानि, राजदण्ड, धनहानि, विष-सर्प और ज्वर से कष्ट तथा कृषि और भूमि की क्षति होती है।

यदि गुरु दशेश से केन्द्र में या, त्रिकोण में या ११ में होकर बली रहे तो बन्धु-पुत्र से सुख, उत्साह, धन-गौ महिष्यादि और यश की वृद्धि तथा अन्न-दानादि का पुण्य प्राप्त होता है।

दशेश से ६, ८, १२ में निर्बल गुरु हो तो सन्ताप, विकलता, रोगभय, स्त्री और बन्धु से द्वेष, राजकोप, अचानक कलह धनहानि और विप्र से भय होता है।

यदि गुरु द्वितीयेश या सप्तमेश हो या २, ७ भाव में हो तो कष्ट होता है। दोष शान्त्यर्थ शिवसहस्रनाम का जप, गोदान तथा सुवर्णदान करने पर अरिष्टनाश होता है।

बुधमहादशा में शन्यन्तर्दशा का फल—बुध की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो और शनि यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या केन्द्र में या त्रिकोण में या ११ में हो तो घर में कल्याण, राज्यलाभ, उत्साहवृद्धि, पशुवृद्धि, स्थानलाभ, तीर्थ-भ्रमण व दर्शन होता है।

यदि शनि दशेश से ८, १२ में हो तो शत्रुभय, स्त्री-पुत्र को कष्ट,

बुद्धिनाश, बन्धुनाश, कार्यहानि, मानसिक व्यथा, विदेशयात्रा और दुःस्वप्नदर्शन होता है।

शनि यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्युभय कहना चाहिए। इसमें मृत्युञ्जयजप, कृष्णा गौ और महिष का दान करने पर आरोग्यलाभ होता है।

केतुमहादशा में सभी ग्रहों की अन्तर्दशा फल—

केतुमहादशा में केत्वन्तर्दशा का फल—केतु की महादशा में केतु की ही अन्तर्दशा हो और केतु यदि लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में या लग्नेश से युत हो तथा भाग्येश या कर्मेश या चतुर्थेश का सम्बन्धी हो तो धन-पुत्र-स्त्री से सुख, राजसम्मान; मानसिक व्यथा, ग्राम व भूमि आदि का लाभ होता है।

यदि केतु अपनी नीचराशि में अस्तग्रह से युत हो या ८, १२ में हो तो हृदयरोग, मानहानि, धन-पशु का नाश, स्त्री-पुत्र को कष्ट तथा मनोचाञ्चल्य होता है।

केतु यदि द्वितीयेश या सप्तमेश से सम्बन्धित हो अथवा २, ७ स्थान में हो तो रोगभय-कष्ट तथा अपने बन्धुओं का वियोग होता है। दोष शान्त्यर्थ सप्तशती का पाठ, मृत्युञ्जयजप करने पर सुख की प्राप्ति होती है।

केतुमहादशा में शुक्रान्तर्दशा का फल—केतु की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो और शुक्र यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या केन्द्र-त्रिकोण में या ११ में दशमेश से युत हो तो राजकृपा, सौभाग्य वृद्धि व वस्त्रादि का लाभ होता है। यदि नवमेश से युत हो तो भाग्योदय, नष्ट राज्य का लाभ, वाहनादि सुख, सेतुस्नान, देवदर्शन आदि पुण्य कार्य तथा राजा की कृपा से ग्राम, भूमि आदि का लाभ होता है।

शुक्र यदि दशेश से केन्द्र में या त्रिकोण में या ३, ११ में हो तो आरोग्य सुख घर में कल्याण व भोजन-वस्त्र-वाहन आदि की प्राप्ति होती है।

यदि दशेश से ६, ८, १२ में पापग्रह से युत होकर शुक्र रहे तो अकारण कलह, धनहानि व पशुओं को पीड़ा होती है। यदि नीच में या नीचस्थग्रह के साथ या लग्न से ६, ८ में शुक्र रहे तो बन्धुओं से विवाद, मस्तक-नेत्र-हृदय में रोग, मानहानि, धननाश तथा पशु और स्त्री-पुत्र को पीड़ा होती है।

यदि शुक्र द्वितीयेश या सप्तमेश रहे तो शरीर में पीड़ा व मानसिकव्यथा

होती है। शान्ति हेतु दुर्गासप्तशती पाठ, कपिला गौ और महिषी का दान करने पर आरोग्य प्राप्ति व आयुवृद्धि होती है।

केतुमहादशा में सूर्यान्तर्दशा का फल—केतु की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो और सूर्य यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या केन्द्र-त्रिकोण में या ११ में शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो धनलाभ, राजकृपा, पुण्यकार्य और अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है।

यदि सूर्य लग्न से ८, १२ में पापग्रह से युत रहे तो उसकी अन्तर्दशा में राजभय, मातृ-पितृ वियोग, विदेशगमन, चौर, सर्प व विष से पीड़ा, राजदण्ड, मित्रों से वैर, शोक और ज्वरादि रोग होता है।

यदि सूर्य दशेश से केन्द्र त्रिकोण में या २-११ में हो तो देहसुख, धनलाभ, पुत्रलाभ, सन्तोष, सब कार्यों की सिद्धि तथा लघु ग्राम का स्वामित्व प्राप्त होता है।

यदि सूर्य दशेश से ८, १२ में पापग्रह से युत हो तो भोजन में व्यवधान, भय, धनहानि, पशुहानि, अन्तर्दशा के मध्य में कष्ट तथा दशान्त में कुछ शुभ भी होता है। सूर्य यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्यु भय होता है। दोष शान्त्यर्थ सुवर्ण और गोदान करने पर सूर्य की कृपा से सुख प्राप्त होता है।

केतुमहादशा में चन्द्रान्तर्दशा का फल—केतु की महादशा में चन्द्र की अन्तर्दशा हो और चन्द्र यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या केन्द्र त्रिकोण में या ११-२ में हो तो राजा से सम्मान, उत्साह, कल्याण, सुख, गृह-भूमि आदि की प्राप्ति, भोजन, वस्त्र,वाहन, पशु आदि का लाभ, व्यापार में सिद्धि, जलाशय निर्माण आदि पुण्य कार्य तथा स्त्री-पुत्र को सुख होता है। यदि पूर्णचन्द्र हो तो पूर्ण सुख प्राप्त होता है।

यदि क्षीण चन्द्र हो या नीच में हो या ६, ८, १२ वें भाव में हो तो सुख में बाधा, कार्य में विघ्न, मातृ-पितृ वियोग, शरीरकष्ट, मानसिक व्यथा, व्यवसाय में हानि तथा पशुओं का नाश होता है।

यदि चन्द्र दशेश से केन्द्र में या त्रिकोण में या ११ में बली रहे तो कृषि, गौ और भूमि की प्राप्ति, इष्टबन्धु समागम, उनके द्वारा कार्यसिद्धि, घर में दूध-दही आदि की वृद्धि, दशा के प्रारम्भ में शुभफल मध्य में राजा से प्रेम तथा दशान्त में राजभय, विदेशयात्रा या दूर यात्रा से बन्धुओं द्वारा सम्मान मिलता है।

यदि चन्द्र दशेश से ६, ८, १२ में बलहीन हो तो धनहानि, चित्त में व्यग्रता, बन्धुवैर तथा भ्रातृकष्ट होता है। चन्द्र यदि अष्टमेश हो या मारकेश से युत हो तो अपमृत्युभय होता है। शान्त्यर्थ चन्द्रमा की शान्ति (जप, दान) करनी चाहिए इससे आयुवृद्धि और आरोग्य सुख होता है।

केतुमहादशा में भौमान्तर्दशा का फल—केतु की महादशा में भौम की अन्तर्दशा हो और भौम स्वोच्च में या स्वराशि में या शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो ग्राम-भूमि आदि का लाभ, धन-पशु की वृद्धि, नूतन गृह, बगीचा आदि का निर्माण तथा राजकृपा से धनलाभ होता है। यदि नवमेश या दशमेश से भौम का सम्बन्ध हो तो निश्चय ही भूमिलाभ और सुख होता है।

दशेश से केन्द्र में या त्रिकोण में या ३, ११ में भौम हो तो राजा से सम्मान, लोक में सुयश तथा पुत्र-मित्रादि से सुख होता है।

यदि दशेश से ८, १२, २ में भौम रहे तो मृत्युभय, विदेशयात्रा में बाधा, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र आदि रोग, चोर और राजा से भय, विवाद और मनोव्यथायुक्त कुछ सुख भी प्राप्त होता है।

भौम यदि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो तापज्वर और विषभय, स्त्री को कष्ट, मानसिक व्यथा और अपमृत्युभय होता है। शान्ति हेतु वृषदान करने पर भौम की कृपा से सुख और सम्पत्ति की प्राप्ति होती है।

केतुमहादशा में राह्वन्तर्दशा का फल—केतु की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो और राहु यदि अपने उच्च में या स्वराशि में या मित्रराशि में या लग्न से केन्द्र-त्रिकोण में या ११, ३, २ में हो तो धन की वृद्धि, यवन राजा से धन-धान्य, पशु, ग्राम, भूमि आदि प्राप्त होता है। अन्तर्दशा के आदि में कुछ क्लेश तथा मध्य व अन्त में सुख होता है।

केतुमहादशा में गुरुअन्तर्दशा का फल—राहु ८ या १२ वें भाव में यदि पापग्रह से युत दृष्ट रहे तो बहुमूत्र रोग, देह दौर्बल्य, शीतज्वर, विषभय, चौथिया ज्वर, उपद्रव, कलह, प्रमेह तथा शूलरोग होता है। यदि २, ७ वें भाव में राहु हो तो क्लेश और भय होता है। दोष शान्त्यर्थ दुर्गा पाठ या जप करना चाहिए।

केतु की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो और गुरु यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या केन्द्र-त्रिकोण में या लग्नेश-नवमेश या दशमेश से युत हो तो उस अन्तर्दशा में धन-धान्य की वृद्धि, राजप्रेम, उत्साह, वाहन आदि

का लाभ, पुत्रजन्म आदि उत्सव, पुण्यकार्य, यज्ञ आदि शुभकार्य, शत्रु पर विजय और सुख होता है।

यदि गुरु ६, ८, १२ वें भाव में हो अथवा नीचराशि में हो तो चोर-सर्प व व्रण का भय, धननाश, पुत्र-स्त्री का वियोग तथा शरीरकष्ट होता है। दशा के प्रारम्भ में कुछ शुभफल होता है; परन्तु अन्त में निश्चय ही अशुभफल होता है।

यदि गुरु दशेश से केन्द्र में या त्रिकोण में या ३, ११ में या शुभग्रह से युत हो तो राजकृपा से विविध प्रकार के वस्त्र, आभूषण का लाभ, विदेश गमन, बन्धुवर्ग का पालन तथा सुभोजन आदि का लाभ होता है। दशा के प्रारम्भ में कुछ शारीरिक कष्ट और अन्त में स्थान-हानि व कलह होता है।

यदि गुरु द्वितीयेश या सप्तमेश रहे तो अपमृत्यु का भय होता है। दोष शान्त्यर्थ शिवसहस्रनाम का पाठ तथा मृत्युञ्जय जप करने पर सब कष्टों का नाश होता है।

केतुमहादशा में शन्यन्तर्दशा का फल—केतु की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो तो पीड़ा, बन्धुकष्ट, मन सन्ताप, पशुओं की वृद्धि, राजकार्य से धन क्षय, स्थानभ्रष्टता, परदेश गमन तथा मार्ग में चोर का भय होता है। शनि यदि ८, १२ में हो तो आलस्य और धननाश होता है।

यदि शनि मीन से त्रिकोण (कर्क-वृश्चिक) में, तुला में, अपनी राशि में, लग्न से केन्द्र-त्रिकोण में ३, ११ में, शुभनवांश में अथवा शुभग्रह से युत दृष्ट हो तो सभी कार्य की सिद्धि, स्वामी से सुखलाभ, यात्रासुख, ग्रामसुख, सम्पत्ति की वृद्धि तथा अपने राजा का दर्शन होता है।

यदि शनि दशेश से ६, ८, १२ में पापग्रह से युत हो तो शरीरकष्ट, मन में सन्ताप, कार्य में बाधा, आलस्य, मानहानि तथा मातृ-पितृ का मरण होता है। यदि शनि द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्यु भय होता है। दोष शान्त्यर्थ तिल से होम, काली गाय का दान तथा महिषदान करने पर आरोग्य होता है।

केतुमहादशा में बुधान्तर्दशा का फल—केतु की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो और बुध यदि लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में या स्वोच्च में या स्वराशि में हो तो राज्यलाभ, सुख, सत्सङ्ग, दानादि धार्मिक कार्य, भूमि-पुत्र व धन का लाभ, विना प्रयास के हीं धर्म और विवाहादि शुभकृत्य, गृह में कल्याण तथा वस्त्र-आभूषण की प्राप्ति होती है।

बुध यदि नवमेश या दशमेश के साथ हो तो भाग्योदय, विद्वानों के सङ्गत में सत्कथा द्वारा समय व्यतीत होता है।

बुध यदि ६, ८, १२ वें भाव में स्थित होकर शनि-भौम-राहु से युत दृष्ट हो तो अधिकारियों से वैर, पर गृहवास, वस्त्र, वाहन, पशु-धन आदि का नाश होता है। दशा के प्रारम्भ में कुछ शुभफल मध्य में विशेष सुख तथा अन्त में उपरोक्त अशुभफल अर्थात् स्त्री-पुत्रादि को कष्ट होता है।

बुध यदि दशेश से केन्द्र में या त्रिकोण में या ११ वें भाव में हो तो आरोग्यसुख, पुत्रसुख, ऐश्वर्यवृद्धि, भोजन-वस्त्र की प्राप्ति तथा व्यापार से अधिक लाभ होता है।

बुध यदि दशेश से ६, ८, १२ वें भाव में स्थित होकर निर्बल रहे तो अन्तर्दशारम्भ में कष्ट स्त्री-पुत्र को पीड़ा व राजभय, मध्य में तीर्थयात्रा होती है। बुध यदि बुध द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो अपमृत्युभय होता है। दोष शान्त्यर्थ विष्णुसहस्रनाम का जप करने पर भगवान् की कृपा से सुख प्राप्त होता है।

शुक्रमहादशा में सभी ग्रहों की अन्तर्दशा फल—

शुक्रमहादशा में शुक्रान्तर्दशा का फल—शुक्र की महादशा में शुक्र की अन्तर्दशा हो और शुक्र यदि लग्न से केन्द्र में या त्रिकोण में या ११ भाव में होकर बली हो तो विप्र द्वारा धन-पशु (गौ) आदि की प्राप्ति, घर में पुत्रोत्सव, कल्याण, राजसम्मान तथा पद लाभादि से अधिक सुख होता है।

यदि शुक्र स्वोच्च में या स्वराशि में या उच्चांश में या नवमांश में हो तो नूतन गृह का निर्माण, मिष्टान्न भोजन, स्त्री-पुत्र को सुख, मित्र का सङ्ग, अन्नदानादि धर्म कार्य, राजा की कृपा, वस्त्र, वाहन, आभूषण का लाभ, व्यापार में सिद्धि, पशुओं की वृद्धि और पश्चिमदिशा की यात्रा से वस्त्रादि का लाभ होता है।

यदि शुक्र लग्न से ३, ६, ११ में हो और शुभग्रह से युत दृष्ट हो या मित्र के नवांश में हो उच्चस्थ हो लाभेश या योगकारक ग्रह से युत हो तो राज्यलाभ, उत्साह, राजकृपा, गृह में कल्याण और स्त्री-पुत्र धन आदि की वृद्धि होती है।

यदि शुक्र ६, ८, १२ वें भाव में पापग्रह से युत दृष्ट हो तो चोर व्रण आदि का भय, स्वजनों को कष्ट, राज्याधिकारियों से द्वेष, मित्र और बन्धुओं का नाश तथा स्त्री-पुत्र को कष्ट होता है।

यदि शुक्र द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो मृत्युभय होता है। दोष शान्त्यर्थ दुर्गापाठ और गोदान करना चाहिए।।११।।

शुक्रमहादशा में सूर्यान्तर्दशा का फल—शुक्र की महादशा में सूर्य की अन्तर्दशा हो और सूर्य यदि अपने उच्च या नीच से अन्यत्र हो तो मनसन्ताप, राजकोप और बन्धुवर्ग से कलह होता है।

सूर्य यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या लग्न अथवा शुक्र से केन्द्र-त्रिकोण में या २, ११ भाव में हो तो राज्य, धन, स्त्रीसुख, लाभ, स्वामी से सुखलाभ, मित्रों का समागम, माता-पिता और स्त्री से सुख, कीर्ति, सौभाग्य की वृद्धि और पुत्रलाभ होता है।

सूर्य यदि ६, ८, १२ वें भाव में या नीचराशि में या पापग्रह की राशि में हो तो कष्ट, सन्ताप, परिजनों को पीड़ा, कटुवाणी, पितृकष्ट, बन्धुहानि, राजकोप, गृह में भय, विविध रोग और कृषि आदि नष्ट होता है।

सूर्य यदि सप्तमेश या द्वितीयेश हो तो ग्रह बाधा होती है। बाधक शान्त्यर्थ सूर्य की आराधना करनी चाहिये।

शुक्रमहादशा में चन्द्रान्तर्दशा का फल—शुक्र की महादशा में चन्द्र की अन्तर्दशा हो और चन्द्र यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या लग्न से केन्द्र-त्रिकोण में या ११वें भाव में नवमेश से या शुभग्रह से या दशमेश से युत हो तो राजा की कृपा से वाहन-वस्त्र व धन का लाभ, गृह में सुख, ऐश्वर्यलाभ तथा देव-ब्राह्मण में भक्ति होती है।

गायकों वादकों का एवं विद्वानों का संग तथा अलंकार-गौ-भैंस आदि पशुओं का लाभ, व्यवसाय में विशेष फल तथा भाइयों के साथ भोजन-वस्त्रादि का सुख होता है।

चन्द्र यदि नीचराशि में या अस्त या लग्न अथवा दशेश से ६, ८, १२ में हो तो उसकी अन्तर्दशा में धननाश, भय, शरीरकष्ट, मन सन्ताप, राजकोप, विदेश गमन या तीर्थयात्रा, स्त्री-पुत्रादि को कष्ट और बन्धुवियोग होता है।

यदि दशेश से केन्द्र में या त्रिकोण में या ११, ३ में चन्द्र रहे तो राजा की कृपा से देश या ग्राम का स्वामित्व, धैर्य, सुयश, वस्त्रादि से सुख, जलाशय निर्माण और धन की वृद्धि होती है। दशा के प्रारम्भ में शरीरसुख होता है और दशा के अन्त में क्लेश होता है।

शुक्रमहादशा में भौमान्तर्दशा का फल—शुक्र की महादशा में भौम की अन्तर्दशा हो और भौम यदि केन्द्र में या त्रिकोण में या स्वोच्च में या स्वराशि में या लाभ भाव में बली हो या लग्नेश कर्मेश या भाग्येश से युत हो तो राज्यलाभ-सम्पत्ति-वस्त्र-आभूषण, भूमि आदि इच्छित वस्तु के लाभ से सुख होता है।

भौम यदि लग्न या दशेश से ६, ८ में रहे तो शीतज्वर से कष्ट, माता-पिता को ज्वर रोग से कष्ट, स्थानहानि, कलह, राजा से विरोध, राजपुरुषों से द्वेष तथा धन का अपव्यय होता है।

यदि भौम द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो व्यापार में क्षति, ग्राम-भूमि आदि का ह्रास और शरीरकष्ट होता है।

शुक्रमहादशा में राह्वन्तर्दशा का फल—शुक्र की महादशा में राहु की अन्तर्दशा हो और राहु यदि केन्द्र में या त्रिकोण में या ११ में या स्वोच्च में या स्वराशि में होकर शुभग्रह से युत-दृष्ट हो तो अधिकसुख, धनलाभ, इष्टमित्रों का आगमन, यात्रा से कार्यसिद्धि तथा पशुलाभ व भूमिलाभ होता है।

यदि राहु लग्न से ३, ६, १०, ११ में हो तो सुख, शत्रुनाश, उत्साहवृद्धि, राजाकृपा, दशा के प्रारम्भ में ५ मास तक शुभफल होता है और अन्त में ज्वर तथा अजीर्ण रोग का भय, कार्य व्यापार व यात्रा में विघ्न एवं मन में चिन्ता होती है परन्तु राजा के तुल्य अन्य सुख होता है। नैर्ऋत्य दिशा में विदेश गमन से कार्यसिद्धि होती और वह कुशलपूर्वक घर आता है। ब्राह्मणों का उपकार और तीर्थयात्रा आदि का पुण्यफल प्राप्त होता है।

राहु यदि दशेश से ८, १२ में पापग्रह से युत हो तो माता-पिता और स्वजनों का अशुभ होता है, लोगों से मनोमालिन्य होता है। यदि राहु द्वितीयेश या सप्तमेश रहे तो देह में आलस्य (रोग) होता है, दोष शान्त्यर्थ मृत्युञ्जय का जप करना चाहिए।

शुक्रमहादशा में गुर्वन्तर्दशा का फल—शुक्र की महादशा में गुरु की अन्तर्दशा हो और गुरु यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या लग्न से केन्द्र में या ९, ५ में हो तो नष्टराज्य की प्राप्ति, इच्छित अन्न-वस्त्र का लाभ तथा मित्र और राजा से सम्मान, धन प्राप्ति, सुयश लाभ, वाहन लाभ, विद्वान् का समागम, शास्त्र अध्ययन में विशेष परिश्रम, पुत्रजन्म, सन्तोष, इष्ट-मित्रों का आगमन, मातृ-पितृ सुख तथा पुत्रसुख होता है।

दशेश से यदि ६, ८, १२ में पापग्रह से युत होकर गुरु रहे तो राजा व चोर से पीड़ा, परिजनों को क्लेश, कलह, मनोव्यथा, स्थानहानि, विदेशगमन और अनेक रोगों का भय होता है।

यदि गुरु द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो कष्ट होता है। दोष शान्त्यर्थ महामृत्युञ्जय का जप करना चाहिए।

शुक्रमहादशा में शन्यन्तर्दशा का फल—शुक्र की महादशा में शनि की अन्तर्दशा हो और शनि यदि स्वोच्च में या स्वराशि में या केन्द्र त्रिकोण में या स्वनवांश में रहे तो विशेष सुख, मित्र-बन्धुओं का आगमन, राजा से सम्मान, कन्याजन्म-तीर्थस्नान दर्शन का फल तथा राजा से अधिकार प्राप्त होता है। यदि गुरु नीच राशि में रहे तो कष्ट होता है।

(यदि नीच राशि में गुरु हो तो) आलस्य तथा लाभ से अधिक व्यय होता है। दशेश से या लग्न से ८, १२ या ६ में गुरु हो तो प्रारम्भ में विविध कष्ट, मातृ-पितृ पीड़ा, स्त्री-पुत्र को क्लेश, विदेश यात्रा, व्यापार में हानि तथा पशुओं का नाश होता है। गुरु यदि द्वितीयेश या सप्तमेश रहे तो शरीर में क्लेश होता है।

उपरोक्त दोष शान्त्यर्थ तिलहोम, मृत्युञ्जय का जप, दुर्गासप्तशती का पाठ; स्वयं अथवा ब्राह्मण द्वारा कराने पर शिव की कृपा से सुख होता है।

शुक्रमहादशा में बुधान्तर्दशा का फल—शुक्र की महादशा में बुध की अन्तर्दशा हो और बुध यदि केन्द्र में या त्रिकोण में या ११ में या स्वोच्च में या स्वराशि में हो तो भाग्योदय, पुत्रजन्म, न्याय से धन प्राप्ति, पुराण कथा श्रवण, रसज्ञ लोगों का साथ, इष्ट-मित्रों का आगमन, अपने अधिकारी से सुख तथा मिष्टान्न भोजन होता है।

यदि बुध दशेश से ६, ८, १२ में रहे तो बलहीनता, पापग्रह से युक्त हो तो पशुओं की हानि, परगृहवास तथा सभी कार्य व्यापार में अवश्य ही क्षति होती है।

अन्तर्दशा के प्रारम्भ में शुभफल, मध्य में मध्यम फल और अन्त में शीतवातज्वरादि से क्लेश होता है। यदि बुध सप्तमेश या द्वितीयेश हो तो शरीर में पीड़ा होती है। दोषशान्त्यर्थ विष्णुसहस्रनाम का जप करना चाहिये।

शुक्रमहादशा में केत्वन्तर्दशा का फल—शुक्र की महादशा में केतु

की अन्तर्दशा हो और केतु यदि स्वोच्च में, स्वराशि में या योगकारक ग्रह से सम्बन्धित हो या स्थानबल से युत हो तो प्रारम्भ में शुभफल, मिष्टान्न भोजन, व्यापार में अधिक लाभ-पशुओं की वृद्धि, धन-धान्य की वृद्धि तथा युद्ध में विजय होती है। अन्तर्दशा के अन्त में शुभफल होता है। अन्तर्दशा के मध्य में मध्यम फल तथा बीच में कभी-कभी कष्ट होकर ठीक हो जाता है।

यदि केतु दशेश से ८, ११ में या पापग्रह से युत हो तो चोर, सर्प और व्रण का भय, बुद्धिनाश, मस्तकपीड़ा, मनोसन्ताप, अनायास कलह, प्रमेहरोग, अधिक खर्च, स्त्री-पुत्र से कलह, विदेशगमन और कार्यनाश होता है।

यदि केतु द्वितीयेश या सप्तमेश हो तो शरीरकष्ट होता है। दोष शान्त्यर्थ मृत्युञ्जय का जप तथा छागदान व शुक्र की शान्ति करने पर सुख होता है।

इस सबका सारांश यह है कि, दशेश और अन्तर्दशेश दोनों की जन्मकालिक और दशारम्भकालिक स्थिति देखकर ही शुभाशुभ योग-अयोग का विचार करते हुए दोनों के सम्बन्धानुसार दशा-अन्तर्दशा का फल विचार करना चाहिये।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का षोडश पुष्प रूप 'दशा-अन्तर्दशा फल विवेचन' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।१६।।

—※※※—

१७

अन्तर्दशा-प्रत्यन्तर्दशा फल

सूर्य की अन्तर्दशा में सूर्यादि ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा का फल—

सूर्य की अन्तर्दशा में सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा आने पर में लोगों से कलह, धनहानि, स्त्रीकष्ट, मस्तक में पीड़ा आदि अशुभफल होता है। परन्तु यह सामान्य (स्वाभाविक) फल होता है। प्रत्यन्तर्दशापति यदि त्रिकोण आदि शुभस्थान का स्वामी हो या शुभस्थान में, शुभ वर्ग में हो तो अशुभ फल नहीं होता, इस तरह पूर्वकथित रीति से फल समझना चाहिये।

सूर्य की अन्तर्दशा में चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो उद्वेग, कलह, धननाश और मानसिक क्लेश होता है।

सूर्य की अन्तर्दशा में भौम की प्रत्यन्तर्दशा हो तो राजभय, शस्त्रभय, बन्धन, कष्ट, पीड़ा तथा शत्रु व अग्नि से कष्ट होता है।

सूर्य की अन्तर्दशा में राहु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो कफरोग, शस्त्रभय, धननाश, राज्यनाश और मन में संत्रास रहता है।

सूर्य की अन्तर्दशा में गुरु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो विजय-धनवृद्धि-सुवर्ण-वस्त्र और सवारी आदि का लाभ होता है।

सूर्य की अन्तर्दशा में शनि की प्रत्यन्तर्दशा हो तो धननाश, पशुओं को पीड़ा, उद्वेग और रोग आदि अशुभफल होता है।

सूर्य की अन्तर्दशा में बुध की प्रत्यन्तर्दशा हो तो बन्धुप्रेम, सुभोजन, धनलाभ, धर्मोदय और राजा से सम्मान प्राप्त होता है।

सूर्य की अन्तर्दशा में, केतु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो प्राणभय, धननाश, राजभय और शत्रु से विवाद होता है।

सूर्य की अन्तर्दशा में शुक्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो वह समय सम (सुख-दुःख समान) रूप से व्यतीत होता है और कुछ सुख-सम्पत्ति की वृद्धि होती है।

चन्द्र की अन्तर्दशा में सभी ग्रहों के प्रत्यन्तर्दशा का फल—

चन्द्र की अन्तर्दशा में चन्द्र की ही प्रत्यन्तर्दशा हो तो भूमि-सुभोजन-सम्पत्ति का लाभ और राजा से सम्मान होता है।

चन्द्र की अन्तर्दशा में भौम की प्रत्यन्तर्दशा हो तो विवेक, लोक में सम्मान, धनवृद्धि और बन्धुओं से सुख होता है; किन्तु शत्रुभय रहता है।

चन्द्र अन्तर्दशा में राहु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो घर में कल्याण व राजा से धन प्राप्ति होती है। राहु यदि अशुभ ग्रह से युत हो तो अपमृत्युभय होता है।

चन्द्र अन्तर्दशा में गुरु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो वस्त्रलाभ, प्रतापवृद्धि, सदुरु द्वारा तत्त्वज्ञान और राज्य तथा रत्नादि की प्राप्ति होती है।

चन्द्र अन्तर्दशा में शनि की प्रत्यन्तर्दशा हो तो वात-पित्त से कष्ट तथा धन और यश की क्षति होती है।

चन्द्र अन्तर्दशा में बुध की प्रत्यन्तर्दशा हो तो पुत्रजन्म, वाहन लाभ, विद्यालाभ, उन्नति, श्वेतवस्त्र और अन्नलाभ होता है।

चन्द्रमा की अन्तर्दशा में केतु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो विप्रों से कलह, अपमृत्युभय, सुखनाश तथा सर्वत्र कष्ट होता है।

चन्द्र की अन्तर्दशा में शुक्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो धनलाभ, सुख, कन्याजन्म, मिष्टान्नभोजन और सबसे प्रेम होता है।

चन्द्र की अन्तर्दशा में सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा हो तो अन्न, वस्त्र और सुख का लाभ तथा सर्वत्र विजय होता है।

भौम की अन्तर्दशा में सभी ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा का फल—

भौम अन्तर्दशा में भौम की ही प्रत्यन्तर्दशा हो तो शत्रुभय, अधिक कलह, रक्त विकार तथा अपमृत्युभय होता है।

भौम अन्तर्दशा में राहु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो बन्धन, राज्य और धन का नाश, कदन्न भोजन और शत्रु से विवाद होता है।

भौम अन्तर्दशा में गुरु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो बुद्धिनाश, दुःख, सन्ताप, कलह और सभी मनोरथ निष्फल होते हैं।

भौम अन्तर्दशा में शनि की प्रत्यन्तर्दशा हो तो स्वामी का नाश, पीड़ा, धननाश, शत्रुभय, विकलता, विवाद और संत्रास होता है।

भौम अन्तर्दशा बुध की प्रत्यन्तर्दशा हो तो बुद्धिनाश, धननाश, ज्वर, अन्न, वस्त्र और मित्र का विनाश होता है।

भौम अन्तर्दशा में केतु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो आलस्य, रोग से पीड़ा, अपमृत्यु भय, राजा से भय और शस्त्राघात का भी भय होता है।

भौम अन्तर्दशा में शुक्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो चाण्डाल से कष्ट व संत्रास, राजा व शस्त्र का भय तथा अतिसार और वमनरोग होता है।

भौम अन्तर्दशा में सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा हो तो भूमि, धन, सम्पत्ति की वृद्धि, मनःतोष, मित्रों का आगमन तथा सब तरह से सुख प्राप्त होता है।

भौम अन्तर्दशा में चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो दक्षिण दिशा में लाभ, श्वेत वस्त्र आदि का लाभ तथा सब कार्यो में सफलता मिलती है।

राहु की अन्तर्दशा में सभी ग्रहों के प्रत्यन्तदशा का फल—

राहु की अन्तर्दशा में राहु की ही प्रत्यन्तर्दशा हो तो बन्धन, रोगभय और घातादि का भय होता है।

राहु अन्तर्दशा में गुरु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो सर्वत्र सम्मान और वाहन तथा धन की प्राप्ति होती है।

राहु अन्तर्दशा में शनि की प्रत्यन्तर्दशा हो तो कठिन कारावास, सुखनाश, शत्रुभय और वातरोग होता है।

राहु अन्तर्दशा में बुध की प्रत्यन्तर्दशा हो तो सभी कार्य में लाभ, विशेष कर स्त्री द्वारा लाभ तथा यात्रा से विशेष लाभ होता है।

राहु अन्तर्दशा में केतु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो बुद्धिनाश, शत्रुभय, कार्य में बाधा, धननाश, कलह और उद्वेग होता है।

राहु अन्तर्दशा में शुक्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो योगिनी (डाइन ओझा) का भय, राजभय, वाहननाश, कुभोजन, स्त्रीनाश और परिवार में शोक होता है।

राहु अन्तर्दशा में सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा हो तो ज्वरभय, शत्रुभय, पुत्र आदि को कष्ट, अपमृत्युभय और असावधानी होती है।

राहु अन्तर्दशा में चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो उद्वेग, कलह, चिन्ता, मानहानि, महाभय और पिता को कष्ट होता है।

राहु अन्तर्दशा में भौम की प्रत्यन्तर्दशा हो तो भगन्दर रोग से कष्ट, रक्तपित्त विकार से कष्ट, धनहानि और मनोद्वेग होता है।

गुरु की अन्तर्दशा में सभी ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा का फल—

गुरु की अन्तर्दशा में गुरु की ही प्रत्यन्तर्दशा हो तो सुवर्णलाभ, धनवृद्धि, कल्याण आदि शुभफल होता है।

गुरु अन्तर्दशा में शनि की प्रत्यन्तर्दशा हो तो भूमिलाभ, वाहन की वृद्धि तथा अन्नादि संग्रह होता है।

गुरु अन्तर्दशा में बुध की प्रत्यन्तर्दशा हो तो विद्या, वस्त्र, मोती आदि रत्न का लाभ, मित्रों का आगमन और स्नेह होता है।

गुरु अन्तर्दशा में केतु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो जल से और चोर से भय होता है।

गुरु अन्तर्दशा में शुक्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो विविध विद्या, अन्न, सुवर्ण, वस्त्र, आभूषण का लाभ, कल्याण और मनस्तोष होता है।

गुरु अन्तर्दशा में सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा हो तो राजा, मित्र, पिता व माता से स्नेह तथा सर्वत्र आदर होता है।

गुरु अन्तर्दशा में चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो सभी कष्टों का नाश, धन, वाहन का लाभ तथा सभी कार्यों में सफलता होती है।

गुरु अन्तर्दशा में भौम की प्रत्यन्तर्दशा हो तो शस्त्रभय, गुदा भाग में पीड़ा, मन्दाग्नि, अजीर्ण रोग और शत्रुपीड़ा होती है।

गुरु अन्तर्दशा में राहु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो चाण्डाल से विरोध, उनके द्वारा धननाश और कष्ट होता है।

शनि की अन्र्तदशा में सभी ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा का फल—

शनि अन्तर्दशा में शनि की ही प्रत्यन्तर्दशा हो तो शरीरकष्ट, झगड़ा और नीचवर्ग से भय होता है।

शनि अन्तर्दशा में बुध की प्रत्यन्तर्दशा हो तो बुद्धिनाश, कलह, भय, भोजनादि की चिन्ता, धनहानि तथा शत्रुभय होता है।

शनि अन्तर्दशा में केतु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो शत्रु द्वारा बन्धन, कान्तिक्षय, क्षुधा, त्रास और भय की अधिकता होती है।

शनि अन्तर्दशा में शुक्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो मनोरथसिद्धि, गृह में कल्याण व मनुष्योचित कर्म से लाभ होता है।

शनि अन्तर्दशा से सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा हो तो राजा से अधिकार प्राप्ति, गृह कलह तथा ज्वर आदि से पीड़ा होती है।

शनि अन्तर्दशा में चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो बुद्धिविकास, वृहत् कार्यारम्भ, तेजक्षय, अधिक व्यय तथा बहुत स्त्रियों का संगत होता है।

शनि अन्तर्दशा में भौम की प्रत्यन्तर्दशा हो तो प्रतापक्षय, पुत्रकष्ट, अग्नि और शत्रु से भय तथा वात-पित्त से क्लेश होता है।

शनि अन्तर्दशा में राहु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो धन-वस्त्र और भूमि का नाश, विदेश यात्रा और मृत्युभय होता है।

शनि अन्तर्दशा में गुरु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो घर में स्त्री द्वारा गृहकलह से हानि तथा विवाद व उद्वेग होता है।

बुध की अन्तर्दशा में सभी ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा का फल—

बुध के अन्तर्दशा में बुध की ही प्रत्यन्तर्दशा हो तो बुद्धि, विद्या, धन, वस्त्र आदि का लाभ व सुख होता है।

बुध अन्तर्दशा में केतु ग्रह की प्रत्यन्तर्दशा हो तो कदन्नभोजन, उदर व्याधि, कामला (नेत्र रोग) रोग और रक्तपित्त से पीड़ा होती है।

बुध अन्तर्दशा में शुक्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो उत्तर दिशा में यात्रा व्यापारादि से लाभ, पशुहानि तथा राजा से अधिकार प्राप्त होता है।

बुध अन्तर्दशा में सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा हो तो प्रतापहानि, रोग से कष्ट और हृदय वैकल्य होता है।

बुध अन्तर्दशा में चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो स्त्री-धनसम्पत्ति की प्राप्ति, कन्याजन्म और सर्वत्र सुख होता है।

बुध अन्तर्दशा में भौम की प्रत्यन्तर्दशा हो तो धार्मिक-बुद्धि और धनवृद्धि, चोर व अग्नि से भय, रक्तवस्त्र लाभ और शस्त्र से घातपात होता है।

बुध अन्तर्दशा में राहु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो कलह और स्त्रीभय, राजा तथा शस्त्र से भी भय होता है।

बुध अन्तर्दशा में गुरु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो राज्य प्राप्ति, राजा से अधिकार या आदर प्राप्ति और विद्या व बुद्धि की वृद्धि होती है।

बुध अन्तर्दशा में शनि की प्रत्यन्तर्दशा हो तो वातपित्त रोग से कष्ट, शरीर में घातपात और धननाश होता है।

केतु की अन्तर्दशा में सभी ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा का फल—

केतु की अन्तर्दशा में केतु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो अचानक विपत्ति, विदेशयात्रा और धननाश होता है।

केतु अन्तदरदशा में शुक्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो म्लेच्छ राजा से धनहानि, नेत्ररोग, मस्तक पीड़ा तथा पशुहानि होती है।

केतु अन्तदरदशा में सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा हो तो मित्रों से वैमत्य, अपमृत्यु, पराजय और कलह होता है।

केतु अन्तर्दशा में चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो अन्ननाश, देहकष्ट, मतिभ्रम और मलरोग होता है।

केतु अन्तर्दशा में भौम की प्रत्यन्तर्दशा हो तो शस्त्राघात और अग्नि से कष्ट, नीच और शत्रुओं का भय होता है।

केतु अन्तर्दशा में राहु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो स्त्री और शत्रु से भय तथा क्षुद्रजनों से भी कष्ट होता है।

केतु अन्तर्दशा में गुरु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो धन-वस्त्र व मित्र का नाश, घर में उपद्रव और सर्वत्र कष्ट प्राप्त होता है।

केतु अन्तर्दशा में शनि की प्रत्यन्तर्दशा हो तो पशु और मित्रों की मृत्यु, शरीर में कष्ट और अल्प लाभ होता है।

केतु अन्तर्दशा में बुध की प्रत्यन्तर्दशा हो तो बुद्धिनाश, उद्वेग, विद्या की क्षति, भय, कार्य में असफलता होती है।

शुक्र की अन्तर्दशा में सभी ग्रहों की प्रत्यन्तर्दशा का फल—

शुक्र की अन्तर्दशा में शुक्र की ही प्रत्यन्तर्दशा हो तो श्वेतवस्त्र, वाहन, मोती आदि रत्न और सुन्दर स्त्री से सुख होता है।

शुक्र अन्तर्दशा में सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा हो तो वातज्वर, शिर में पीड़ा, राजा और शत्रु से भय तथा स्वल्प धन लाभ होता है।

शुक्र अन्तर्दशा में चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा हो तो कन्या का जन्म, राजा से वस्त्रादि का लाभ और राजा से अधिकार प्राप्त होता है।

शुक्र अन्तर्दशा में भौम की प्रत्यन्तर्दशा हो तो रक्त-पित्त रोग, विवाद और विविध कष्ट होता है।

शुक्र अन्तर्दशा में राहु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो स्त्री से कलह, भय, राजा और शत्रु से कष्ट होता है।

शुक्र अन्तर्दशा में गुरु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो राज्य, धन, वस्त्र, रत्न, अलङ्करण और हाथी आदि वाहनों का लाभ होता है।

शुक्र अन्तर्दशा में शनि की प्रत्यन्तर्दशा हो तो गधा, ऊँट, बकरा, लोहा, माष, तिल आदि का लाभ और शरीर में कुछ कष्ट होता है।

शुक्र अन्तर्दशा में बुध की प्रत्यन्तर्दशा हो तो धन, ज्ञान प्राप्ति, राजा से अधिकार का लाभ और दूसरों का निक्षेप धन का मिलता है।

शुक्र के अन्तर्दशा में केतु की प्रत्यन्तर्दशा हो तो अपमृत्युभय, देशान्तर की यात्रा होती है तथा बीच-बीच में कुछ धन लाभ भी होता है।

॥ इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का सप्तदश पुष्प रूप 'अन्तर्दशा-प्रत्यन्तर्दशा फल' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ॥१७॥

प्रत्यन्तर्दशा-सूक्ष्मान्तर्दशा फल

सूक्ष्मान्तर्दशा साधन-विधि—

किसी ग्रह में किसी ग्रह की प्रत्यन्तर दशामान को ग्रहों की पृथक्-पृथक् दशा संख्या से गुणाकर १२० से भाग देने पर लब्धि (प्रत्यन्तर दशा में) पृथक्-पृथक् सूक्ष्मान्तर्दशा का मान होता है।

सूर्यप्रत्यन्तर्दशा में सभी ग्रहों की सूक्ष्मदशा का फल—

सूर्य के प्रत्यन्तर्दशा में सूर्य की ही सूक्ष्मदशा हो तो अपनी भूमि का त्याग, मृत्युभय, स्थाननाश और सर्वत्र हानि होती है।

सूर्य प्रत्यन्तर्दशा में चन्द्र की सूक्ष्मदशा हो तो देव, ब्राह्मण में भक्ति, स्वकर्म में प्रवृत्ति और मित्रों से प्रेम होता है।

सूर्य प्रत्यन्तर्दशा में भौम की सूक्ष्मदशा हो तो कुकर्म में प्रवृत्ति, क्रूरशत्रुओं से कष्ट, रक्तस्राव आदि रोग होता है।

सूर्य प्रत्यन्तर्दशा में राहु की सूक्ष्मदशा हो तो चोर-अग्नि-विष का भय, युद्ध में पराभव और दान-धर्मादि में विरक्ति होती है।

सूर्य प्रत्यन्तर्दशा में गुरु की सूक्ष्मदशा हो तो राजा से आदर, राजसेवकों से सम्मान और राजा की कृपा होती है।

सूर्य प्रत्यन्तर्दशा में शनि की सूक्ष्मदशा हो तो चोरी और साहसिक कार्य से देव-ब्राह्मणों को कष्ट, स्थानत्याग और मानसिकव्यथा होती है।

सूर्य प्रत्यन्तर्दशा में बुध की सूक्ष्मदशा हो तो उत्तम वस्त्रादि का लाभ, सुन्दरी स्त्री से सङ्ग और विना प्रयास हीं कार्यो की सिद्धि होती है।

सूर्य प्रत्यन्तर्दशा में केतु की सूक्ष्मदशा हो तो नौकर एवं स्त्री द्वारा सम्मान-धननाश और कभी सेवक से सुख भी होता है।

सूर्य प्रत्यन्तर्दशा में शुक्र की सूक्ष्मदशा हो .तो पुत्र-मित्र-स्त्री आदि से सुख और विविध प्रकार की सम्पत्ति का लाभ होता है।

चन्द्र प्रत्यन्तर्दशा में सभी ग्रहों की सूक्ष्मदशा का फल—

चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा में चन्द्र की ही सूक्ष्मदशा हो तो आभूषण व भूमि का लाभ, सम्मान, राजा से आदर, क्रोध वृद्धि और गौरव प्राप्त होता है।

चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा में. भौम की सूक्ष्मदशा हो तो दुःख, शत्रु से विरोध, उदररोग, पिता की मृत्यु तथा वात-पित्त और कफ से रोग होता है।

चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा में राहु की सूक्ष्मदशा हो तो मित्र और बन्धुओं का कोप, देशत्याग, धननाश और बन्धन होता है।

चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा में गुरु की सूक्ष्मदशा हो तो राजचिह्न से युत ऐश्वर्य, पुत्रजन्म, सम्पत्तिलाभ और सर्वत्र सुख होता है।

चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा में शनि की सूक्ष्मदशा हो तो राजा का कोप, व्यवहार में धनहानि, चोर और विप्रों से भय होता है।

चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा में बुध की सूक्ष्मदशा हो तो राजा से सम्मान, धनलाभ, विदेश से वाहनलाभ तथा पुत्र-पौत्रादि की वृद्धि होती है।

चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा में केतु की सूक्ष्मदशा हो तो अन्न, औषधि, पशु सम्बन्धी जीविका की हानि तथा अग्नि और सूर्यकिरण से कष्ट होता है।

चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा में शुक्र की सूक्ष्मदशा हो तो विवाह, भूमि, वस्त्र, आभूषण, राज्य की प्रप्ति और सुयश होता है।

चन्द्र की प्रत्यन्तर्दशा में सूर्य की सूक्ष्मदशा हो तो परमक्लेश, कार्यनाश, पशु व धान्यादि का नाश और शरीर में व्याधि होती है।

भौम प्रत्यन्तर्दशा में सभी ग्रहों की सूक्ष्मदशा का फल—

भौम की प्रत्यन्तर्दशा में भौम की सूक्ष्मदशा हो तो भूमिनाश से खेद, मिरगी रोग, बन्धन और ग्राम से मन क्षुब्ध होता है।

भौम की प्रत्यन्तर्दशा में राहु की सूक्ष्मदशा हो तो देहकष्ट, लोक में भय, स्त्री व सन्तान का नाश और अग्नि व सर्प का भय होता है।

भौम की प्रत्यन्तर्दशा में गुरु की सूक्ष्मदशा हो तो देवभक्ति, मन्त्रसिद्धि, लोक में आदर और आनन्द होता है।

भौम की प्रत्यन्तर्दशा में शनि की सूक्ष्मदशा हो तो बन्धन से मुक्ति, धन, अन्न, वस्त्र और भृत्यवर्गसे सुख होता है।

भौम की प्रत्यन्तर्दशा में बुध की सूक्ष्मदशा हो तो वाहन सुख, छत्र, चामर आदि राजकीय वस्तुओं से सुख और कास-श्वासादि रोग से पीड़ा होती है।

भौम की प्रत्यन्तर्दशा में केतु की सूक्ष्मदशा हो तो दूसरों से भ्रमित होकर कर गर्हित काम होता है तथा सर्वदा अपवित्रता रहती है।

भौम की प्रत्यन्तर्दशा में शुक्र की सूक्ष्मदशा हो तो मनोनुकूल-स्त्रीसुख, इच्छित धन व भोजन आदि का सुख होता है।

भौम की प्रत्यन्तर्दशा में सूर्य की सूक्ष्मदशा हो तो राजा से वैर, विप्रों से कष्ट, कार्य में विफलता और लोकनिन्दा होती है।

भौम की प्रत्यन्तर्दशा में चन्द्र की सूक्ष्मदशा हो तो पवित्रता, धनलाभ, देव और ब्राह्मण में भक्ति तथा रोग का नाश होता है।

राहुप्रत्यन्तर्दशा में सभी ग्रहों की सूक्ष्मदशा का फल—

राहु प्रत्यन्तर्दशा में राहु की सूक्ष्मदशा हो तो समाज में उपद्रव करने की प्रवृत्ति, अपने कार्य में विपरीत बुद्धि और कुत्सित मन होता है।

राहु प्रत्यन्तर्दशा में गुरु की सूक्ष्मदशा हो तो दीर्घरोग तथा दरिद्रता होती है परन्तु लोक में सम्मानित और दानधर्म में रत होता है।

राहु प्रत्यन्तर्दशा में शनि की सूक्ष्मदशा हो तो कुनीति से धनलाभ, दुष्टप्रवृत्ति, कार्य में रत और दुष्टजनों का सङ्ग होता है।

राहु प्रत्यन्तर्दशा में बुध की सूक्ष्मदशा हो तो स्त्रीभोग की लालसा में वृद्धि, वाचा शक्ति, अन्न की इच्छा तथा शरीर में कष्ट होता है।

राहु प्रत्यन्तर्दशा में केतु की सूक्ष्मदशा हो तो मृदुलता, मानहानि, बन्धन, मन में कठोरता और जन-धन की हानि होती है।

राहु प्रत्यन्तर्दशा में शुक्र की सूक्ष्मदशा हो तो बन्धन से छुटकारा, स्थान-मान की वृद्धि, धनसंचय व अर्थ लाभ होता है।

राहु प्रत्यन्तर्दशा में सूर्य की सूक्ष्मदशा हो तो अर्श और गुल्म रोग का भय, क्रोध का क्षय तथा वाहनादि सुख होता है।

गुरु प्रत्यन्तर्दशा में सभी ग्रहों की सूक्ष्मदशा का फल—

राहु प्रत्यन्तर्दशा में चन्द्र की सूक्ष्मदशा हो तो मणि रत्न आदि धन का लाभ, विद्या, उपासना और सुशीलता होती है।

राहु प्रत्यन्तर्दशा में मंगल की सूक्ष्मदशा हो तो पराजय-पलायन, क्रोध, बन्धन और चोरी की प्रवृत्ति होती है।

गुरु प्रत्यन्तर्दशा में गुरु की ही सूक्ष्मदशा हो तो शोकनाश, धन की अधिकता, अग्निहोत्र, शंकरभक्ति और राजचिह्न युक्त वाहन का लाभ होता है।

गुरु प्रत्यन्तर्दशा में शनि की सूक्ष्मदशा हो तो व्रतभङ्ग, मनोसन्ताप, विदेश में धनहानि और बन्धुविरोध होता है।

गुरु प्रत्यन्तर्दशा में बुध की सूक्ष्मदशा दशा हो तो विद्या-बुद्धि की वृद्धि, लोक में सम्मान, धनप्राप्ति व गृह में सभी सुख होते हैं।

गुरु प्रत्यन्तर्दशा में केतु की सूक्ष्मदशा हो तो ज्ञान, ऐश्वर्य, पाण्डित्य, शास्त्रश्रवण, शिवपूजन, अग्निहोत्र और गुरुभक्ति होती है।

गुरु प्रत्यन्तर्दशा में शुक्र की सूक्ष्मदशा हो तो रोगमुक्ति, सुख, भोग, धन-धान्यलाभ और स्त्री-पुत्रादि से सुख होता है।

गुरु प्रत्यन्तर्दशा में सूर्य की सूक्ष्मदशा हो तो वात-पित्त का प्रकोप, कफ और रस के विकार से शूल (कष्ट) होता है।

गुरु प्रत्यन्तर्दशा में चन्द्र की सूक्ष्मदशा हो तो छत्र-चामर आदि राजचिह्नयुक्त ऐश्वर्य प्राप्ति, पुत्र जन्मोत्सव तथा नेत्र और पेट में कष्ट होता है।

गुरु प्रत्यन्तर्दशा में मंगल की सूक्ष्मदशा हो तो स्त्री वर्ग से विषप्रयोग, बन्धन, रोगभय, विदेश यात्रा और बुद्धिभ्रम होता है।

गुरु प्रत्यन्तर्दशा में राहु की सूक्ष्मदशा हो तो रोग, चोर से धनहानि और सर्प-बिच्छू आदि से भय होता है।

शनि प्रत्यन्तर्दशा में सभी ग्रहों की सूक्ष्मदशा का फल—

शनि प्रत्यन्तर्दशा में शनि की सूक्ष्मदशा हो तो धनहानि, वात रोग से कष्ट, वंशनाश, विपरीत भोजन और अति दु:ख से युक्त होता है।

शनि प्रत्यन्तर्दशा में बुध की सूक्ष्मदशा हो तो व्यापार में लाभ, विद्या व धन की वृद्धि तथा स्त्री एवं भूमि का लाभ होता है।

शनि प्रत्यन्तर्दशा में केतु की सूक्ष्मदशा हो तो चोर का उपद्रव, कुष्ठ आदि रोग, जीविकानाश तथा सर्वाङ्ग पीड़ा होती है।

शनि प्रत्यन्तर्दशा में शुक्र की सूक्ष्मदशा हो तो ऐश्वर्य, शस्त्राभ्यास, पुत्रजन्म, अभिषेक, आरोग्य धनलाभ और अभीष्टसिद्ध होता है।

शनि प्रत्यन्तर्दशा में सूर्य की सूक्ष्मदशा हो तो राज अधिकार प्राप्ति, घर में कलह और शरीर में कष्ट होता है।

शनि प्रत्यन्तर्दशा में चन्द्र की सूक्ष्मदशा हो तो बुद्धिवृद्धि, बड़े कार्य का प्रारम्भ, कान्तिवृद्धि, व्ययाधिक्य और स्त्री-पुत्र से सुख होता है।

शनि प्रत्यन्तर्दशा में मंगल की सूक्ष्मदशा हो तो कान्तिहीनता, महा उद्वेग, अग्निमान्द्य, भ्रम, कलह और वात-पित्त से कष्ट होता है।

शनि प्रत्यन्तर्दशा में राहु की सूक्ष्मदशा हो तो पिता-माता का नाश, मनोसन्ताप, अधिक व्यय और कार्यों में असफलता होती है।

शनि की प्रत्यन्तर्दशा में गुरु की सूक्ष्मदशा हो तो स्वर्णमुद्रा की प्राप्ति, लोक में सम्मान, धन-धान्यवृद्धि तथा छत्र-चामर आदि राजचिह्न का लाभ होता है।

बुध प्रत्यन्तर्दशा में सभी ग्रहों की सूक्ष्मदशा का फल—

बुध प्रत्यन्तर्दशा में बुध की ही सूक्ष्मदशा हो तो सौभाग्यवृद्धि, राजा से सम्मान, धन का लाभ और सब से प्रेम होता है।

बुध प्रत्यन्तर्दशा में केतु की सूक्ष्मदशा हो तो बालग्रह और अग्नि से भय, मन:सन्ताप, स्त्रीकष्ट, कुमार्ग में रुचि और कुत्सित भोजन होता है।

बुध प्रत्यन्तर्दशा में शुक्र की सूक्ष्मदशा हो तो वाहन, धन, जल से उत्पन्न (मखाना आदि) अन्न और धन की प्राप्ति, सुकीर्ति और महाभोग होता है।

बुध प्रत्यन्तर्दशा में सूर्य की सूक्ष्मदशा हो तो ताड़न, राजकोप, बुद्धिविभ्रम, रोग, धनहानि और अपयश होता है।

बुध प्रत्यन्तर्दशा में चन्द्रमा की सूक्ष्मदशा हो तो सौभाग्यवृद्धि, स्थिरबुद्धि, राजा से सम्मान प्राप्ति, सम्पत्ति वृद्धि तथा मित्र व गुरु का आगमन होता है।

बुध प्रत्यन्तर्दशा में मंगल की सूक्ष्मदशा हो तो अग्निदाह व विषभय, जड़ता, दरिद्रता, मतिभ्रम और उद्वेग होता है।

बुध प्रत्यन्तर्दशा में राहु की सूक्ष्मदशा हो तो अग्नि, सर्प व राजा से भय, कठिनाई से शत्रुविजय और भूतोपद्रव से मतिभ्रम होता है।

बुध प्रत्यन्तर्दशा में गुरु की सूक्ष्मदशा हो तो भव्यगृहनिर्माण, दानवृत्ति, भोग, वैभव की वृद्धि और राजा से धन प्राप्त होता है।

बुध प्रत्यन्तर्दशा में शनि की सूक्ष्मदशा हो तो व्यापार कार्य से लाभ, विद्या व ऐश्वर्य की वृद्धि, स्त्रीलाभ और व्यापकता होती है।

केतु प्रत्यन्तर्दशा में सभी ग्रहों की सूक्ष्मदशा का फल—

केतु प्रत्यन्तर्दशा में केतु की हीं सूक्ष्मदशा हो तो पुत्र व स्त्री से सुख, शरीर में कष्ट, निर्धनता और भिक्षावृत्ति होती है।

केतु प्रत्यन्तर्दशा में शुक्र की सूक्ष्मदशा हो तो रोगमुक्ति, धनलाभ, गुरु व ब्राह्मण में श्रद्धा तथा मित्रों का समागम होता है।

केतु प्रत्यन्तर्दशा में सूर्य की सूक्ष्मदशा हो तो युद्ध, भूमिनाश, परदेशवास तथा मित्रों को विपत्ति एवं कष्ट होता है।

केतु प्रत्यन्तर्दशा में चन्द्र की सूक्ष्मदशा हो तो सेवक-सेविकाओं की वृद्धि, युद्ध में लभ-विजय और लोककीर्ति में यश होता है।

केतु प्रत्यन्तर्दशा में मंगल की सूक्ष्मदशा हो तो सवारी आदि से गिरने का भय, चोर और दुष्टों से पीड़ा तथा गुल्मरोग और नस का रोग होता है।

केतु प्रत्यन्तर्दशा में राहु की सूक्ष्मदशा हो तो स्त्री और गुरु आदि का नाश, दुष्टा स्त्री के सङ्ग से अपयश, वमन रोग और रुधिर विकार व पित्तरोग होता है।

केतु प्रत्यन्तर्दशा में गुरु की सूक्ष्मदशा हो तो शत्रु से विरोध, सम्पत्ति व ऐश्वर्य में अकस्मात् वृद्धि परन्तु पशु व कृषि की हानि से क्लेश होता है।

केतु प्रत्यन्तर्दशा में शनि की सूक्ष्मदशा हो तो मिथ्याकष्ट, अल्पसुख, उपवास, स्त्रीविरोध और सत्य बोलने से हानि होती है।

केतु प्रत्यन्तर्दशा में बुध की सूक्ष्मदशा हो तो अनेक प्रवृत्ति के लोगों से लाभ-हानि, शत्रुओं का नाश और धनसम्पत्ति में वृद्धि होती है।

शुक्र प्रत्यन्तर्दशा में सभी ग्रहों की सूक्ष्मदशा का फल—

शुक्र प्रत्यन्तर्दशा में शुक्र की ही सूक्ष्मदशा हो तो शत्रुक्षय, महासुख, शिवादि मन्दिर जलाशय व कूपादि का निर्माण होता है।

शुक्र प्रत्यन्तर्दशा में सूर्य की सूक्ष्मदशा हो तो हृदय में रोग, मतिभ्रम, यत्र-तत्र भटकाव, कभी लाभ और कभी हानि होती है।

शुक्र प्रत्यन्तर्दशा में चन्द्र की सूक्ष्मदशा हो तो नैरुज्य, धनवृद्धि, व्यापार से लाभ, विद्या और ज्ञान की वृद्धि होती है।

शुक्र प्रत्यन्तर्दशा में मंगल की सूक्ष्मदशा हो तो जड़ता, शत्रु से भय, देशत्याग महाभय व रोग उत्पन्न होता है।

शुक्र प्रत्यन्तर्दशा में राहु की सूक्ष्मदशा हो तो राजा-सर्प व अग्नि से भय, बन्धु वर्ग का नाश, महाकष्ट तथा स्थानभ्रंश होता है।

शुक्र प्रत्यन्तर्दशा में गुरु की सूक्ष्मदशा हो तो सभी कार्यों में सिद्धि, कृषि और धन की उन्नति तथा व्यापार से विशेष लाभ होता है।

शुक्र प्रत्यन्तर्दशा में शनि की सूक्ष्मदशा हो तो शत्रु से कष्ट, दुःख, पशुनाश तथा अपने वंश व श्रेष्ठजनों की हानि होती है।

शुक्र प्रत्यन्तर्दशा में बुध की सूक्ष्मदशा हो तो बन्धुवर्ग की वृद्धि, व्यापार से लाभ तथा पुत्र व स्त्री से सुख होता है।

शुक्र प्रत्यन्तर्दशा में केतु की सूक्ष्मदशा हो तो अग्निमान्द्य, रोग से कष्ट, मुख-नेत्र-शिर में रोग, सञ्चितधन का नाश और मनोसन्ताप होता है।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का अष्टादश पुष्प रूप 'प्रत्यन्तर्दशा-सूक्ष्मान्तर्दशा फल' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।१८।।

१९

सूक्ष्मान्तर्दशा प्राणदशा फल

प्राणदशा साधन-विधि—

सूक्ष्मदशा के पलात्मक मान को ग्रहों की दशावर्ष संख्या से गुणाकर १२० का भाग देने पर लब्धि प्राणदशा होती है। जैसे सूर्य की सूक्ष्मदशा मान १६ घटी १२ पल को पलात्मक बनाने पर ९७२, इसमें सूर्य की दशावर्ष संख्या ६ से गुणा कर १२० का भाग देने पर लब्धि पलादि ४८।३६ सूर्य की दशा में सूर्य की अन्तर्दशा में सूर्य की प्रत्यन्तर्दशा में जो सूक्ष्मदशा है उसमें सूर्य की प्राणदशा हुई। इस प्रकार सूक्ष्मदशा को चन्द्रादि के दशामान से गुणाकर १२० का भाग देने पर चन्द्रादि ग्रहों की प्राणदशा का मान होता है।

सूर्यसूक्ष्मदशा में सभी ग्रहों की प्राणदशा का फल—

सूर्य की सूक्ष्मदशा में सूर्य की ही प्राणदशा हो तो पुम्मैथुन, विष-चोर-अग्नि-राजा से भय तथा शरीरकष्ट होता है।

सूर्य की सूक्ष्मदशा में चन्द्र की प्राणदशा हो तो सुख, सुस्वादिभोजन, उत्तम संस्कार, उदार व्यक्तियों की कृपा से राजा के समान वैभव होता है।

सूर्य की सूक्ष्मदशा में भौम की प्राणदशा हो तो दूसरों के कारण राजकृत उपद्रव, भय और अधिक क्षति होती है।

सूर्य की सूक्ष्मदशा में राहु की प्राणदशा हो तो अन्न से कष्ट, विष से भय, अग्नि तथा राजा के द्वारा कष्ट होता है।

सूर्य की सूक्ष्मदशा में गुरु की प्राणदशा हो तो विविध विद्या की प्राप्ति धनलाभ, राजा और ब्राह्मणों के यहाँ जाने से कार्यसिद्धि होती है।

सूर्य की सूक्ष्मदशा में शनि की प्राणदशा हो तो कारागार, मृत्यु, मनोद्वेग, कार्य में महाबाधा और अपार क्षति होती है।

सूर्य की सूक्ष्मदशा में बुध की प्राणदशा हो तो सतत् राजान्न भोजन, राजचिह्न (छत्र-चामर) अथवा राजपदप्राप्ति से सन्तोष होता है।

सूर्य की सूक्ष्मदशा में केतु की प्राणदशा हो तो गुरु, स्त्री और बन्धुवर्ग के पारस्परिक कलह से धनहानि होती है।

चन्द्रसूक्ष्मदशा में सभी ग्रहों की प्राणदशा का फल—

सूर्य की सूक्ष्मदशा में शुक्र की प्राणदशा हो तो राजसम्मान, धनवृद्धि, स्त्रीसुख, पुत्रसुख और अन्न-पानादि खाद्य पदार्थों का लाभ होता है।

चन्द्र की सूक्ष्मदशा में चन्द्र की प्राणदशा हो तो स्त्री-पुत्र द्वारा सुख, धन व वस्त्र-लाभ तथा योगाभ्यास व समाधि होती है।

चन्द्र की सूक्ष्मदशा में भौम की प्राणदशा हो तो क्षयरोग, कुष्ठरोग, बन्धुनाश, रक्तस्राव महाभय और भूतोपद्रव होता है।

चन्द्र की सूक्ष्मदशा में राहु की प्राणदशा हो तो सर्पभय, भूतों का उपद्रव, दृष्टि में कमजोरी और मतिभ्रम होता है।

चन्द्र की सूक्ष्मदशा में गुरु की प्राणदशा हो तो धर्मवृद्धि, क्षमा, देव-ब्राह्मणों में भक्ति, सौभाग्य वृद्धि और प्रिय व्यक्तियों का दर्शन होता है।

चन्द्र की सूक्ष्मदशा में शनि की प्राणदशा हो तो आकस्मिक शरीरकष्ट, शत्रुओं का उपद्रव, नेत्रकष्ट और धनलाभ होता है।

चन्द्र की सूक्ष्मदशा में बुध की प्राणदशा हो तो चामर-छत्र (राजचिह्न) अथवा राज्य की प्राप्ति तथा सब प्राणियों के प्रति समवृत्ति होती है।

चन्द्र की सूक्ष्मदशा में केतु की प्राणदशा हो तो शस्त्र, अग्नि, शत्रु (अग्नि) और विष से भय, उदर रोग तथा स्त्री, पुत्र से वियोग होता है।

चन्द्र की सूक्ष्मदशा में शुक्र की प्राणदशा हो तो मित्र व स्त्री व पुत्र की प्राप्ति, विदेश से धन लाभ और सर्वसुख होता है।

चन्द्र की सूक्ष्मदशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो क्रूरता, क्रोध में वृद्धि, प्राणभय, मनोव्यथा देशत्याग और महाभय होता है।

भौमसूक्ष्मदशा में सभी ग्रहों की प्राणदशा का फल—

भौम की सूक्ष्मदशा में भौम की ही प्राणदशा हो तो शत्रु से कलह, बन्धन तथा रक्त और पित्तरोग होता है।

भौम की सूक्ष्मदशा में राहु की प्राणदशा हो तो स्त्री-पुत्र से वियोग, बन्धुओं से उपद्रव-कष्ट और विष से मरण होता है।

भौम की सूक्ष्मदशा में गुरु की प्राणदशा हो तो देव में भक्ति, धनलाभ तथा मन्त्रानुष्ठान में तत्परता और पुत्र-पौत्रसुख होता है।

भौम की सूक्ष्मदशा में शनि की प्राणदशा हो तो अग्नि से मरण, धनक्षय, स्थाननाश तथा बन्धुओं में प्रेम होता है।

भौम की सूक्ष्मदशा में बुध की प्राणदशा हो तो दिव्य वस्त्र-भूषण और स्त्री का लाभ होता है।

भौम की सूक्ष्मदशा में केतु की प्राणदशा हो तो गिरने का, चोटिल होने का भय, नेत्ररोग, सर्पभय और धननाश होता है।

भौम की सूक्ष्मदशा में शुक्र की प्राणदशा हो तो धनवृद्धि, लोक में ख्यांति, अनेक तरह से भोग-सुख होता है।

भौम की सूक्ष्मदशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो ज्वर, उन्माद, धननाश, राजकोप, दीर्घरोग और दारिद्रता होती है।।

भौम की सूक्ष्मदशा में चन्द्र की प्राणदशा हो तो भोजन-वस्त्रादि प्राप्ति का सुख तथा सर्दी-गर्मी से रोग-कष्ट होता है।

राहुसूक्ष्मदशा में सभी ग्रहों की प्राणदशा का फल—

राहु की सूक्ष्मदशा में राहु की प्राणदशा हो तो भोजन से अरुचि, विषभय और अनायास ही धननाश होता है।

राहु की सूक्ष्मदशा में गुरु की प्राणदशा हो तो शरीर सुख, निर्भयता, वाहन प्राप्ति और नीच लोगों से विवाद होता है।

राहु की सूक्ष्मदशा में शनि की प्राणदशा हो तो गृहदाह (अग्निभय), शरीर में रोग, नीचों के द्वारा धननाश और बन्धन से कष्ट होता है।

राहु की सूक्ष्मदशा में बुध की प्राणदशा हो तो गुरुभक्ति से धन की प्राप्ति तथा गुण और शील की वृद्धि होती है।

राहु की सूक्ष्मदशा में केतु की प्राणदशा हो तो स्त्री-पुत्र आदि से विरोध, गृहत्याग और सहस कार्यहानि होती है।

राहु की सूक्ष्मदशा में शुक्र की प्राणदशा हो तो छत्र-चामर युक्त सम्पत्ति का लाभ, सभी कार्य में सफलता, शिव की पूजा और गृहनिर्माण होता है।

राहु की सूक्ष्मदशा में सूर्य को प्राणदशा हो तो बवासीर आदि रोग, राजा से कष्ट और पशुओं की हानि होती है।

राहु की सूक्ष्मदशा में चन्द्र की प्राणदशा हो तो सौमनस्य बुद्धि, लोक में सम्मान, गुरुजनों का आगमन, पाप से भय और मानसिक सुख होता है।

राहु की सूक्ष्मदशा में भौम की प्राणदशा हो तो चाण्डाल तथा अग्नि से भय, पदावनति, विपत्ति, मलिनता और श्वानतुल्य नीचवृत्ति होती है।

गुरुसूक्ष्मदशा में सभी ग्रहों की प्राणदशा का फल—

गुरु की सूक्ष्मदशा में गुरु की प्राणदशा हो तो प्रसन्नता व धनवृद्धि, अग्निहोत्र, शिव पूजन तथा वाहन और छत्र आदि का लाभ होता है।

गुरु की सूक्ष्मदशा में शनि की प्राणदशा हो तो व्रतभङ्ग, मानसिक कष्ट, विदेश यात्रा, धनहानि और बन्धुविरोध होता है।

गुरु की सूक्ष्मदशा में बुध की प्राणदशा हो तो विद्या-बुद्धि में विकास, स्त्री-पुत्रादि से सुख, लोक में सम्मान और धनलाभ होता है।

गुरु की सूक्ष्मदशा में केतु की प्राणदशा हो तो ऐश्वर्य, पाण्डित्य, शास्त्र का ज्ञान, शिव पूजा, अग्निहोत्र और गुरु में भक्ति होती है।

गुरु की सूक्ष्मदशा में शुक्र की प्राणदशा हो तो रोग से मुक्ति, सुखभोग, धनवृद्धि तथा स्त्री-पुत्र से सुख होता है।

गुरु की सूक्ष्मदशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो वात-पित्त से क्लेश और रसव्याधि से शूलरोग होता है।

गुरु की सूक्ष्मदशा में चन्द्र की प्राणदशा हो तो छत्र चामर राजचिह्न युक्त ऐश्वर्य प्राप्ति, पुत्रों की वृद्धि तथा नेत्र और उदर रोग होता है।

गुरु की सूक्ष्मदशा में भौम की प्राणदशा हो तो स्त्री द्वारा विषभय, बन्धन, देशान्तर गमन और मतिभ्रंश होता है।

गुरु की सूक्ष्मदशा में राहु की प्राणदशा हो तो रोग की अधिकता, चोर से धनहानि तथा सर्प, बिच्छू आदि से भय होता है।

शनिसूक्ष्मदशा में सभी ग्रहों की प्राणदशा का फल—

शनि की सूक्ष्मदशा में शनि की प्राणदशा हो तो ज्वर से कान्तिहीनता, कुष्ठरोग, उदररोग तथा जल व अग्नि से मृत्युभय होता है।

शनि की सूक्ष्मदशा में बुध की प्राणदशा हो तो धन-धान्य की वृद्धि, व्यापार में लाभ, समाज में प्रतिष्ठा तथा देव व ब्राह्मण में भक्ति होती है।

शनि की सूक्ष्मदशा में केतु की प्राणदशा हो तो मरणतुल्य कष्ट, प्रेत उपद्रव और परस्त्री से अपमान होता है।

शनि की सूक्ष्मदशा में शुक्र की प्राणदशा हो तो पुत्र-धन राजकुल से सुख, अग्निहोत्र या विवाह आदि शुभकार्य होता है।

शनि की सूक्ष्मदशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो नेत्र और शिर में पीड़ा, सर्प तथा शत्रु से भय, धनहानि और महाकष्ट होता है।

शनि की सूक्ष्मदशा में चन्द्र की प्राणदशा हो तो निरोगता, पुत्रजन्म, शान्ति-पुष्टि की वृद्धि तथा देव और ब्राह्मण में भक्ति होती है।

शनि की सूक्ष्मदशा में भौम की प्राणदशा हो तो गुल्मरोग, शत्रुभय, शिकार में मृत्यु, सर्प, अग्नि व विष से भय होता है।

शनि की सूक्ष्मदशा में राहू की प्राणदशा हो तो देशत्याग, राजभय, मोहन, विषभक्षण, वात और पित्त से क्लेश होता है।

शनि की सूक्ष्मदशा में गुरु की प्राणदशा हो तो सेनाधिपत्य, भूमि प्राप्ति, सज्जजनों का साहचर्य, और राजा से सम्मान होता है।

बुधसूक्ष्मदशा में सभी ग्रहों की प्राणदशा का फल—

बुध की सूक्ष्मदशा में बुध की प्राणदशा हो तो निरोगता, धन और धर्म की वृद्धि तथा सब जन्तुओं में समत्वबुद्धि होती है।

बुध की सूक्ष्मदशा में केतु की प्राणदशा हो तो अग्नि व चोर से भय और विषभक्षण तथा मरणतुल्य कष्ट होता है।

बुध की सूक्ष्मदशा में शुक्र की प्राणदशा हो तो प्रभुता-धन-यश व धर्म की वृद्धि, शिवभक्ति और स्त्री-पुत्र द्वारा सुख प्राप्त होता है।

बुध की सूक्ष्मदशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो अन्त:सन्ताप, ज्वरकष्ट, उन्माद, बन्धु व स्त्री से प्रेम और चोरी से धन प्राप्त होता है।

बुध की सूक्ष्मदशा में चन्द्र की प्राणदशा हो तो स्त्रीसुख, धनलाभ, कन्याजन्म, अर्थप्राप्ति और सर्वसुख होता है।

बुध की सूक्ष्मदशा में भौम की प्राणदशा हो तो नीचकार्य में रुचि, उदर, दाँत और नेत्र में पीड़ा, अर्श रोग और मरण का भय होता है।

बुध की सूक्ष्मदशा में राहु की प्राणदशा हो तो वस्त्र-आभूषण और धन का लाभ, बन्धु वर्ग से वियोग, ब्राह्मणों से वैर और सन्निपात रोग से कष्ट होता है।

बुध की सूक्ष्मदशा में गुरु की प्राणदशा हो तो धन-विद्या वैभव और सद्गुण की वृद्धि तथा व्यापार से लाभ होता है।

बुध की सूक्ष्मदशा में शनि की प्राणदशा हो तो चोरों से मरणभय, निर्धनता और भिक्षुकवृत्ति होती है।

केतुसूक्ष्मदशा में सभी ग्रहों की प्राणदशा का फल—

केतु की सूक्ष्मदशा में केतु की प्राणदशा हो तो अश्वादि वाहन से गिरने का भय, शत्रु से कलह, अविचारपूर्वक जीवहत्या सम्बन्धि पाप होता है।

केतु की सूक्ष्मदशा में शुक्र की प्राणदशा हो तो भूमि-वाहन का लाभ, शत्रुनाश और पशुधन की वृद्धि होती है।

केतु की सूक्ष्मदशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो चोर-अग्नि व शत्रु से भय, धननाश, मनोव्यथा और मरण तुल्य क्लेश होता है।

केतु की सूक्ष्मदशा में चन्द्र की प्राणदशा हो तो देव-द्विज-गुरु में भक्ति, दूरयात्रा, धनलाभ, सुख तथा कान या नेत्र में कष्ट होता है।

केतु की सूक्ष्मदशा में भौम की प्राणदशा हो तो पित्तरोग, नासिका की वृद्धि, सन्निपात से कष्ट तथा बन्धुओं से विद्वेष होता है।

केतु की सूक्ष्मदशा में राहु की प्राणदशा हो तो स्त्री-पुत्रादि से विरोध, गृहत्याग तथा अपने साहस के कारण कार्यहानि होती है।

केतु की सूक्ष्मदशा में गुरु की प्राणदशा हो तो शस्त्र से घाव, व्रणकष्ट, हृदय सम्बन्धि रोग और स्त्री व पुत्रवियोग होता है।

केतु की सूक्ष्मदशा में शनि की प्राणदशा हो तो बुद्धिभ्रम, क्रूरकार्य में प्रवृत्ति, व्यसन के कारण बन्धन और दुख होता है।

केतु की सूक्ष्मदशा में बुध की प्राणदशा हो तो पुष्पशय्या, आभूषण, चन्दन, सुस्वादुभोजन और सभी सुख का उपभोग होता है।

शुक्रसूक्ष्मदशा में सभी ग्रहों की प्राणदशा का फल—

शुक्र की सूक्ष्मदशा में शुक्र की प्राणदशा हो तो ईश्वर का ज्ञान व ईश्वरभक्ति, सन्तोष, धनप्राप्ति तथा पुत्र पौत्रादि की वृद्धि होती है।

शुक्र की सूक्ष्मदशा में सूर्य की प्राणदशा हो तो लोक में ख्याति, पुत्रसुख से विमुखता तथा उष्ण रोगादि से पीड़ा होती है।

शुक्र की सूक्ष्मदशा में चन्द्र की प्राणदशा हो तो देवपूजन, कार्य में तत्परता, मन्त्र सिद्धि हेतु तत्परता, धनवृद्धि और सौभाग्यवृद्धि होती है।

शुक्र की सूक्ष्मदशा में भौम की प्राणदशा हो तो ज्वर-फोड़ा-फुन्सी-दाद-खुजलीरोग और देव-ब्राह्मण में भक्ति होती है।

शुक्र की सूक्ष्मदशा में राहु की प्राणदशा हो तो शत्रु से पीड़ा, नेत्र व उदररोग तथा मित्रों से वैर व कष्ट होता है।

शुक्र की सूक्ष्मदशा में गुरु की प्राणदशा हो तो आयु-आरोग्य-ऐश्वर्य-धन-पुत्र-स्त्री-सुख आदि की तथा छत्र-वाहनादि की प्राप्ति होती है।

शुक्र की सूक्ष्मदशा में शनि की प्राणदशा हो तो राजकोप, सुखनाश, महारोग और नीचों से विवाद होता है।

शुक्र की सूक्ष्मदशा में बुध की प्राणदशा हो तो सन्तोष, राजसम्मान, विविध प्रकार से भूमि व धन का लाभ और नित्यप्रति उत्साहवृद्धि होती है।

शुक्र की सूक्ष्मदशा में केतु की प्राणदशा हो तो आयु-यश व धन-धान्य की क्षति होती है। दान और भोग हेतु हीं धन रहता है अर्थात धन कम हो जाता है।

॥ इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का प्रथम एकोनविंश रूप 'सूक्ष्मान्तर्दशा-प्राणदशा फल' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ॥१९॥

२०

ग्रह फल प्राप्ति काल

यह अध्याय विशेष महत्त्व रखता है और जो सिद्धान्त इसमें दिए गए हैं, उनमें काफी अनुभव और कुशलता की आवश्यकता है। लेकिन कुशलता और अनुभव किसी नियम के आधार पर होने चाहिए। उन नियमों का यहां उल्लेख किया जाता है।

अब तक पिछले अध्यायों में यह बतलाया है कि 'क्या' होगा। अब यह बतलाते हैं कि वह कब होगा। यह ध्यान में रखना चाहिए कि जन्म-कुण्डली में जो फल नहीं लिखा है, वह ग्रह फल अनुकूल परिस्थिति होने पर भी नहीं होता है और जो प्रभाव ग्रह परिस्थितवश होने को होता है वह साधारण से दशा-अन्तर्दशा या गोचरवश हो जाता है।

यदि किसी की जन्म-कुण्डली में धन का योग नहीं है तो वह अत्यन्त शुभ दशाओं में भी नहीं होगा। यद्यपि अपेक्षाकृत अनुकूल परिस्थिति होने पर किञ्चित् धन का लाभ कराता है। जिस जातक की कुण्डली में सातवां भाव; शुक्र और सातवें भाव का स्वामी दूषित हो तो उसे वैवाहिक सुख नहीं मिलता है और जब शुभ महादशा, शुभ गोचर इत्यादि होता है तो भी उसे इस प्रसङ्ग की कोई विशेष प्रसन्नता नहीं मिलेगी। इस मुख्य सिद्धान्त को हमेशा ध्यान रखना चाहिए।

फलादेश करते समय दशा-अन्तर्दशा का तथा जो सिद्धान्त और फल पहले बताए जा चुके हैं (१) ग्रह किस भाव में हैं, (२) किस राशि में बैठा है, (३) किन ग्रहों के साथ है अथवा दृष्ट है और (४) किन भावों का स्वामी है अथवा किन वस्तुओं का कारक है, उन सबका ध्यान रखना चाहिए। जन्म-कुण्डली में जो फल होता है वह ग्रह की दशा-अन्तर्दशा आने पर होता है।

भारतीय ज्योतिष में फल का समय महादशा और अन्तर्दशा तथा ग्रहों के गोचर पर आधारित है। दशा-अन्तर्दशा की गणना करने का तरीका पहले ही बताया जा चुका है। गोचर का क्या प्रभाव होता है, यह इस अध्याय में बताया जाएगा। इस समय दशा-अन्तर्दशा अच्छी जाएगी या खराब, यह विचार कर रहे हैं।

महादशा—आप किसी रत्न की परीक्षा कैसे करते हैं? मान लीजिए, हीरे की कि वह अच्छा है या नहीं। इसमें तीन बातें देखनी चाहिए। वजन

और बनावट तथा सफाई के अलावा हमें यह भी ध्यान देना पड़ता है कि उसमें कोई दोष न हो। यदि इनमें से किसी भी बात का ध्यान नहीं रखा गया तो हमारा निर्णय त्रुटिपूर्ण होगा। इसी प्रकार दशा-अन्तर्दशा में तीन बातों का ध्यान रखना चाहिए वरना हमारा निष्कर्ष गलत ही रहेगा। पहले ग्रहों की महादशा का विचार करते हैं और अन्तर्दशा का उसके बाद में करेंगे। इसके पहले हम उन तीन सिद्धान्तों का उल्लेख करें, जिनका महादशा के फल का निर्णय करने में ध्यान देना चाहिए—निम्नलिखित बातों का भी ध्यान दिया जाए—

मौलिक सिद्धान्त—(१) अपनी दशा में ग्रह अग्रोक्त सम्बन्धी फल दिखाता है। (अ) जिस भाव या भावों का स्वामी हो, (ब) जिस भाव में बैठा हो, (स) जिन भावों पर दृष्टि डालता हो (द) जिन ग्रहों के साथ बैठा हो या जिन ग्रहों से देखा जाता हो।

इसलिए एक क्रूर ग्रह की दशा में उस भाव का नाश हो जाता है जहां दशानाथ (अर्थात् जिस ग्रह की दशा हो) बैठा हो। ऐसा ही उन भावों के लिए समझना, जहां पर क्रूर ग्रह की दृष्टि हो, परन्तु यदि क्रूर ग्रह अपनी ही राशि में हो यां अपनी ही राशि को देखता हो तो उन भावों को बढ़ाता है अर्थात् उन भावों के शुभ फल ही देता है। यह उसी सिद्धान्त पर आधारित है कि एक दुष्ट भी अपने परिवार का रखवाला और भरण-पोषण करने वाला होता है।

(२) जब एक ग्रह दो भावों का स्वामी हो तो अपनी दशा से सम्बन्धित पहले भाग में पहले भाव का (लग्न से गिनने पर जो भाव पहले आए) फल देता है। दशा के दूसरे भाग में दूसरे भाव का (जो लग्न से गिनने के बाद में आता है) फल देता है। जैसे सिंह लग्न से, सिंह राशि से गिनने पर वृश्चिक (जो कि चौथा भाव है) पहले आता है और मेष (जो नवम भाव है) बाद में आता है। इसलिए मंगल की सात वर्ष की महादशा में पहले ३ वर्ष ६ मास तक चतुर्थ भाव के स्वामित्व का फल अधिक रूप से होगा तथा बाद के दूसरे ३ वर्ष ६ मास की अवधि में नवम भाव के स्वामित्व का फल विशेषरूप से होगा, परन्तु यदि विशेष विवेचन करें तो ग्रह की मूल त्रिकोण राशि जिस भाव में है, उसका फल विशेष रूप से होगा।

(३) ग्रह जिस राशि में बैठा है वह पृष्ठोदय है या शीर्षोदय या दोनों ही यह पहले बताया गया है। ग्रहों का फल इस पर निर्भर करता है।

(४) जो ग्रह दो राशियों का स्वामी हो उसमें से एक राशि शुभ भाव

में पड़े और दूसरी अशुभ स्थान में तथा ग्रह स्वयं भी शुभ भाव में जो उसकी राशि है उसी में बैठे तो उसका फल शुभ ही होगा, हालांकि वह एक अशुभ भाव का स्वामी भी है। उदाहरण के लिए कन्या लग्न वाले जातक के लिए शनि कुम्भ का (जो छठा और अशुभ स्थान है) और मकर का (जो पञ्चम और शुभ स्थान है) स्वामी है। यदि शनि मकर में बैठे तो वह छठे भाव के स्वामित्व का अशुभ फल नहीं दिखाता है।

(५) किसी ग्रह की महादशा आरम्भ में ग्रह जिस भाव में है उसका फल दिखाएगी, दशा के मध्य में जिस राशि और नवांश में है उसका फल और उसके बाद जिन ग्रहों के साथ बैठा हो या जिन ग्रहों से देखा जाता है, उसका फल होता है।

(६) यदि एक ग्रह राशि में बलवान हो, परन्तु नवांश में नीच का हो तो वह अच्छा फल नहीं दिखाएगा, अपितु अशुभ फलकारक होगा। (यहां यह फल जो कहा गया है वह यदि ग्रह अकेला बैठा हो तभी होता है)।

(७) एक ग्रह मान लीजिए—'क' यदि 'ख' का अति शत्रु है तो अपनी 'क' की दशा में 'ख' जिन भावों का स्वामी है उन भावों के अशुभ फलों को देगा। इसलिए लग्नेश के शत्रु और अति शत्रु ग्रहों की दशा अच्छी नहीं जाएगी। जैसे—मान लीजिए, चन्द्रमा लग्नेश हो और शनि का शत्रु भी, तो शनि की महादशा में ऐसे व्यक्ति को अत्यधिक कष्ट मिलेगा और यदि परस्पर मित्र हों तो शनि सप्तमेश-अष्टमेश होने पर भी खराब फल नहीं देगा।

(८) राहु और केतु किसी भी राशि के स्वामी नहीं हैं इसलिए वे जिस भाव में बैठे हों या जिन ग्रहों के साथ हों, उनका फल दिखाते हैं।

पहला सिद्धान्त—

ग्रह जिन-जिन वस्तुओं का 'कारक' है उनका असर दिखाता है। यदि बलवान है तो जिन वस्तुओं का वह द्योतक है उनके सम्बन्ध में शुभ फल करेगा, परन्तु यदि कमजोर और पीड़ित है तो खराब फल करता है।

सूर्य—जब सूर्य बलवान हो तो अपनी महादशा में राजा से धन (सरकार से अथवा सरकारी नौकरी से), बड़े-बड़े व्यक्तियों से सम्पर्क, नये कार्यों में सफलता, हिम्मत, विभिन्न प्रकार से धन-प्राप्ति यश, सफल यात्राए करवाता है। जातक को मुकदमें, लड़ाई-झगड़े इत्यादि में सफलता मिलती है। जातक के पिता के लिए भी महादशा अच्छी रहेगी।

परन्तु यदि सूर्य कमजोर है (और पीड़ित भी) तो राज्य की तरफ से भय, शत्रुओं से कष्ट, अग्नि से भय, यात्राओं में असफलता मिले, पेट और हृदय सम्बन्धी रोग हों, पिता से अच्छे सम्बन्ध न रहें अथवा पिता का स्वास्थ्य खराब रहे। ऐसे व्यक्ति की आत्मा में बल नहीं रहता।

चन्द्रमा—यदि चन्द्रमा बलवान हो तो धन-वृद्धि आसानी से होती है, परिवार में वृद्धि, अच्छा भोजन, कार्यों में सफलता, अधिक मित्र इत्यादि होते हैं। जातक की माता के लिए भी यह महादशा अच्छी होती है।

यदि चन्द्रमा कमजोर हो तो धन कम हो जाता है। मानसिक परेशानी, परिवार में क्लेश, अपने ही लोगों से दुश्मनी, उदासीनता, बासी भोजन, किसी बड़े व्यक्ति से दुश्मनी और उसके कारण उदासीनता और उद्वेग, माता को कष्ट होता है। जातक वात और कफ बिगड़ जाने से अस्वस्थ होता है।

मंगल—मंगल बलवान हो तो राज्यलाभ, भूमि, अग्नि (जहां ढलाई इत्यादि का कार्य होता है), भाई से, भेड़-बकरियों इत्यादि से लाभ होता है। जातक में हिम्मत और उत्साह रहता है और इस कारण उसे अपने कार्यों में सफलता मिलती है, क्रूर कर्म और दवाई इत्यादि के कार्यों से लाभ होता है।

परन्तु यदि मंगल कमजोर हो तो लड़ाई-झगड़े, मुकदमे से हानि, किसी छोटी जाति की स्त्री से सम्बन्ध और उस कारण हानि, भाई या बहन से मतभेद अथवा उनका स्वास्थ्य खराब रहे। जातक को झुंझलाहट रहती है और कठोर वचन बोलने के कारण लोगों द्वारा पसन्द नहीं किया जाता । फोड़े, फुन्सियां, रक्त-विकार, चोट लगना (हथियार या दुर्घटना द्वारा) इत्यादि का भय रहता है।

बुध—जब बुध बलवान हो तो मित्रों से या मित्रों के सहयोग से, लेखन-कार्यों से, दलाली से लाभ होता है। पारिवारिक प्रसन्नता, व्यापार में सफलता, बुद्धि का विकास, पढ़ाई में सफलता, यश और नाम मिले। यात्रा से धन प्राप्त हो। स्नायुमण्डल बलवान होता है।

परन्तु यदि बुध कमजोर हो तो जल्दी घबरा जाने वाला, उसे मानसिक कार्यों से धन लाभ नहीं होता, बातचीत में सफलता नही मिलती, दूसरों द्वारा तिरस्कृत किया जाता है, अधिक मेहनत करने पर भी उतना लाभ नहीं मिलता, धोखाधड़ी के मामलों में नुकसान, बिना सोचे-समझे दस्तावेजों पर दस्तखत करने के कारण परेशानी, यकृत, स्नायुमण्डल, बुद्धि में विकार, नींद न आना इत्यादि रोग। वात, पित्त और कफ के बिगड़ जाने से रोग हो।

बृहस्पति—जब बृहस्पति बलवान हो तो धनवृद्धि, विद्या-लाभ, धार्मिक कार्यों में रुचि, अच्छा स्वास्थ्य, पुत्रप्राप्ति या परिवार में बौद्धिक कार्यों में सफलता, बड़े-बड़े व्यक्तियों से सम्पर्क, मान-मर्यादा, पुत्रों से प्रसन्नता होती है। स्त्रियों की जन्म-कुण्डली में विवाह तथा जो विवाहित हैं उनके पति की समृद्धि होती है।

परन्तु यदि बृहस्पति कमजोर है तो कानों में खराबी,रक्तचाप सम्बन्धी दोष, पाचनक्रिया में खराबी, सन्तान को दुःख या बीमारी, धन-नाश और मानसिक अशान्ति, स्त्रियों की जन्म-कुण्डली में पति को कष्ट।

शुक्र—जब शुक्र बलवान हो तो जातक को आनन्द, स्त्रियों से प्रसन्नता, धनवृद्धि, सुख-भोग की वस्तुएँ, इन्द्रिय सुख, विलास होता है। अविवाहित हो तो विवाह हो, सवारी का लाभ,पशु और खेती से लाभ, विदेश यात्रा, वस्तुओं के खरीदने और बेचने से धन-लाभ, भोग-विलास की वस्तुओं, स्त्रियों से लाभ, परिवार में धार्मिक कार्य, भक्ति। ये सब शुक्र की महादशा में होते हैं।

परन्तु यदि शुक्र कमजोर हो तो पति से कलह, पत्नी का स्वास्थ्य खराब रहे, वात और कफ सम्बन्धी रोग, छूत की बीमारियों, गुर्दे और पेशाब के रोग, चीजों के खरीदने और बेचने से नुकसान, खेती और पशुओं के कारण हानि। दूसरे लोगों से सहयोग भी नहीं मिलता है और अनुचित कार्यों में धन का व्यय होता है।

शनि—यदि शनि बलवान हो तो खेती-बाड़ी, खानों, लोहे, तेल, पेट्रोल, मजदूरों, बूढ़े व्यक्तियों से लाभ होता है। यदि नौकरी में हो तो तरक्की मिलती है तथा अच्छे ओहदे की प्राप्ति। ज्ञान-प्राप्ति और ज्योतिष इत्यादि पढ़ने में रुचि रहती है।

यदि शनि कमजोर हो तो उद्वेग, किसी सम्बन्धी की मृत्यु (कष्ट), परिवार में बीमारी, लगातार मुकदमे इत्यादि के कारण परेशानी, हड़ताल और अपने नीचे कार्य करने वालों से अनबन, यदि नौकरी में हो तो मानहानि, आर्थिक हानि, जमीन-जायदाद का नुकसान, रक्तचाप के कम हो जाने से बीमारियां, लकवा इत्यादि से कष्ट। ऐसे व्यक्ति का मुंह सूज जाता है और रंग काला पड़ने लगता है।

राहु—राहु बलवान हो तो सफल यात्रा, उन्नति, धन-लाभ (वाहन

के कार्य से), जुआ, सट्टा, घुड़दौड़, विदेश यात्रा, बेईमानी से और विजातीय व्यक्ति से लाभ, विदेशी भाषा सीखने में सफलता, धन में रुचि इत्यादि जानना।

जब राहु कमजोर हो तो धन-हानि, जातक धोखाधड़ी का शिकार हो, पद-हानि, स्थानच्युत किया जाए, कष्टकारक यात्राएं करनी पड़ें, सट्टे में नुकसान, वात बिगड़ने से बीमारी, चर्मरोग, सूजन, सांप से काटा जाए, छोटे लोगों से मित्रता और उनसे कष्ट।

केतु—जब केतु बलवान हो तो उसकी महादशा में मित्रों से लाभ, शत्रु पर विजय और हिम्मत के कार्य, धार्मिक उत्सव, तीर्थ-यात्रा कराता है। सब प्रकार से धन का लाभ होता है।

परन्तु जब केतु कमजोर हो तो अग्नि से भय, चोरों द्वारा धन चुराया जाए, परिवार में परेशानी, लोगों से दुश्मनी, धन-नाश, मानसिक उद्वेग, स्वयं की पत्नी को और बच्चों को बीमारी।

दूसरा सिद्धान्त—दूसरा सिद्धान्त भाव के स्वामी पर आधारित है। यदि भाव का स्वामी जो ग्रह हो बलवान हो तो अपनी महादशा में जिन भाव या भावों का वह स्वामी है उन सम्बन्धी भावों का शुभ फल दिखाएगा, परन्तु दूसरी ओर यदि कमजोर और अशुभ स्थान में बैठे तो अपनी महादशा में, जिन भावों का वह स्वामी है, उनसे जिन वस्तुओं का ज्ञान होता है, उसका खराब फल दिखाएगा। किस भाव से किन-किन वस्तुओं को देखना चाहिए, यह हम पहले ही बता चुके हैं और इसे यहां फिर से नहीं बता रहे हैं। पूर्व में हम यह भी बता आए हैं कि ग्रह किन कारणों से बलवान समझा जाता है और किन कारणों से पीड़ित।

इन सब सिद्धान्तों को ग्रह का बल देखने के लिए प्रयोग करना चाहिए।

अपनी महादशा में ग्रह के प्रभाव को दो भागों मे बांटा जा सकता है—(१) जब ग्रह बलवान हो और (२) जब ग्रह कमजोर हो। यदि ग्रह बलवान हो और शुभ स्थान में बैठा हो तो अच्छा प्रभाव दिखाता है। यदि कमजोर और पीड़ित हो तो खराब फल दिखाएगा।

पहले भाव का स्वामी—बलवान हो तो जीवन में उत्थान, प्रसन्नता, अच्छा स्वास्थ्य, धनवृद्धि, कार्यों में सफलता।

उसके कमजोर होने पर बीमारी के कारण अस्पताल में रहना पड़े अथवा जेल जाना पड़े, डर, बीमारी, उद्वेग रहे, परिवार में मृत्यु, धनहानि, शत्रुता, भाग्य-हानि।

दूसरे भाव का स्वामी—बलवान हो, तो परिवार में वृद्धि, अच्छा भोजन, बोलने में प्रवीणता और बातचीत के द्वारा धनप्राप्ति, सन्तान-सुख।

उसके कमजोर होने पर धन-हानि, नेत्र और मुख की बीमारियां, चिन्ता, परेशानी और दुःख, अनुचित वाणी के कारण कष्ट, मृत्यु।

तीसरे भाव का स्वामी बलवान हो, तो भाईयों से प्यार और सहयोग, अच्छी घटनाएं, हिम्मत बढ़े और कार्यों में सफलता, लोकप्रियता, ऊँची पदवी प्राप्त हो।

उसके कमजोर होने पर भ्रातृ-हानि या उनसे अनबन रहे, दूसरे के द्वारा विरोध, शत्रु से पीड़ा, हार, बेइज्जती।

चौथे भाव का स्वामी बलवान हो, तो अच्छा स्थान प्राप्त हो, जमीन-जायदाद का लाभ, धन और वाहन का लाभ, खेती-बाड़ी से लाभ, सम्बन्धियों से सहयोग।

उसके कमजोर होने पर माता को कष्ट, पानी से डर, पशु-हानि, बुरा भाग्य, जमीन-जायदाद का नाश।

पांचवें भाव का स्वामी बलवान हो, तो सरकार में ऊँचा स्थान मिले, पुत्र-जन्म या सन्तान से प्रसन्नता, विद्या में सफलता, इज्जत, सम्बन्धियों के साथ सुख, अच्छे कार्य।

उसके कमजोर होने पर पुत्र को कष्ट या सन्तान की वजह से पीड़ा, मानसिक तनाव और फैसला करने में देर के कारण हानि हो, शक्ति का ह्रास, राजा से भय, लोगों द्वारा ठगा जाए, विद्या में असफलता, पेट के रोग, वीर्यक्षय, बेकार रहे।

छठे भाव का स्वामी बलवान हो, तो अच्छा स्वास्थ्य, उदारता, अपने से नीचे कार्य करने वालों और नौकरों की संख्या में वृद्धि, धन-लाभ, शत्रुओं से पराजित न किया जाए, हिम्मत से शत्रुओं का नाश करें, अच्छी नौकरी मिले।

उसके कमजोर होने पर बहुत-से खराब कार्य, धन-हानि, बीमारी और चोट लगे, चोरों से भय, दूसरों के द्वारा दबाया या परास्त किया जाए, दूसरों की सेवा में तत्पर, नौकरी छूट जाए।

सातवें भाव का स्वामी बलवान हो, तो भोग-विलास की वस्तुओं का लाभ, जननेन्द्रियों का सुख, विवाह हो, यात्रा में सफलता, घर में अच्छा कार्य हो, समृद्धि (साझेदारी के कार्य में)।

उसके कमजोर होने पर पति-पत्नी में सम्बन्ध विच्छेद, दामाद को कष्ट, स्त्रियों के कारण हानि (स्त्री की जन्म-कुण्डली में पुरुषों के कारण हानि हो), जननेन्द्रिय के रोग, अनुचित कार्य, साझेदारों से मतभेद अथवा उनके द्वारा आर्थिक हानि, मृत्युतुल्य कष्ट), व्यर्थ भ्रमण करना।

आठवें भाव का स्वामी बलवान हो, तो कर्जों से निवृत्ति, नया मकान बनवाने का योग (पैतृक मकान के अतिरिक्त), पशुओं और नौकरों की संख्या में वृद्धि, विरासत में धन, शत्रुता का नाश।

उसके कमजोर होने पर अत्याधिक दुःख, जलन, मानसिक असन्तुलन, वात बिगड़ने से बीमारी, गरीबी, मान-हानि, व्यर्थ भ्रमण करना, अपमान।

नौवें भाव का स्वामी बलवान हो, तो देवता और ब्राह्मण की भक्ति, अच्छे और शुभ कार्य, धार्मिक कृत्य, सब प्रकार की समृद्धि और अत्याधिक धन का लाभ, पत्नी, पुत्र-पौत्र इत्यादि से सुख, शान्तिपूर्ण और आनन्द से परिपूर्ण जीवन बिताए।

उसके कमजोर होने पर देवताओं की अप्रसन्नता (नास्तिकता और उसके परिणाम स्वरूप), दुःख, पिता, पत्नी और सन्तान को दुःख, बुरे कार्यों में प्रवृत्ति, परिवार के किसी वृद्ध व्यक्ति की मृत्यु।

दसवें भाव का स्वामी बलवान हो, तो तरक्की, मान-वृद्धि, सम्मान, नाम और यश, चतुर और सफल कार्य, धन बढ़े, आनन्दमय जीवन, जातक को सब कार्यों में (जो वह करे) सफलता मिलती है। सफल यात्राएं।

उसके कमजोर होने पर मानहानि, बेइज्जती, असफल यात्राएं, बुरे कार्य। जो भी कार्य करे उसमें विघ्न-बाधाएं और अन्त में असफलता मिले।

ग्यारहवें भाव का स्वामी बलवान हो, तो प्रसन्नता और समृद्धि, नौकरों की संख्या में वृद्धि, लगातार धन-लाभ और मित्रों, सम्बन्धियों के साथ मिलकर जीवन का आनन्द।

उसके कमजोर होने पर भाई को कष्ट (विशेष रूप से बड़े भाई को) सन्तान को परेशानी, कान में दर्द, गरीबी और बेइज्जती, दु:खकार्य समाचार, जातक के साथ धोखा या दगा हो। माता को कष्ट।

बारहवें भाव का स्वामी बलवान हो, तो शुभ कार्यों में अधिक व्यय करने वाला, धार्मिक कार्य करे, विदेश यात्रा।

उसके कमजोर होने पर धन कम हो जाए, बीमारी, जेल जाना पड़े, छुपे हुए दुश्मनों से पीड़ित किया जाए।

जातक का ध्यान इस ओर आकर्षित किया जाता है कि सामान्य रूप से यदि कोई ग्रह सब प्रकार से बलवान है अर्थात् शुभ राशि और शुभ नवांश में हो, अच्छे भाव में हो,शुभ ग्रहों से दृष्ट हो या उनके साथ बैठा हो, जो ग्रह अच्छे भावों के स्वामी भी हों तो उस बलवान ग्रह की दशा में अत्याधिक अच्छा फल मिलेगा। इसके विपरीत यदि कोई ग्रह किसी खराब भाव में हो,पीड़ित हो (राशि भाव या नवांश में), क्रूर ग्रह से दृष्ट अथवा उनके साथ हो जो स्वयं अशुभ भावों के स्वामी हैं तो अपनी दशा में अत्याधिक अशुभ फल दिखाएगा। यदि किसी प्रकार से बलवान हो और किन्हीं कारणों से कमजोर तो मिला-जुला फल दिखाएगा।

जातकादेशमार्ग ग्रन्थ के दसवें अध्याय के ३७वें श्लोक में ग्रह को दो प्रकार से दु:खित (पीड़ित) बताया गया है। इन दो में से (अ) अच्छी राशि में तो हो, परन्तु अशुभ भाव में बैठा हो जैसे कि आठवें भाव में, (ब) नीच या शत्रु राशि में बैठे, परन्तु अच्छे भाव में हो जैसे कि ग्यारहवें भाव में । इन दोनों में पहली स्थिति में अपेक्षाकृत अधिक खराब फल दिखाएगा। इन सब बारीकियों का हमेशा ध्यान रखना चाहिए।

तीसरा सिद्धान्त—अब पाठकों के समक्ष तीसरा सिद्धान्त रखते हैं। 'उडुडाय प्रदीप' फलित ज्योतिष का ग्रन्थ जो पराशर के मत से ज्योतिषशास्त्र का संक्षिप्त रूप है (पराशर ऋषि कई हजार वर्ष पहले हुए हैं और एक प्रकार से भारतीय ज्योतिष के पिता कहलाते हैं), में ग्रहों को क्रूर और शुभ दो भागों में बांटा गया है, परन्तु ये दो भाग उन नैसर्गिक कारणों से नहीं किए गए है, अपितु उनका शुभ या क्रूर होना इस पर निर्भर करता है कि वे किन भावों के स्वामी है। जैसे—

(१) लग्न (प्रथम भाव) का स्वामी हमेशा शुभ होता है।

(२) त्रिकोण के स्वामी अर्थात् पांचवें और नवें भाव के स्वामी शुभ होते हैं। नवें भाव का स्वामी पांचवें भाव की अपेक्षा अधिक शुभ होता है।

(३) तीसरे, छठे और ग्यारहवें भाव के स्वामी अशुभ या पापी होते हैं। छठे भाव का स्वामी तीसरे भाव के स्वामी से ज्यादा अशुभ होता है और ग्यारहवें भाव का स्वामी छठे भाव के स्वामी से भी अधिक अशुभ होता है।

(४) केन्द्र के स्वामी अर्थात् पहले, चौथे, सातवें और दसवें भाव के स्वामी में यहाँ चौथे, सातवें और दसवें भावों के स्वामियों का विचार करेंगे, क्योंकि लग्न का स्वामी हमेशा शुभ होता है। यदि नैसर्गिक शुभ हैं तो शुभ, परन्तु यदि तीसरे,छठे और ग्यारहवें भाव में से किसी एक के स्वामी भी हों तो अशुभ। यदि क्रूर ग्रह केन्द्र (४, ७, १०) के स्वामी हों तो अशुभ, परन्तु यदि साथ ही त्रिकोण के स्वामी भी हुए तो शुभ होंगे। पहले, चौथे, सातवें और दसवें भावों के स्वामी उत्तरोत्तर बलवान होते हैं।

(५) आठवें भाव का स्वामी सबसे अधिक अशुभ होता है, परन्तु इसमें दो अपवाद हैं।

(क) यदि आठवें भाव का स्वामी पहले भाव का स्वामी भी हो जैसे मेष लग्न वालों के लिए मंगल पहले और आठवें भावों का स्वामी हुआ अथवा जैसे तुला लग्न वालों के लिए शुक्र पहले और आठवें भावों का स्वामी हुआ तो अशुभ नहीं है, बल्कि शुभ ही होगा।

(ख) दूसरा अपवाद यह है कि सूर्य और चन्द्रमा आठवें भाव के स्वामी होने पर भी दोषी नहीं होते हैं जैसे धनु लग्न वालों के लिए चन्द्रमा अष्टमेश हुआ या मकर लग्न वालों के लिए सूर्य अष्टमेश हुआ। एक मत के अनुसार यदि धनु लग्न वालों के लिए सूर्य कर्क राशि में आठवें भाव में बैठा हो तब तो शुभ समझा जाएगा, परन्तु यदि किन्हीं और राशियों में हो तो पूर्ण रूप से शुभ नहीं रहेगा। हमारा अनुभव है कि सूर्य और चन्द्रमा आठवें भाव के स्वामित्व का मिला-जुला फल ही दिखाते हैं।

(६) दूसरे और बारहवें भावों के स्वामी अपने-आप में न तो शुभ होते हैं और न ही अशुभ। यदि सूर्य या चन्द्रमा इन भावों के स्वामी हों तो अच्छा फल दिखलाएंगे यदि वे अच्छे भाव में बैठें और शुभ ग्रह के साथ हों। यहाँ पर अन्य ग्रह का शुभत्व ऊपर दिए गए सिद्धान्त पर आधारित है; परन्तु यदि सूर्य या चन्द्रमा किसी क्रूर ग्रह के साथ हों या अशुभ स्थान में बैठे हों तो अशुभ होंगे।

शेष पाँच ग्रहों में मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि यदि दूसरे या बारहवें का स्वामी, साथ में किसी अच्छे भाव का स्वामी भी हो तो शुभ, परन्तु यदि साथ में किसी अशुभ भाव अर्थात् तीसरे, छठे या ग्यारहवें का स्वामी भी हो तो अशुभ होता है।

योगकारक—यहाँ पाठकों का ध्यान दो संस्कृत के शब्दों, जिनका ज्योतिष में बहुधा प्रयोग होता है, की ओर ध्यान दिलाते हैं—(अ) योगकारक और (ब) मारक। जब कोई ग्रह एक साथ केन्द्र और त्रिकोण का स्वामी हो तो योगकारक कहलाता है। योगकारक ग्रह अपनी महादशा में अच्छा और शुभ फल दिखलाता है। जैसे वृषभ लग्न में शनि नवें और दसवें भावों का स्वामी होता है, कर्क लग्न में मंगल पांचवें और दसवें भावों का स्वामी होता है, सिंह लग्न में मंगल चौथे और नवें भावों का स्वामी, तुला लग्न में शनि चौथे और पांचवें भावों का स्वामी, मकर लग्न में शुक्र पांचवें और दसवें भावों का स्वामी और कुम्भ लग्न में शुक्र चौथे और नवें भावों का स्वामी होता है। एक साथ ही एक केन्द्र और एक त्रिकोण का स्वामी होने के कारण 'योगकारक' हुआ। ये योगकारक ग्रह किस मात्रा में अच्छा प्रभाव दिखलाएंगे, यह इस बात पर निर्भर करता है कि वे किस राशि में हैं,किस नवांश में हैं, किस भाव में हैं और किन ग्रहों के साथ हैं या किन-किन ग्रहों से दृष्ट हैं, परन्तु इन योगकारक ग्रहों की महादशा अच्छा फल दिखलाएगी।

मारक—'मारक' का मतलब है मारने वाला। पहले यह विचार करें कि आयु अल्प, मध्य या दीर्घ है और यदि इसके साथ ही निम्नलिखित ग्रहों में से किसी ग्रह की दशा आती है तो जातक की मृत्यु अथवा मृत्युतुल्य कष्ट होगी।

(क) दूसरे भाव का स्वामी, (ख) सातवें भाव का स्वामी, विशेष रूप से यदि दूसरे भाव का स्वामी सातवें भाव में हो या सातवें भाव का स्वामी दूसरे भाव में हो। यह ध्यान रखिए कि यदि चन्द्रमा, बुध,शुक्र या बृहस्पति सातवें भाव के स्वामी हैं तो इन ग्रहों की मारक शक्ति उत्तरोत्तर अधिक होती है। इसलिए बुध सातवें भाव का स्वामी होकर चन्द्रमा से अधिक मारक होगा, शुक्र सातवें भाव का स्वामी होकर बुध की अपेक्षा अधिक मारक होगा और बृहस्पति सातवें भाव का स्वामी होकर सबसे अधिक मारक दोषयुक्त होगा—विशेष रूप से उस हालत में जबकि ऊपर बताए गए चार ग्रह दूसरे या सातवें भाव में बैठे हों, परन्तु यदि जातक की दीर्घ आयु हो और उसके मारकेश की दशा आए तो जातक उस दशा में

बीमार तो जरूर पड़ेगा (मारकेश की महादशा में जब मारकेश का अन्तर भी हो या मारकेश की महादशा में किसी अशुभ ग्रह की अन्तर्दशा हो), परन्तु उसकी मृत्यु नहीं होगी। यदि अन्तिम दिनों में मारकेश की दशा न हो तो जातक की मृत्यु बारहवें, ग्यारहवें, आठवे, छठे या तीसरे भावों के स्वामी की दशा-अन्तर्दशा में होगी। इन सब ग्रहों में शनि यदि मारकेश है अथवा ३, ६ या ११ भावों का स्वामी हो तो उसका दोष सबसे अधिक होता है। मृत्यु का ठीक-ठीक समय जानना असम्भव है, क्योंकि अच्छे कार्य करने से आयु बढ़ती है और अशुभ कार्यों से आयु का क्षय होता है।

धर्मेण हन्यते व्याधि: धर्मेण हन्यते ग्रह:।
धर्मेण हन्यते शत्रु यतो धर्मस्ततो जय:।।

लग्नवश शुभाशुभ ग्रह—अब प्रत्येक लग्न के लिए कौन-से ग्रह शुभ होते हैं और कौन-से ग्रह अशुभ, यह बताते हैं। यदि जिस-किसी जन्म-कुण्डली का विचार करना हो उसमें मेष लग्न उदय हो तो नीचे दिए गए शीर्षक 'मेष' में देखें। यदि आपका सिंह लग्न का जन्म हो तो 'सिंह' शीर्षक में देखें। इसी तरह और भी समझना चाहिए।

मेष—सूर्य, चन्द्र, मंगल और बृहस्पति शुभ, शुक्र और शनि अशुभ।

वृषभ—सूर्य, शुक्र और शनि शुभ। बुध शुभ है, परन्तु दूसरे भाव का स्वामी होने से मारक भी होता है। चन्द्रमा, मंगल और बृहस्पति अशुभ।

मिथुन—बुध और शुक्र शुभ। बृहस्पति में मारक दोष है, इसके अलावा शुभ। चन्द्रमा सम है और मारकेश भी नहीं होगा, यदि क्रूर ग्रह के साथ न हो। सूर्य, मंगल और शनि अशुभ हैं। शनि का आठवें भाव का स्वामी होना उसके नवें भाव के स्वामित्व की अपेक्षा अधिक फल दिखता है, परन्तु यदि शनि स्वयं आठवें या नवें भाव में बैठा भी हो तो शुभ फल दिखलाएगा।

कर्क—चन्द्रमा, मंगल और बृहस्पति शुभ हैं। बृहस्पति छठे भाव की अपेक्षा नवें भाव का फल अधिक देगा। सूर्य सम है। (न अशुभ न शुभ) बुध, शुक्र और शनि अशुभ हैं।

सिंह—सूर्य और मंगल शुभ हैं। बृहस्पति यदि पांचवें या आठवें भाव में हो तो शुभ वरना मिश्रित प्रभाव दिखलाएगा। चन्द्रमा सम है। बुध, शुक्र और शनि अशुभ।

कन्या—बुध और शुक्र शुभ हैं, परन्तु शुक्र मारकेश हो सकता है।

बृहस्पति शुभ है, परन्तु यह भी मारक हो सकता है। शनि मिला-जुला प्रभाव दिखलाता है, परन्तु यदि पांचवें भाव में हो तो अच्छा फल दिखलाएगा। सूर्य सम है। चन्द्रमा और मंगल अशुभ हैं।

तुला—बुध, शुक्र और शनि शुभ। कुछ मात्रा में चन्द्रमा भी शुभ होता है। सूर्य और बृहस्पति अशुभ ।

वृश्चिक—सूर्य, चन्द्रमा, मंगल और बृहस्पति शुभ हैं, परन्तु बृहस्पति मारक है। बुध, शुक्र और शनि अशुभ।

धनु—सूर्य, मंगल और बृहस्पति शुभ। बुध भी शुभ है, परन्तु मारक हो सकता है। शुक्र और शनि अशुभ हैं। चन्द्रमा के आठ या अधिक कलाएं उदित हों तो अच्छा फल दिखलाता है।

मकर—शुक्र और शनि शुभ होते हैं। बुध भी शुभ होता है (बुध का नवें भाव का स्वामित्व छठे भाव के स्वामित्व से अधिक बलवान है)। सूर्य यदि शुभ राशि और भाव में हो तो शुभ होता है। चन्द्रमा, मंगल और बृहस्पति अशुभ।

कुम्भ—शुक्र और शनि शुभ। चन्द्रमा, सूर्य, मंगल और बृहस्पति अशुभ बुध यदि पांचवें या आठवें भाव में हो तो अच्छा फल दिखाता है, वरना मिश्रित फल दिखाता है।

मीन—चन्द्रमा, मंगल और बृहस्पति शुभ हैं। बुध भी शुभ है, परन्तु मारक होता है। सूर्य, शुक्र और शनि अशुभ हैं।

ऊपर बताए गए विभाग में यदि तीसरे भाव का स्वामी तीसरे में हो या छठे भाव का स्वामी छठे में हो या ग्यारहवें भाव का स्वामी ग्यारहवें में हो तो अशुभ नहीं समझा जाता, अपितु अपनी महादशा में अच्छा फल देता है।

किसी जन्म-कुण्डली का विचार करने में यह ध्यान रखना चाहिए कि यदि किसी त्रिकोण का स्वामी किसी केन्द्र के स्वामी के साथ सम्बन्ध रखे तो उन दोनों ही ग्रहों की महादशा अथवा अन्तर्दशा में अच्छा फल प्राप्त होता है।

राजयोग का अधिक फल होगा, यदि किसी केन्द्र का स्वामी दोनों ही त्रिकोणों के स्वामियों से सम्बन्धित हो या किसी त्रिकोण का स्वामी एक से अधिक केन्द्रों के स्वामियों से सम्बन्धित हो।

यह फल कुछ कम मात्रा में होगा, यदि केन्द्र और त्रिकोण के स्वामियों के सम्बन्ध के साथ तीसरे, छठें, आठवें या ग्यारहवें भाव के स्वामी

का सम्बन्ध भी हो क्योंकि आठवें या ग्यारहवें भाव का स्वामी जिस ग्रह या जिस भाव से सम्बन्धित हो, उस भाव को नष्ट कर देता है।

परन्तु मान लीजिए, त्रिकोण का स्वामी किसी अशुभ स्थान का स्वामी भी हो या किसी केन्द्र का स्वामी किसी अशुभ भाव का स्वामी हो, ऐसी दशा में भी क्या त्रिकोण और केन्द्र के स्वामी का सम्बन्ध अच्छा रहेगा और क्या उनकी दशाओं में अच्छा फल प्राप्त हो? जी हां, यदि वे अशुभ स्थानों के स्वामी नहीं होते तो अत्याधिक शुभ फल करते। अब शुभ फल तो करेंगे, परन्तु कुछ अल्प मांत्रा में। राहु और केतु यदि किसी कोण में बैठें और उनके साथ किसी केन्द्र का स्वामी हो अथवा किसी केन्द्र में बैठे हों और उनके साथ किसी कोण का स्वामी हो तो अपनी दशा में अत्यधिक अच्छा प्रभाव दिखाते हैं।

प्रत्येक ग्रह अपनी दशा में उस भाव का तो खराब फल दिखाते हैं जिस भाव में दशा नाथ की (जिस ग्रह की दशा हो) वह राशि हो जिसमें वह नीच होता है और जिस राशि में वह उच्च का होता है, वह जिस भाव में बैठे, उस भाव सम्बन्धी शुभ फल होते हैं। उदाहरण के लिए सिंह लग्न वाले जातक को सूर्य की महादशा में तीसरे भाव का अशुभ फल मिलेगा (तीसरे भाव में तुला राशि है और तुला में सूर्य नीच का होता है) और क्योंकि मेष सूर्य की उच्च राशि है इसलिए सूर्य की दशा में नवें भाव का शुभ फल होगा।

ऊपर महादशा का विश्लेषण करने के लिए काफी सिद्धान्त बताए हैं और पाठक जितना अधिक इसका चिन्तन व मनन और अनुभव करेंगे, उतना ही निष्कर्ष निकालने में उन्हें सफलता मिलती जाएगी।

अन्तर्दशा—महादशा का काल काफी लम्बा होता है, जैसे शुक्र के २० वर्ष, शनि के १९ वर्ष इत्यादि। इसमें सूर्य की महादशा के वर्ष सबसे कम हैं, लेकिन वह भी ६ वर्ष है। कई व्यक्ति लगातार जीवन में बढ़ते रहते हैं, कुछ व्यक्ति क्रमशः धन और व्यवसाय में निरन्तर नीचे हो जाते हैं और बहुत-से व्यक्ति कभी अच्छे समय का और कभी बुरे समय का अनुभव करते हैं, क्योंकि जीवन में हमेशा अच्छा ही होता रहे या हमेशा ही बुरा होता रहे, ऐसा नहीं होता। दिन के बाद रात, रात के बाद दिन। जीवन-मृत्यु रूप यह जीवन का चक्र है। इसलिए प्रत्येक महादशा को नौ-नौ भागों में बांटा गया है, जिसे हम अन्तर्दशा कहते हैं। इस अन्तर्दशा से यह भी ज्ञात हो जाता है कि महादशा में कब उतार और चढ़ाव आएगा। कभी-कभी तो जातक का

धन तो बढ़ता रहे, परन्तु उसका स्वास्थ्य अच्छा न रहे, परिवार में दुःख हो या मुकदमेबाजी इत्यादि। कभी-कभी बाहर से देखने पर तो खराब प्रतीत नहीं होता, परन्तु धन, पशु, समृद्धि तो होती है, परन्तु मानसिक अशान्ति रहती है और जीवन में हलचल मच जाती है। अन्तर्दशा की गणना पूर्व ही बता चुके हैं। अन्तर्दशा के साथ ही जब हम गोचर का विश्लेषण भी करते हैं तब घटना कब घटेगी, इसका समय ज्ञात होता है। गोचर का प्रभाव आगे बताएंगे। अन्तर्दशा का निर्णय करने के लिए निम्नलिखित सिद्धान्तों को देखिए।

साधारण सिद्धान्त—(१) अन्तर्दशा के स्वामी का भी उसी प्रकार विचार कीजिए जैसे महादशा के स्वामी का। जो तीन सिद्धान्त पहले गए हैं, उनसे ज्ञात हो जाएगा कि अन्तर्दशा का स्वामी बलवान है या कमजोर, शुभ है या अशुभ और अन्तर्दशा कैसी जाएगी। जो-जो फल महादशा के बताए गए हैं वही सब फल अन्तर्दशा में भी उसी प्रकार होंगे।

(२) जब महादशा अच्छी हो और अन्तर्दशा भी अच्छी हो तब समृद्धि, उत्थान, अच्छा समय और सब प्रकार से प्रसन्नता होती है।

(३) जब महादशा और अन्तर्दशा दोनों ही खराब हों तो जातक को दुःख मिलता है। यह दुःख गरीबी का होगा, बीमारी से, मृत्यु से, मुकदमु में हार से, शत्रु द्वारा, पारिवारिक क्लेश या और किसी प्रकार का खराब फल। यह जिस ग्रह की दशा और अन्तर्दशा है उस पर निर्भर करता है। ग्रह का (अ) अपना जो नैसर्गिक स्वभाव है, (ब) वह जिन भावों का स्वामी है, (स) जिस भाव में बैठा है, (द) जिन भावों को देखता है, (य) जिन ग्रहों के साथ बैठा है या जिन ग्रहों से देखा जाता है—इन पांचों ही बातों का फल होगा। जब अच्छा फल होगा तो भी इन सब प्रकार से अच्छा फल दिखलायेगा।

(४) जब महादशा तो अच्छी हो और अन्तर्दशा खराब हो तो अन्तर्दशा का खराब फल ही होगा, परन्तु उतनी खराब मात्रा में नहीं। उदाहरण के लिए यदि किसी व्यक्ति को एक योगकारक ग्रह की महादशा है तो मारकेश की अन्तर्दशा होने पर भी जातक की मृत्यृ नहीं होगी। हां, वह बीमार अवश्य पड़ेगा।

(५) जब महादशा खराब हो, अन्तर्दशा अच्छी हो तो अच्छा फल होगा, परन्तु अधिक मात्रा में नहीं। महादशा का अशुभ फल अन्तर्दशा के शुभ फल को कम करेगा (चार और पांच में बहुधा ऐसा होता है कि अन्तर्दशा जीवन के किसी दूसरे भाग में, जैसे किसी को पिता की मृत्यु का

दुःख तो हो और उसके साथ ही विरासत में धन मिले। नौकरी छूट जाए, परन्तु नया कार्य करने में अत्यधिक सफलता का अनुभव हो।

(६) यदि अन्तर्दशानाथ, दशानाथ से छठे, आठवें या बारहवें भाव में हो तो उसकी दशा में कठिनाइयां आएंगी। यदि दोनों ही अशुभ हों तो अत्याधिक खराब फल होगा। यदि ये दोनों ही मारक हों और जन्म-कुण्डली में आयु क्षीण हो तो मृत्यु होती है।

(७) दशानाथ से अन्तर्दशानाथ जन्म-कुण्डली से बारहवें में बहुत व्यय कराएगा।

(८) ग्रह अपनी महादशा में और अपनी ही अन्तर्दशा में पूरा फल नहीं दिखाता है। महादशा का पूरा फल उस ग्रह की अन्तर्दशा में होता है जिसका स्वभाव महादशानाथ की तरह हो अथवा उसका महादशानाथ के साथ 'सम्बन्ध' हो। दो ग्रहों के एक-दूसरे से स्वभाव से हमारा क्या तात्पर्य है? दोनों ग्रह शुभ हों तो एक से स्वभाव के होंगे। यदि दोनों ग्रह अशुभ हों तो भी एक ही स्वभाव के होंगे।

(९) शुक्र और शनि एक की महादशा और दूसरे की अन्तर्दशा में विशेष प्रकार से फल देते हैं। जब शुक्र की महादशा हो तो शुक्र का पूर्ण फल शनि की अन्तर्दशा में होगा। शुक्र की महादशा में अपनी स्वयं की अन्तर्दशा में शनि का फल होगा। इसी प्रकार जब शनि की महादशा हो तो शनि अपना पूरा प्रभाव शुक्र की अन्तर्दशा में दिखाएगा। जिस समय शनि की महादशा में शनि की ही अन्तर्दशा होगी, उस समय शुक्र का फल होगा। यह विशेष झुकाव केवल शुक्र और शनि के अपनी दशा और अन्तर्दशा तक ही सीमित है।

(१०) (अ) जब केन्द्र के स्वामी किसी ग्रह की महादशा हो और उसमें किसी त्रिकोण का स्वामी ग्रह की अन्तर्दशा हो या (ब) किसी त्रिकोण के स्वामी ग्रह की महादशा हो और उसमें किसी केन्द्र के स्वामी की अन्तर्दशा हो तो यदि दशानाथ और अन्तर्दशा नाथ में 'सम्बन्ध' है (जो केन्द्र और त्रिकोण के स्वामी हैं) तो अत्यधिक शुभ फल होगा। इसके अतिरिक्त ऐसे ग्रह की महादशा में जब दूसरे ग्रहों की अन्तर्दशा भी आएगी उस समय भी अच्छा भाग्य और समृद्धि रहेगी (ज्योतिषशास्त्र के पराशादि सिद्धान्त के अनुसार केन्द्र और त्रिकोण के स्वामियों का आपस में सम्बन्ध राजयोगकारक होता है)।

(११) शनि की मारक शक्ति सब ग्रहों से अधिक होती है। इसका

तात्पर्य यह है कि यदि किसी मारकेश की महादशा हो तो उसे शनि की अन्तर्दशा आने पर मृत्यु हो सकती है। इसी प्रकार जब बुढ़ापे में शनि की महादशा हो तो किसी भी मारकेश की अन्तर्दशा में मृत्यु हो सकती है। इसका कारण यह है कि अपनी स्वयं की अन्तर्दशा में ग्रह अपना पूरा फल नहीं दिखाता।

(१२) शुभ ग्रह की अन्तर्दशा में 'मारक' ग्रह अपनी जबकि उसमें किसी शुभ ग्रह की अन्तर्दशा होती है (चाहे इस शुभ ग्रह का मारकेश से सम्बन्ध न भी हो)। मारक ग्रह अपनी महादशा में मृत्यु का कारक उस समय होगा जबकि उसमें किसी अशुभ ग्रह की अन्तर्दशा आएगी। दशानाथ और अन्तर्दशानाथ का आपस में कोई भी सम्बन्ध न हो।

(१३) अन्तर्दशानाथ का दशानाथ से ज्यादा प्रभाव होता है। अन्तर्दशानाथ के अनुरूप ही खराब या अच्छा फल उस समय होगा जब सूर्य अपने गोचर में अन्तर्दशानाथ जिन राशियों का स्वामी है उनमें से जाएगा। इसलिए मंगल की अन्तर्दशा में जब हमें देखना हो कि किस महीने में घटना होगी तो पञ्चाङ्ग में देखना चाहिए कि सूर्य मेष या वृश्चिक में (जो मंगल की राशियां हैं) से कब जाएगा। मंगल का प्रभाव इन दोनों सूर्य-मासों में अधिक होगा। अब मान लीजिए किं यह देखना हो कि अन्तर्दशानाथ का स्वामी बृहस्पति कब प्रभाव दिखाएगा तो उसके लिए पञ्चाङ्ग में देखिए कि सूर्य, धनु या मीन राशियों में कब जाएगा। इसी प्रकार जब अन्य ग्रहों की अन्तर्दशाएं हों तो उनकी राशि में गोचर का सूर्य जाने पर दशा का पूर्ण फल मिलेगा।

व्यावहारिक सिद्धान्त—अब हम कुछ ऐसे व्यावहारिक सिद्धान्त बतलाते हैं, जिनसे अन्तर्दशा की गणना नहीं करनी पड़े।

आयु	ग्रह
(१) जन्म से ४ वर्ष तक	चन्द्रमा का प्रभाव रहता है।
(२) ५ से १२ वर्ष तक	बुध का का प्रभाव रहता है।
(३) १३ से २१ वर्ष तक	शुक्र का प्रभाव रहता है।
(४) २२ से ४० वर्ष तक	सूर्य का प्रभाव रहता है।
(५) ४१ से ५५ वर्ष तक	मंगल का प्रभाव रहता है।
(६) ५६ से ६७ वर्ष तक	बृहस्पति का प्रभाव रहता है।
(७) ६८ वर्ष के बाद	शनि का प्रभाव रहता है।

मान लीजिए, आपके पास ३९ वर्षीय व्यक्ति सलाह के लिए आता है और उसकी जन्म-कुण्डली देखने पर सूर्य-पीड़ित है, परन्तु मंगल

बलवान। ऐसी दशा में आप उसको निश्चित रूप से कह सकते हैं कि उसकी कठिनाईयाँ ४० वर्ष तक दूर हो जाएंगी और ४१ वर्ष से ५५ वर्ष तक अत्यधिक अच्छा समय रहेगा। ये ग्रह दशाएं सब व्यक्तियों पर लागू होती है। जन्म-कुण्डली देखकर यदि ग्रह बलवान हों तो जिन वर्षों में उनका प्रभाव है वे अच्छे जाएंगे, परन्तु यदि ग्रह कमजोर हैं तो उन ग्रहों के वर्ष, जो ऊपर सारिणी में बताए गए हैं, अशुभ रहेंगे।

दूसरा सिद्धान्त—प्रत्येक ग्रह के अपने विशेष वर्ष होते हैं, जैसे सूर्य का २२वां, चन्द्रमा २४वां, मंगल का २८ वां, बुध का ३२वां, बृहस्पति का १६वां, शुक्र का २५वां, शनि का ३६वां, राहु का ४२वां और केतु का ४८वां।

मान लीजिए कि एक व्यक्ति आपके पास अपने २०वें वर्ष में आया है और उसका प्रश्न है कि उसे नौकरी कब मिलेगी? यदि आप देखें कि उसकी जन्म-कुण्डली में सूर्य सिंह राशि में दशम स्थान में बैठा है तो आप उसे कह सकते हैं कि २२वें वर्ष में उसे नौकरी मिलेगी, परन्तु यदि आप देखें कि सूर्य कमजोर है और पीड़ित भी तो उसका २२वां वर्ष खराब जाएगा।

दूसरा उदाहरण लीजिए। किसी कन्या की जन्म-कुण्डली में चन्द्रमा किसी अच्छे भाव का स्वामी हो और सातवें भाव में बैठा हो, बृहस्पति से दृष्ट भी हो (यदि वह कन्या २३ वर्ष तक अविवाहित है) तो आप यह पूर्ण रूप से कह सकते हैं कि कन्या का विवाह २४वें वर्ष में होगा। इसका कारण यह है कि २४वां वर्ष चन्द्रमा का है, चन्द्रमा सप्तम भाव (विवाह-स्थान) में बैठा है और बृहस्पति से दृष्ट होने से विवाह कराएगा।

इसके अतिरिक्त इन वर्षों का और भी लाभ उठाया जा सकता है। जैसे सूर्य नवें भाव का स्वामी हो और जन्म-कुण्डली में किसी भी शुभ स्थान में बैठा हो तो हम पूर्ण रूप से कह सकते हैं कि जातक का २२वां वर्ष अच्छा रहेगा और भाग्य में वृद्धि होगी।

अब मान लीजिए कि मकर लग्न वाले जातक की कुण्डली में चन्द्रमा किसी भी शुभ भाव में बलवान होकर बैठा हो तो सातवें भाव का स्वामी होने के कारण २४वें वर्ष में विवाह (अथवा साझेदारी में) कार्य करवाएं। विवाह और साझेदारी सातवें भाव से देखी जाती है।

भाव और वर्ष—अब एक और उपाय बताते हैं। प्रत्येक भाव का जीवन के विशेष वर्षों से सम्बन्ध है—

भाव	आयु
नवां भाव	१ से २४ तक
दसवां भाव	२५ से २६ तक
ग्यारहवां भाव	२७ से २८ तक
बारहवां भाव	२९ से ३० तक
पहला भाव	३१ से ३३ तक
दूसरा भाव	३४ से ३६ तक
तीसरा भाव	३७ से ३९ तक
चौथा भाव	४० से ४५ तक
पांचवा भाव	४६ से ५१ तक
छठा भाव भाव	५२ से ५७ तक
सातवां भाव	५८ से ६५ तक
आठवां भाव	६६ वर्ष से अन्तिम समय तक

आपके पास कोई व्यक्ति अपने ३८वें वर्ष में आया। जन्म-कुण्डली में आपने देखा कि उस व्यक्ति का तीसरा भाव कमजोर और पीड़ित है, परन्तु चौथे भाव का स्वामी चौथे भाव में ही बलवान और शुभ ग्रह दृष्ट हो तो हम जोर देकर कह सकते हैं कि जातक के कष्ट ३९वें वर्ष में समाप्त हो जाएंगे और ४०वें से ४५वें वर्ष तक का समय अच्छा व्यतीत होगा।

पिछले सैकड़ों वर्षों के अनुभव से यह निश्चित किया जा चुका है कि किसी भी ग्रह के दुष्प्रभाव को उस ग्रह का रत्न धारण करके कम किया जा सकता है । रत्न धारण करने से पहले उसे पहन कर तीन दिन तक परीक्षा करनी चाहिए। यदि अच्छा प्रभाव प्रतीत हो तो उसे अंगूठी में या लॉकेट में इस प्रकार जड़वाना चाहिए कि उसका नीचे का हिस्सा शरीर के चमड़े को स्पर्श करता रहे। मान लीजिए,परीक्षा के तीन दिनों में नीलम कोई दुष्प्रभाव दिखाता है तो उसे तुरन्त लौटा देना चाहिए और तब दूसरा नीलम धारण करें। ग्रहों के लिए जो धातुएं बताई गई हैं उन्हें धारण करने से भी कुछ हद तक ग्रहों की तीव्रता में अन्तर पड़ता है। यदि जन्म-कुण्डली में एक ग्रह बलवान हो तब उस ग्रह का रत्न धारण करने से उस ग्रह का अच्छा प्रभाव और भी बढ़ेगा। इसलिए रत्न धारण करना अच्छा है। (१) जन्म-कुण्डली में ग्रह-स्थिति से, (२) गोचर में जाते हुए ग्रह से, (३) दशा-अन्तर्दशा के आधार पर रत्नधारण अथवा ग्रहशान्ति का प्रयास करना चाहिए।

गोचरफल ज्ञान—बहुत-सी कुण्डलियों में केवल जन्म-चक्र रहता

है, न तो स्पष्ट ग्रह रहते हैं, न ही महादशा और अन्तर्दशा। ऐसी स्थिति में जन्म चक्र से ही फलादेश का ज्ञान करना होता है और वही बतलाना पड़ता है। यह नीचे बताया जाता है—

जिन कुण्डलियों में स्पष्ट ग्रह, दशा-अन्तर्दशा दी हुई होती है उनमें भी सम्यक् विचार के लिए गोचर का प्रयोग किया जाता है, क्योंकि बिना गोचर के विचार अधूरा रहता है। हाँ, यह अवश्य है कि दशा-अन्तर्दशा प्रधान है, गोचर गौण; वैसे यह विचारणीय है।

गोचर क्या है? ज्योतिष में गोचर किसी ग्रह का भचक्र की किसी राशि विशेष में से जाने का नाम गोचर है। 'गो' का मतलब है आकाश, जो जाता है। 'चर' का मतलब है, संचार। इसलिए दिनानुदिन आकाश में जो ग्रह जाते हैं, उन्हे 'गोचर' कहते हैं। जब जिस राशि में ग्रह जाता है तब उस राशि में गोचरवश ग्रह हुआ यह कहते हैं। जन्म-चक्र स्थिर है। इसमें ग्रह की स्थिति जैसी जन्म काल में है वैसी होती है, परन्तु ग्रह स्थिर नहीं है—चलते रहते हैं। इसलिए जब जहां पर जाते हैं वहां पर उनकी स्थिति कही जाती है। भचक्र में ये चलते रहते हैं और भचक्र को पूरा करने पर फिर उसी मार्ग में दुबारा जाते हैं। इसलिए जब हम गोचर विचार करते हैं तो जन्मकालीन ग्रह की स्थिति और ग्रह कहां जा रहा है, दोनों का ही विचार करते हैं। इसलिए गोचर में केवल यह विचार किया जाता है कि ग्रह कहां जा रहा है। इसका ज्ञान पंचांग से ही सम्भव है।अगर आपके पास पञ्चाङ्ग होगा, तो आप प्रत्येक ग्रह की स्थिति किस राशि, किस अंश आदि में है ज्ञात कर सकेंगे।

भारतीय ज्योतिषशास्त्र में गोचर का विचार साधारण रूप में जन्म राशि (अर्थात् चन्द्रमा जिस राशि में हो) से किया जाता है।

मान लिया कि किसी का चन्द्रमा कर्क में स्थित है तो उनकी कर्क राशि हुई जब कहेंगे कि शनि तीसरे में जा रहा है तो इसका तात्पर्य यह समझना चाहिए कि शनि कन्या में जा रहा है। कन्या का कर्क राशि से तीसरा स्थान हुआ। इसी प्रकार से प्रत्येक स्थान का विचार करना चाहिए।

अत: गोचर विचार के समय पहला, दूसरा, तीसरा भाव इत्यादि की गणना जातक की जन्म राशि से समझनी चाहिए।

हमारे यहाँ जन्म के समय चन्द्रमा जिस राशि में हो उसे जन्म राशि या राशि कहा जाता है। जब हम किसी ग्रह की जन्म के समय की स्थिति बताते हैं तो कहते हैं कि ग्रह तीसरे स्थान में या चौथे स्थान में है तो उस समय जन्म लग्न से भाव की गणना करते हैं, परन्तु जब गोचर का विचार

करना है तो ग्रह तीसरे स्थान में जा रहा है या चौथे स्थान में जा रहा है तो उस समय जन्म राशि से गणना करते हैं। जैसे गोचर का सूर्य, गोचर का चन्द्रमा या गोचर का मंगल इत्यादि। मान लीजिए, किसी व्यक्ति की वृश्चिक राशि है और जिस दिन चन्द्रमा गोचर से मिथुन राशि में जा रहा हो वह व्यक्ति ज्योतिषज्ञ से सलाह ले तो उस समय गोचर का चन्द्रमा अष्टम में हुआ, क्योंकि वृश्चिक से गणना करने पर मिथुन आठवीं राशि हुई। जिन पाठकों को ज्योतिष का प्रारम्भिक ज्ञान है उन्हें तो ये सब आता ही है, परन्तु नये पाठकों के शंका-समाधान के लिए ही यह सब यहां कहा गया है जिससे उन्हें समझने में आसानी हो।

सूर्य का गोचर—चन्द्र राशि से गोचर का सूर्य (अ) तीसरे, छठे, दसवें और ग्यारहवें में शुभ होता है। (ब) पहले, दूसरे, पांचवें, सातवें और नवें में अशुभ फल देता है। (स) चौथे, आठवें और बारहवें में अत्यन्त खराब फल देता है।

सूर्य का गोचर फल उस समय नहीं होता है जब यदि कोई अन्य ग्रह (शनि के अलावा) किसी वेध स्थान में होता है। पुराणों में सूर्य को शनि ग्रह का पिता कहा गया है। इसलिए यदि और कोई ग्रह वेध स्थान में हो तो सूर्य के प्रभाव में अवरोध होता है, परन्तु शनि यह अवरोध उत्पन्न करने में असमर्थ है—पुत्र होने के कारण।

इन अवरोध स्थानों को ही संस्कृत भाषा में वेध कहा गया है।

वेध

३	६	१०	११
९	१२	४	५

(अ) तीसरा और नवां, (ब) छठा और बारहवां, (स) दसवां और चौथा और (द) ग्यारहवां और पांचवां—ये दो-दो के चार जोड़े हैं। यदि जिस समय सूर्य राशि से तीसरे स्थान में जा रहा हो और·उसी समय कोई अन्य ग्रह (शनि के अलावा) नवें स्थान में जा रहा हो तो सूर्य का तीसरे स्थान में जाने का शुभ फल नहीं होगा। इसी प्रकार यदि सूर्य नवम में जा रहा हो और उसी समय कोई अन्य ग्रह शनि के अलावा चन्द्रमा से तीसरे स्थान में जा रहा हो तो सूर्य के अशुभ फल को नहीं होने देता है। इसी प्रकार अन्य स्थानों का वेध विचार करना चाहिए।

चन्द्रमा का गोचर—चन्द्रमा एक चक्र (बारह राशियों का भ्रमण) करीब २७ दिन और कुछ घण्टों में पूरा करता है, अर्थात् एक राशि में उसे

साधारण तौर पर २ दिन और ६ घण्टे लगते हैं। जिस समय चन्द्रमा के गोचर का विचार करना हो तो हमें यह देखना है कि वह किस राशि में जा रहा है और जन्म राशि से किस स्थान में जा रहा है।

(अ) गोचर का चन्द्रमा जब राशि से पहले, दूसरे,तीसरे, पांचवें, छठे, सातवें, नवें, दसवें और ग्यारहवें स्थान में जाता है तो अच्छा फल करता है। (ब) जब गोचर का चन्द्रमा राशि से चौथे, आठवें और बारहवें स्थान जाता है तब खराब फल करता है।

वेध

१	३	६	७	१०	११
५	९	१२	२	४	८

जन्म राशि से जब गोचर का चन्द्रमा पहले स्थान में हो तो उसका असर उस समय नहीं होगा जबकि कोई दूसरा ग्रह (बुध के अलावा) उसी समय में पांचवें स्थान में जा रहा हो। पुराणों में यह कहा गया है कि चन्द्र का सम्बन्ध बृहस्पति की पत्नी तारा से था और इससे बुध की उत्पत्ति हुई। इसलिए हमने कहा कि कोई दूसरा ग्रह चन्द्रमा के प्रभाव को रोक देगा, परन्तु बुध इस प्रभाव को रोकने में असमर्थ है—पुत्र, पिता के प्रभाव को दूर नहीं कर सकता। पीछे दी गई सारिणी से यह स्पष्ट है कि (अ) १ और ५ (ब) ३ और ९ (स) ६ और १२ (द) ७ और २ (य) १० और ४ तथा (र) ११ और ८वें स्थानों में परस्पर वेध है। उदाहरण के लिए गोचर का चन्द्रमा जब आठवें स्थान में जा रहा हो तो उसका कोई भी खराब प्रभाव नहीं होगा। यदि उसी समय ग्यारहवें स्थान पर से (बुध के अलावा) कोई दूसरा ग्रह जा रहा हो। इसी प्रकार यदि कोई दूसरा ग्रह (बुध के अलावा) अष्टम में जा रहा हो तो ग्यारहवें स्थान में जाते हुए चन्द्रमा का शुभ प्रभाव भी नहीं हो पाएगा।

मंगल का गोचर—चन्द्र राशि से गिनने पर मंगल का गोचर (अ) तीसरे, छठे, दसवें और ग्यारहवें स्थान में अच्छा फल करता है। (ब) पहले, दूसरे, पांचवें, सातवें और नवें में अशुभ फल करता है। (स) चौथे, आठवें और बारहवें में अत्याधिक खराब फल करता है।

वेध

३	६	११
१२	९	५

(अ) जब मंगल तीसरे स्थान में जा रहा हो और दूसरा कोई ग्रह उसी समय बारहवें स्थान पर जाता हो, (ब) जब मंगल बारहवें में हो और

दूसरा कोई ग्रह तीसरे में, (स) मंगल जब छठे में हो और कोई अन्य ग्रह नवें में हो, (द) मंगल जब नवें में हो और कोई अन्य ग्रह छठे स्थान में हो, (य) मंगल जब ग्यारहवें में हो तथा कोई ग्रह पंचम स्थान में या (र) मंगल स्वयं चन्द्र राशि से पांचवें स्थान में जा रहा हो और दूसरा ग्रह ग्यारहवें स्थान में हो तो मंगल का शुभ अथवा अशुभ फल रुक जाता है (इन सब स्थानों की गणना जन्म राशि से ही करनी चाहिए)।

बुध का गोचर—जन्म राशि के चन्द्रमा से बुध का गोचर (अ) दूसरे, छठे, दसवें और ग्यारहवें स्थान में शुभ फल करता है। (ब) पहले, तीसरे, पांचवें, सातवें और नवें स्थानों में खराब फल करता है। (स) चौथे, आठवें और बारहवें स्थानों में अत्याधिक खराब फल करता है।

वेध

२	४	६	८	१०	११
५	३	९	१	८	१२

उदाहरण के लिए जिस समय बुध जन्म राशि से दूसरे स्थान में जा रहा हो और उसी समय कोई अन्य ग्रह (चन्द्रमा के अलवा) पांचवें स्थान में जा रहा हो तो बुध के गोचर का प्रभाव बिलकुल भी नहीं होगा। इसी प्रकार यदि बुध पाचवें स्थान में जाता हो तो दूसरा कोई ग्रह (चन्द्रमा के अतिरिक्त) दूसरे स्थान में जाते हुए बुध के प्रभाव को नहीं होने देगा, क्योंकि चन्द्रमा और बुध का सम्बन्ध पिता और पुत्र का है, इसलिए वे एक-दूसरे के प्रभाव को नहीं रोकते हैं (गोचर का विचार हमेशा ही चन्द्रमा जिस राशि में हो, उससे करना चाहिए)।

बृहस्पति का गोचर—बृहस्पति जब जन्म के चन्द्रमा से गोचर में (अ) दूसरे, पांचवें, सातवें, नवें और ग्यारहवें स्थान में जाता है तब बहुत अच्छा फल करता है। (ब) पहले, तीसरे, छठे और दसवें स्थानों में अशुभ होता है। (स) चौथे, आठवें और बारहवें स्थानों में अत्यधिक खराब फल करता है।

वेध

२	५	७	९	११
१२	४	३	१०	८

इसलिए बृहस्पति जब गोचर में जन्म के चन्द्रमा से दूसरे स्थान में जा रहा हो तो उसका अच्छा फल नहीं होगा। यदि उसी समय कोई अन्य ग्रह (सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, शुक्र, शनि, राहु और केतु) जन्म राशि में

बारहवें स्थान का अशुभ फल भी नहीं होगा। यदि उसी समय दूसरे भाव में कोई अन्य ग्रह जा रहा हो (यहां यह देखना चाहिए कि बृहस्पति एक राशि में सामान्य तौर पर एक वर्ष रहता है जबकि शनि और राहु के अतिरिक्त अन्य ग्रह थोड़े समय में ही एक राशि में अपना भ्रमण पूरा कर लेते हैं। वे बृहस्पति के शुभ अथवा अशुभ प्रभावों को सिर्फ उसी समय तक ही रोक पाएंगे जब तक उसके वेध स्थान में हों)।

शुक्र का गोचर—शुक्र जन्म के चन्द्रमा से गोचर में—

(अ) पहले, दूसरे, तीसरे, नवें और ग्यारहवें में शुभ होता है।

(ब) पांचवें, छठे, सातवें और दसवें में खराब होता है।

(स) चौथे, आठवें और बारहवें में अत्यधिक खराबं फल करता है।

वेध

१	२	३	४	५	८	९	११	१२
८	७	१	१०	९	५	११	६	३

पहला-आठवां, दूसरा-सातवां, तीसरा-पहला इत्यादि परस्पर वेध स्थान हैं। इसलिए शुक्र जब जन्म राशि से पहले स्थान में जा रहा हो उसी समय कोई अन्य ग्रह यदि आठवें या तीसरे स्थान में हो तो शुक्र के प्रभाव को रोक देते हैं। इसी प्रकार गोचर में अन्य वेध स्थानों का ध्यान रखना चाहिए।

शनि का गोचर—जन्म राशि से शनि का गोचर—

(अ) तीसरे, छठे, दसवे और ग्यारहवें स्थानों में शुभ समझना।

(ब) पहले, दूसरे, पांचवें, सातवें और नवें स्थनों में खराब फल देता है।

(स) चौथे, आठवें और बारहवें भावों में अत्यधिक खराब फल देता है।

वेध

३	६	११
१२	९	५

अर्थात् शनि जब गोचर में जन्म के चन्द्रमा से तीसरे स्थान में जा रहा हो, उसी समय सूर्य के अलावा यदि कोई अन्य ग्रह जन्म राशि से बारहवें स्थान में जा रहा हो तो शनि के प्रभाव को रोक देता है। इसी प्रकार शनि का बारहवें स्थान में गोचर का प्रभाव तीसरे स्थान में (सूर्य के अलावा) जाता हुआ ग्रह नहीं होने देता। इसी तरह (अ) छठें-नवें, (ब) ग्यारहवें-

पांचवें को भी परस्पर वेध स्थान समझना। सूर्य और शनि का पिता-पुत्र का सम्बन्ध होने के कारण एक-दूसरे के प्रभाव को नहीं रोकते हैं।

यहां हम यह भी बताते हैं कि साढ़े साती (अर्थात् शनि के साढ़े सात वर्ष) सामान्य रूप से अच्छा फल नहीं करते हैं। शनि भचक्र का भ्रमण तीस वर्ष में करता है और एक राशि के भ्रमण में उसे लगभग २ वर्ष ६ मास की अवधि मिलती है। जन्म राशि से बारहवें स्थान में जब शनि आता है तो साढ़े साती प्रारम्भ होती है—ये पहले ढाई वर्ष हुए। जब जन्म राशि से दूसरे स्थान में शनि जाता है तब तीसरे ढाई वर्ष हुए। इन्हीं तीनों स्थानों (बारहवें, पहले, दूसरे) के भ्रमण काल को मिलाकर साढ़े सात वर्ष अर्थात् साढ़े साती कहते हैं।

जन्म राशि से चौथे और आठवें स्थानों में शनि का अत्यधिक खराब फल बताया है। शनि जब इन दोनों स्थानों से जाता है तो प्रत्येक स्थान में ढाई-ढाई वर्ष रहता है। इसे ही शनि की ढइया कहते हैं।

राहु और केतु के गोचर—राहु और केतु के गोचर का फल भी वही होता है जो शनि के गोचर का, परन्तु सूर्य शनि के फल को वेध स्थानों में नहीं रोकता जबकि राहु और केतु के फल को सूर्य (और बाकी अन्य ग्रह भी) रोक सकने में समर्थ हैं। राहु का केतु से और केतु का राहु से वेध नहीं होता है।

गोचर का फल—ऊपर सिर्फ यह बताया गया है कि किन-किन स्थानों में गोचर का शुभ फल होता है और किन-किन स्थानों में खराब फल होता है, परन्तु जीवन में किस प्रकार शुभ फल या अशुभ फल होगा इसकी जानकारी के लिए कुछ सिद्धान्त नीचे दिए जाते हैं।

हमारे विचार से पाठक विषय को सहज व सरल बनाने के लिए वेध स्थान का विचार छोड़ सकते हैं, क्योंकि प्राचीन ग्रन्थकारों में भी इसके बारे में मतभेद है अर्थात् एक ग्रह किसी दूसरे ग्रह के प्रभाव को रोक सकता है अथवा नहीं।

पाठक यदि निम्नलिखित बातों का ध्यान रखेंगे तो उनका फलादेश अधिक ठीक आएगा :

(१) ग्रह जब जन्म राशि से अथवा लग्न से बारहवें स्थान में जाते हैं तो अत्यधिक व्यय कराते हैं, खास तौर से उस समय जबकि दो या तीन ग्रह बारहवें स्थान में जाते हों। क्रूर ग्रह विशेष रूप से अधिक व्यय कराते हैं। शुभ ग्रह अच्छे कार्यों में—जैसे विवाह, धर्म इत्यादि में व्यय कराते हैं।

(२) सूर्य, बुध और शुक्र बारह राशियों का भ्रमण एक वर्ष में पूरा कर लेते हैं। ये ग्रह प्राय: एक राशि में एक मास तक रहते हैं। पाठकों के लिए अच्छा रहेगा कि वे अपने बीते गए वर्षों में देखें कि कौन-कौन से महीने उनके साधारण रूप से अच्छे जाते हैं। हमारे बताने का उद्देश्य यहां यह है कि सूर्य-मास और कैलेण्डर के मास एक नहीं होते।

सूर्य का आरम्भ उस समय माना जाता है, जबकि सूर्य एक राशि से दूसरी राशि में जाए और जब सूर्य उस राशि से निकलता है तो सूर्य-मास पूरा होता है। प्रत्येक वर्ष के पञ्चाङ्ग से इस बात का पता लग जाएगा कि कौन-सा ग्रह कब तक किन-किन राशियों में रहेगा।

(३) (अ) यदि जन्म के समय कोई ग्रह राशि में बलवान हो (अपने उच्च, मित्र अथवा अपनी ही राशि में) और किसी अच्छे स्थान में भी बैठा हो—विशेषरूप से (लग्न अथवा चन्द्रमा से) तीसरे, छठे, दसवें और ग्यारहवें भाव में—तो गोचर में यदि वह किन्हीं अशुभ भावों में जाएगा तो भी उसका अधिक खराब फल नहीं होगा।

(ब) यही फल उस समय भी समझना जबकि ग्रह (जिसके गोचर का विचार किया जा रहा है) अच्छे भावों का स्वामी हो या जन्म-कुण्डली में योगकारक हो।

(४) यदि कोई ग्रह राशि और भाव में भी बलवान हो, विशेष तौर पर तीसरे, छठे, दसवें और ग्यारहवें स्थान में हो (जन्म लग्न अथवा चन्द्रमा से) तो जब गोचर में शुभ स्थानों से जाता है तो अत्यधिक शुभ फल करता है।

(५) यदि कोई ग्रह कमजोर हो (राशि और नवांश में नीच का हो या किसी शत्रु, अति शत्रु की राशि और नवांश में हो) और किसी क्रूर ग्रह के साथ बैठा हो या दृष्ट हो और उस पर किसी शुभ ग्रह की न तो दृष्टि हो, न ही कोई शुभ ग्रह उसके साथ बैठा हो अथवा खराब ग्रहों का स्वामी हो और विशेष तौर से जन्म राशि और लग्न दोनों ही स्थानों से खराब भावों का स्वामी हो अस्त हो तो गोचर में वह शुभ स्थानों में जाता हुआ भी कोई खास अच्छा फल नहीं करेगा।

(६) (अ) गोचर में यदि किसी ग्रह का किसी क्रूर ग्रह से एक ही राशि में योग हो या उस पर क्रूर ग्रह की दृष्टि पड़े, तो गोचर में जाते हुए ग्रह का अच्छा फल कम हो जाता है और खराब फल बढ़ जाता है।

(ब) यदि कोई ग्रह गोचर में अस्त हो या अपनी नीच राशि या नीच नवांश में हो तो उसका भी इसी प्रकार फल होता है।

(७) गोचर में जब किसी ग्रह का किसी शुभ ग्रह से योग होता है अथवा उस पर किसी शुभ ग्रह की दृष्टि पड़ती है तो उस गोचर में जाते हुए ग्रह का अच्छा फल बढ़ जाता है और खराब फल कम हो जाता है।

उदाहरण के लिए मंगल तीसरे स्थान में जा रहा हो और उसी समय शुक्र अथवा बृहस्पति भी वहां जाएं तो मंगल के शुभ फल को बढ़ायेंगे। इसके विपरीत मंगल यदि नवम स्थान से जा रहा हो और उस पर बृहस्पति की दृष्टि पड़े तो मंगल का अशुभ फल कम हो जाएगा।

(ब) जब कोई ग्रह अपनी उच्च राशि या अपनी स्वयं की राशि अथवा अपने नवांश या उच्च नवांश में से जाता है तो भी उसका अच्छा फल बढ़ता है और खराब फल कम हो जाता है।

उदाहरण के लिए शनि के साढ़े सात वर्ष (साढ़े साती) खराब माने गए हैं, परन्तु कन्या राशि वाले के लिए अन्तिम ढाई वर्षों में शनि तुला में से आएगा। तुला राशि शनि का उच्च स्थान है तो वहां पर शनि इतनी पीड़ा नहीं देगा।

(८) शुभ ग्रह गोचर में जब वक्री होते हैं तो अधिक शुभ फल करते हैं। क्रूर ग्रहों का वक्री होना अत्यधिक अशुभ फल करता है। जन्म के समय जो ग्रह वक्री हो, वह जब गोचर में भी वक्री होता है तो पूर्ण फल देता है।

(९) सबसे अधिक प्रभाव शुभ अथवा अशुभ उस समय प्रतीत होता है जिस समय दो या अधिक ग्रह गोचर में वक्री हो जाएं (शुभ ग्रह अथवा क्रूर ग्रह)।

(१०) संक्षेप में गोचर में जाते हुए ग्रह का न सिर्फ गोचर में जाते समय का अपितु जन्म के समय कैसा प्रभाव पड़ा है—इन दोनों ही बातों का विचार करके फल निकालना चाहिए अर्थात् ग्रह अच्छा फल देगा अथवा खराब फल देगा। मान लीजिए, किसी की जन्म-कुण्डली में सन्तान स्थान (पांचवें भाव में) में क्रूर ग्रह हो, तो सन्तान नहीं होगी या होकर नष्ट हो जाएगी, इन बातों को बतलाते हैं तो गोचर में पञ्चम स्थान में जाता हुआ बृहस्पति भी सन्तान देने में समर्थ नहीं होगा।

(११) क्रूर ग्रह अशुभ स्थानों में से जाते हुए ज्यादा खराब फल दिखाएंगे, यदि जिस राशि में से वे जा रहे हैं उस राशि में जन्म के समय कोई ग्रह बैठा हो। विशेष तौर से उस समय जबकि गोचर के ग्रह की अपनी चाल भी अति धीमी हो।

ग्रहों की औसत चाल—सूर्य की चाल में कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता। चन्द्रमा करीब १३°—२०' प्रतिदिन की चाल से चलता है। बुध और शुक्र भचक्र का एक वर्ष में भ्रमण पूरा कर लेते हैं इसलिए उनकी चाल जब ५९'—८° प्रतिदिन से अधिक हो तो उन्हें शीघ्रगामी समझना, मंगल की प्रतिदिन की ३३'—२८" की चाल समझना, बृहस्पति की प्रतिदिन ५' और शनि की २'।

राहु और केतु साधारण तौर से एक ही चाल से और वक्र ही चलते हैं;

(१२) शुभ ग्रह शुभ स्थानों में जाते हुए अच्छा फल दिखाते हैं— यदि वहां पर कोई ग्रह जन्म के समय भी बैठा हो तो और भी अच्छा फल देता है। मान लीजिये बृहस्पति चौथे स्थान में जा रहा है जहाँ सूर्य भी जन्म के समय में है तो जिस समय बृहस्पति सूर्य पर से जायेगा तो सूर्य अच्छे फल देगा जैसे उच्च स्थान, नये मित्र, नया कार्य, पिता को या स्वयं को धन इत्यादि।

यदि गोचर में जाता हुआ ग्रह अपनी सामान्य चाल से धीमा जा रहा हो तो और भी अच्छा फल करेगा।

(१३) यदि जन्म के समय में किसी भाव पर शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो गोचर में क्रूर ग्रह भी उस भाव में जाते हुए इतना खराब फल नहीं दिखाएंगे और शुभ ग्रह विशेष रूप से अच्छा फल दिखलाएंगे।

(१४) जन्म के समय लग्न में बैठा हुआ ग्रह गोचर में जिस भाव में जाएगा उस भाव का फल देगा (यहां लग्न से भाव का विचार करना)।

हमारा अपना अनुभव यह है कि लग्न में बैठा हुआ ग्रह दूसरे-तीसरे इत्यादि भावों में तो वृद्धि करता है, परन्तु जब गोचर में लग्न में जाएगा तो खराब असर करेगा।

(१५) जो अच्छा या खराब फल ग्रह जन्म-कुण्डली में बताता है वह फल उस समय होगा जबकि ग्रह लग्न में से जा रहा हो।

(१६) सूर्य और मंगल गोचर में राशि के ०° से १०° तक विशेष फल दिखाते हैं अर्थात् इनका फल राशि में प्रवेश करने के साथ ही हो जाता है, बृहस्पति और शुक्र अपना अधिक प्रभाव राशि के मध्य में (१०° से २०° तक) और चन्द्रमा और शनि राशि के अन्तिम १०° में अपना प्रभाव दिखलाते हैं अर्थात् २०° से ३०° तक।

(१७) ग्रह गोचर में किस प्रकार का अच्छा या खराब फल देगा यह

इस बात पर निर्भर करता है कि वह ग्रह जन्म-कुण्डली में—

(अ) किन भावों का स्वामी है।

(ब) किस स्थान में बैठा हुआ है।

(स) किस वस्तु का कारक है।

(द) गोचर में किस भाव में जा रहा है। यहां भाव का विचार जन्म राशि से, जन्म लग्न से तथा अपने स्वयं के स्थान से करना चाहिए। भाव और ग्रह के फल के लिए पहले ही चर्चा की जा चुकी है। इस पुस्तक में जन्म-कुण्डली का फलादेश करने के लिए काफी सिद्धान्त प्रस्तुत किए हैं। जीवन के विभिन्न पहलुओं का विचार और किस समय किस भाव का फल होगा (महादशा और अन्तर्दशा के अनुसार तथा ग्रहों के गोचर से)। पाठकों से हमारा निवेदन है कि अपने और अपने मित्रों की जन्म-कुण्डली का विचार कर अनुभव प्राप्त करें। कई बार ग्रहों का प्रभाव परस्पर विरोधाभास प्रतीत होता है परन्तु अनुभव से ही निचोड़ निकालना चांहिए। चाहे ज्योतिष हो या कोई और विद्या, केवल सिद्धान्त से ही ज्ञान पूर्ण नहीं होता। बार-बार चिन्तन-मनन और अनुभव करने से ही पूर्णता प्राप्त होती है।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का विंशम पुष्प रूप 'ग्रह फल प्राप्ति फल' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।२०।।

२१

अष्टक वर्ग आदि विवेचन

अष्टक वर्ग की प्रशंसा—जन्म कुण्डली आदि द्वारा फलों की सत्यता को परखने और अल्प परिश्रम से तात्कालिक ग्रहस्थिति से मनुष्यों के सुख-दु:ख और आयु का ज्ञान प्रस्तुत करने में सक्षम अष्टक वर्ग का यहाँ विवेचन किया जा रहा है—

इस अष्टक वर्ग से मनुष्यों के सुख, दु:ख आयुनिर्णय, तथा पूर्व में कथित फलों का विरोध नहीं है।

लग्न से व्यय तक द्वादशभाव शुभग्रह के युत और दृष्ट होने पर अपनी-अपनी संज्ञा के अनुरूप (शरीर, धन इत्यादि) शुभफल तभी देतें हैं, जब वे शुभग्रह उच्चग्रह स्वराशिस्थ आदि ग्रह से युत रहते हैं। यदि नीचादि अशुभ ग्रह से युक्त रहते है तो शुभ फल नहीं देते।

इसी तरह पापग्रह से दृष्ट और युक्त भाव अपने संज्ञानुरूप अशुभ फल तभी देते हैं जब वे पापग्रह-नीचादि ग्रह से युत रहते हैं। उच्च-स्वराशि स्थित ग्रह से युत हो तो अशुभ फल नहीं देते। पूर्वाचार्यों के मतानुसार ही अब तक सब कुछ कहा है। वैसे आयुर्दाय, सुख और दु:ख का विचार इस शास्त्र का प्रयोजन है; परन्तु वसिष्ठ या बृहस्पति भी इसका निश्चय नहीं कर सकते, तो फिर इस कलियुग में हमारे जैसे साधारण मानव क्या कर सकते हैं।

जिस प्रकार लग्न व चन्द्र से ग्रहों के द्वादशभावजन्य शुभाशुभ फल सूर्यादि ग्रहों द्वारा होते हैं। उसी प्रकार अष्टक वर्ग में सूर्यादि सातों ग्रह व लग्न इन आठों के क्रमश: अशुभस्थान को बिन्दु से और शुभस्थान को रेखा से अभिव्यक्त करते हुए उसको बनाने की विधि को बतलाते हैं।

सूर्य से १-२-८-३-१२ स्थानों में पाँच ग्रह सप्तम तथा चतुर्थ में ४ ग्रह, षष्ठ तथा नवम में ३ ग्रह, पञ्चम में ६ ग्रह, दशम में २ और एकादश स्थान में १ ग्रह बिन्दुप्रद होते हैं।

सूर्य के बिन्दु(अशुभ)प्रद ग्रह स्थान—

अष्टकवर्ग में सूर्य के १,२ और ८ में लग्न-चन्द्र-गुरु-शुक्र व बुध ये पाँच ग्रह, १२ में सूर्य-भौम-शनि-चन्द्र और गुरु ये पाँच ग्रह, ४ में बुध-चन्द्र-शुक्र-गुरु ये चार ग्रह, ९ में लग्न-चन्द्र-शुक्र ये तीन ग्रह, ६ में रवि-शनि-भौम ये ३ ग्रह, ७ में लग्न-बुध-गुरु-चन्द्र ये चार ग्रह, ११ में केवल

शुक्र एक ग्रह, ३ स्थान में रवि-शनि-शुक्र-गुरु-भौम ये पाँच ग्रह, १० में गुरु-शुक्र ये दो ग्रह तथा ५ में सूर्य-शनि-चन्द्र-लग्न-भौम व शुक्र ये छै ग्रह बिन्दुप्रद होते हैं।

सूर्य के बिन्दु(अशुभ)प्रद ग्रहस्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	बिन्दु सं.
१		०		०	०	०		०	५
२		०		०	०	०		०	५
३	०		०		०	०	०		५
४		०		०	०	०			४
५	०	०	०			०	०	०	६
६	०		०				०		३
७		०		०	०			०	४
८		०		०	०	०		०	५
९		०				०		०	३
१०					०	०			२
११						०			१
१२	०	०	०		०		०		५

इस प्रकार सूर्याष्टक में ३-५-६-१२ इन स्थानों में करण (बिन्दु) पड़ते हैं इसलिये ये चार स्थान अशुभप्रद होते हैं अर्थात जन्मकालिक सूर्यस्थान से इन स्थानों में जब-जब सूर्य जायेगा तब-तब अशुभ फल होगा। तथा शेष स्थानों में (१-२-४-७, ८-९-१०-११ इनमें) शुभ फल होगा। इसी तरह भौम और शनि से भी इन्हीं (३-५-६-१२) स्थानों में अशुभ और शुभ समझना चाहिए। अन्य ग्रहों से भी बिन्दु देखकर शुभ-अशुभ स्थान का परिज्ञान करें।

चन्द्र के बिन्दु(अशुभ)प्रद ग्रह स्थान—

चन्द्राष्टक वर्ग के ९-२ स्थानों में छै ग्रह, ४-८-१ में पाँच ग्रह, १०-३ में एक ग्रह, ५ में चार ग्रह, ६-७ में तीन ग्रह, १२ में आठ ग्रह (सब) करणप्रद होते है तथा ११ भाव में एक भी ग्रह करणप्रद नहीं होता।

प्रथमस्थान में लग्न-सूय-भौम-शनि-शुक्र ये ५ ग्रह, द्वितीय में लग्न-बुध-सूय-चन्द्र-शनि-शुक्र ये ६ ग्रह, तृतीय में गुरु, चतुर्थ में सूर्य-शनि-चन्द्र-लग्न व भौम ये ५ ग्रह, पञ्चम में लग्न-चन्द्र-गुरु-सूर्य ये ४ ग्रह, षष्ठ में शुक्र-बुध-गुरु ये ३ ग्रह, सप्तम में भौम-लग्न-शनि ये ३ ग्रह, अष्टम में मङ्गल-लग्न-शनि-शुक्र और चन्द्रमा ये ५ ग्रह, नवम में लग्न-सूय-मङ्गल-शनि-बुध-गुरु ये ६ ग्रह, दशम में मात्र शनि एकादश में कोई नहीं और द्वादश में सभी ग्रह बिन्दुप्रद होते हैं।

चन्द्र के बिन्दु(अशुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१	०		०			०	०	०	५
२	०	०		०		०	०	०	६
३					०				१
४	०	०	०					०	४
५	०	०			०			०	४
६				०	०	०			३
७			०				०	०	३
८		०	०			०	०	०	५
९	०		०	०	०		०	०	६
१०							०		१
११									×
१२	०	०	०	०	०	०	०	०	८

चक्र से यह स्पष्ट है कि जन्म समय में सूर्य जहाँ रहे वहाँ से १-२-४-५-९-१२ इन स्थानों में जब-जब चन्द्र आयेगा तब-तब अशुभ और शेष में शुभ-फल देगा इसी तरह लग्न से १-२-४-५-७-८-९-१२ इन स्थानों में जब चन्द्र जायेगा तब गोचरफल अशुभ होगा शेष स्थानों (३-६-१०-११) में शुभ होगा।

भौम के बिन्दु(अशुभ)प्रद ग्रह स्थान—

भौमाष्टक वर्ग में १२-४-५-७ स्थानों में छै ग्रह, २-९ में सात ग्रह, में पाँच ग्रह, ३ में चार ग्रह, १० में तीन ग्रह, षष्ठस्थान में दो ग्रह और एकादश में कोई भी ग्रह बिन्दुप्रद नहीं होता।

भौम के बिन्दु(अशुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१	०	०		०	०	०			५
२	०	०		०	०	०	०	०	७
३			०		०	०	०		४
४	०	०		०	०	०		०	६
५		०	०		०	०	०	०	६
६			०				०		२
७	०	०		०	०	०		०	६
८	०	०		०	०			०	५
९	०	०	०	०	०	०		०	७
१०		०		०		०			३
११									×
१२	०	०	०	०			०	०	६

प्रथम में रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र ये ५ ग्रह, द्वितीय में लग्न-शनि और पूर्वोक्त पाँच (रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र) ये ७ ग्रह, तृतीय में शुक्र-मङ्गल-गुरु-शनि ये ४ ग्रह, चतुर्थ में नवम भावोक्त ग्रहों में मंगल को छोड़कर सब अर्थात् रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र-लग्न ये ६, पञ्चम में चन्द्र-मङ्गल-गुरु-शुक्र-लग्न–गुरु ये ६ ग्रह, षष्ठ में मङ्गल-शनि ये २ ग्रह, सप्तम में बुध-चन्द्र-रवि-शुक्र-लग्न-गुरु ये ६ ग्रह, अष्टम में सप्तम स्थानोक्त ग्रहों में शुक्र को छोड़ शेष सब, अर्थात् बुध-चन्द्र-रवि-लग्न-गुरु ये ५, नवम में शनि छोड़ शेष सूर्य-चन्द्र-मङ्गल-बुध-गुरु-शुक्र-लग्न ये ७, दशम में शुक्र-चन्द्र-बुध ये ३, एकादश में एक भी नहीं तथा द्वादश में सूर्य-शनि-बुध-चन्द्र-लग्न-भौम ये ६ बिन्दु(अशुभ)प्रद होते हैं।

बुध के बिन्दु(अशुभ)प्रद ग्रह स्थान—

बुधाष्टकवर्ग में १, २, ४, १०, ६, ९ इन भावों में ३ ग्रह, अष्टम में २, तृतीय और सप्तम में ६, एकादश में कोई नहीं तथा पञ्चम और द्वादश में ५ ग्रह बिन्दुप्रद होते हैं। अर्थात् बुध के प्रथम स्थान में रवि-चन्द्र-गुरु ये ३, द्वितीय में गुरु-सूय-बुध ये ३, तृतीय में लग्न-रवि-मङ्गल-शनि-चन्द्र-गुरु ये ६, चतुर्थ में बुध-रवि-गुरु ये ३, पञ्चम में गुरु-मङ्गल-चन्द्र-शनि-

लग्न ये ५, षष्ठ में शुक्र-शनि-मङ्गल ये ३, सप्तम में बुध-चन्द्र-लग्न-रवि-शुक्र-गुरु ये ६, अष्टम में बुध-रवि ये २, नवम में गुरु-चन्द्र-लग्न ये ३, दशम में रवि-गुरु-शुक्र ये ३, एकादश में कोई भी नहीं और द्वादश स्थान में लग्न-चन्द्र-मङ्गल-शनि-शुक्र ये ५ बिन्दु(अशुभ)प्रद होते हैं।

बुध के बिन्दु(अशुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम.	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१	०	०			०				३
२	०			०	०				३
३	०	०	०		०		०	०	६
४	०			०	०				३
५		०	०		०		०	०	५
६			०			०	०		३
७	०	०		०	०	०		०	६
८	०			०					२
९		०			०			०	३
१०	०				०	०			३
११									×
१२		०	०			०	०	०	५

गुरु के बिन्दु(अशुभ)प्रद ग्रह स्थान—

गुरु के अष्टकवर्ग में द्वितीय और एकादश स्थान में १ ग्रह, दशम में २, द्वादश में ७, षष्ठ में ४, अष्टम-तृतीय में ५, शेष स्थान में तीन ग्रह बिन्दुप्रद होते हैं।

गुरु से प्रथम में शुक्र-चन्द्र-शनि ये ३, द्वितीय, एकादश में केवल शनि, तृतीय स्थान में लग्न-भौम-चन्द्र-बुध-शुक्र ये ५, पञ्चम में रवि-गुरु-मङ्गल ये ३, चतुर्थ में शुक्र-शनि-चन्द्र ये ३, सप्तम में बुध-शुक्र-शनि ये ३, षष्ठ में गुरु-मङ्गल-सूर्य-चन्द्र ये ४, द्वादश में शनि को छोड़कर सब, दशम में चन्द्र-शनि ये २, नवम में शनि-मङ्गल-गुरु ये ३ और अष्टम में लग्न-शनि-शुक्र-चन्द्र-बुध ये ५ ग्रह बिन्दु (अशुभ)प्रद होते हैं।

गुरु के बिन्दु(अशुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१		०				०	०		३
२							०		१
३		०	०	०		०		०	५
४		०				०	०		३
५	०		०		०				३
६	०	०	०		०				४
७				०		०	०		३
८		०		०		०	०	०	५
९			०		०		०		३
१०		०					०		२
११							०		१
१२	०	०	०	०	०	०		०	७

शुक्र के बिन्दु(अशुभ)प्रद ग्रह स्थान—

शुक्रांष्टकवर्ग में पञ्चम-अष्टम-तृतीय में २ ग्रह, प्रथम-द्वितीय-द्वादश-दशम में ५, सप्तम में ८, षष्ठ में ६, नवम में १, चतुर्थ में ३, एकादश में एक भी बिन्दुप्रद नहीं होते हैं।

शुक्र के बिन्दु(अशुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१	०		०	०	०		०		५
२	०		०	०	०		०		५
३	०				०				२
४	०			०	०				३
५	०		०						२
६	०	०			०	०	०	०	६
७	०	०	०	०	०	०	०	०	८
८				०					२
९	०		०						१
१०	०	०	०	०				०	५
११									×
१२				०	०	०	०	०	५

शुक्र से १, २ भाव में रवि-मङ्गल-बुध-गुरु-शनि ये पाँच ग्रह, सप्तम में सभी ग्रह, ३ में रवि गुरु ये दो ग्रह, ५ में रवि, मङ्गल, ९ में सूर्य, ४ में सूर्य, बुध, गुरु, ये तीन ग्रह, अष्टम में मङ्गल-बुध २ ग्रह, ६ में शुक्र-रवि-चन्द्र-शनि-लग्न-गुरु ये ६ ग्रह, ११ में कोई नहीं, १२ में लग्न-शनि-बुध-शुक्र-गुरु ये ५ ग्रह तथा १० में लग्न-मङ्गल-बुध-चन्द्र-सूर्य ये ५ ग्रह बिन्दु(अशुभ)प्रद होते हैं।

शनि के बिन्दु(अशुभ)प्रद ग्रह स्थान—

शन्यष्टकवर्ग में द्वितीय-सप्तम-नवम में ७ ग्रह, अष्टम-लग्न-चतुर्थ में ६, दशम-तृतीय-द्वादश में ४, षष्ठ में १, पञ्चम में ५ और एकादश में कोई बिन्दुप्रद ग्रह नहीं होते हैं।

शनि से ४, १ स्थान में लग्न, सूर्य को छोड़कर शेष सभी ६ ग्रह, २-७ में रवि को छोड़कर शेष ७ ग्रह, ९ में बुध को छोड़कर सभी ग्रह, १० में लग्न-मङ्गल-रवि-बुध को छोड़कर शेष ४ ग्रह (चन्द्र, गुरु, शुक्र, शनि) बिन्दुप्रद होते हैं। ३ में गुरु-रवि-बुध-शुक्र ये ४ ग्रह करणप्रद होते हैं। ६ में केवल सूर्य, १२ में लग्न-चन्द्र-शनि-रवि ये ४ ग्रह, ५ में शुक्र-रवि-चन्द्र-बुध-लग्न ये ५ ग्रह, ८ में बुध-रवि को छोड़कर शेष ६ ग्रह बिन्दुप्रद होते हैं, एकादश में कोई भी बिन्दुप्रद नहीं होता। इस तरह शनि के बिन्दुप्रद स्थान को समझना चाहिए।

शनि के बिन्दु(अशुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१		०	०	०	०	०	०		६
२		०	०	०	०	०	०	०	७
३	०			०	०	०			४
४		०	०	०	०	०	०		६
५	०	०		०		०		०	५
६	०								१
७		०	०	०	०	०	०	०	७
८		०	०		०	०	०	०	६
९	०	०	०		०	०	०	०	७
१०		०			०	०	०		४
११									×
१२	०	०					०		४

सूर्य के रेखा(शुभ)प्रद ग्रहस्थान—

"उक्तान्ये स्थानदातार:" महर्षि के इस वचनानुसार अर्थात बिन्दुप्रद से भिन्न स्थान रेखाप्रद होते हैं, इसी से रेखाप्रद शुभस्थान का ज्ञान हो जाता है फिरभी सुखबोधार्थ रेखाप्रद स्थान को कहते हैं।

सूर्याष्टक वर्ग के २-८-१ स्थान में शनि-मङ्गल-सूर्य, ५ में गुरु-बुध, ३ में बुध-चन्द्र-लग्न, ४ में लग्न-रवि-शनि-मङ्गल, १० में लग्न-रवि-शनि-मङ्गल-बुध और चन्द्र, ११ में शुक्र को छोड़कर सब, १२ में लग्न-शुक्र-बुध, ६ में लग्न-शुक्र-बुध-गुरु और चन्द्र, ७ में सूर्य-मङ्गल-शनि-शुक्र, ९ में रवि-मङ्गल-शनि-बुध-गुरु ये रेखांप्रद (शुभ) होते हैं।

सूर्य के बिन्दु(अशुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१	।		।				।		३
२	।		।				।		३
३		।		।				।	३
४	।		।				।	।	४
५				।	।				२
६		।		।	।	।		।	५
७	।		।			।	।		४
८	।		।				।		३
९	।		।	।	।		।		५
१०	।	।	।	।			।	।	६
११	।	।	।	।		।	।	।	७
१२				।	।	।	.		३

चन्द्र के रेखा(शुभ)प्रद ग्रहस्थान—

चन्द्राष्टकवर्ग में १ स्थान में बुध-चन्द्र-गुरु, २ में मङ्गल-गुरु, ३ में बुध-रवि-चन्द्र-मङ्गल-शनि-लग्न-शुक्र, ४ में गुरु-शुक्र-बुध, ५ में मङ्गल-बुध-शुक्र-शनि, ६ में रवि-चन्द्र-मङ्गल-शनि-लग्न, ७ में रवि-चन्द्र-गुरु-बुध-शुक्र, ८ में रवि-बुध-गुरु, ९ में शुक्र-चन्द्र, १० में रवि-बुध-गुरु-

चन्द्र के रेखा(शुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१		।		।	।				३
२			।		।				२
३	।	।	।	।		।	।	।	७
४				।	।	।			३
५			।	।		।	।		४
६	।	।	।				।	।	५
७	।	।		।	।	।			५
८	।			।	।				३
९		।				।			२
१०	।	।	।	।	।	।		।	७
११	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२									×

शुक्र-चन्द्र-लग्न और मङ्गल, ११ में सब तथा १२ में कोई भी रेखाप्रद नहीं होता है।

भौम के रेखा(शुभ)प्रद ग्रहस्थान—

भौमाष्टक में १ में लग्न-शनि-मङ्गल, २ में मङ्गल, ३ में लग्न, बुध-चन्द्र-रवि, ४ में शनि-मङ्गल, ५ में बुध-रवि, ६ में बुध-चन्द्र-गुरु-रवि-लग्न- शुक्र, ७ में शनि-मङ्गल, ८ में शनि-मङ्गल और शुक्र, ९ में शनि, १० में मङ्गल-रवि-गुरु-शनि-लग्न, ११ में सब, १२ में गुरु-शुक्र रेखाप्रद होते हैं।

बुधाष्टकवर्ग में १ में लग्न-शनि-मङ्गल-शुक्र-बुध, २ में लग्न-मङ्गल-चन्द्र-शुक्र-शनि, ३ में शुक्र-बुध, ४ में लग्न-चन्द्र-शनि-शुक्र-मङ्गल, ५ में बुध-शनि-शुक्र, ६ में गुरु-बुध-रवि-चन्द्र-लग्न, ७ में मङ्गल-शनि, ८ में मङ्गल-शनि-लग्न-चन्द्र-शुक्र और गुरु, ९ में शनि-मङ्गल-रवि-बुध-शुक्र, १० में लग्न-शनि-मङ्गल-बुध-चन्द्र, ११ में सब, १२ में गुरु-बुध-सूर्य ये रेखाप्रद होते हैं।

भौम के रेखा(शुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१			।				।	।	३
२			।						१
३	।	।		।				।	४
४			।				।		२
५	।			।					२
६	।	।		।	।	।		।	६
७			।				।		२
८			।			।	।		३
९							।		१
१०	।		।		।		।	।	५
११	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२					।	।			२

बुध के रेखा(शुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१			।	।		।	।	।	५
२		।	।			।	।	।	५
३				।		।			२
४		।	।			।	।	।	५
५	।			।		।			३
६	।			।	।			।	५
७		।	।				।		२
८		।	।		।	।	।	।	६
९	।		।	।		।	।		५
१०		।	।	।			।	।	५
११	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	।			।	।				३

गुरु के रेखा(शुभ)प्रद ग्रहस्थान—

गुर्वाष्टकवर्ग में १ व ४ स्थानों में गुरु-लग्न-मङ्गल-रवि-बुध, २ में गुरु-लग्न-मङ्गल-रवि-बुध-चन्द्र और शुक्र, ३ में शनि-गुरु-रवि, ४ में शनि, ५ में शुक्र-चन्द्र-बुध-शनि, ६ में पञ्चम-स्थान में उक्त ग्रहों में चन्द्र को छोड़कर शेष (शुक्र-लग्न-बुध-शनि), ७ में लग्न-मङ्गल-गुरु-रवि-चन्द्र, ८ में गुरु-रवि-मङ्गल, ९ में शुक्र-रवि-लग्न-चन्द्र-बुध, १० में शनि को छोड़कर सब, ११ में गुरु-बुध-मङ्गल-रवि-शुक्र-लग्न ये रेखाप्रद होते हैं।

गुरु के रेखा(शुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१	।		।	।	।			।	५
२	।	।	।	।	।	।		।	७
३	।				।		।		३
४	।		।	।	।			।	५
५		।		।		।	।	।	५
६				।		।	।	।	४
७	।	।	।		।			।	५
८	।		।		।				३
९	।	।		।		।		।	५
१०	।		।	।	।	।		।	६
११	।	।	।	।	।	।		।	७
१२							।		१

शुक्र के रेखा(शुभ)प्रद ग्रहस्थान—

शुक्राष्टक में १ स्थान में लग्न-शुक्र-चन्द्र, २ स्थान में भी वे ही (लग्न-शुक्र-चन्द्र), ३ में वे (लग्न-शुक्र-चन्द्र) और बुध-शनि-मङ्गल, ४ में पूर्वोक्त तृतीय स्थानोक्त ग्रह में बुध को छोड़कर शेष पाँच (लग्न-शुक्र-चन्द्र-शनि-मङ्गल), ५ में लग्न-बुध-चन्द्र-गुरु-शनि-शुक्र, ६ में बुध-मङ्गल, ७ में कोई नहीं, ८ में शुक्र-रवि-चन्द्र-गुरु-लग्न-शनि, ९ में रवि को छोड़कर सब, १० में शुक्र-गुरु-शनि, ११ में सभी ग्रह, १२ में मङ्गल-चन्द्र-सूर्य रेखाप्रद होते हैं।

शुक्र के रेखा(शुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१		।				।		।	३
२		।				।		।	३
३		।	।	।		।	।	।	६
४		।	।			।	।	।	५
५		।		।	।	।	।	।	६
६			।	।					२
७									×
८	।	।			।	।	।	।	६
९		।	।	।	।	।	।	।	७
१०					।	।	।		३
११	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२	।	।	।						३

शनि के रेखा(शुभ)प्रद ग्रहस्थान—

शन्यष्टक वर्ग में १ स्थान में सूर्य-लग्न, २ में सूर्य, ३ में लग्न-चन्द्र-मङ्गल-शनि, ४ में लग्न-रवि, ५ में गुरु-शनि-मङ्गल, ६ में सूर्य को छोड़कर सब, ७ में सूर्य, ८ में सूर्य-बुध, ९ में बुध, १० में रवि-मङ्गल-लग्न-बुध, ११ में सभी ग्रह, १२ में मङ्गल-बुध-गुरु-शुक्र रेखाप्रद होते हैं।

लग्न के बिन्दु(अशुभ)प्रद ग्रहस्थान—

लग्नाष्टक में १-४ स्थान में तीन ग्रह, २ में दो ग्रह, ३ में पाँच ग्रह, ५-८-९-१२ में ६ छै ग्रह, १०-११-६ भाव में एक ग्रह और ७ में गुरु को छोड़कर सब करण (बिन्दु)प्रद होते हैं।

जैसे १ स्थान में लग्न-रवि-चन्द्र, २ में लग्न-मङ्गल-चन्द्र-रवि-शनि, ३ में गुरु-बुध, ४ में लग्न-चन्द्र-मङ्गल, ५ में लग्न-रवि-चन्द्र-मङ्गल-बुध-शनि, ६ में शुक्र मात्र, ७ में गुरु को छोड़कर सब, ८ में शुक्र-बुध को छोड़कर शेष सब, ९ में गुरु को छोड़कर शेष सब, १० में शुक्र, ११ में भी केवल शुक्र तथा १२ में सूर्य-चन्द्रमा दोनों को छोड़कर शेष सब बिन्दुप्रद होते है।

शनि के रेखा(शुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१	।							।	२
२	।								१
३		।	।				।	।	४
४	।							।	२
५			।		।		।		३
६		।	।	।	।	।	।	।	७
७	।								१
८	।			।					२
९				।					१
१०	।		।	।				।	४
११	।	।	।	।	।	।	।	।	८
१२			।	।	।	।			४

लग्न के बिन्दु(अशुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१	०	०						०	३
२	०	०	०				०	०	५
३				०	०				२
४		०	०					०	३
५	०	०	०	०			०	०	६
६						०			१
७	०	०	०	०		०	०	०	७
८	०	०	०		०		०	०	६
९	०	०	०	०			०	०	६
१०						०			१
११						०			१
१२			०	०	०	०	०	०	६

लग्न के रेखा(शुभ)प्रद ग्रहस्थान—

अब हे विप्र लग्न के बिन्दुप्रद स्थानों को कहने के बाद लग्न के रेखा को कहता हूँ। लग्नाष्टकवर्ग चक्र के १ स्थान में शनि-बुध-शुक्र-गुरु-मङ्गल ये रेखा (शुभ) प्रद होते हैं। २ में बुध-गुरु-शुक्र, ३ में बुध-गुरु दोनों को छोड़कर शेष सब, ४ में सूर्य-बुध-गुरु-शुक्र-शनि, ५ में गुरु-शुक्र, ६ में शुक्र को छोड़कर शेष सब, ७ में केवल गुरु, ८ में बुध-शुक्र, ९ में गुरु-शुक्र, १० में शुक्र को छोड़कर सब, ११ में भी शुक्र को छोड़कर सब और १२ वें स्थान में रवि-चन्द्र ये रेखाप्रद होते है।

लग्न के बिन्दु(शुभ)प्रद स्थान बोधक चक्र

भाव	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	लग्न	योग
१			।	।	।	।	।		५
२				।	।	।			३
३	।	।	।			।	।	।	६
४	।			।	।	।	।		५
५					।	।			२
६	।	।	।	।	।		।	।	७
७					।				१
८				।		।			२
९					।	।			२
१०	।	।	।	।	।		।	।	७
११	।	।	।	।	.		।	।	६
१२	।	।							२

बिन्दु व रेखा का परिचय—

कुण्डली चक्र में करण को बिन्दुरूप (०) और स्थान को रेखारूप (।) लिखना चाहिए। बिन्दु को अशुभ और रेखा को शुभप्रद समझना चाहिये।

बिन्दु या रेखा बोधक चक्र निर्माण—

अष्टकवर्ग में शुभ-अशुभ स्थान हेतु १४ पड़ी और १० खड़ी रेखा खींच कर ११७ कोष्ठ का चक्र निर्मित करें। जिसमें ऊपर के ८ कोष्ठकों में सूर्यादि ग्रह लग्न सहित तथा बाँयें तरफ ऊर्ध्वाधर कोष्ठ में प्रथम से द्वादश

पर्यन्त स्थानसंख्या लिखें जिस-जिस स्थान में जो करण(बिन्दु)प्रद कहा गया है उस-उस स्थान में उस ग्रह के सामने बिन्दु (०) लिखें अर्थात् जिस ग्रह के नीचे जिन-जिन भावों में बिन्दु पड़ें (अष्टवर्गवाला ग्रह) उन भावों में जब-जब ग्रह जायेगा तब-तब अशुभफल देगा। शेष स्थानों में शुभफल देगा।

त्रिकोणशोधन—

पराशर ऋषि बोले-हे विप्र! इस तरह लग्न तथा सातों ग्रहों का अष्टकवर्ग निर्माण कर प्रत्येक राशि का त्रिकोणशोधन करना चाहिए। समान अन्तर पर तीन-तीन राशियों का त्रिकोण होता है। मेष-सिंह-धनु, वृष-कन्या-मकर, मिथुन-तुला-कुम्भ, कर्क-वृश्चिक-मीन, ये तीन-तीन राशियों के चार त्रिकोण होते हैं।

त्रिकोणशोधन प्रकार—

मेषादि द्वादश राशियों के नीचे ग्रहों का अष्टक वर्ग से सिद्ध रेखाङ्क लिखकर त्रिकोण शोधन करना चाहिए। त्रिकोण राशियों में जिसके नीचे सबसे कम रेखा संख्या हो उसको तीनों राशियों की रेखासंख्या में घटाकर शेष को लिखना चाहिए। यदि त्रिकोण राशियों में किसी में रेखा संख्या शून्य हो तो उसमें शोधन नहीं करना। यदि तीनों राशि में तुल्य संख्या हो तो सबों का शोधन करके सबके नीचे शून्य लिख देना चाहिये। फिर आगे की विधि से एकाधिपत्यशोधन करना चाहिए।

यहाँ जन्मलग्न चक्र में जिस-जिस स्थान में जो ग्रह हैं, उस-उस स्थान से सूर्याष्टक वर्ग में जितने शुभप्रद स्थान हैं उनमें रेखा (।) और अशुभ स्थान में बिन्दु (०) लगा कर सूर्य के अष्टक वर्ग चक्र को बनाया गया है।

अष्टक वर्ग में त्रिकोण शोधन करने हेतु ग्रह जिसराशि में हो उसराशि से आरम्भ करके १२ राशियों को लिखकर जिसराशि में जो ग्रह हो उसको लिखें; फिर जिसराशि में जितनी रेखा संख्या हो वह नीचे लिखकर त्रिकोण शोधित अङ्क उसके नीचे लिखना चाहिये।

यहाँ सूर्याष्टक का त्रिकोण शोधन द्रष्टव्य है। माना कि जन्माङ्ग सूर्य मकर-राशि में है अत: मकरादि १२ राशियों को लिखकर जो ग्रह जन्मचक्र में है उसको उस राशि में लिखा तथा राशि में जितनी रेखासंख्या है वह राशि के नीचे लिखा। फिर मकर से त्रिकोण राशि, (मकर, वृष, कन्या) है इनमें मकर में रेखायोग ३, वृष में २, कन्या में ५ है, इन सबों में न्यून संख्या वृष में २ है उसको तीनों की रेखा-संख्या में घटाने से मकर में शेष १, वृष

में ० और कन्या में ३ हुआ। फिर कुम्भ के त्रिकोण (कुम्भ, मिथुन, तुला) में कुम्भ में ४, मिथुन में ३, तुला में ४, इनमें न्यून संख्या ३ घटाने से कुम्भ के नीचे १, मिथुन के नीचे ०, तुला के नीचे १ शेषाङ्क हुए। फिर मीन के त्रिकोण (मीन, कर्क, वृश्चिक) में मीन में ४, कर्क में ३, वृश्चिक में ३ रेखा इनमें मीन की रेखा-संख्या न्यून ३ को तीनों में घटाने से शोधित शेष अंक मीन में १, कर्क में ०, और वृश्चिक में ० हुए। फिर मेष के त्रिकोण (मेष, सिंह, धनु), में मेष में ४, सिंह में ३, धनु में ४, इनमें न्यून संख्या ३ को तीनों की रेखा संख्या में घटाने से मेष के नीचे १, सिंह के नीचे ०, धनु के नीचे १ त्रिकोण शोधित अंक हुए। इस तरह प्रत्येक ग्रह का त्रिकोण शोधन करके शोधित अङ्क का ज्ञान करना चाहिए तत्पश्चात् एकाधिपत्य शोधन करना चाहिए।

एकाधिपत्यशोधन—

पूर्वोक्त विधि से त्रिकोण-शोधन करके राशियों का फल लिखें। दो-दो राशियों का एक अधिपति होता है उन राशियों का एकाधिपत्य शोधन करें।

यदि दोनों राशियों में त्रिकोण शोधित फल हो तभी एकाधिपत्य शोधन होता है। एक राशि में फल हो दूसरे में शून्य हो तो शोधन नहीं होता।

(१) दोनों राशि ग्रहविहिन हो तथा दोनों में न्यूनाधिक फल हो तो न्यूनफल तुल्य दोनों में शोधन करें।

(२) यदि दोनों में ग्रह हो तो एकाधिपत्य शोधन नहीं करें।

(३) यदि एक में ग्रह हो और त्रिकोण शोधित फल अल्प हो तथा दूसरे में ग्रह नहीं हो और फल अधिक हो तो अल्पफल के तुल्य ग्रहवर्जित वाले फल में घटावें तथा सग्रह राशि में अल्पफल को ज्यों-के-त्यों रहने दे।

(४) यदि सग्रहराशि में फल अधिक हो और ग्रहहीन राशि में अल्प फल हो तो ग्रहहीन राशि के फल का शोधन करें तथा सग्रह के फल को यथावत रहने दें।

(५) यदि दोनों में ग्रह नहीं हों तथा फल समान हों तो दोनों शोधन करके शून्य कर दें।

(६) यदि एक राशि सग्रह दूसरा ग्रहहीन हो तो ग्रहहीन के फल को शोधन करें (शून्य करें)।

(७) सूर्य और चन्द्र की एक-एक राशि होती है, इसलिये इन दोनों (कर्क, सिंह) के फल को ज्यों-के-त्यों रहने देना चाहिये।

उदाहरण—पूर्वलिखित सूर्य शोधित चक्र को देखें। धनु और मीन दोनों ग्रहयुक्त हैं अत: एकाधिपत्य शोधन नहीं हुआ, एवं मकर फल-सहित है तथा ग्रहयुक्त भी है कुंभ ग्रहरहित है फल भी तुल्य है अत: कुम्भ को शून्य व मकर का फल ज्यों का त्यों रहा। इसी प्रकार वृष-तुला में भी एकाधिपत्य शोधन नहीं प्राप्त हुआ। अर्थात् त्रिकोण शोधन अङ्क ही रहा। यथा—

सूर्याष्टक एकाधिपत्य शोधन चक्र

राशि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
ग्रह			श.			बृ.	चं.		बु.	सू.		भौ.शु.
त्रिकोण शोधिता	१	०	०	०	०	३	१	०	१	१	१	१
एकाधिपत्यशोधन	१	०	०	०	०	३	१	१	१	१	०	१
राशिगुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
ग्रहगुणका			५			१०	५		५	५		८/७

राशि पिण्ड ६३ ग्रह पिण्ड ६०,

चन्द्राष्टक एकाधिपत्य शोधन चक्र

राशि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
ग्रह			श.			बृ.	चं.		बु.	सू.		भौ.शु.
त्रिकोण शोधितांक	१	०	५	२	०	१	५	०	१	०	०	१
एकाधिपत्यशोधन	१	०	५	२	०	५	५	०	१	०	०	१
राशिगुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
ग्रहगुणका			५			१०	५		५	५		८/७

राशिपिण्ड १३२ ग्रहपिण्ड १२०,

मङ्गलाष्टक एकाधिपत्य शोधन चक्र

राशि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
ग्रह			श.			बृ.	चं.		बु.	सू.		भौ.शु.
त्रिकोण शोधितांक	१	०	१	०	०	१	१	२	२	२	०	४
एकाधिपत्यशोधन	१	०	१	०	०	१	१	१	२	२	०	४
राशिगुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
ग्रहगुणक			५			१०	५		५	५		८/७

राशिपिण्ड १११ ग्रहपिण्ड १००,

बुधाष्टक एकाधिपत्य शोधन चक्र

राशि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
ग्रह			श.			बृ.	चं.		बु.	सू.		भौ.शु.
त्रिकोण शोधितांक	२	०	१	०	०	०	०	२	०	१	०	०
एकाधिपत्यशोधन	०	०	१	०	०	०	०	०	०	१	०	०
राशिगुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
ग्रहगुणक			५			१०	५		५	५		८/७

राशिपिण्ड १३ ग्रहपिण्ड १३,

गुर्वष्टक एकाधिपत्य शोधन चक्र

राशि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
ग्रह			श.			बृ.	चं.		बु.	सू.		भौ.शु.
त्रिकोण शोधितांक	३	०	१	०	१	२	३	२	०	२	०	०
एकाधिपत्यशोधन	१	०	१.	०	१	२	३	२	०	२	०	०
राशिगुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
ग्रहगुणक			५			१०	५		५	५		८७

राशिपिण्ड ८२ ग्रहपिण्ड़ ५०,

शुक्राष्टक एकाधिपत्य शोधन चक्र

राशि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
ग्रह			श.			बृ.	चं.		बु.	सू.		भौ.शु.
त्रिकोण शोधितांक	१	३	०	०	३	०	०	३	०	३	१	१
एकाधिपत्यशोधन	०	३	०	०	३	०	०	२	०	३	०	१
राशिगुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
ग्रहगुणक			५			१०	५		५	५		८७

राशिपिण्ड १०३ ग्रहपिण्ड ३०,

शनि एकाधिपत्य शोधन चक्र

राशि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
ग्रह			श.			बृ.	चं.		बु.	सू.		भौ.शु.
त्रिकोण शोधितांक	१	१	०	२	५	०	३	२	०	४	३	०
एकाधिपत्यशोधन	०	०	०	२	२	०	३	१	०	४	०	०
राशिगुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
ग्रहगुणक			५			१०	५		५	५		८/७

राशिपिण्ड ७७ ग्रहपिण्ड ३५,

पिण्डसाधन—इस प्रकार सब ग्रहों के अष्टकवर्ग में त्रिकोण तथा एकाधिपत्यशोधन करके, शोधित अङ्क को राशिगुणकांक से गुना करे। यदि राशि में ग्रह हो तो उस ग्रह के मान से भी शोधित अङ्क को गुना करे। इस प्रकार प्रत्येक राशि के अङ्क को गुना करके सबका योग करे, वह उस ग्रह का (अष्टवर्गफल साधनार्थ) पिण्ड होता है। राशि गुणक इस प्रकार हैं—वृष और सिंह १०, मिथुन और वृश्चिक ८, मेष और तुला ७, मकर-कन्या ५, शेष राशियाँ अपनी-अपनी संख्या तुल्य (यथा—कर्क ४, धनु ९, कुम्भ ११, मीन १२)। ग्रह गुणक इस प्रकार हैं—बृहस्पति १०, मङ्गल ८, शुक्र ७, बुध ५ तथा शेष (रवि, चन्द्र, शनि) के ५ (गुणक) होते हैं।

राशिगुणकमान

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन
गुणक	७	१०	८	०४	१०	५	७	८	९	५	११	१२

ग्रहगुणक मान

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
गुणक	५	५	८	५	१०	७	५

यहाँ सूर्य के एकाधिपत्यशोधन चंक्र में मेष के एकाधिपत्यशोधनाङ्क १ को मेष के मान ७ से गुना करने से ७, वृष के फल ० को वृष के मान १० से गुना करने से ०, मिथुन एकाधिपत्यशोधन ० फल को मिथुन के मान ८ से गुना करने से ० कर्क के फल ० को कर्क के गुणक मान ४ से

गुना करने से ०, सिंह के फल ० को सिंह के मान १० से गुना करने से ०, कन्या का मान ५ से फल ३ से गुणा किया तो १५, तुला फल १ को ७ से गुणा किया तो ७, वृश्चिक के फल १ को वृश्चिक के मान ८ से गुना करने से ८, धनु के फल एक को धनु के मान ९ से गुना करने से ९, मकर फल १ को मकरमान ५ से गुणने पर ५, कुंभफल ० को ११ से गुणा किया तो ०, मीनफल १ को १२ से गुणा किया तो १२, सब गुणनफलों का योग ६३ राशिपिण्ड हुआ।

मकर में रवि है, अत: सूर्य के मान ५ से मकर फल १ को गुणा करने से ५, मङ्गल के मान ८ से मीन के फल १ को गुना करने से ८ चन्द्र के मान ५ से तुला के फल १ को गुना करने से ५, बुध धनु में है तो धनु फल १ को बुध के मान ५ से गुणने पर ५ हुआ, गुरु कन्या में है अत: कन्या के फल ३ को १० से गुणा किया तो ३० शनि की राशि फल शून्य होने के कारण गुणन फल शून्य ० शुक्र मीन में है अत: मीनफल को १ शुक्र के मान ७ से गुणने पर गुणनफल ७। ग्रहों के गुणन फलों का योग ६० ग्रहपिण्ड हुआ। राशिपिण्ड और ग्रहपिण्ड दोनों के योग करने से स्पष्ट पिण्ड १२३ एक सौ तेईस हुआ। इसी प्रकार सब ग्रहों के अष्टवर्ग से त्रिकोण और एकाधिपत्य शोधन कर पिण्डमान साधन करके फलादेश करना चाहिए।

अष्टकवर्ग में ग्रहकारकत्व का विचार—सूर्य से आत्मा-स्वभाव-शक्ति और पिता के सुख-दु:ख का, चन्द्र से मन-बुद्धि-प्रसन्नता और माता का, भौम से भाई-बल-गुण और भूमि का बुध से वाणिज्य-जीविका और मित्र का विचार, गुरु से शरीर की पुष्टि-विद्या-पुत्र-धन-सम्पत्ति का, शुक्र से विवाह-भोग-वाहन-वेश्या-स्त्री (पत्नी) भोग का, शनि से आयु-जीवनोपाय-दु:ख-शोक-भय-सब वस्तुओं की हानि और मरण का विचार करना चाहिये। भावफल विचार हेतु उसभाव में प्राप्त रेखासंख्या से उसग्रह के अष्टवर्ग सम्बन्धी योगपिण्ड का गुणन करके गुणनफल में २७ से भाग देकर जो शेष बचे उतने संख्यक अश्विन्यादि नक्षत्र में जब शनि जाये तब उस भाव की हानि समझें।

सूर्याष्टक फल—

जन्मकाल में जहाँ सूर्य हो उससे नवम पिता का स्थान होता है। उस राशि की फलसंख्या (सूर्याष्टक वर्ग में) से सूर्याष्टक वर्गयोग पिण्ड को गुणकर २७ का भाग देने से शेषतुल्य अश्विन्यादि नक्षत्र में जब शनि जाये

तब पिता को क्लेश होता हो, इसमें संशय नहीं। उस नक्षत्र से त्रिकोण (१० वाँ और १९ वाँ) नक्षत्र में भी जब शनि जाये तब पिता या पितृतुल्य (चाचा आदि) का मरण या क्लेश समझें।

जैसे—सूर्याष्टक वर्ग देखें। सूर्य मकर में है, उससे नौवीं राशि कन्या है अत: कन्या की अष्टवर्ग फल (रेखा) संख्या ३ से सूर्य के योग पिण्ड १२३ को गुना करने से ३६९ इस में २७ के भाग देने से शेष १८, अश्विनी से गिनने से ज्येष्ठा तथा उससे त्रिकोण (रेवती और श्लेषा) नक्षत्र में भी जब शनि जाये तब जातक के पिता को क्लेश या मरण हो। अर्थात् उस समय अशुभ दशा हो तो मरण और शुभदशा हो तो क्लेश कहना चाहिए समझें।

प्रकारान्तर से विचार—

अथवा पितृस्थान के अष्टकवर्गोत्थ रेखा से योगपिण्ड को गुणा कर १२ का भाग देने से शेषतुल्य राशि तथा उससे त्रिकोण (५।९) राशि में शनि के जाने पर जातक को पितृ कष्ट होता है। अनिष्टप्रद दशा में मरण तथा शुभप्रद दशा में क्लेश समझना चाहिये।

जैसे—सूर्य मकर में है उससे नवमराशि कन्या की अष्टवर्ग रेखा संख्या ३ से योगपिण्ड १२३ को गुणा कर ३६९ इसमें १२ के भाग देने से शेष ९ (धनु) राशि में तथा उससे त्रिकोण मेष-सिंह राशि में जब शनि जाये तब जातक के पिता को कष्ट या मरण समझें।

पितृ अनिष्टकाल—

त्रिकोण राशि में जब शनि जाय और उससमय यदि सूर्य से चतुर्थ में राहु-शनि या मङ्गल रहें तो जातक के पिता का मरण होता है अथवा लग्न या चन्द्र से गुरु स्थान (नवम) में शनि रहे और पापग्रह से दृष्ट या युत रहे तो पिता का मरण होता है। चतुर्थभावेश की अरिष्टदशा में भी पिता का मरण समझना चाहिए।

पिता के जन्मलग्न राशि से अष्टमराशि में जातक का जन्म हो अथवा पिता के जन्मलग्न से अष्टमेश ही जातक के लग्न में रहे तो पितृमरण होता है, जिससे जातक को पिता के कर्त्तव्य को पूरा करना पड़ता है।

पितृसुख योग—

सुखेश (चतुर्थेश) की दशा में अधिक सुखलाभ होता है। सुखेश लग्न या एकादश में हो या चन्द्र से १० में हो तो जातक पिता का

आज्ञाकारी पुत्र होता है। पिता के जन्मलग्न या जन्मराशि से तृतीयराशि में जन्म हो तो जातक पिता के धन का उपभोग करता है। पिता की जन्मराशि या जन्मलग्न से १० वीं राशि में जन्म हो तो जातक पिता के समान गुणी होता है। दशमेश यदि लग्नस्थ हो तो जातक पिता से भी श्रेष्ठ (गुणी) होता है।

सूर्याष्टक वर्ग में जिसराशि में अधिक शून्य हो उसराशि के मास (सूर्य राशि) तथा उस राशि के संवत्सर (उस राशि में बृहस्पति रहे) विवाहादि शुभ कार्य नहीं करना चाहिये। जिसराशि में अधिक रेखा हो उसमें जब सूर्य या मध्यम गुरु रहे तब करना चाहिये।

चन्द्राष्टक वर्गफल—

इसी तरह चन्द्राष्टक वर्ग में जिसराशि में अधिक शून्य हो उस राशि में जब चन्द्र जाये उससमय शुभकार्य नहीं करें। चन्द्र से चतुर्थ भाव द्वारा माता-घर और ग्राम का विचार होता है। इसलिये चन्द्र से चतुर्थभाव की अष्टवर्ग रेखा संख्या से चन्द्राष्टक वर्गपिण्ड को गुण कर २७ से भाग कर जो शेष हो उस नक्षत्र में या उससे त्रिकोण (१०-१९) नक्षत्र में जब शनि जाये तब मातृमरण या मातृकष्ट कहना चाहिये। रेखा तथा पिण्ड के गुणनफल में १२ का भाग देकर जो शेष बचे उस राशि में जब शनि जाय तब मातृमरण तथा राशि से त्रिकोण (पंचम-नवम) राशि में जब शनि जाय तो मातृकष्ट कहना चाहिए।

जैसे—यहाँ तुला के एकाधिपत्य शोधन अंक ५ को तुला के मान ७ से गुना करने से ३५, वृश्चिक के अङ्क ० को वृश्चिक के मान ८ से गुना करने से ०, मकर-कुम्भ के फल ० को गुना करने से ०, मीन के अङ्क १ को मीन के गुणक १२ से गुना करने से १२ तथा मेष के एकाधिपत्य शोधित अङ्क १ को मेष के गुणक मान १० से गुना करने से १०, सिंह व वृष का शून्य, मिथुन का फल ५ को ८ से गुणने पर ४० कन्या का फल ५ को ५ से गुणने पर २५ हुआ। धनु फल १ को ९ से गुणने पर ९ सब राशियों के गुणनफल का योग = १३२ राशिपिण्ड हुआ।

एवं चन्द्रमा के मान ५ से चन्द्राश्रित तुला के फल ५ को गुना करने से २५, मिथुन के फल ५ को शनि के मान ५ से गुना करने से २५, मीन के फल १ को मीनस्थ मङ्गल शुक्र के मान ८ व ७ से गुना करने व जोड़ने

से १५, गरुफल ५ को १० से गुणने पर ५० बुध व धनु के मानों से गुना करने से ५ अन्य ग्रहों के एकाधिपत्य शोधित फल शून्य हैं, अत: गुणन फल भी शून्य हुए। सर्वगुणन फल योग = १२० यह ग्रहपिण्ड हुआ। राशिपिण्ड और ग्रहपिण्ड को जोड़ने से १३२ + १२० = २५२ यह फल कथनार्थ योग पिण्ड हुआ।

अब मातृकष्ट विचारार्थ-चन्द्रमा के चतुर्थ स्थान मकर के अष्टवर्ग फल (रेखा संख्या = ३) से चन्द्रमा के योगपिण्ड २५२ को गुना करके ७५६ इसमें २७ के भाग देने से शेष २७वाँ नक्षत्र रेवती अथवा उससे त्रिकोण (१०, १९) नक्षत्र (श्लेषा, ज्येष्ठा) में जब शनि जायेगा तो माता को कष्ट समझना चाहिये।

अथवा फल गुणित पिण्ड ७५६ में १२ के भाग देकर शेष १२ मीन अथवा उससे त्रिकोण (कर्क-वृश्चिक) में जब शनि जाये तब माता को कष्ट कहें।

भौमाष्टक फल—

मङ्गल के अष्टकवर्ग से भाई, पराक्रम और धैर्य का विचार करना चाहिये। भौमस्थ राशि से तृतीय भ्रातृस्थान होता है। त्रिकोण शोधन करने पर जिसराशि का फल अधिक हो उसराशि में मङ्गल के जाने पर भूमि, स्त्री का सुख तथा भाई को सुख लाभ होता है। भौम निर्बल हो तो भाई दीर्घायु होते हैं और जहाँ अष्टकवर्ग फलशून्य हो वहाँ मङ्गल के जाने से भ्राता आदि को क्लेश होता है। मङ्गल के योगपिण्ड को पूर्ववत् अष्टवर्ग रेखासंख्या से गुनाकर २७ और १२ के भाग देकर जो शेष बचे उस नक्षत्र या राशि अथवा उससे त्रिकोण में शनि के जाने पर भ्रातृकष्ट होता है।

राशिपिण्ड १११, ग्रहपिण्ड १००, योगपिण्ड २११।

जैसे—मङ्गल मीन में है। मीन से तृतीय राशि (वृष) के अष्टवर्ग रेखा २ से मङ्गल के योग पिण्ड २११ को गुना करने से ४२२ इसमें २७ के भाग देने पर शेष १७ वाँ नक्षत्र (अनुराधा) या उससे त्रिकोण नक्षत्र (उभा.-पुष्य) में शनि के जाने पर भ्रातृकष्ट समझें तथा गुणनफल में १२ के भाग देने से शेष २ वृष राशि या त्रिकोण (कन्या-मकर) में शनि के जाने पर कष्ट समझें।

बुधाष्टकफल—

बुध के चतुर्थ स्थान से कुटम्ब-मामा-मित्र का विचार होता है। बुधाष्टकवर्ग में जिस राशि में अधिक रेखा हो उसमें बुध के जाने पर कुटुम्ब आदि का सुख होता है। बुधाष्टकवर्ग में त्रिकोण शोधनादि से पूर्ववत् पिण्ड द्वारा साधित नक्षत्र या राशि द्वारा कुटुम्बादि का सुख और दु:ख समझना चाहिए।

राशिपिण्ड १३, ग्रहपिण्ड १३, **योगपिण्ड** २६।

जैसे—बुध धनु में है, बुध से चतुर्थ (मीन) राशि के अष्टवर्ग फल ४ से योगपिण्ड २६ को गुना करने से १०४ इसमें २७ के भाग देकर शेष २३वाँ (धनिष्ठा) तथा इससे त्रिकोण (१०, १९ वाँ) मृ.चि. नक्षत्र में शनि के जाने पर कुटुम्ब आदि को कष्ट जानें। गुणनफल १०४ में १२ का भाग देने पर शेष ८ वृश्चिक या कर्क-मीन(त्रिकोण) में बुध के जाने पर कष्ट समझें।

गुर्वष्टक फल—

गुरु से पंचमभाव से ज्ञान-धर्म और पुत्रविचार करना चाहिये। यदि पञ्चमस्थान में अष्टवर्ग रेखा अधिक हो तो सन्तान का सुख उत्तम होता है।

यदि बिन्दु अधिक हो तो सन्तान सुख अल्प होता है। पञ्चमभाव में जितनी फलसंख्या हो उतनी सन्तति होती है। यदि गुरु नीच या शत्रुराशि का नहीं रहे तब अर्थात् यदि नीचादि में हो तो अल्प सन्तान होता है। गुरु स्थान से पञ्चमेश जिस नवांश में रहे उतनी सन्तति होती है। पञ्चमभाव के अष्टवर्गफल से गुरु के योगपिण्ड को गुणा कर २७ या १२ से भाग देकर शेष तुल्य नक्षत्र और उससे त्रिकोण नक्षत्र में या शेष तुल्यराशि या उसके त्रिकोणराशि में शनि के जाने पर सन्तान कष्ट तथा धर्म और विद्या की क्षति होती है।

राशिपिण्ड ८२, ग्रहपिण्ड ५०, योगपिण्ड १३२।

जैसे—गुरु कन्या में है, कन्या से ५ भाव (मकर) के अष्टवर्ग फल ५ से योगपिण्ड को गुना करने से ६६० इसमें २७ के भाग देने से शेष १२ अर्थात् उ.फा. या उससे त्रिकोण नक्षत्र (उ.षा. कृ.)में शनि के जाने से पुत्रकष्ट और विद्या तथा धर्म की हानि समझें, गुणनफल में १२ के भाग देकर शेष १२ मीन और उससे त्रिकोण राशि (वृश्चिक, कर्क) में शनि के जाने पर उक्त फल समझें।

शुक्राष्टक फल—

शुक्राष्टक वर्ग में जिस राशि में अधिक रेखा रहे उस राशि में शुक्र जब जाय, तब धन-स्त्री और भूमि का सुख होता है। शुक्र से सप्तमभाव से स्त्रीविचार करना चाहिये। सप्तमभाव तथा उससे त्रिकोण राशि की दिशा और देश से स्त्री-धन आदि का लाभ समझें। शुक्र से सप्तमभाव के रेखासंख्या से योगपिण्ड को गुणा करके पूर्ववत् स्त्री आदि के कष्ट का विचार करना चाहिये।।३४-३६।।

राशिपिण्ड = १०३। ग्रहपिण्ड = ३०। योगपिण्ड = १३३।

जैसे—शुक्र मीन में है, मीन से सप्तम कन्या राशि के अष्टवर्ग फल ३ से योगपिण्ड १३३ को गुनाकर ३९९ इसमें २७ के भाग देने से शेष २१ अर्थात् नक्षत्र उ. षा. तथा उससे त्रिकोण (कृ. उफा.) नक्षत्र में शनि के जाने पर स्त्री को कष्ट समझें तथा गुणनफल में १२ के भाग देने से शेष ३ अर्थात् मिथुन राशि या उससे त्रिकोण (तुला, कुंभ) में जब शनि जाये तो स्त्री कष्ट समझें।

शन्यष्टक फल—

शनैश्चर से अष्टमस्थान मृत्यु और आयुस्थान होता है। अत: उसी से अष्टवर्ग द्वारा आयु विचार करना चाहिये। शन्यष्टकवर्ग में लग्न से आरम्भ कर शनि पर्यन्त जितनी रेखा हों उनके योग तुल्य वर्ष में एवं शनि से लग्नपर्यन्त रेखा योग तुल्य वर्ष में जातक को कष्ट होता है। दोनों के योगतुल्य (अर्थात् सब रेखा के योग) वर्ष में यदि अरिष्टदशा हो तो भी उस समय मृत्यु समझें।

यहाँ लग्न (मकर) से शनि स्थित राशि (मिथुन) पर्यन्त फलों (रेखाओं) का योग १७ है अत: १७ वाँ वर्ष जातक के लिये कष्टप्रद होगा तथा शनि से लग्नपर्यन्त रेखाओं का योग २२ है अत: २२वाँ वर्ष भी कष्टप्रद कहें। दोनों के योग तुल्य ३९ वर्ष में मृत्यु तुल्य कष्ट की सम्भावना कहें।

मृत्यु समय कथन—

शन्यष्टकवर्ग से साधित पिण्ड में शनि के अष्टमराशि की रेखासंख्या से गुणाकर गुणनफल में २७ के भाग देकर शेषतुल्य नक्षत्र या उससे त्रिकोण नक्षत्र में शनि के जाने पर जातक का मरण समझें। उस समय यदि शुभ दशा

हो तो केवल कष्ट समझें। गुणनफल में १२ के भाग देकर शेष तुल्य राशि या उससे त्रिकोण राशि में शनि के जाने पर मृत्युभय समझें।

शन्यष्टकवर्ग में राशिपिण्ड ७७, ग्रहपिण्ड ३५, योगपिण्ड ११२, जैसे—शन्यष्टकवर्ग में शनि मिथुन में है, उससे अष्टम मकर के फल ५ से पिण्ड ११२ को गुना करके ५६० उसमें २७ के भाग देकर शेष २०वाँ पू. षा., उससे त्रिकोण (भ. पूफा.) में शनि के जाने पर मृत्यु की संभावना होती है। उस समय मारकेश की दशा प्राप्त हो तो मृत्यु, अन्यथा क़ष्ट समझें। एवं ५६० में १२ के भाग देकर शेष ८ वृश्चिक तथा उसके त्रिकोण कर्क या मीन में शनि के जाने पर कष्ट समझें।

शनि अष्टकवर्ग में जिसराशि में बिन्दु अधिक हो उसराशि में शनि के जाने पर अशुभ और जिसराशि में रेखा अधिक हो उसराशि में शनि के जाने पर शुभ समझें।

अष्टकवर्गायुर्दाय विचार—अब मैं अष्टकवर्गज आयु का वर्णन करता ता हूँ। जिस राशि में रेखा नहीं हो उसके २ दिन, जिसमें एक रेखां हो उसमें १ ½ दिन, जिसमें दो रेखा हो उसकी १ दिन, जिसमें तीन रेखा हो उसकी ½ दिन, ४ रेखा हो तो ७ ½ दिन, ५ रेखा हो तो २ वर्ष, ६ रेखा हो तो ४ वर्ष, ७ रेखा हो तो ६ वर्ष और जिसमें ८ रेखा हो उसकी ८ वर्ष आयु होती है। प्रत्येक ग्रह की अष्टवर्ग में सभी राशियों की आयु का योग जो हो उसका आधा स्पष्ट अष्टवर्गज आयु होती है।

आयुमान

रेखा	×	१	२	३	४	५	६	७	८
आयु	२दिन	१ ½दिन	१दिन	½दिन	७½दिन	२वर्ष	४वर्ष	६वर्ष	८वर्ष

सूर्याष्टक में यहाँ मकर में ३ रेखा है अत: मकर की आयु ½ दिन। कुम्भ में ४ रेखा है अत: आयु ½ दिन। मीन में ४ रेखा है अत: ७½ दिन। मेष में ४ रेखा है अत: ७½ दिन। वृष में २ रेखा है अत: १ दिन। मिथुन में ३ रेखा है इसलिये ½ दिन। कर्क में ३ रेखा है अत: ½ दिन। सिंह. में ३ रेखा है अत: ½ दिन। कन्या में ५ रेखा है अत: २ वर्ष। तुला में ४ रेखा है अत: ७ ½ दिन। वृश्चिक के में ३ रेखा होने से ½ दिन। धनु में ४ रेखा

हैं अत: ७ ½ आयु हुई। सब का योग करने से २ वर्ष १ मास ४ दिन इसका आधा १-०-१७ यह सूर्याष्टकवर्गज स्पष्ट आयुर्दाय हुआ। इसी प्रकार चन्द्रादि ग्रह और लग्न के अष्टवर्ग से आयु साधन कर सब के योगतुल्य जातक की स्पष्टायु समझें।

इस प्रकार सूर्याष्टकवर्गायु =१।०।१७।०
" " चन्द्राष्टकवर्गायु =९।०।१०।०
" " भौमाष्टकवर्गायु =३।०।१३।४५
" " बुधाष्टकवर्गायु = ६।१।०।०
" " जीवाष्टकवर्गायु =१०।०।१५।३०
" " शुक्राष्टकवर्गायु =८।०/१२।३०
" " शन्यष्टकवर्गायु =४।०।१८।०
" " लग्नाष्टकवर्गायु =६।०।१६।३०

सबका योग वर्षादि ४७।४।१६।४५ = आयुर्दाय

समुदायाष्टकवर्ग विचार--इस प्रकार द्वादश कोष्ठक में लग्नादि द्वादश भावों को लिखें। उसमें सब ग्रहों के अष्टक वर्ग में जिस-जिस भाव में जितनी-जितनी रेखाएँ हों उनके योग प्रत्येक भाव में लिखें। इस तरह समुदायाष्टक वर्ग होता है। इससे जातक का शुभाशुभ फल समझना चाहिये।

समुदाय रेखा फल—

समुदायाष्टकवर्गीय चक्र में जिसराशि में ३० से अधिक रेखायें हो वह शुभ २५ से ३० तक हो तो मध्यम तथा २५ से अल्प हो तो वह राशि अशुभ होती है। शुभकार्य जब शुभराशि आवे तभी उस कार्य को करना चाहिये। अशुभप्रद राशियों में शुभकार्य नहीं करना चाहिये। शुभराशि में रहने वाले ग्रह शुभप्रद और अशुभराशि में रहने वाले ग्रह अशुभप्रद होते हैं।

रेखानुसार भावफल—

समुदायाष्टक वर्ग में जिसमें ३० से अधिक रेखा हो उस भाव की वृद्धि, २५ से ३० रेखा हो तो मध्यम और २५ से अल्प हो तो अधम समझना चाहिये।

भावों का अवस्थात्रयफल—

समुदायाष्टकवर्ग में १० वें भाव से ११वें भाव में अधिक रेखा हो

तथा ११ से अल्प १२ भाव में रेखा रहे और लग्न में अधिक रेखा हो तो वह जातक सुखी और धनी होता है। इससे विपरीत हो तो दु:खी और दरिद्र होता है।

दशाफल के जैसा लग्नादि द्वादश भावों के तीन खण्ड बाल-युवा-वृद्ध (१से ४, ५ से ८, ९ से १२) करके देखें। जिस खण्ड में पापग्रह अधिक रहे उस अवस्था में कष्ट, जिसमें शुभग्रह अधिक रहें उसमें सुख, जिसमें मिश्रित रहें उसमें शुभ-अशुभ दोनों फल समझें।

जैसे—मकर लग्न है। उस में सूर्याष्टक वर्ग में ३ रेखा, चन्द्राष्टक वर्ग में २, कुजाष्टक वर्ग में ४ इस तरह लग्नाष्टक वर्ग तक का योग ३३ यह समुदायाष्टक वर्ग में लग्न (मकर) की रेखा संख्या हुई। इस तरह धनभावादि में सब रेखा योग लिखने से—

यहाँ तनुभाव में ३३ रेखा पड़ी है अत: शरीरसुख उत्तम, एवं भ्रातृ-पराक्रम, रिपु-आयु-कर्म-लाभ एवं व्यय भाव में ३० से अधिक रेखा संख्या होने के कारण इन भावों की वृद्धि विशेषकर अपने-अपने भावेश की दशा अन्तर्दशा आदि में होगी। शेष भाव मध्यम हैं। अधिक शुभग्रह तृतीय खण्ड में पड़े हैं, इसलिये तृतीय वयस् में अधिक सुख, मध्यम खण्ड में १ पाप अत: मध्यम वय में दु:ख प्रथम खण्ड में एक शुभ दो पाप होने से प्रथम वयस् में दुख का योग है। लाभ में व्यय से रेखा संख्या अधिक है और लग्न में अधिक है, अत: जातक धनी और भाग्यवान् होगा।

शान्ति सहित रेखाफल—

समुदायाष्टकवर्ग में जिस राशि में ७ या उससे कम रेखा हो उस राशि के सूर्य मास में मृत्युभय होता है। दोष निवारणार्थ २० तोला सोना और तिल के दो पर्वत (तिल के ढेर) दान करना चाहिये।

८ रेखा वाले मास में भी मृत्यु की सम्भावना होती है, शान्त्यर्थ कपूर का तुलादान करना चाहिए।

९ रेखा वाले में सर्प भय होता है, शान्त्यर्थ सात घोड़ों से युक्त रथ का दान करना चाहिए।

१० रेखा हो उस मास में शस्त्रभय, शान्त्यर्थ वज्र सहित कवच दान करें।

११ रेखा हो उस मास में मिथ्यापवाद का भय, शान्त्यर्थ १० तोला सुवर्ण से निर्मित चन्द्र की प्रतिमा दान करें।

१२ रेखा हो उस मास में जल में डूबने का भय, शान्त्यर्थ अन्न से युक्त भूमिदान करना आवश्यक है।

१३ रेखा हो उस मास में व्याघ्र आदि हिंसक जन्तु से मृत्युभय, शान्त्यर्थ हिरण्यगर्भ विष्णु (शालिग्राम शिला) का दान उचित है।

१४ रेखा हो उस मास में भी मृत्युभय, शान्त्यर्थ सोने की वराहमूर्ति का दान करना चाहिए।

१५ रेखा हो उस मास में राजभय, शान्त्यर्थ गजदान उपयुक्त है।

१६ रेखा हो उसमास में अरिष्ट भय, दोष निवारणार्थ सुवर्ण निर्मित कल्पवृक्ष का दान करें।

१७ रेखा हो उसमें रोगभय शान्त्यर्थ गोदान और गुड़दान करें।

१८ रेखा हो उस मास में कलह भय, शान्त्यर्थ गोदान, रत्नदान, भूमि व सुवर्ण का दान करें।

१९ रेखा हो उस मास में प्रवास (विदेशवास) शान्त्यर्थ कुल देवता का पूजनादि करना आवश्यक होता है।

२० रेखा हो उसमास में बुद्धिनाश शान्त्यर्थ सरस्वती की पूजा करें।

२१ रेखा हो उस मास में रोगकष्ट। अत: अन्न (पर्वतरूप) दान करना आवश्यक होता है।

२२ रेखा हो उस मास में बन्धुपीड़ा, शान्त्यर्थ स्र्वण का दान करना आवश्यक होता है।

२३ रेखा वाले मास में स्वयंकष्ट, शान्त्यर्थ ७ तोले सोने की सूर्यमूर्ति का दान करना आवश्यक होता है।

२४ रेखा वाले मास में बन्धुमृत्यु, शान्त्यर्थ १० गौ का दान करें।

२५ रेखा हो उस मास में बुद्धिहानि शान्त्यर्थ सरस्वती की पूजा करें।

२६ रेखा वाले मास में धन की हानि, उसके शान्त्यर्थ सुवर्णदान करना आवश्यक होता है।

२७ रेखा वाले मास में भी धनहानि, उसके शान्त्यर्थ श्री सूक्त का जप करना आवश्यक होता है।

२८ रेखा वाले मास में अनेकविध क्षति, अत: सूर्य का होम करना आवश्यक होता है।

२९ रेखा हो उस मास में विविध चिन्ता, शान्त्यर्थ घृत वस्त्र और सुवर्ण का दान उचित है।

३० रेखा वाले मास में धन-धान्य की पूर्ण रूप से प्राप्ति होती है।

कम रेखा का अनिष्ट फल जो ऊपर कहे गए हैं, उस राशि के वर्ष में (बृहस्पति) उस राशि के सौरमास में उसी राशि में जब चन्द्रमा जाय तभी उक्त फल की विशेष सम्भावना होती है। यदि उसराशि में और भी पापग्रहों से संयोग हो जाये तब फल को निश्चय ही सार्थक होना समझना चाहिये।

दान में जो वस्तु कही गयी है, वह राजा या सम्पन्न व्यक्तियों के लिये है सामान्य के लिए यथाशक्ति दान है। वस्तुओं के अभाव में उसका मूल्य ही दान करना चाहिये।

तीस से अधिक रेखाओं का फल—

जिसमें ३० से अधिक रेखा हो उस राशि के संवत्सर-मास एवं नक्षत्र में धन-पुत्र तथा सुख की वृद्धि होती है। यदि ४० से अधिक रेखा रहे तो धन-पुत्रादि पुण्य, प्रतिष्ठा और ख्याति की वृद्धि होती है।

अष्टकवर्ग महत्त्व विचार—

अष्टकवर्ग से शुद्धराशि शुभकार्यों में शुभप्रद मानी जाती है। इसलिए सभी कार्यों के लिये अष्टकवर्ग शुद्धि विचारनी चाहिये। यदि अष्टकवर्ग से शुद्ध नहीं हो तो उसकी गोचरशुद्धि आवश्यक होती है। अष्टकवर्ग से शुद्ध जो राशि हो उसमें गोचरशुद्धि विचारना व्यर्थ होता है। अष्टकवर्ग शुद्धि प्रबल होता है। अत: अष्टकवर्गशुद्धि होने पर गोचर शुद्धि जानने का प्रयास व्यर्थ होता है।

ग्रहरश्मिफल निरूपण—अष्टकवर्ग का वर्णन करने के पश्चात् अब ग्रहों की रश्मि (किरण) संख्याओं को प्रस्तुत करते हैं।

अपने-अपने परमोच्च स्थान में सूर्यादि ग्रहों की १०, ९, ५, ५, ७, ८, ५ रश्मि-संख्या होती हैं। परमनीच स्थान में शून्य रश्मि होती है। मध्य में अनुपातद्वारा रश्मि जानना चाहिये। जिसकी रश्मिसंख्या का ज्ञान करना हो उसके राश्यादि में उसके नीच राश्यादि को घटावें शेष यदि ६ राशि से अल्प हो तो उसी को अन्यथा अधिक हो तो १२ राशि में उसे घटावें शेष को अपनी उच्च रश्मिसंख्या से गुणाकर ६ से भाग देने पर लब्धि स्पष्ट रश्मिसंख्या होती है।

ग्रह रश्मि में विशेष संस्कार—

बहुत से आचार्यों ने इस तरह साधित रश्मियों में विशेष संस्कार कहा है, जैसे—ग्रह अपने उच्च में हो तो साधित रश्मिसंख्या को त्रिगुणित करें, यदि अपने मूलत्रिकोण में हो तो द्विगुणित, स्वराशि में हो तो ३ से गुणाकर २ का भाग, अधिमित्रगृह में हो तो ४ से गुणा कर ३ का भाग, मित्र के गृह में हो तो ६ से गुणाकर ५ का भाग, शत्रु के गृह में हो तो साधित रश्मि में २ से भाग, अधिशत्रुगृही हो तो २ से गुणाकर ५ से भाग तथा समगृही हो तो यथावत रश्मि रखना चाहिये। स्पष्ट रश्मिसंख्या का योग करके फल कहना चाहिये।

स्पष्ट ग्रह

सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
९	६	११	८	५	११	२
१८	२१	३	११	७	४	२४
५	१४	८	५	१६	६	१६
१६	८	२२	१७	२४	२५	२७

रश्मि संस्कार विधि

उच्च	मूल-त्रिकोण	स्व-राशि	अधिमित्र गृही	मित्र-गृही	शत्रु गृही	अधिशत्रु गृही	सम
		× ३	× ४	× ६	÷ २	× २	
त्रिगुणित	द्विगुणित	÷ २	÷ ३	÷ ५		÷ ५	यथावत

रश्मि संस्कार

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	योग
रश्मि सं.	२।५	०।०	३।४०	३।३६	४।२	३।२४	१।४३	१८।०

जैसे—स्पष्ट सूर्य ९।१८।५।१६ में सूर्य के नीच राश्यादि ६।१०।०।० को घटाने से शेष राश्यादि ३।८।५।१६ यह ६ राशि में अल्प है, अतः इसको सूर्य की उच्चरश्मिसंख्या १० से गुणाकर ३१।२०।५२।४० इसमें ६ का भाग देने पर लब्धि ५।१३ यह सूर्य की रश्मिसंख्या हुई।अब इस में विशेष संस्कार हेतु देखा कि सूर्य शनि की राशि में है, शनि सूर्य का

अधिशत्रु है (पञ्चधामैत्री चक्र पहले ही बतलाया है) अत: 'अधिशत्रु गृहेद्विघ्नापंचभक्ता' इसके अनुसार स्पष्टरश्मिसंख्या २।५ हुई।

स्पष्ट चन्द्रमा ६।२१।१४।०८ में चन्द्रमा के नीच राश्यादि ७।३।०।० घटाने से शेष ११।१८।१४।०८ को १२ में घटाकर चन्द्रमा की रश्मिसंख्या ९ से गुना करने से ६।१५।५२ इसमें ६ के भाग देने से लब्धि चन्द्रमा की रश्मिसंख्या ०।०, २।३८ अधिशत्रु की राशि में रहने के कारण ० स्पष्टरश्मिसंख्या हुई।

स्पष्ट मङ्गल ११।३।८।२२ में मङ्गल के नीच राश्यादि ३।२८ को घटाने से ७।५।८।२२ इसको १२ राशि में घटाकर शेष ४।२४।५१।३८ को मङ्गल की रश्मिसंख्या ५ से गुना करने से २२।४।१८।१० इसमें ६ के भाग देने से लब्धि रश्मि ३।४० हुई। मङ्गल सम की राशि में है अत: ३।४० यह स्पष्टरश्मिसंख्या हुई।

स्पष्ट बुध ८।११।५।१७ में बुध के नीच राश्यादि ११।१५ को घटाकर शेष ८।२६।५।१७ यह ६ से अधिक है अत: १२ में घटाकर ३।३।५४।४३ को बुध रश्मिसंख्या ५ से गुनाकर १५।१९।३३ इस में ६ के भाग देने पर लब्धि ३।१५ रश्मि हुई, बुध मित्र के गृह में है अत: रश्मि ३।१५ को ६ से गुणाकर ५ के भाग देने पर लब्धि स्पष्टरश्मि ३।३६ हुई।

स्पष्ट गुरु ५।७।१६।२४ में गुरु के नीच रश्यादि ९।५ को घटाने से शेष ८।२।१६।२४ को १२ में से घटाने से ३।२७।४३।३६ इसमें गुरु की रश्मिसंख्या ७ से गुना करने से २४।१४।५ इसमें ६ के भाग देने से लब्धि रश्मि ४।२ हुई, गुरु सम के गृह में है, अत: स्पष्टरश्मिसंख्या ४।२ हुई।

स्पष्ट शुक्र ११।४।६।१५ में शुक्र के नीच ५।२७ को घटाने से शेष ५।७।६।१५ को शुक्र रश्मिसंख्या ८ से गुणाकर ४०।५६।५० ६ भाग देने से लब्धि रश्मि ६।४९ हुई, शुक्र शत्रु के गृह में है, अत: इसमें २ से भाग देने पर स्पष्टरश्मि ३।२४ हुई।

स्पष्ट शनि २।२४।१६।२७ में शनि के नीच ०।२० को घटाने से २।४।१६।२७ को शनि रश्मिसंख्या ५ से गुनाकर १०।२१।२२ इसमें ६ से भाग देने पर लब्धि १।४३ हुई। शनि सम के गृह में है अत: यथावत् रश्मि १।४३ स्पष्टरश्मि हुई।

रश्मिफल—

यदि १ से ५ तक रश्मियोग हो तो जातक उच्चवंशज होने पर भी दरिद्र व दुःखी होता है।

रश्मियोग यदि ६ से १० हो तो जातक निर्धन-भारवाहक और स्त्री-पुत्र-गृहादि से विहीन होता है।

यदि रश्मियोग ११ हो तो अल्पधन और अल्प सन्तान हो, १२ रश्मि में भी अल्पधन-मूर्ख और धूर्त, १३ रश्मि में चोर, १४ रश्मि में धनी कुटुम्बपालक-कुलोचितकर्मा तथा विद्वान्, १५ रश्मि में सर्वविद्या युक्त व गुणी व धन से युक्त तथा कुल मुख्य होता है ऐसा ब्रह्मा ने कहा है। इसके बाद इस प्रकार फल हैं— १६ रश्मि में कुलश्रेष्ठ, १७ में बहुत सेवकों से युक्त, १८ में बहुत कुटुम्ब युक्त, १९ में यशवाला और २० रश्मि में बहुत लोगों से परिपूर्ण होता है।

२१ रश्मि हो तो जातक ५०लोगों का पालनकर्ता, २२ रश्मि में दानी और कृपालु, २३ रश्मि हो तो सुखी और सुशील होता है।

२४ से ३० तक रश्मि संख्या में धनवान्-बलवान्-राजवल्लभ, तेजस्वी और बहुत लोगों से आवृत्त होता है।

यदि ३१ से ४० रश्मिसंख्या हो तो वह १०० से १००० व्यक्तियों का पोषक व सामन्त होता है।

४१ से ५० रश्मिसंख्या हो तो राजा और ५१ से अधिक हो तो चक्रवर्ती राजा होता है।

जन्मकालिक ग्रहों की रश्मिसंख्या तथा जातक के कुलानुसार हीं फलादेश करना चाहिये।

अधिक रश्मि हो तो क्षत्रिय वंशोत्पन्न जातक चक्रवर्ती, वैश्यवंशोत्पन्न राजा, शूद्रवंशोत्पन्न धनवान् और विप्रवंशोत्पन्न विद्वान् व यज्ञकर्मादि क्रिया को करने वाला होता है।

उच्चाभिमुख (नीच से उच्च की ओर) ग्रहों की रश्मि में शुभ फल तथा नीचाभिमुख (उच्च से नीच की ओर) ग्रहों की रश्मि में न्यून फल होते हैं।

ग्रहों के शुभ या अशुभ फल रश्मियों के अनुसार ही समझना चाहिए। बिना रश्मिज्ञान के वास्तविक फल समझ में नहीं आता अतः रश्मिज्ञान करके ही फलादेश करना चाहिये।

सुदर्शनचक्र फल विचार—इसके अनन्तर अब परम गोपनीय उत्तम ज्ञान रूप सुदर्शनचक्र के बारे में बतलाता जा रहा है, जिसे जगत के कल्याणार्थ स्वयं ब्रह्माजी ने महर्षि पराशर से कहा था। सुदर्शन नाम का यह चक्र है, जिसके द्वारा दैवज्ञ जन मनुष्यों के जन्म से मृत्यु तक के शुभ या अशुभ फल को जान सकते हैं।

चक्र का स्वरूप—

एक केन्द्र बिन्दु से तीन वृत्त बना कर उसमें तुल्य भाग से १२ रेखायें खींचने परे 'सुदर्शन' चक्र निर्मित होता है।

ग्रहन्याविधि—उस चक्र में भीतरी वृत्त के द्वादश कोष्ठकों में लग्नादि द्वादशभाव ग्रह सहित, मध्य वृत्त में चन्द्राश्रित राशि से १२ भाव ग्रह सहित तथा ऊपर के वृत्त में सूर्याश्रित राशि से १२ भाव ग्रह सहित स्थापित करने से इस चक्र के एक-एक भाव में ३-३ (तीन-तीन) राशियाँ हो जाती हैं।

चक्र विशेषता—इसमें लग्न-चन्द्र और सूर्य प्रथम भाव में पड़ते हैं। उसी को तनुभाव मानकर आगे क्रमशः धन-सहज आदि सभी भाव होते हैं। इसमें प्रत्येक भाव में ग्रहों की स्थितिवश फल विचार होता है। इसमें तनुभाव में सूर्य शुभ और अन्य भाव में अशुभ होता है। पापग्रह यदि उच्च या स्वराशिस्थ हो तो अशुभ नहीं होता है। इस प्रकार ग्रहों को शुभ-अशुभ समझ कर ग्रहों के योग-दृष्टि अनुसार फल कहना चाहिये।

जो भाव अपने स्वामी या शुभग्रह से युत-दृष्ट हो उस भाव की वृद्धि एवं जो भाव पापग्रह से दृष्ट या युत हो उसकी हानि होती है।

ग्रह सहित भाव का फल उसी ग्रह के अनुसार जानना चाहिए। यदि भाव ग्रहहीन हो तो उस भाव पर जिस ग्रह की दृष्टि हो उसके अनुसार फल समझना चाहिए।

जिसमें केवल शुभग्रह हों उसका फल शुभ तथा जिसमें केवल पापग्रह हों उसका फल अशुभ इस तरह दृष्टिवश भी फल समझना चाहिये।

जिसमें मिश्रित (पाप-शुभ का योग या दृष्टि) ग्रह हो उसमें शुभाधिक से शुभ और पापाधिक से अशुभ जानना चाहिये।

यदि दोनों तुल्य हों तो उनमें जिसका अधिक बल हो उसका फल होता है। यदि बराबर बल हो तो मिश्र (शुभ-अशुभ दोनों) फल समझना चाहिये।

दृष्टि में भी जिसकी अधिक बली दृष्टि हो उसी के अनुसार फल जानना चाहिए।

भाव यदि ग्रह और ग्रहदृष्टि से हीन हो तो उसभाव के अधिपति के अनुसार फल जानना चाहिए।

शुभग्रह यदि अधिकाधिक पापवर्ग (सप्तवर्ग) में पड़े तो उसका शुभत्व नष्ट हो जाता है तथा पापग्रह यदि अधिकाधिक शुभवर्ग में पड़े तो वह शुभद हो जाता है। स्वराशि, स्वोच्च और शुभग्रह के वर्ग शुभ तथा पापग्रहराशि, शत्रुराशि और नीचराशि का वर्ग अशुभ होते हैं।

सुदर्शन चक्र

इस प्रकार सभी ग्रहों तथा भावों के शुभ और अशुभ फल का विचार करना चाहिये।

द्वादश भाव

प्र. भाव ८।२।५०।५६
द्वि. भाव ९।६।५८।५
तृ. भाव १०।११।५।५४
च. भाव ११। १५।१३।४४
पं. भाव ०।११।५।५
ष. भाव १।६।५८।४
स. भाव २।२।५०।१६
अ. भाव ३।६।५८।५
न. भाव ४।११।५।५४
द. भाव ५।१५।१३।४४
ए. भाव ६।११।५।५४
द्वा. भाव ७।६।५८।४

स्पष्ट ग्रह

सू. ९।१८।५।१६
चं. ६।२१।१४।८
भौ. ११।३।८।२२
बु. ८।११।५।१७
बृ. ५।७।१६।२४
शु. ११।४।६।१५
श. २।२४।१६।२७
रा. ६।४।५।६
के. ०।४।५।६

ग्रहों का सप्तवर्ग

ग्रह	सू.	चं.	भौ.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.
गृह	श.	शु.	गु.	गु.	बु.	गु.	बु.	शु.	भौ.
होरा	सू.	चं.	चं.	सू.	चं.	चं.	चं.	सू.	सू.
द्रेष्काण	शु.	बु.	गु.	भौ.	बु.	बृ.	श.	शु.	भौ.
सप्तमांश	भौ.	श.	बु.	श.	भौ.	बु.	भौ.	शु.	भौ.
नवांश	बु.	भौ.	चं.	चं.	श.	सू.	शु.	भौ.	शु.
द्वादशांश	सू.	बु.	भौ.	भौ.	भौ.	भौ.	गु.	भौ.	शु.
त्रिशांश	गु.	बु.	शु.	बृ.	बु.	शु.	बु.	भौ.	भौ.
शुभवर्ग	३	५	६	३	४	५	५	३	२
पापवर्ग	४	२	१	४	३	२	२	४	५

अब उपरोक्त चक्र में शुभत्व और अशुभत्व देखें। सूर्य स्वभावत: क्रूर होता है, तथा सप्तवर्ग में ३ पापग्रह के और १ अपना ४ पापवर्ग हुए, इसलिए पापाधिक होने के कारण यह अतिक्रूर हुआ।

चन्द्रमा शुभ होता है और अधिक शुभवर्ग में होने के कारण शुभ

द्वादशभावों का सप्तवर्ग

भाव	तनु	धन	भ्रातास	सुहृत	पुत्र	शत्रु	स्त्री	आयुध	धर्म	कर्म	आय	व्यय
गृह	गु.	श.	श.	गु.	भौ.	शु.	बु.	चं.	सू.	बु.	शु.	भौ.
होरा	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	चं.	सू.	सू.	सू.	चं.
द्रेष्काण	गु.	श.	बु.	गु.	सू.	शु.	बु.	चं.	गु.	श.	श.	भौ.
सप्तमांश	गु.	सू.	भौ.	शु.	बु.	गु.	बु.	श.	शु.	बु.	गु.	बु.
नवमांश	भौ.	गु.	श.	सू.	चं.	गु.	शु.	बु.	चं.	शु.	श.	बु.
द्वादशांश	श.	गु.	बु.	शु.	सू.	चं.	चं.	बु.	गु.	गु.	श.	श.
त्रिंशांश	भौ.	बु.	गु.	बु.	गु.	बु.	भौ.	बु.	गु.	शु.	गु.	बु.
शुभवर्ग	३	४	३	६	३	७	५	६	५	५	३	४
पापवर्ग	४	३	४	१	४	०	२	१	२	२	४	३

हुआ। मङ्गल क्रूर होने पर भी ६ शुभवर्ग और १ पापवर्ग होने के कारण शुभप्रद हुआ।

बुध अधिक पापवर्ग में होने के कारण अशुभप्रद हुआ। गुरु अधिक शुभवर्ग में होने के कारण शुभप्रद है।

शुक्र भी अधिक शुभवर्ग में होने से शुभप्रद हुआ।

शनि क्रूर होता है परन्तु अधिक शुभवर्ग में होने से शुभ फलद हुआ।

इस प्रकार इस जातक के चन्द्र-गुरु-शुक्र ये ग्रह शुभफलप्रद, बुध-भौम-शनि मध्यमशुभप्रद तथा सूर्य अनिष्टफलप्रद है।

भाव का फल देने में ७ ही ग्रह मुख्य होते हैं। बहुत से आचार्य राहु और केतु के फल नहीं कहे हैं परन्तु सुदर्शन चक्र में राहु का भी फल कहा गया है।

भाव फल विचार—अब सुदर्शन चक्र के अनुसार भाव का फल विचार करें—

(१) प्रथम तनुभाव में ४ ग्रहों का योग है। ग्रहयोग से राशि बलिष्ठ होता है। उन ग्रहों में सूर्य, बुध और राहु ये तीनों अशुभ हैं तथा चन्द्र शुभप्रद हैं। तनुभाव में सूर्य शुभ कहे गये हैं, अतः सूर्य मध्यम हुए, इसलिये जातक को शरीरसुख, स्वरूप, शील आदि में मध्यम समझना चाहिये। तनुभाव के सप्तवर्ग में भी शुभवर्ग कम है, अतः सामान्य फल होगा।

(२) धनभाव में केवल सूर्य है, इसलिये जातक कम धनवान् होगा, सन्मार्ग से धन संगृहीत करेगा, ऐसा समझें।

(३) सहज भाव में (शु. भौ.) का योग है, अत: शुभवर्ग अधिक होने से शुभ है, अत: सहोदर का सुख उत्तम है, सहोदरों में भ्रातृसंख्या अधिक व पराक्रम और भृत्यादि सुख उत्तम होगा।

(४) सुख भाव में अधिक शुभवर्ग के ग्रह पड़े हैं, अत: मातृ-सुख, गृह, भूमि सुख, वाहन सुख आदि अत्युत्तम होगा।

(५) सन्तान भाव में केतु हैं। अत: सन्तान सुख भी अल्प एवं बुद्धि और विद्या भी अल्प है।

(६) रिपुभाव में भी अधिक शुभवर्ग हैं, इसलिये शत्रुभय कम हो तथा शत्रु का स्वयं विनाश हो एवं शत्रु से भी लाभ हो तथा रोग भय अल्प हो।

(७) जाया भाव में एक पाप और एक शुभ ग्रह का योग है, इसलिये जायाभाव सामान्य हो।

(८) आयुर्दाय भाव ग्रहहीन है। अष्टमभाव का शुभवर्ग अधिक है, अत: आयुर्दाय मध्यम हो तथा भाव में अधिक शुभ वर्ग होने से जीवन में सफलता प्राप्त हो।

(९) धर्मभाव में केवल शुभवर्ग (शु. गु.) का योग है तथा भाव में अत्यधिक शुभ वर्ग पड़े हैं, इसलिये जातक परम पुण्यशील हो तथा यात्रा में सफल रहे।

(१०) कर्मभाव में २ शुभवर्ग एक पाप वर्ग पड़े हैं, अत: पापफलप्रद (राहु) के योग से जातक द्विविध (सत् और असत्) प्रकार का व्यापार करे। भाव में ३ शुभ राशि है, अत: शुभ कर्म में ही अधिक प्रवृत्ति होगी तथा पितृसुख, राजसम्मान भी मिलेगा।

(११) आयभाव में १ पाप, १ शुभ ग्रह का योग है, एवं भाव में अधिक शुभ वर्ग है, इसलिये लाभ भी नीति-अनीति मार्ग से होगा।

(१२) व्ययभाव में १ शुभवर्ग १ पापवर्ग के योग होने के कारण व्यय अधिक हो अर्थात् आय से खर्च अधिक हो, व्यय में शुभवर्ग अधिक रहने से अपव्यय होगा।

सुदर्शनचक्र प्रयोग के अवसर

सूर्य और चन्द्र यदि भिन्नराशि में होकर लग्न से अन्यत्र हों, तभी सुदर्शन चक्र से फल-विचार करना चाहिए। यदि तीनों (लग्न-सूर्य-चन्द्र) में से दो अथवा तीन एक राशि में रहें तो लग्न से फल विचारना चाहिये।

सूक्ष्मान्तर्दशा फल विचार

अब यहाँ द्वादश भाव की दशा-अन्तर्दशा के अनुसार वर्ष और मास आदि के फल को सुदर्शन चक्र द्वारा कहा जा रहा है।

तन्वादि द्वादश भावों के १-१ वर्ष की दशा मानकर उसी भाव को वर्षलग्न की तरह प्रयोग करना चाहिए और वहाँ से फिर तन्वादि भाव कल्पना करके आगे कहे हुए विधि से भावों के फल (उस वर्ष में) कहना चाहिए।

प्रतिवर्ष में एकराशि की १ मास अन्तर्दशा मान कर उसीराशि से आरम्भ कर १२ राशियों को क्रमश: उसमास में लग्न मान कर द्वादश भावों के फल को उस मास में जानना चाहिए।

फिर मास में उसी मास से आरम्भ कर प्रत्येक भाव की प्रत्यन्तर्दशा ढ़ाई-ढ़ाई दिन की एवं प्रति ढ़ाई दिन में १२ भावों की विदशा कल्पना कर साढ़े १२ घटी का फल ज्ञान करना चाहिए।

दशारम्भकालिक लग्न से यदि केन्द्र-कोण तथा अष्टम में शुभग्रह रहें तो शुभ समझें।

जिस भाव में राहु या केतु रहें उस भाव की हानि होती है।

जिस भाव में अधिक पापग्रह पड़े उस भाव का विनाश समझें।

१२।६ भाव से अन्यत्र शुभग्रह हों और यदि ३, ६, ११ भाव में पापग्रह हों तो शुभ समझें।

इस प्रकार जन्मकाल से प्रतिवर्ष, मासादि में भावों के फल को जानना चाहिए।

परमायुर्दाय (१२० वर्ष) में १० आवृत्ति करके लग्नादि द्वादश भावों की दशा-अन्तरदशा (एक आवृत्ति १२ वर्ष की दशा) कल्पना कर फलादेश करना चाहिए।।२४-२६।।

जैसे—प्रथम वर्ष में जन्मलग्न धनु ही वर्ष लग्न हुआ। प्रथम वर्ष में प्रथमभाव की दशा होगी। उसके अनुसार शुभग्रहों में उच्च का शुक्र चतुर्थ भाव में पड़ा है इसलिये उस भाव का फल शुभ होना चाहिये। परन्तु पञ्चम-सप्तम भाव में पापग्रह के जाने से अशुभफल होगा। धन भाव में केवल अशुभ ग्रह होने से धन और भाग्य की हानि समझें एवं आय भाव में पाप के योग से आय की हानि अर्थात् आय कम होना निश्चित है। अन्य भावों के लिये मध्यम फल स्पष्ट है।

दशाचक्र (प्रथमावृत्ति)

राशि	धनु	मकर	कुंभ	मीन	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक
वर्ष	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
मास	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दिन	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
ई. सन् २००५	२००५	२००७	२००८	२००९	२०१०	२०११	२०१२	२०१३	२०१४	२०१५	२०१६	२०१७
मास २	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
ता. १	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१

अन्तर्दशा चक्र

राशि	धनु	मकर	कुंभ	मीन	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक
वर्ष	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
मास	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
दिन	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
ई. सन् २००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००६	२००६
मास२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२
ता.१	१	१	१	१-	१	१	१	१	१	१	१	१

प्रत्यन्तर्दशा चक्र

राशि	धनु	मकर	कुंभ	मीन	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक
वर्ष	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०
दिन	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
घटी	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०	३०
ई. सन् २००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५	२००५
मास२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	२	३
ता.१	३	६	८	११	१३	१६	१८	२१	२३	२६	२८	१

अन्तर्दशा विचार—प्रथम वर्ष में प्रथम तनु भाव की ही अन्तर्दशा हुई। द्वितीयमास में द्वितीय भाव मकर की अन्तर्दशा हुई। अत: धनभाव को ही द्वितीय मास का लग्न मानकर उसके आगे कुंभादि भाव हुए। अब यहाँ

द्वितीय मास के लग्न मकर में पापग्रह होने से शरीरसुख अल्प एवं आगे ग्रहस्थिति से फल समझें। यहाँ पंचम भाव में तथा एकादश में पाप ग्रह पड़े हैं इसलिये इस मास में अधिक शुभफल और अल्प अशुभफल समझना चाहिये।

एवं आगे तृतीयादि भाव को तनुभाव मानकर तृतीयादि मास के शुभाशुभ फल को समझना चाहिए।

इस प्रकार प्रथम वर्ष में सभी मासों के फल को कहना उचित है।

फिर द्वितीय वर्ष में द्वितीय भाव को लग्न मानकर उसके आगे (तृतीयादि) भावों को धनादि भाव मानकर वर्षफल, तथा उसमें द्वितीयादि १२ राशियों को एक-एक मास अन्तरदशा मान कर उक्त विधि से १२ मासों का शुभाशुभ फल समझना चाहिये।

इस तरह १२ वर्षों में १२ भावों को लग्न मानकर १२ वर्ष का फलादेश करना चाहिए। पुनः १३वें वर्ष में जन्मलग्न से ही पुनः उक्त रीति से १२ वर्षों के फल का विचार करना चाहिए।

प्रत्यन्तर्दशा विचार—एक मास में मास लग्न (भाव) से प्रारम्भ कर क्रम से १२ भावों की प्रत्यन्तर्दशा होती है। प्रत्यन्तर्दशा का मान अढ़ाई दिन होता है। तदनुसार प्रति अढाई दिन का फल उपरोक्त विधि से समझें।

विशेष—यहाँ यह अवश्य ध्यान में रखना चाहिए कि दशा-अन्तर्दशादि में वर्ष-मास-दिनादि को सौरमान से ही कहा गया है।

फलकथनाविधि—

इस तरह सुदर्शन चक्र द्वारा वर्ष, मासादि का फल जानकर फिर अष्टकवर्ग के अनुसार वर्ष, मासादि फल का ज्ञान करना चाहिए। दोनों प्रकार से शुभ या अशुभ आने पर फल कहना चाहिए। यदि एक प्रकार से शुभ और एक प्रकार से अशुभ आता हो तो दोनों के बल के अनुसार फल कहना चाहिये।

प्रश्नविचार—अब तक बहुत-सारी बातों की चर्चा की गई है।। अब प्रश्न द्वारा ही मनुष्य के मन के भाव, पथिकों का गमनागमन, स्त्री-पुत्र का लाभ या हानि, रोगियों का जीवन मरण, इन सबका ज्ञान कैसे हो इसे प्रश्न से कैसे जाना जाय यह बतलाया जाता है।

सर्वप्रथम भावों से विचारणीय विषयों को जानें, उसके बाद भावों के बलाबल से कार्यों की सिद्धि या असिद्धि का ज्ञान करना चाहिए।

भावों से विचारणीय—प्रश्न करने वाले के शील-सुख-दुःख का ज्ञान लग्न भाव से, रत्नों के लाभ हानि का धनभाव से, पराक्रम-भ्रातृ व भृत्यसुख का विचार सहजभाव से, मित्र-गृह-ग्राम-माता तथा वाहन सुख का विचार चतुर्थभाव से, सन्तान-बुद्धि-शास्त्रों का विचार पञ्चमभाव से, शत्रु-मामा के रोग तथा व्रणादि कलह का विचार षष्ठभाव से, स्त्री-व्यापारवृत्ति गमनागमन का विचार सप्तमभाव से, मृत्यु-युद्ध-रोगभय का विचार अष्टमभाव से, वापी-कूप-देवालयादि के निर्माण का विचार नवमभाव से, राज्य-पितृसुख तथा राजकार्य का विचार दशमभाव से, कन्या-काञ्चन-धान्य तथा वाहनलाभ सम्बन्धि विचार एकादशस्थान से, शत्रु से अवरोध-भोग व्यय आदि का विचार द्वादश भाव से करना चाहिए।

भावों का बलाबल—

भाव यदि अपने स्वामी या शुभग्रहों से युत दृष्ट रहे तो वह प्रबल होता है। यदि वह पापग्रहों से युत दृष्ट हो तो दुर्बल होता है। यदि शुभ-अशुभ दोनों से युत-दृष्ट हो तो मध्यम होता है।

कपट प्रश्न—प्रश्नलग्न में चन्द्र-शनि लग्नस्थ हो, बुध रश्मिहीन तथा सूर्य कुम्भ राशि में रहे तो प्रश्नकर्त्ता कष्टभाव से आया है, ऐसा जानें।

कार्यसिद्धि प्रश्न—लग्नेश लग्न को, दशमेश दशम को या लग्नेश दशम को और दशमेश लग्न को देखें या स्व-स्व भावस्थित लग्नेश तथा कर्मेश परस्पर दृष्टियुक्त हों तो प्रयत्न से कार्यसिद्धि होती है। यदि लग्नेश तथा दशमेश पूर्णचन्द्र से दृष्ट हों तो अनायास हीं कार्यसिद्धि होती है।

एवं प्रश्नलग्न शुभग्रह से युत या शुभग्रह के षड्वर्ग में हो, शीर्षोदय राशि का हो तो शीघ्र ही कार्यसिद्धि होती है। विपरीत में कार्यसिद्धि नहीं होती है। शुभ-पाप दोनों के रहने पर विलम्ब से कार्यसिद्धि होती है।

मुष्ठिक प्रश्न—रत्नादि मृत्तिकान्त 'धातु' मनुष्यादि क्षुद्रजीवान्त 'जीव' एवं वृक्षादि तृणान्त 'मूल' होते हैं। मौष्टिक या मनोगत प्रश्न में स्वनवांशस्थ ग्रह प्रश्नलग्न या नवम-पञ्चम में स्वनवांश गतग्रह को देखें तो धातुप्रश्न, दूसरे के नवांशमें स्थित ग्रह प्रश्नलग्न या नवम-पञ्चम में स्व नवांश गतग्रह को देखें तो जीवप्रश्न, दूसरे के नवांश में स्थित ग्रह लग्न या त्रिकोणगत परनवांशस्थ ग्रह को देखें तो मूलप्रश्न समझें। इसी प्रकार

समराशि में प्रथम नवांशस्थ लग्न हो तो जीवचिन्ता, द्वितीय नवांशस्थ होने पर मूलचिन्ता एवं तृतीय नवांशगत हो तो धातुचिन्ता, फिर चतुर्थ में जीव, पञ्चम में मूल इत्यादि। विषम राशिगत प्रश्नलग्न में प्रथमनवांश में धातु, द्वितीयनवांश में मूल, तृतीयनवांश में जीव इसी तरह आगे भी समझें।

पथिकगमनागमन विचार—प्रश्नलग्न से चतुर्थ या दशम में शुभग्रह हो तो गमन तथा यदि पापग्रह हो तो आगमन नहीं होता है। लग्न-चतुर्थ या दशम से द्वितीयराशि (द्वितीय-पञ्चम तथा एकादश) में जितने दिनों में ग्रह आवें उतने हीं दिनों में आगन्तुक का आगमन होता है।

शीघ्र आगमन योग—प्रश्नलग्न से सप्तम में चन्द्र तथा नवमेश राशि के उत्तरार्ध में स्थित हों तो पथिक मार्ग हैं ऐसा में समझना चाहिए। प्रश्नलग़्न से चतुर्थ में गुरु-शुक्र या चन्द्र हों तो पथिक आने हीं वाला है। लग्न के द्वितीय या तृतीयस्थान में गुरु-शुक्र हों तो भी शीघ्रातिशीघ्र हीं आएगा ऐसा समझना चाहिए। शुक्र-बुध एवं शनि में से एक भी यदि चरलग्न में हों तो परदेशी शीघ्र आता है, यदि ग्रह वक्री नहीं हो तभी।

पथिक क्लेश योग—लग्न यदि १-२-३-४-९-१० राशि हो, उस पर पापग्रह की दृष्टि हो अथवा पापग्रह केन्द्रगत हो तो पथिक पीड़ित होता है।

पथिकारिष्ट योग—लग्न से अष्टम में सूर्य या मंगल हों तो चौरभय, सिंह का सूर्य हो और अष्टम में स्थित चन्द्र या मंगल शनि से दृष्ट हों तथा लग्न में शुभग्रह नहीं हों तो पथिक को शस्त्रभय होता है। लग्न से दशम या नवम में शुभग्रह हों तो प्रवासी धनयुक्त होता है।

विवाह प्रश्न—लग्न से ३-६-११-७-५ में चन्द्रमा हो और सूर्य-बुध-गुरु से दृष्ट हों अथवा लग्न से केन्द्र या त्रिकोण में गुरु-बुध-शुक्र व चन्द्र हों तथा लग्नेश-सप्तमेश क्रमशः सप्तम एवं प्रथमभाव में हों तो शीघ्र विवाह समझें।

स्त्रीमृत्यु योग—लग्न से ४-७ में पापग्रह हों और शुक्र बलहीन हो, सप्तम में राहु हो तो स्त्रीमृत्यु समझनी चाहिए।

सप्तमभाव सपाप हो और चतुर्थभाव शुभग्रह युक्त हो तो पत्नी की मृत्यु तथा दूसरी की स्थिरता होती है। दोनों स्थान यदि पापयुक्त हों तो दोनों की मृत्यु होती है।

गर्भप्रश्न—पञ्चम में शुभग्रह अपने स्वामी से युक्त हो अथवा दृष्ट हो, मासेश भी बलवान हों तो सकुशल गर्भ समझें। पंचमभाव यदि पापयुक्त

हो परन्तु अपने स्वामी से युतदृष्ट नहीं हो और मासेश भी दुर्बल हो तो गर्भनाश होता है।

सन्तान प्रश्न—पंचमेश तथा लग्नेश विषमराशि में हो तो पुत्र, समराशि में हो तो कन्या। शनि यदि विषमराशि या विषमनवांश में हों तो पुत्रजन्म होता है। विषमराशि या विषमनवांश के सूर्य-चन्द्र तथा गुरु पुत्रजन्मप्रद में होते हैं। पंचमस्थान पर शुक्र-मंगल-चन्द्र की दृष्टि रहने पर भी पुत्रजन्म होता है।

बलवान् शुक्र व चन्द्र पञ्चमस्थान को देखें तो पुत्रजन्म और यदि पञ्चस्थान में हों तो कन्या जन्म होता है। नीचराशि या अस्तंगत या शत्रुभवनस्थ या त्रिक (६।८।१२) में शुक्र व चन्द्र रहें तो सन्तानबाधा होती है। यदि वे बली होकर लाभस्थान में रहें तो पुत्रोत्पत्ति होती है।

पञ्चमेश लग्न में व लग्नेश पंचम में चन्द्र के साथ हो, लग्नेश तथा पञ्चमेश उच्चस्थ हों और पञ्चमेश तथा लग्नेश परस्पर दृष्टिगत हों तो नि:सन्देह पुत्रजन्म होता है।

पञ्चमेश अस्तंगत या नीचराशिगत या पापग्रहों से पीड़ित हो तो प्रश्नकर्त्ता पुत्रहीन होता है या पुत्र होने पर पुत्र की मृत्यु हो जाती है। पञ्चमेश यदि राहु या मंगल के साथ हो तो पुत्रहीनता होती है ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है।

रोगीप्रश्नविचार—लग्न यदि पापग्रह की राशि हो, अष्टमस्थान पापयुक्त अथवा पापदृष्ट हो या पापद्वयमध्यगतचन्द्र सपाप होकर अष्टमस्थ हो या पापग्रह अष्टम अथवा द्वादशस्थ हो या चन्द्र प्रश्नलग्न से १।६।७।८ में हो या चन्द्र लग्न में, सूर्य सप्तम में हो या मेषस्थ भौम वृश्चिकनवांशगत चन्द्र के साथ हो तो रोगी की मृत्यु होती है।

सप्तमभाव शुभग्रह युक्त हो, अथवा लग्नेश उदित हों, अष्टमेश निर्बल तथा लाभेश बली हो तो रोगी का कल्याण होता है। प्रश्नलग्न से सप्तम में शुभपाप दोनों हों तो मिश्रफल होता है।

अतएव प्रश्ना कुण्डली से जो-जो वस्तु यहाँ बतलाया गया है, इसी प्रकार अन्यान्य वस्तुओं का ज्ञान प्रश्न कुण्डली से निसन्देह किया जा सकता है।

॥ इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का एकविंशम पुष्प रूप 'अष्टक वर्ग आदि विवेचन' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ॥२१॥

—✻✻✻—

२२

पञ्चमहापुरुष-भूत विचार

पञ्चमहापुरुष लक्षण कथन—अब यहाँ पञ्चमहापुरुष लक्षणों को पहले कहा जा रहा है। भौमादि ग्रह बली होकर स्वोच्च या स्वराशि का केन्द्र में स्थित हों, तो क्रमशः रुचक, भद्र, हंस, मालव्य और शश नामक पंचमहापुरुष योग पूर्वाचार्यों ने बतलाया है।

रूचक लक्षण—रुचक योगोत्पन्न जातक का मुख लम्बा, अति उत्साही, निर्मलकान्ति, बलवान्, सुन्दर भ्रू युक्त, कृष्ण केश़, सुरुचिवाला, युद्धप्रिय, रक्तश्यामवर्ण, शत्रुहन्ता, विवेकी, चोरों का स्वामी, क्रूर, राजा, मन्त्रज्ञ, दुर्बल जङ्घा, ब्राह्मण भक्त, हाथ में वीणा-वज्र-धनुष-पाश-वृषभ और चक्र रेखा से युक्त तथा अभिचार (मारणमोहन) कर्म में निपुण होता है। सौ अङ्गुल लम्बा, मुख व मध्य (कटिभाग) में तुल्य तथा वजन में एकहजार तुल्य होता है। विन्ध्य और सह्याचल पर्वतीय प्रदेश का शासक होता है। अन्त में ७० वर्ष की आयु में शस्त्र या अग्नि के द्वारा स्वर्ग जाता है।

भद्र लक्षण—भद्रयोग में उत्पन्न पुरुष सिंह सदृश, उच्च वक्षःस्थल युक्त, हाथी सदृश धीर गति, लम्बी भुजावाला, पण्डित, चतुरस्त्र, योगक्रिया का ज्ञाता, सत्त्वगुणी, सुन्दर पैर व दाढ़ी-मूँछ, भोगी, शङ्ख-चक्र-गदा-शूल-हाथी-ध्वजा-हल रेखाओं से चिह्नित हाथ-पैरवाला, सुन्दर नासिकायुक्त, शास्त्रज्ञ, काले बालों से शोभित, सब कार्यों में स्वतन्त्र तथा अपने परिवार का पालक होता है। मित्र लोग भी उसका धनभोग करते हैं। वह तौल में पूर्णभारयुक्त होता है। स्त्री-पुत्रादि से संयुक्त, सकुशलराजा, वह मध्यदेश का रक्षक होकर सौ वर्ष तक जीवन जीता है।

हंस लक्षण—हंस योग में उत्पन्न पुरुष-हंस समान ध्वनि, सुमुख और उन्नत नासिका युक्त, कफप्रकृति, पिङ्गल नेत्र, रक्तनख, तीक्ष्णबुद्धि, पुष्ट कपोल, गोलमस्तक, सुन्दर पैर युक्त, उसके हाथ व पैर में मत्स्य-अङ्कुश-धनुष-शङ्ख-कमल-खाट सदृश रेखाचिह्न होते हैं। वह कामुक होता है, उसे स्त्री भोग से तृप्ति नहीं होती। उसके कद की लम्बाई ९६ अङ्गुल, वह जलक्रीड़ा प्रेमी, सुखी, गङ्गा-यमुना के मध्यवर्ती देश का पालक होकर सर्व सुख भोगते हुए सौ वर्ष जीता है।

मालव्य लक्षण—मालव्य योग में उत्पन्न पुरुष पतली कमर वाला,

चन्द्र के समान कान्ति, सुगन्ध युक्त शरीर वाला, हल्का रक्तवर्ण, मध्यम कद, सुन्दर व स्वच्छ दाँत, हाथी के जैसा गम्भीर स्वर, घुटने तक लम्बी बाहु, उसके मुख की लम्बाई १३ अंगुल और चौड़ाई १० अंगुल होती है। वह ७० वर्ष तक सिन्धु और मालवक्षेत्र का सुखपूर्वक पालन करने के बाद सुरलोक को जाता है।

शश लक्षण—शश योग में उत्पन्न पुरुष छोटे दाँत और छोटे मुख वाला, शरीर मध्यम, पतली कमर, सुन्दर जाँघ, बुद्धिमान्, वन और पर्वत आदि में विहार करने वाला, शत्रु के भेद का ज्ञाता, सेनानायक, ऊँचे दाँतों से युक्त, चञ्चल, धातुज्ञाता, स्त्री प्रेमी, परधन पाने वाला होता है। हाथ पैर में माला-वीणा-मृदङ्ग और शस्त्र चिह्न से युक्त वह सत्तर वर्ष तक सुखपूर्वक राज्य करते हुए अन्त में सुरधाम को जाता है।

पञ्चमहाभूत का प्रयोजन कथन—अब पाँच प्रकार के महापुरुष योग कहने के अनन्तर अब आकाशादि पञ्चमहाभूत को प्रस्तुत करने की चेष्टा करते हैं। जिसके द्वारा अज्ञात जन्म लग्न वालों के लिए ग्रहों की वर्तमान दशा का ज्ञान किया जाता है।

अग्नि, भूमि, आकाश, जल और वायु के स्वामी क्रमशः भौमादि पाँचों ग्रह होते हैं। ग्रहों के बलानुसार ही उस ग्रहसम्बन्धी पञ्चमहाभूत का फल जानना चाहिये।

जातक प्रकृति कथन—जिसके जन्मसमय में भौम बलवान हो वह अग्निप्रकृति का, बुध बलवान हो तो भूमि प्रकृति का, गुरु बली हो तो आकाश प्रकृति का, शुक्र बली हो तो जल प्रकृति का और शनि बलवान हो तो वातप्रकृति का होता है। यदि अधिक ग्रह बलवान रहें तो मिश्रित प्रकृति का होता है।

पंचभूत स्वभाव लक्षण—सूर्य बली हो तो अग्निस्वभाव और चन्द्र बली हो तो जलस्वभाव होता है। सभीग्रह अपनी-अपनी दशा में अपने महाभूत सम्बन्धि छाया (स्वभाव) का बोध कराते हैं।

अग्निस्वभाव का मनुष्य क्षुधार्त, चञ्चल, वीर, दुर्बल, विद्वान्, अधिक भोजन करने वाला, तीक्ष्ण, गौरवर्ण और स्वाभिमानी होता है।

भूमिस्वभाव का मनुष्य कपूर व कमल के समान गन्ध वाला, भोगी, स्थिरसुख से युक्त, बलयुक्त, क्षमाशील और सिंह की तरह गम्भीर स्वर वाला होता है।

आकाशतत्त्व स्वभाव का मनुष्य शब्दार्थ का ज्ञानी, नीतिनिपुण, प्रतिभायुक्त, ज्ञानी, खुले मुख और लम्बा कद वाला होता है।

जलतत्त्व स्वभाव का मनुष्य कान्तियुक्त, भारवाही, मधुरभाषी, राजा, बहु मित्र वर्ग युक्त और विद्वान् होता है।

वायुतत्त्व स्वभाव का पुरुष दानी, क्रोधी, गौरवर्ण, भ्रमणप्रिय, राजा, शत्रुजेता और दुर्बल शरीर वाला होता है।

पंचतत्त्वों की छाया—अग्नितत्त्व स्वभाव पुरुष का शरीर सुवर्णकान्ति का, शुभ्रदृष्टि, सब कार्य सिद्धि, शत्रुविजय और धनलाभ करने वाला होता है।

भूमितत्त्व स्वभाव का पुरुष (बुध की प्रबलता) सुन्दर सुगन्धि युक्त शरीर वाला तथा नख-केश-दन्त सब स्वच्छ, एवं धर्म-धन-सुख से युक्त होता है।

आकाश तत्त्व स्वभाव का पुरुष (बृहस्पति प्राबल्य) रहे तो बोलने में चतुर तथा गीत-वाद्यादि के श्रवण से सुख प्राप्त करने वाला होता है।

जलतत्त्व स्वभाव का पुरुष (शुक्र या चन्द्र की प्रबलता) शरीर से कोमल तथा स्वस्थ और विविध सुस्वाद भोजन से सुखी होता है।

वायुतत्त्व स्वभाव का पुरुष (शनि की प्राबलता) रहे तो मलिन शरीर,. मूढ, दरिद्र, वातरोगी और शोक-सन्ताप से युक्त होता है।

इस प्रकार पञ्चतत्त्वों के जो फल होते हैं वे भौमादि ग्रहों के बली रहने पर ही पूर्णरूप से होते हैं, बलहीन रहें तो फलों में बलानुसार अल्पता समझना चाहिए।

ग्रह यदि नीच में, शत्रु या दुष्टराशि में रहे तो विपरीत फल समझें। ग्रह यदि बलहीन रहे तो उसका फल स्वप्न अथवा मन में प्राप्त होता है।

जिसका जन्मकाल अज्ञात हो उसका वर्तमान लक्षण से वर्तमान ग्रह की दशा समझें और दुष्टफल शान्त्यर्थ शान्तिग्रह की आराधना करें और करावें।

प्रयोजन कथन—जिस समय जिस ग्रहतत्त्व का उदय हो, तदनुकूल कार्य से लाभ, अन्यथा हानि होती है। इसीलिए मुनियों ने ग्रहों के तत्त्वादिफल कहे हैं।

तत्त्व के उदय (ग्रह की दशा) अनुसार कार्य करें। अशुभ ग्रहों के लक्षण (अशुभ फल) में उनकी शान्ति करावें।

जैसे—अग्नितत्त्व (भौम की दशा) में जो फल कहे गये हैं वह लक्षित हो तो समझें कि इस समय भौम का समय है। तत्तद फलों की प्राप्ति से ग्रह की प्रसन्नता और फलहानि से क्रूरता समझकर उनकी शान्ति और तदनुकूल कार्य करना चाहिए।

जिस ग्रह की दशा में धन या सुखादि जो फल उक्त हैं—वह ग्रह यदि जन्मसमय या दशासमय में बलवान रहे तो जाग्रत् में प्रत्यक्ष फल, यदि निर्बल रहे तो स्वप्न में अथवा मानसिक चिन्ता में वह फल प्राप्त होता है।

सत्त्वादिगुणफल—अब सत्त्व, रज और तम; इन तीनों गुणों के अनुसार फल को बतलाते हैं—

जब सत्त्वगुण ग्रह की प्रबलता रहे उससमय उत्पन्न हुआ जातक सत्त्वगुणी और विद्वान होता है।

रजोगुण ग्रह के समय में रजोगुणी व बुद्धिमान् तथा तमोगुण ग्रह के समय में तमोगुणी व मूर्ख होता है।

गुण-साम्य हो अर्थात् तीनों गुणवाले ग्रहों का गुण रहे उससमय में उत्पन्न जातक मिश्रगुणी व मध्यम बुद्धि का होता है।

गुण के प्रकार—उत्तम-मध्यम-अधम और उदासीन चार प्रकार के गुण होते हैं। अत: चार तरह के प्राणी होते हैं। इनके गुणों को यहाँ प्रकट करने जा रहे हैं, जिसे प्राचीन (नारदादि) मुनियों ने कहा है।

उत्तम-मध्यम-अधम के लक्षण—सत्वगुण में इन्द्रिय और मन का संयमी, तपस्या, शौच, क्षमा, सरलता, सत्यवादिता, अलोभी व तपस्वी ये स्वभाव होते हैं।

रजोगुण में शूर, प्रतापी, धीर, चतुर, युद्ध में पीछे न हटने वाला तथा सज्जनों का रक्षक ये स्वभाव होते हैं।

तमोगुण में लोभी, मिथ्याभाषण, मूर्ख-आलसी और सेवाकार्य में पटु ये स्वभाव होते हैं।

उदासीन के लक्षण—गुणसाम्य में कृषिकार्य-वाणिज्य-पशुओं की सेवा में पटु तथा सत्य या असत्य भाषण करना ये स्वभाव होते हैं।

इस प्रकार लक्षणों देखकर ही उत्तम-मध्यम-अधम और उदासीन प्रवृत्ति के अनुसार समझना चाहिए तथा तदनुसार उसी कार्य में संलग्न करना चाहिये।

त्रिगुणों में से दो गुण प्रबल रहें तो उसकी प्रबलता अन्यथा (बल दो से अधिक नहीं रहे तो) गुणसाम्य होता है।

गुण प्रयोजन—स्वामी-सेवक एवं स्त्री पुरुष में यदि समान गुण (स्वभाव स्वरूप आदि) हों तो प्रेम-स्नेह होता है।

पूर्वोक्त चार प्रकार के मनुष्यों में यदि अधम-उदासीन, उदासीन-

मध्यम और मध्यम-उत्तम का सम्बन्ध रहे तब भी परस्पर प्रेम एवं स्नेह होता है।

मेलापन विचार—यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि यदि वर से कन्या और स्वामी से सेवक गुणों में कम रहें तो परस्पर प्रेम व स्नेह होता है। अन्यथा वर से कन्या और स्वामी से सेवक गुणों में अधिक रहें तो प्रेम व सौहार्द्र की हानि होती है।

गुणों से जातक भेद विचार—माता-पिता-जन्मसमय और सङ्गति (संसर्ग) ये उत्तम मध्यम आदि चार गुणों के कारण होते हैं, इनमें उत्तरोत्तर कारण बलवान् होता है।

अतः इससे यह सिद्ध होता है कि पिता के गुण बल १ माता में २, जन्मसमय में ३ और संसर्ग में ४ गुण बल होते हैं।

जन्मसमय में जिस गुण की प्राबलता रहती है, वही गुण जातक में होता है, अतः जन्म का समय परीक्षण करके ही फलादेश करना चाहिये।

त्रैलोक्य का ईश्वर अविनाशी-व्यापक-भगवान्स्वरूप काल ही समस्त चराचर का उत्पादक, पालक और संहारक होता है।

कालस्वरूप भगवान् की त्रिगुणात्मिका शक्ति ही प्रकृति होती है। उस त्रिगुणात्मक शक्ति से विभाजित अव्यक्तकाल भी व्यक्त रूप में होते हैं।

भगवान् काल के गुणों के अनुसार क्रमशः उत्तम-मध्यम-उदासीन और अधम ये चार अङ्ग होते हैं।

काल स्वरूप भगवान् के उत्तम अङ्ग से उत्तम जन्तु (चर वा अचर), मध्यम से मध्यम, उदासीन से उदासीन और अधमाङ्ग से अधम की सृष्टि होती है।

उत्तम अङ्ग कालभगवान् का शिर, मध्यम हाथ व वक्ष, उदासीन दोनों जङ्घा और अधम अङ्ग दोनों पैर होते हैं।

इस प्रकार गुणभेदानुसार काल के भेद और चर-अचर में जातिगत भेद होता है।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का द्वाविंशम पुष्प रूप 'पञ्चमहापुरुष-भूत विचार' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।२२।।

—❊❊❊—
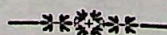
२३
प्रकीर्ण विषय निरूपण

नष्टजातक विचार—जन्मकाल के द्वारा मनुष्यों के शुभाशुभ फल को अब तक कहा गया है, किन्तु जिसका जन्मकाल ज्ञात न हो उसके शुभ या अशुभ फल को कैसे जाना जा सकता है। अत: उस नष्टजातक अर्थात् जिसका जन्म समय अज्ञात है तो कुण्डली फल को जानने की विधि को आगे कहते हैं।

वर्ष-अयन-ऋतु-मास-पक्ष-तिथि-नक्षत्र-लग्न-राशि या अंशादि यदि सभी अज्ञात हो तो वह प्रश्नलग्न से जाना जा सकता है।

वर्षज्ञान पद्धति—प्रश्न लग्न में जिसका द्वादशांश हो उसी राशि के संवत्सर में प्रश्नकर्ता का जन्म समझें अर्थात् जन्म वर्ष में उसी राशि में बृहस्पति था। प्रश्नलग्न का पूर्वार्ध (प्रथम होरा) हो तो सौम्यायन और उत्तरार्ध (द्वितीय होरा) हो तो याम्यायन समझें। लग्नगत द्रेष्काणस्वामी से शिशिरादि ऋतु समझें। इसमें शनि से शिशिर, शुक्र से वसन्त, मंगल से ग्रीष्म, चन्द्र से वर्षा, बुध से शरद्, गुरु से हेमन्त और सूर्य से भी ग्रीष्म ऋतु समझें।

यदि अयन एवं ऋतु में भिन्नता हो तो बुध के स्थान में मंगल, चन्द्र के स्थान में शुक्र और गुरु के स्थान में शनि मान कर ऋतु समझें।

ऋतु ज्ञान के बाद द्रेष्काण के पूर्वार्ध में ऋतु का प्रथम मास और उत्तरार्ध में द्वितीय मास। द्रेष्काण के गतांश पर से अनुपात द्वारा तिथि (सूर्यांश) का ज्ञान करें। उस सूर्यांश पर जो इष्ट घटी हो, वही प्रश्नकर्ता का जन्मसमय जानें। स्पष्टग्रह और द्वादश भाव उसी इष्टघटी से साधन करके उसका फलादेश करें।

गुरु १२ बारह वर्षों के बाद पुन: उसी राशि में आ जाता है, तो किस पर्याय में जन्म सम्वत्सर होगा? उसे कहते हैं—

संवत्सर के संदिग्ध होने पर प्रश्नकर्ता के अवस्था के अनुमान से प्रश्नचक्र और जन्मचक्र के गुरु के राश्यन्तर में १२, १२ जोड़ने से जितनी संख्या आवे उससे सम्भव संख्यातुल्य वर्ष मानकर कर संवत्सर समझें। बारह जोड़ने पर भी यदि अवस्था में अन्तर मालूम हो तो प्रश्नलग्न से त्रिकोणराशि में गुरु को मान कर अवस्था के अनुमान से (लग्न-पञ्चम-नवम जिससे

सम्भव हो सके) संवत्सर का ज्ञान कर अयन-ऋतु आदि का ज्ञान पूर्वोक्त विधि से कर लेना चाहिए।

जन्मेष्ट काल विचार—पूर्वोक्त विधि से संवत्सर में मास और सूर्य के अंशादि से जन्मेष्टकाल का ज्ञान कैसे हो सकता है, उसे आगे इस प्रकार जानना चाहिए।

सूर्य के राशि अंश आदि ज्ञान के बाद सूर्य के जितने गत अंश हों उतने ही दिन संक्रान्ति से आगे में सूर्योदयकालिक स्पष्टसूर्य का आनयन करें, फिर इस सूर्य और इष्ट (आगत जन्मकालिक) सूर्य के अन्तर को कलादि बनाकर ६० साठ से गुणा कर गुणनफल में स्पष्ट सूर्य गतिकला का भाग देने पर जो लब्ध घट्यादि हो उतना ही सूर्योदय के पूर्व या पश्चात् जन्मसमय समझें। यदि औदयिक सूर्य से इष्ट सूर्य अधिक रहे तो सूर्योदय के उतने देर बाद, यदि अल्प हो तो सूर्योदय से उतना पूर्व इष्टघटी समझें।

जैसे—किसी को अपने जन्म काल का ज्ञान नहीं है, उसकी आयु २० वर्ष के आसन्न है। वह सम्वत् २०३५ माघ शुक्ल १० मंगलवार सूर्योदय से इष्टघटी पल ३१।३८ पर अपने नष्ट जन्मपत्र बनाने के लिये प्रश्न किया। उस समय के स्पष्ट सूर्य ९।२४।१५।२४, अयनांश २३।८।४० राश्यादि लग्न ४।१६।३५।१२।

लग्न में ७ वाँ द्वादशांश कुंभ राशि का है। अत: ज्ञात हुआ कि प्रश्नकर्ता के जन्म समय में गुरु कुंभ राशि में था अर्थात् कुंभ राशि सम्बन्धी संवत्सर था।

अब प्रश्न काल में गुरु को देखा तो वह कर्क राशि में है। एक-एक राशि में गुरु एक-एक वर्ष रहता है, इसलिये निश्चय हुआ कि प्रश्नकालिक सम्वत् २०३५ से ६ वर्ष पूर्द कुंभ में गुरु की स्थिति थी फिर उससे बारह वर्ष पूर्व कुंभ में गुरु की स्थिति निश्चत हुई। इसलिये ६ में बारह जोड़ने से १८ वर्ष पीछे कुंभ का गुरु हो सकता है तथा प्रश्नकर्ता का अनुमानित वर्ष भी २० के आसन्न है, अत: प्रश्न समय से १७ वर्ष पूर्व के सम्वत्सर में कुंभ के गुरुसंवत्सर में प्रश्नकर्ता का जन्म सिद्ध हुआ। इसलिये प्रश्न सम्वत्सर में १७ घटाने से २०१८ जन्म का सम्वत् हुआ। उस सम्वत्सर का पञ्चाङ्ग देखा तो कुंभ में गुरु था याने कुंभ राशि सम्बन्धी सम्वत्सर हुआ। स्पष्ट मान से गुरु कभी एक राशि आगे-पीछे भी हो जाता है। सम्वत्सर मध्यम मान से ही लेना चाहिये।

अयन ज्ञान—प्रश्न लग्न राशि के उत्तरार्ध में (१५ अंश से अधिक) है, अत: 'याम्यायन' जन्मसमय हुआ।

ऋतु ज्ञान—लग्न में गुरु का द्रेष्काण है, अत: हेमन्त ऋतु सिद्ध हुई, अब यहाँ अयन और ऋतु में सामंजस्य हुआ, अर्थात् याम्यायन में वर्षा-शरद् और हेमन्त ये तीन ऋतुयें होती हैं।

मास ज्ञान—प्रश्न लग्न में द्वितीय द्रेष्काण का उत्तरार्ध है। अत: हेमन्त ऋतु का द्वितीय मास (सौर पौष) सिद्ध हुआ। क्योंकि मार्गशीर्ष और पौष हेमन्त ऋतु है।

सूर्यांश ज्ञान—प्रश्न लग्न के द्वितीय द्रेष्काण का उत्तरार्ध १५ अंश के ऊपर होता है अत: द्वितीय द्रेष्काण के उत्तरार्ध का गत अंशादि १।३५।१२ है। इससे जन्म कालिक सूर्यांश (सौर पौष गतांश) जानने के लिए द्रेष्काण के गतांशादि का कला बनाया तो ९५।१२ हुआ। इससे अनुपात हुआ कि द्रेष्काण के उत्तरार्ध (५ अंश) की कला ३०० में ३० अंश तो गत अंश की कला (९५।१२) में क्या? गतांश कला को तीस से गुना कर तीन सौ के भाग देने से लब्ध अंशादि ९।३०।०२ हुआ, यही जन्मकालिक धनु के सूर्य के भुक्तांश हुए। अत: प्रश्नकर्ता के जन्मकाल का राश्यादि स्पष्ट सूर्य ८।९।३०।२ हुआ।

अब स्पष्ट सूर्य जानकर जन्मेष्ट काल साधन—स्पष्ट सूर्य से ज्ञात हुआ कि धनु की संक्रान्ति काल से सूर्य के ९ अंश बीत गये हैं। अत: धनु की संक्रान्ति से ९वें दिन सं० २०१८ के पञ्चाङ्ग द्वारा उदय कालिक स्पष्ट सूर्य बनाया तो राश्यादि ८।९।२९।४० हुआ तथा गति ६१।२३ है। औदयिक सूर्य से जन्मकालिक सूर्य अधिक है। अत: जन्मकालिक सूर्य ८।९।३०।२ में औदयिक सूर्य ८।९।२९।४० घटाया तो कलादि अन्तर ०।१९ हुआ। इसको विकला बनाया तो १९ इसमें साठ से गुणा कर ११४० इसमें सूर्य गतिविकला को एक जातीय बनाकर (३६८३ इससे) भाग देने से लब्ध घट्यादि काल ०।१८ हुआ। औदयिक सूर्य से जन्मकालिक सूर्य अधिक है, अत: सूर्योदय से ०।१८ यही घट्यादि जन्मेष्टकाल हुआ। इस पर से ग्रह और भाव साधन कर जो जन्मपत्र बने वही प्रश्नकर्ता का नष्ट जन्मपत्र समझना चाहिये।

इस प्रकार ज्यौतिष के द्वारा प्रश्न लग्न से वास्तव जन्मकाल का ज्ञान प्राय: हो जाता है और उससे ही जन्मपत्र बन जाता है। यह सोचना युक्ति और प्रमाण से बाहर है। कारण कि यदि कोई युक्ति होती तो फिर "यन्त्रै: स्पष्टतरोऽत्र जन्मसमयो वेद्योऽथ खेटा: स्फुटा:"— इस प्रकार का महर्षियों का आदेश क्यों होता? फिर भी जन्म समय यदि अज्ञात हो तो

श्रद्धापूर्वक प्रश्न से ऋषियों द्वारा बताये मार्ग से नष्टजन्मपत्र बनवा कर शुभाशुभ फल जानने में कोई बुराई भी तो नहीं है।

जन्मकाल के संवत्-अयन-ऋतु-मास आदि में से जो ज्ञात हो उसके लिये प्रश्न नहीं करें। जो नहीं ज्ञात हो, उसी के लिये प्रश्न करें और उक्त विधि से ज्ञात करें। इसलिये वराहमिहिर ने बृहज्जातक में कहा है कि— 'अज्ञातजन्मापरिबोधकाले संपृच्छतो जन्म वदेन्नराणाम्।'।

प्रव्रज्यायोग विचार—अब यहाँ उस प्रव्रज्या योग को बतलाया जा रहा है, जिस योग से लोग सर्वस्व त्याग कर विरक्त हो जाते हैं।

किसी एक भाव में चार या उससे अधिक (५, ६, ७) ग्रह बली होकर रहें हो तो प्रव्रज्या योग होता है। यदि सूर्य बलवान हो तो तपस्वी, चन्द्र हो तो कपाली, भौम हो तो रक्तवस्त्रधारी, बुध हो तो दण्डी, गुरु हो तो संन्यासी, शुक्र हो तो चक्रधारी, शनि हो तो नग्न (नागा) होता है। यदि बहुत ग्रह बली हों तो उनमें जो सबसे बली हो उसी की प्रव्रज्या होती है।

ऊपर चार से अधिक ग्रह के कारण जो प्रव्रज्या योग कहा गया है वहाँ एक भाव का अभिप्राय ग्रहों का सन्निकट स्थित होने से है। स्वल्पान्तर से भिन्न राशि में ग्रहों के रहने पर भी प्रव्रज्या योग हो सकता है एक राशि में रहने पर भी यदि अधिक अन्तर हो तो योग नहीं हो सकता। भिन्न राशि में अत्यल्प अन्तर जैसे मेष के तीसवाँ अंश में और वृष के प्रथम अंश में जैसे वृष ०।२९।४९।५५ और १।१।१५।४० हो तो दोनों को एकस्थ कहा जा सकता है, क्योंकि इनका अन्तर एक अंश से भी अल्प है। ग्रह यदि निर्बल (उच्चादि षड्बलहीन) रहें तो भी योग नहीं होता।

निर्बल प्रवज्यायोग—यदि प्रव्रज्याकारक ग्रह बली होते हुए भी सूर्यसान्निध्य से अस्त हों तो जातक उस सम्प्रदाय में रहकर भी दीक्षित नहीं हो पाता है।

अन्य ग्रह उच्चादि में होकर यदि सूर्य सान्निध्यवश अस्त रहें तो सूर्यजन्य प्रवज्या होती है।

अन्य योग—जन्मराशीश यदि अन्यग्रहों की दृष्टि से वंचित होकर शनि को देखे तो शनि और जन्मराशीश में जो बलवान रहे उसी की प्रव्रज्या होती है।

जन्मराशीश यदि निर्बल रहे और केवल शनि से दृष्ट रहे तो शनि की प्रव्रज्या (नग्न सम्प्रदाय) होती है।

चन्द्रमा यदि शनि के द्रेष्काण में होकर भौम या शनि के नवांश में हो और शनि चन्द्र को देखे तो शनि की प्रव्रज्या होती है।

भौमादि ग्रहों में एक अंश में योग होने पर युद्ध समझा जाता है, उनमें शुक्र उत्तर या दक्षिण रहे वह जयी कहलाता है। अन्य (बु. गु. मं. श.) में जो उत्तर रहे (सौम्यशर) वह जयी और दक्षिण (याम्यशर) वाला पराजित होता है।

प्रव्रज्याच्युतियोग—प्रव्रज्या कारक ग्रह यदि युद्ध में पराजित हो तो जातक उस प्रव्रज्या को ग्रहण करके फिर उसे छोड़ देता है।

बलतुल्यता में प्रवज्या विचार—जन्मकाल में यदि बहुत से प्रव्रज्याकारक ग्रह हों और बल में तुल्य हों तो, वहाँ किसकी प्रव्रज्या होती है? इसके बारे में आगे बतलाते हैं—

यदि प्रव्रज्याकारक बहुत से ग्रह बलवान् हों तो उन सब ग्रहों की प्रव्रज्या प्राप्त होती है।

प्रव्रज्याकारक ग्रहों में जिसकी दशा पहले आती है, उसकी प्रव्रज्या को जातक पहले ग्रहण करता है। पुनः दूसरे ग्रह की दशा आने पर पहली प्रव्रज्या को छोड़ दूसरी प्रव्रज्या ग्रहण कर लेता है।

यदि गुरु नवमभाव में हो तथा चन्द्र-गुरु व लग्न इन तीनों को शनि देखे हो तो राजयोग कारक प्रव्रज्या होती है। अर्थात् जातक बुद्ध-महावीर आदि के समान होता है।

लग्न से नवम स्थान में यदि शनि रहे और उस पर किसी भी ग्रह की दृष्टि नहीं हो तथा कोई राजयोग हो तो जातक राजा होकर भी दीक्षित होता है यदि राजयोग नहीं रहे तो निश्चित ही परिव्राजक होता है।

स्त्रीजातक विचार—यहाँ विविध प्रकार से जातक फल को बतलाया गया है, उनमें स्त्री जातक का फल कैसे जाना जाय, इसे आगे इस प्रकार कहते हैं—

अब उसे भी बतलाया जाता है। पूर्व में जो फल कहे गये हैं वे सब पुरुषों के तरह स्त्रियों के भी समझें। उसमें भी जो विशेष हैं उसे बतलाया जाता है। स्त्री का देह फल लग्न से, सन्तान पञ्चम से, पति-सौभाग्य सप्तम से तथा अष्टम से वैधव्य समझना चाहिए। अन्य फल पुरुष के जैसे स्त्रियों का भी समझें। जो फल स्त्री में सम्भव न हो वह उसके पति में समझें।

स्त्री कुण्डली में लग्न और चन्द्र सम राशि में हों तो वह स्त्रियोचित स्वभाव युक्ता, सुशीला, रूपवती और शुभलक्षण से युत होती है।

यदि लग्न व चन्द्र दोनों विषमराशि में हों तो वह पुरुष जैसे स्वभाव व आकृति की होती है। यदि पापग्रह की दृष्टि या योग रहे तो शील और गुणों से विहीन होती है। मिश्र में मिश्रित फल समझें अर्थात् लग्न और चन्द्र में एक सम और एक विषम राशि में रहे तो उसे पुरुष और स्त्री दोनों गुणों से युक्त समझें। लग्न और चन्द्र में जो बलवान हो उसका गुण अधिक होता है।

त्रिशांश फल विचार—लग्न व चन्द्र में जो बलीं रहे उसकी राशि और त्रिंशांश के अनुसार स्त्रियों का फल विशेषकर समझना चाहिए।

लग्न और चन्द्र में जो बली हो वह यदि मेष या वृश्चिक राशि का होकर भौमत्रिंशांश में रहे तो वह कुचरित्रा होती है। यदि शुक्र त्रिंशांश में रहे तो विवाह के बाद दुश्चरित्रा, बुध त्रिंशांश में हो तो मायाविनी, गुरु के त्रिंशांश में रहे तो सुशीला और शनि के त्रिंशांश में रहे तो दासी।

यदि मिथुन या कन्या में होकर भौम त्रिंशांश में रहे तो कपटी, शुक्र त्रिंशांश में रहे तो कामुकी, बुध त्रिंशांश में रहे तो गुणयुक्ता और शनि त्रिंशांश में रहे तो क्लीब और गुरु त्रिंशाश में रहे तो साध्वी होती है।

यदि वृष या तुला में होकर भौम त्रिंशांश में रहे तो दुश्चरित्रा, शुक्र त्रिंशांश में हो तो ख्यात गुणयुक्ता, बुध त्रिंशांश में रहे तो कलाओं में परिपूर्ण, गुरु त्रिंशांश में रहे तो गुणयुक्ता और शनि त्रिंशांश में रहे तो पुनर्भू (पति से छल करने वाली) होती है।

यदि कर्क में होकर (लग्न या चन्द्र) भौम त्रिंशांश में रहे तो स्वतन्त्रा, शुक्र त्रिंशांश में रहे तो कुलटा, बुध त्रिंशांश में रहे तो शिल्पकलाज्ञ, गुरु त्रिंशांश में सभी गुणों से युत और शनि त्रिंशांश में विधवा होती है।

यदि सिंह राशि में भौम त्रिंशांश का रहे तो वाचाल, शुक्र त्रिंशांश में साध्वी, बुध त्रिंशांश में पुरुषाकृति, गुरु त्रिंशांश में सती और शनि त्रिंशांश में कुलटा होती है।

धनु-मीन राशि में होकर भौम त्रिंशांश में रहे तो बहुगुणी, शुक्र त्रिंशांश में पुंश्चली, बुध त्रिंशांश में विज्ञान वेत्ता, गुरु त्रिंशांश में सर्वगुण सम्पन्ना और शनि त्रिंशांश में अल्परति वाली होती है।

मकर-कुम्भस्थ होकर भौम त्रिंशांश में रहे तो दासी, शुक्र त्रिंशांश में विदुषी, बुध त्रिंशांश में पापयुक्ता व क्रूरा, गुरु त्रिंशांश में सती और शनि त्रिंशांश में नीचपुरुषगामिनी होती है।

सप्तम भाव फल विचार—सप्तम भाव ग्रहरहित हो उस पर शुभग्रह की दृष्टि भी नहीं रहे तो उस स्त्री का पति कापुरुष होता है। सप्तम भाव में चरराशि हो तो उस स्त्री का पति परदेशवासी, बुध और शनि दोनों सप्तम में रहें तो नपुंसक, सूर्य रहे तो परित्यक्ता, भौम रहे तो बालविधवा, शनि रहे तो अविवाहित ही वह वृद्धा हो जाती है। सप्तम में पापग्रह हो तो यौवनावस्था ही में विधवा, यदि शुभग्रह रहे तो पतियुक्ता व सती, यदि शुभ-पाप दोनों ग्रह रहें तो मिश्रित फल होते हैं। यदि शुक्र और मंगल परस्पर एक-दूसरे के नवांश में रहें तो परपुरुषरता होती है। इस योग में यदि सप्तमभाव में चन्द्रमा रहे तो वह अपनी माँ सहित परपुरुषरता होती है।

सप्तम भावस्थ ग्रह नवांश फल—सप्तम स्थान में भौम की राशि या नवांश रहे तो उसका पति लम्पट व क्रोधी होता है। यदि बुध की राशि या नवांश रहे तो विद्वान् व कार्यकुशल, गुरु की राशि या नवांश रहे तो भाग्यवान् सुन्दर स्त्रियों का प्रिय, शनि की राशि या नवांश में रहे तो वृद्ध व मूर्ख, सूर्य की राशि या नवांश रहे तो अति कठोर और कठिनकार्य करने वाला, चन्द्र की राशि या नवांश रहे तो उसका पति सुन्दर-कामी व मृदु होता है। यदि मिश्रित ग्रह की राशि व नवांश (सप्तम भाव) रहे तो मिश्रित स्वभाव के अनुसार उसके पति को समझना चाहिये। राशि व नवांश फल को उनके बल के अनुसार जानना चाहिये।

अष्टम भावस्थ ग्रह फल—सूर्य अष्टमभाव में रहे तो वह दुःखी-दरिद्री-क्षताङ्गी और धर्म विमुखा होती है। अष्टम में चन्द्र रहे तो दुर्भगा-कुस्तनी-कुदृष्टिवाली-वस्त्राभूषण से विहीन-रोगिणी और लोकनिन्दिता, भौम रहे तो दुर्बल-रोगिणी-विधवा-कुरूपा-शोक-सन्ताप युक्ता, बुध रहे तो धर्महीना-भययुक्ता-अभिमानीनि-धन और गुणों से विहीना तथा कलहप्रिया होती है।

जिसके अष्टमभाव में गुरु रहे वह शीलहीना-स्वल्पसन्तानवती-स्थूल हाथ-पैर वाली-परित्यक्ता और बहुभोजी होती है। शुक्र रहे तो प्रमादी-धन-दया-धर्मविहिना-मलिना और कपटिनी, शनि रहे तो दुष्टा-मलिना, ठग और पतिसुख से वंचिता, राहु रहे तो कुरूपा-पति सुखवंचिता-क्रूर-रोगिणी और व्यभिचारिणी होती है।

वन्ध्या योग—लग्नस्थित चन्द्र और शुक्र यदि शनि भौम से युत हो तथा पञ्चमभाव पापग्रह की दृष्टि या योग से युक्त रहे तो वह स्त्री बन्ध्या होती है।

दुर्भगा-सुभगा योग—सप्तम भाव में भौम का (पापग्रह का) नवांश रहे तो दुर्भगा और शुभग्रह का नवांश रहे तो वह सुभगा व पतिप्रिया होती है।

बुध की राशि (मि. कन्या) लग्न हो चन्द्र और शुक्र उसमें रहें तो वह स्त्री अपने पितृगृह में सर्व सुख से युक्त होती है।

सुखयोग—लग्न में चन्द्र-बुध-शुक्र हों तो वह स्त्री सुख और गुणों से युक्त होती है। यदि गुरु लग्न में रहे तो वह बहुत पुत्र-धन और सुख-समृद्धि से युत होती है।

अष्टमभाव में कर्कराशि या सिंहराशि हो, उसमें सूर्य और चन्द्र स्थित हों तो वह वन्ध्या होती है। यदि मिथुन-कन्या या कर्क राशिस्थ होकर अष्टम में बुध-चन्द्र रहें तो वह स्त्री काकबन्ध्या होती है।

लग्न में भौम या शनि की राशि में चन्द्र-शुक्र रहें और उन पर पापग्रह की दृष्टि रहे तो वह स्त्री निश्चय हीं बन्ध्या होती है।

मृतापत्या योग—सप्तमभाव में राहुयुक्त सूर्य रहे अथवा अष्टम में राहुयुत गुरु व शुक्र रहें तथा पञ्चमभाव पापयुक्त रहे तो वह स्त्री मृतवत्सा होती है।

अष्टम भाव में गुरु-शुक्र यदि भौम से, अथवा सप्तम भाव में भौम शनि से युक्त रहें तो उस स्त्री को गर्भस्राव नहीं होता है।

कुलद्वयहन्तृ योग—जन्मकाल में चन्द्र तथा लग्न में पापग्रह की कर्तरी (द्वादश में मार्गी और द्वितीय में वक्री पापग्रह) रहे तो वह स्त्री पति व पिता के वंशों को नाश करने वाली होती है।

विषकन्या योग—श्लेषा-कृत्तिका-शतभिषा नक्षत्र, रवि-शनि-भौमवार, २, ७, १२ तिथि इन तीनों के संयोग में जो कन्या जन्में वह विषकन्या कहलाती है।

जिसके जन्मकाल में १ पापग्रह और १ शुभग्रह लग्न में और २ पापग्रह षष्ठभाव में रहें तो वह विषकन्या होती है।

विषकन्या फल—विषयोगोत्पन्न कन्या मृतवत्सा-दुर्भगा-वस्त्र-भूषणादि से विहीना और शोक सन्तप्तचित्ता होती है।

विषकन्या भंग योग—लग्न अथवा चन्द्रमा से सप्तम में शुभग्रह या सप्तमेश रहे तो विषयोग निश्चय नष्ट होता है।

पतिहन्तृ योग—लग्न से १-४-७-८-१२ स्थान में भौम यदि शुभग्रह की दृष्टि या योग से विहीन हो तो वह स्त्री विधवा हो जाती है।

वैधव्यभङ्ग योग—जिस योग के कारण स्त्री पतिहन्त्री होती है, उस योग से पुरुष भी स्त्रीहन्ता होता है। पतिहन्त्री का स्त्रीहन्ता के साथ विवाह करने पर वैधव्ययोग निश्चय ही नष्ट हो जाता है।

जन्मकाल में शनि व शुक्र परस्पर नवांश में हों या परस्पर दृष्टिगत हों अथवा वृष या तुला लग्न में हों और कुम्भ का नवांश रहे तो इन योगों में उत्पन्न स्त्री कामातुरा होकर पुरुष की आकृति बनाई हुई अपनी सखी के द्वारा (अप्राकृतिक) मैथुन करके अपनी कामाग्नि को शान्ति करती है।

विदुषी योग—जन्मकाल में भौम-बुध-गुरु और शुक्र बली हों तथा समराशि का लग्न रहे तो वह स्त्री अनेक शास्त्रनिपुणा और ब्रह्म (वेदार्थ) ज्ञाता होती है।

संन्यासिनी योग—सप्तमभाव में पापग्रह और नवमभाव में कोई भी ग्रह रहे तो वह स्त्री प्रव्राजिका (संन्यासिनी) होती है।

मृत्युयोग—अष्टमभाव में शुभग्रह हो और उसपर पापग्रह की दृष्टि या योग नहीं रहे तो पति से पहले ही उस स्त्री की मृत्यु हो जाती है।

अष्टमभाव में पापग्रह और शुभ ग्रह दोनों बल में समान हों तो वह स्त्री अपने पति के साथ ही मृत्यु प्राप्त कर स्वर्ग को जाती है।

अङ्गलक्षण विचार—पूर्व में जन्मलग्न द्वारा बहुत से शुभाशुभ फल कहे गये हैं, अब यहाँ स्त्रियों के अङ्गलक्षणानुसार फल बतलाया जा रहा है।

शङ्कर भगवान् ने जिस स्त्री अंग लक्षण को पार्वती जी से पूर्व में बतलाया था उसी फल को यहाँ कहा जा रहा है।

पादतल लक्षण—जिस स्त्री का पादतल चिकना-मुलायम-पुष्ट-सम-लाल-पसीनारहित-गर्म हो वह सुख करने वाली होती है। यदि लालिमा रहित-कठोर-रूखे-फटे-टेढे-सूपसदृश और अपुष्ट हों वह दुःखी व दरिद्रा होती है।

पादरेखा लक्षण—जिसके पादतल में शंख-स्वस्तिक-चक्र-कमल-ध्वज-मत्स्य-छत्र आदि का चिह्न हो तथा पादतल में लम्बी ऊर्ध्वरेखा हो वह राजरानी और समस्त सुख भोगने वाली होती है। जिसके पादतल में सर्प-मूषक व काक के समान चिह्न हो वह दुःखी व दरिद्रा होती है।

पादनख लक्षण—जिसके स्त्री के पैर के नाखून लाल-चिकने-ऊँचे और गोल हों वह सुखी होती है यदि फटे व काले हों तो वह दुःख भोगने वाली होती है।

अंगुष्ठाङ्गुलि लक्षण—जिस स्त्री के पैर का अँगूठा उन्नत पुष्ट और गोल रहे वह परमसुखी, यदि टेढ़ा-छोटा-चिपटा रहे तो परमदुखी होती है।

पादाङ्गुलि लक्षण—यदि पैर की अङ्गुली कोमल-घनी-गोल और पुष्ट रहे तो शुभ और यदि लम्बी व पतली अङ्गुली रहे तो कुलटा व धनहीना होती है।

पादाङ्गुलि फल—पैर की अङ्गुली छोटी हो तो अल्पायु, छोटी-बड़ी व टेढ़ी-मेढ़ी हो तो कुट्टनी और कपटी, चिपटी रहे तो दासी, छिद्रवाली अङ्गुली रहे तो दरिद्रा, जिसकी एक-दूसरे पर चढ़ी हुई हो वह विधवा होकर दूसरों की आश्रिता होती है।

चलते समय मार्ग में जिसके पैरों से धूल उड़े वह तीनों कुल (मातृ-पितृ-पति) को कलङ्कित करने वाली होती है, चलते समय जिसकी कनिष्ठा अङ्गुलि भूमि का स्पर्श न करे वह एक पति का नाश कर दूसरा पति करती है।

चलते समय जिसकी मध्यमा या अनामिका अङ्गुली भूमिस्पर्श नहीं करे वह विधवा होती है। जिसकी तर्जनी अङ्गुली पादाङ्गुष्ठ से बड़ी हो वह कुमारी अवस्था में ही दूषित होती है और बाद में कुलटा होती है।

पादपृष्ठ लक्षण—जिसके पैर का पृष्ठभाग ऊँचा-स्वेदरहित-पुष्ट-चिक्कन और कोमल रहे वह रानी होती है। यदि नीचे को रहे तो दरिद्रा यदि शिरायुक्त पैर का ऊपरी भाग रहे तो भ्रमण करने वाली, यदि रोमयुक्त रहे तो दासी और मांसहीन रहे तो दुर्भगा होती है।

एड़ी (पार्ष्णि) फल—पैर का पिछला भाग (एँड़ी) सम रहे तो सुभगा, स्थूल हो तो दुर्भगा, ऊँचा रहे तो कुलटा और लम्बा रहे तो अतिदुखिता होती है।

जङ्घा लक्षण—जङ्घा (पैर के ऊपर व घुटने से नीचे) रोमरहित-समान-चिकना-गोल-सिरारहित और सुन्दर हो तो वह राजप्रिया होती है।

जानु लक्षण—जिसकी जानु (घुटना) गोल-पुष्ट और चिकना हो वह शुभ, यदि मांसहीन रहे तो व्यभिचारिणी और ढीला रहे तो दरिद्रा होती है।

ऊरू लक्षण—जिसकी जाँघ हाथी के सूँड़ सदृश गोल-घन (मिले हुए)-कोमल व रोमरहित हों तो वह रानी होती है। यदि चिपटा व रोमयुक्त हों तो वह स्त्री विधवा और दरिद्रा होती है।

कटि लक्षण—यदि कटिप्रदेश (कमर) २४ अङ्गुल और उन्नत नितम्ब हों तो सुख सौभाग्यदायक होता है।

जिसकी चिपटी-लम्बी-मांसरहित-संकुचित-छोटी तथा रोमयुक्त कटि प्रदेश हो वह दुःख वैधव्य भोगती है।

नितम्ब—यदि नितम्ब ऊँचा-मांस से पुष्ट और विस्तृत रहे तो शुभ अन्यथा अशुभदायक होता है।

भग लक्षण—जिसका भग छिपा हुआ, मणियुक्त, लालवर्ण, कोमल रोमयुक्त, कच्छप पीठ सदृश उच्च-पीपल पत्ते के जैसा आकृति वाला और चिकना रहे तो शुभकर होता है।

हिरणि के खुर या चूल्हे के मुँख सदृश-कठोर-रोमयुक्त-ऊँची मणियुक्त-फैले मुख वाला भग अशुभकारक होता है।

बांये तरफ भग ऊँचा रहे तो कन्या सन्ततिदायक, दायें तरफ ऊँचा रहे तो पुत्रसन्ततिदायक, शङ्ख के समान वलय युक्त रहे तो गर्भधारण में अक्षम होता है।

पेडू (वस्ति)—वस्ति (नाभि के नीचे) कोमल-विस्तृत-थोड़ीऊँची रहे तो शुभदायक यदि रोमयुत-शिरायुत व रेखायुत रहे तो अशुभप्रद होता है।

नाभि लक्षण—नाभि यदि गहरी और दक्षिणावर्त रहे तो सर्वसौख्यप्रद और ऊपर को उठी ग्रन्थिवाली तथा वामावर्तनी हो तो अशुभ होती है।

कुक्षि लक्षण—विस्तृत कुक्षि (कोख) हो तो वह सुभगा और बहुपुत्रवती, यदि मण्डूक (मेढक) समान रहे तो राजा को जन्म देने वाली होती है।

कुक्षि यदि उन्नत रहे तो बन्ध्या, त्रिबलि युत रहे तो संन्यासिनी तथा आवर्त (भँवर) युत रहे तो दासी होती है।

पार्श्व लक्षण—यदि पसली (बगल) समान, पुष्ट और कोमल रहें तो शुभ तथा उन्नत, रोमयुत या शिरायुत हो तो अशुभ होती है।

हृदय लक्षण—यदि हृदय प्रदेश रोमविहीन और समान रहे तो शुभ तथा यदि बहु विस्तृत व रोमयुक्त रहे तो अशुभ होता है।

स्तन लक्षण—स्त्रियों के स्तन समान, पुष्ट, घने, गोल और सुदृढ़ हों तो शुभ तथा अग्रभाग में समान-स्थूल-विरल (अलग-अलग) एवं मांसहीन रहें तो अशुभ होते हैं।

यदि दक्षिण कुच उन्नत रहे तो पुत्रवती और यदि वामा कुच उन्नत रहे तो कन्या सन्तति वाली होती है।

कुचाग्र लक्षण—यदि कुचाग्र भाग मनोहर, श्यामवर्ण और गोल रहें तो शुभ और यदि अन्दर को दबे हुए लम्बे व सूक्ष्म रहें तो अशुभ होते हैं।

स्कन्ध लक्षण—स्त्रियों के कन्धे समान-पुष्ट-छिपे हुए सन्धियुक्त हों तो शुभप्रद, यदि रोमयुत-उठे हुए टेढ़े व मांसहीन रहे तो अशुभ होते हैं।

कुक्षि लक्षण—कक्ष (काँख) यदि कोमल-सूक्ष्म-रोमयुत-पुष्ट-चिकना रहे तो शुभ और यदि शिरायुत-मांसहीन-गहरे व पसीना से युत हों तो अशुभ होते हैं।

बाहु लक्षण—यदि भुजायें मांसलयुक्त-कोमल गाँठवाले-शिरा व रोमरहित, सीधा व गोल हों तो शुभ तथा यदि मांसहीन-रोमयुक्त-छोटा-शिरायुत और टेढ़े हों तो अशुभ होते हैं।

कराङ्गुष्ठ लक्षण—यदि हाथ का अङ्गुष्ठ कमलकलिका के सदृश रहे तो शुभ और मांसहीन या टेढ़ा रहे तो अशुभ होता है।

करतल लक्षण—हथेली यदि मध्य में ऊँची-अङ्गुली मिलाने पर छिद्ररहित-कोमल व अल्प कम रेखा वाली रहे तो सुख भोगने वाली, यदि बहुत रेखायुत रहे तो वैधव्य वाली, रेखाहीन रहे तो दरिद्रा और शिरायुत रहे तो भिक्षुणी होती है।

करपृष्ठ लक्षण—यदि हथेली का पृष्ठ भाग पुष्ट-कोमल और रोमरहित रहे तो शुभ तथा शिरा व रोमयुत-नीचे दबा हुआ रहे तो अशुभ होता है।

करतलरेखा लक्षण—जिस स्त्री के करतल में स्पष्ट-लाल-चिकना-स्पष्ट और गहरी रेखा हो वह सुख सौभाग्ययुक्ता होती है। यदि हथेली में मत्स्यचिह्न रहे तो सौभाग्यवती, स्वस्तिक चिह्न रहे तो धनवती, कमल चिह्न रहे तो राजरानी और राजमाता होती है। यदि हथेली में दक्षिणावर्त रेखा हो तो चक्रवर्ती राजा की प्रिया होती है। शङ्ख-छत्र-कच्छप जैसी रेखा रहे तो राजमाता होती है।

यदि वाम हस्त में तुला (तराजू) जैसी रेखा अथवा हाथी-घोड़ा-बैल जैसी रेखा रहे तो वह व्यापारी की स्त्री होती है।

जिसके हाथ में गृहसदृश रेखा रहे वह शास्त्रकार मुनि पुत्र को उत्पन करने वाली होती है। गाड़ी-हल-जूआ जैसी रेखा हो तो कृषक की स्त्री, यदि चामर-अङ्कुश-धनुष-त्रिशूल-तलवार-गदा-शक्ति-दुन्दुभि जैसी रेखा हो तो वह पतिव्रता रानी होती है।

वर्जित कन्या—यदि अङ्गुष्ठ मूल से कनिष्ठमूल तक रेखा रहे तो वह

विधवा होती है, विवाह में इसका त्याज्य करना चाहिये। काक-मेढक-गीदड़-भेंड़िया-बिच्छू-साँप-गधा-ऊँट और बिल्ली सदृश रेखा रहे तो वह स्त्री दुःखभागिनी होती है।

कराङ्गुलि लक्षण—जिसके हाथ की अङ्गुली कोमल-सुन्दरपर्वयुत-लम्बी पतली व रोमरहित रहे तो वह शुभा यदि छोटी-मांसहीन-टेढ़ी-छिद्रवाली-रोमयुत-अधिकपर्व वाली या बिना पर्व (पोरु) की रहे तो वह अशुभा होती है।

नख लक्षण—नख यदि रक्तवर्ण-ऊँचे-शाखायुक्त रहें तो शुभ तथा चपटे, मलिन-पीले या श्वेतबिन्दु युक्त रहें तो अशुभ होते हैं।

स्त्री की पीठ छिपे हुए हड्डीयुक्त व मांसल रहे तो शुभ यदि शिरा या रोम से युक्त या टेढ़ा रहे तो अशुभ होता है।

कण्ठ लक्षण—यदि स्त्री का कण्ठ तीन रेखायुक्त-छिपे हुए अस्थिवाला-गोल-पुष्ट और कोमल रहे तो शुभ होता है। मोटी कण्ठ वाली विधवा, टेढ़ी कण्ठवाली दासी, चिपटे कण्ठवाली बन्ध्या और छोटे कण्ठवाली सन्तानहीना होती है।

कृकाटिका लक्षण—कृकाटिका यदि (कण्ठ का उठा हुआ मध्य भाग) सीधा-पुष्ट और ऊँची रहे तो शुभ यदि मांसहीन-शिरा या रोम से युक्त-बड़ी और टेढ़ी रहे तो अशुभ होती है।

चिबुक लक्षण—यदि ठोढी रक्तवर्ण-कोमल और पुष्ट रहे तो शुभ यदि चौड़ी-रोमयुत मोटी और दो भागवाली रहे तो अशुभ होती है।

कपोल लक्षण—यदि स्त्री के कपोल उभरे हुए-पुष्ट-गोल रहें तो शुभ, यदि रोमयुक्त-कठोर-धसे हुए व मांसहीन रहें तो अशुभ होते हैं।

मुख लक्षण—यदि मुखमण्डल समान (बड़ा न छोटा)-पुष्ट-गोल-सुगन्धित-चिकना-मनोहर रहे तो सौभाग्यसूचक होता है।

अधर-अधररोष्ठ—स्त्री का अधर (ओठ) लाल-चिकना-मध्य में रेखा से विभाजित और सुन्दर रहे तो वह रानी होती है। यदि मांसहीन-फटा हुआ-लम्बा-रूखा-मोटा तथा श्यामवर्ण रहे तो क्लेश और वैधव्यसूचक होता है।

यदि ऊपर का ओठ लाल-चिकना-मध्य में उठा तथा रोमरहित रहे तो विविध सुख और सौभाग्यदायक होता है।

दन्त लक्षण—यदि स्त्री के दाँत चिकने-दूध जैसे श्वेत-संख्या में

३२-नीचे और ऊपर में समान-थोड़े उठे हुए रहें तो शुभ, यदि नीचे में अधिक संख्या-पीले-काले-लम्बे-दो पंक्ति में तथा विरल (अलग-अलग) रहें तो अशुभ होते हैं।

जिह्वा लक्षण—जिह्वा लाल-कोमल रहे तो अतुल भोगवाली, मध्य में संकुचित व आगे में विस्तृत हो तो दुःखभागिनी होती है। सफेद जीभ रहे तो जल में मृत्यु, श्यामवर्ण रहे तो कलहप्रिय, मोटी जीभ रहे तो धनहीना, लम्बी जीभ रहे तो अभक्ष्य भक्षण करने वाली, चौड़ी जीभ रहे तो वह स्त्री प्रमाद (असावधानी) करने वाली होती है।

तालु लक्षण—स्त्री का तालू चिकना-कमलपत्र सदृश और कोमल रहे तो शुभ, यदि श्वेततालु रहे तो वैधव्यता, पीला रहे तो घर छोड़ कर संन्यासिनी, काला रहे तो सन्तानहीना और रूक्ष रहे तो अधिक परिवार युक्ता होती है।

हास्य लक्षण—हँसते समय दाँत न दिखे वल्कि थोड़ा सा कपोल प्रफुल्ल दिखे अथवा खुलकर हास्य शुभ होता है इससे भिन्न में अशुभ होता है।

नासिका लक्षण—यदि नासिका बराबर, दोनों नथुने छोटे व गोल छिद्रयुक्त रहें तो शुभ यदि अग्रभाग में मोटा या बीच में चिपटा रहे तो अशुभ होता है।

यदि नासिका का अग्रभाग लाल या सङ्कुचित रहे तो वह विधवा, चिपटी हो दासी और बहुत छोटी या बहुत बड़ी हो तो वह कलहप्रिया होती है।

नेत्र लक्षण—आँख यदि प्रान्त में लाल, काली पुतली युक्त, गोदुग्ध जैसा सफेद, बड़ी-बड़ी, चिकनी और काले पलकों वाली रहें तो वह शुभ होती है।

ऊँची आँख वाली स्वल्पायु, गोल आँख वाली कुलटा, मधु-पिङ्गलनेत्र वाली सुख और सौभाग्ययुता, वामआँख कानी रहे तो व्यभिचारिणी, दाहिनी आँख कानी रहे तो बाँझ, कबूतर के जैसी आँखवाली दुष्ट स्वभाव की, हाथी सदृश आँख वाली दुःखभोग्या होती है।

पलक लक्षण—यदि पलक कोमल-काले-घने और सूक्ष्म रहें तो सौभाग्ययुता तथा विरल-पिङ्गलवर्ण व मोटे रहें तो दुःखभागिनी होती है।

भ्रू लक्षण—यदि भ्रूमध्य गोल-धनुषजैसे-चिकने-काले-परस्पर जुड़े न हों-कोमल-रोमयुक्त रहें तो सुख और कीर्तिदायक होते है।

कर्ण लक्षण—कान यदि लम्बे-सुन्दर घुमावदार हों तो सन्तान और

सुखदायक तथा छोटे अधिक नस युक्त-टेढ़े और अधिक पतले हों तो अशुभ होते हैं।

कपाल लक्षण—यदि ललाट नसरहित-रोमहीन-अर्धचन्द्राकार-समान-तीन अङ्गुल से अधिक रहे वह पति-पुत्रादि सुखयुक्ता, यदि उसमें स्वस्तिक रेखाचिह्न रहे तो वह रानी होती है। लम्बा-रोमयुक्त और अधिक ऊँचा रहे तो वह दुःखभागिनी होती है।

मस्तक लक्षण—मस्तक यदि गजकुम्भ सदृश उन्नत-गोल रहे तो वह सुखी, यदि बहुतविशाल-लम्बा-चपटा या टेढ़ा रहे तो वह दुःखी होती है।

केश लक्षण—यदि केश कोमल-काले-पतले और लम्बे रहें तो शुभप्रद, यदि पीले-कठोर-रूखे व बिखरे रहें तो अशुभ। गौरवर्ण की स्त्री के लिए पिङ्गलवर्ण केश तथा श्यामवर्ण स्त्री के लिए कृष्णवर्ण केश शुभ होते हैं। स्त्री के अङ्ग लक्षण से पुरुषों का भी लक्षण जानना चाहिए।

तिलादिलाञ्छनफल—अङ्ग लक्षण कहने के अनन्तर अब यहाँ स्त्री और पुरुष के देहजात भँवर-तिल-मशक (मस्सा) आदि का फल कहा जा रहा है—

शरीरस्थ तिलादि का फल—स्त्रियों के लिए बायें भाग में तिल-मस्सा या रोमावर्त और पुरुषों के लिए दक्षिण भाग में शुभ होता है। यदि स्त्री के हृदय प्रदेश में तिल हो तो वह सौभाग्यवती, दक्षिण स्तन पर रक्तवर्ण तिलादि चिह्न हो तो वह बहुत सन्तति-सुख और सौभाग्य से युक्त होती है।

यदि वाम स्तन पर रक्त तिल हो उसे एक पुत्र होता है। यदि दक्षिण स्तन पर तिल रहे तो उसे कन्या और पुत्र दोनों होते हैं।

भ्रूमध्य या ललाट पर रक्तवर्ण तिलादि का चिह्न राज्यप्रद होता है यदि गाल पर लाल मस्सा हो तो नित्य मिष्ठान्न प्राप्ति कराता है।

गुह्य स्थान के दक्षिण भाग में यदि तिलादि हो तो वह राजपत्नी या राजमाता होती है।

यदि नासाग्र पर लाल चिह्न हो वह तो राजपत्नी, यदि काला चिह्न हो तो पुंश्चली व विधवा होती है। नाभि के नीचे चिह्न होना पुरुष और स्त्री दोनों लिए शुभप्रद होता है। कान-गाल-हाथ या कण्ठ पर तिलादि चिह्न रहे तो उस स्त्री को प्रथम सन्तान पुत्र होता है तथा वह सुख-सौभाग्ययुक्ता होती है। जंघा में तिलादि चिह्न रहे तो वह दुःखकारक होता है।

स्त्री के कपाल में यदि त्रिशूल सदृश चिह्न रहे तो वह रानी और यदि पुरुष के ललाट में रहे तो वह राजा होता है।

हृदय-नाभी-हाथ-कान-दक्षिणपृष्ठ और वस्ति (नाभि व लिङ्ग का मध्य) भाग में दक्षिणावर्त रोमचक्र रहे तो शुभ और वामावर्त रहे तो अशुभ होता है।

कमर या गुप्तभाग में रोमावर्त शुभ नहीं होता। यदि पेट में रोमावर्त हो तो विधवा, पीठ के मध्यभाग में रहे तो व्यभिचारिणी, कण्ठ-ललाट-माँग या मस्तकमध्य (चोटी) में आवर्त रहे तो वह अशुभ होता है।

सुलक्षणयुक्ता एवं सुचरित्रा स्त्री अल्पायु पति को भी दीर्घायु और प्रसन्न कर देती है।

पूर्वजन्मशापज्ञान—इस प्रकार स्त्री-पुरुषों का फल करने के पश्चात् अब अन्य महत्त्वपूर्ण विषयों को जैसे—अपुत्र के लिए सद्गति नहीं; ऐसा शास्त्रों में कहा गया है और किस पाप के कारण कोई पुत्रहीन होता है कुण्डली से उसका ज्ञान कैसे होता है तथा पुत्र प्राप्ति के लिए क्या उपाय है हो सकता है, इसे पूर्वजन्म के शापज्ञान से जाना जा सकता है, कहा जा रहा है।

मनुष्यों के किस पाप के कारण सन्ताननाश होता है? यह कैसे जाना जा सकता है और सन्तान रक्षा के कौन-से उपाय है? उसे शास्त्रों में इस प्रकार व्यक्त किया गया है।

सन्तान हानि योग एवं उसकी रक्षा के उपायों को इस प्रकार जानना चाहिए—

अनपत्य योग—यदि गुरु-लग्नेश-सप्तमेश तथा पञ्चमेश ये चारों निर्बल रहें तो सन्तानहीन योग होता है।

यदि सूर्य-भौम-शनि ये बलवान होकर पंचमभाव में रहें और पुत्रकारक (गुरु एवं पञ्चमेश) ग्रह निर्बल रहें तो पुत्रहीन योग होता है।

सर्पशाप से पुत्रक्षय योग—पंचमभावगत राहु हो उस पर भौमदृष्टि हो तो सर्पशाप से पुत्रक्षय होता है। पञ्चमेश राहुयुत हो एवं पञ्चमस्थ शनि पर चन्द्र की दृष्टि हो अथवा पुत्रकारक (गुरु एवं लग्नेश) राहुयुक्त हों पंचमेश बलहीन हो और लग्नेश भौमयुक्त हो, अथवा पुत्रकारक ग्रह भौमयुत हो और लग्न राहुयुक्त हो तथा पञ्चमेश ६, ८, १२ में हो, अथवा बुध पञ्चमेश होकर भौमनवांश में भौमयुक्त हो और लग्न में राहु तथा गुलिक हो, अथवा पंचम

में मेष या वृश्चिक राशि हो तथा पञ्चमेश राहु या बुध से युत या दृष्ट हो, अथवा सूर्य-शनि-भौम-राहु-बुध-गुरु ये पंचमभाव में हों तथा पञ्चमेश और लग्नेश निर्बल हो, अथवा लग्नेश या पुत्रकारकग्रह (गुरु) राहु से और पञ्चमेश भौम से युक्त रहे तो इन सब योगों में सर्पशाप से सुतक्षय होता है।

सर्पशाप दोषशान्ति—इस तरह ग्रहयोगवश अनपत्यता अर्थात् सन्तानहीनता को जानकर शान्ति करनी चाहिये। गृह्य-पद्धति के अनुसार स्वर्ण की नागमूर्ति बनाकर विधानपूर्वक उसकी पूजा करें और गो-भूमि-तिल-स्वर्ण का दान करें। इसप्रकार नागराज की कृपा से कुलवर्धन होता है।

पितृशाप से सुत नाश योग अधोलिखित प्रकार कहा गया है।

(१) शनि के नवांश में होकर तुला का सूर्य पंचम में रहे तथा उसके आगे-पीछे पापग्रह रहें तो पितृशाप से पुत्र का अभाव होता है।

(२) सूर्य पञ्चमेश होकर पापग्रह के साथ त्रिकोण स्थान में पापग्रहों के मध्य में रहे और पापग्रह से दृष्ट रहे।

(३) गुरु सिंह राशि में रहे और पञ्चमेश सूर्य के साथ रहे तथा लग्न व पञ्चम में पापग्रह रहें।

(४) लग्नेश निर्बल होकर पंचम में हो और पञ्चमेश अस्तङ्गत हो तथा लग्न पञ्चम में पापग्रह रहें।

(५) दशमेश पञ्चम में अथवा पञ्चमेश दशम में तथा लग्न और पञ्चम में पापग्रह रहें।

(६) मंगल दशमेश होकर पञ्चमेश से युक्त हो, लग्न-पञ्चम और दशम में पापग्रह रहें।

(७) दशमेश षष्ठ-अष्टम-द्वादश में रहे और पुत्रकारकग्रह पापराशि में रहे, पञ्चमभाव तथा लग्न का स्वामी पापयुक्त रहे।

(८) लग्न-पञ्चम में सूर्य-भौम-शनि रहें तथा अष्टम व द्वादश में राहु-गुरु रहें।

(९) सूर्य अष्टम में-शनि पंचम में-पंचमेश राहुयुक्त तथा लग्न पाप ग्रह युक्त हो।

(१०) व्ययेश लग्न में-अष्टमेश पंचम में और दशमेश अष्टम में रहें।

(११) षष्ठेश पञ्चम में-दशमेश षष्ठ में तथा पुत्रकारकग्रह राहुयुक्त रहें तो इन सभी (ग्यारह) योगों में पितृशाप से जातक को सन्तानहीनता होती है।

पितृशापदोषशान्ति—पितृशापमोचन अर्थात् पितर के शाप से मुक्ति

के लिए गयाश्राद्ध और यथाशक्ति या दशहजार आदि ब्राह्मणभोजन कराना चाहिए अथवा कन्यादान और गोदान करना चाहिये। इस तरह पितृशाप से निश्चय ही मुक्ति होती है और पुत्र-पौत्रादि की प्राप्ति से कुल की वृद्धि होती है। ग्रह योगवश इस तरह का फलादेश अवश्य करना चाहिए।

मातृशाप से सुतनाश योग अधोलिखित प्रकार कहा गया है।

(१) पञ्चमेश-चन्द्र यदि नीचराशि या पापग्रग्रहों के मध्य में रहें और चतुर्थ-पञ्चम में पापग्रह रहें।

(२) एकादश में शनि, चतुर्थ में पापग्रह, पञ्चम में नीचराशि का चन्द्र रहे।

(३) पञ्चमेश दुस्थान (८, ६, १२) में, लग्नेश नीच में और चन्द्र पापयुक्त रहे।

(४) पञ्चमेश दुस्थान (८, ६,१२) में, चन्द्र पापनवमांश में और लग्न-पञ्चम में पापग्रह रहें।

(५) पञ्चमेश और चन्द्र यदि शनि-राहु-भौम से युक्त होकर नवम या पञ्चम में रहें।

(६) भौम चतुर्थेश होकर शनि-राहु से युक्त रहे, पञ्चम और लग्न में सूर्य-चन्द्र रहें।

(७) लग्नेश-पञ्चमेश षष्ठभाव में, चतुर्थेश अष्टम में, अष्टमेश और दशमेश लग्न में रहें।

(८) षष्ठेश-अष्टमेश लग्न में, चतुर्थेश द्वादश में, चन्द्र-बृहस्पति पापग्रह से युक्त होकर पञ्चम में रहें।

(९) लग्न दो पापग्रहों के मध्य में, क्षीण चन्द्र सप्तम में, चतुर्थ या पञ्चम में राहु-शनि रहें।

(१०) अष्टमेश पञ्चम में और पञ्चमेश अष्टम में, चतुर्थेश और चन्द्र दुष्टस्थान (६, ८, १२) में रहें।

(११) कर्कलग्न में भौम-राहु रहें और चन्द्र-शनि पञ्चम में रहें।

(१२) लग्न-पञ्चम-अष्टम-द्वादश में भौम-राहु-सूर्य-शनि रहें और चतुर्थेश-लग्नेश दुष्टस्थान में रहें।

(१३) भौम-राहु-गुरु अष्टम में और शनि-चन्द्र पञ्चम में रहें तो इन (तेरह) योगों में मातृशाप से सुतक्षय होता है, इसमें सन्तान प्राप्ति हेतु शान्ति करनी चाहिये।

मातृशापदोषशान्ति—शान्ति हेतु सेतुसमुद्र में स्नान-लक्ष प्रमित गायत्री जप-ग्रहों का दान, ब्राह्मण भोजन, १००८ बार अश्वत्थ प्रदक्षिणा आदि करने पर मातृशाप से मुक्ति होती है और पुत्रप्राप्ति व कुलवृद्धि होती है।

भ्रातृशाप से सुतनाश योग—अब यहाँ भ्रातृशापोद्भव अनपत्य योगों को बतलाया गया है, जिसका ज्ञान करके विज्ञजन सन्तानरक्षा के लिये यत्न कर सकें।

(१) तृतीयेश-राहु-भौम पंचम में और पञ्चमेश-लग्नेश अष्टमभाव में हों।

(२) लग्न-पञ्चम में भौम-शनि, तृतीयेश नवम में और भ्रातृकारक ग्रह अष्टम में रहें।

(३) नीचस्थ गुरु तृतीय में, शनि पंचम में और चन्द्र-भौम अष्टम में रहें।

(४) लग्नेश द्वादश में भौम पञ्चम में और पञ्चमेश पापग्रह के साथ अष्टम में रहे।

(५) लग्न और पञ्चम पापग्रह के मध्य में हो-लग्नेश व पञ्चमेश दुष्टस्थान (६, ८, १२) में रहें।

(६) दशमेश पापग्रह के साथ तृतीय में और कोई भी शुभग्रह भौम के साथ पञ्चम में रहे।

(७) पञ्चम में बुध की राशि के होकर शनि-राहु हों और बुध-भौम द्वादशभाव में रहे।

(८) तृतीय में लग्नेश, पंचम में तृतीयेश और लग्न-तृतीय-पञ्चम में पापग्रह रहें।

(९) तृतीयेश अष्टम में और पुत्रकारक ग्रह पंचम में शनि से युक्त रहे।

(१०) अष्टमेश पंचम में तृतीयेश के साथ हो और अष्टम में भौम-शनि रहें तो इन सब (दश) योगों में भ्रातृशाप से सुतक्षय कहना चाहिये।

भ्रातृशापदोष शान्ति—भ्रातृशाप से मुक्ति के लिये हरिवंशकथाश्रवण, चान्द्रायण व्रत, कावेरी नदी (गङ्गा आदि महानदी) के तट पर शलिग्राम के समक्ष पीपलवृक्ष का रोपण व पूजन, दश गोदान और पत्नी द्वारा आम्रादि फलवृक्ष सहित भूमिदान करने से पुत्र-प्राप्ति व कुल की वृद्धि होती है।

मामा के शाप से सुतनाश योग—प[illegible]स्थान में यदि (१) बुध-गुरु-भौम-राहु हों और लग्न में शनि हो तो मामा के शाप से पुत्र का अभाव, (२) लग्नेश यदि पंचमेश-शनि-बुध व भौम के साथ पंचम में रहे तो, (३) पञ्चमेश अस्तङ्गत होकर लग्न में रहे, सप्तम में शनि व लग्नेश बुध से युक्त रहें तो, (४) व्ययेश के साथ चतुर्थेश लग्न में और चन्द्र-बुध-भौम पञ्चम में रहें तो इन (चार) योगों में मामा के शाप से सुतक्षय होता है।

मामा के शाप की शान्ति—इस दोष की शान्ति हेतु विष्णुस्थापन, बावली-कूप-तड़ाग का निर्माण, बाँध का बंधन आदि करने से पुत्रवृद्धि व सम्पत्ति की वृद्धि होती है।

ब्रह्मशाप से सुतक्षय योग—जो व्यक्ति सम्पत्ति या बल के अभिमान में ब्राह्मणों का अपमान करता है उसको ब्रह्म शाप के कारण अग्रिमजन्म में सुतक्षय होता है। इसके ज्ञान हेतु ७ योग हैं—

(१) धनु या मीन में राहु हो और पञ्चम में गुरु हो।

(२) नवमेश पञ्चम में और पंचमेश अष्टम में गुरु-भौम-राहु से युक्त हो।

(३) नवमेश नीच में रहे और व्ययेश पञ्चम में राहु के साथ रहे।

(४) गुरु नीचराशि में हो, राहु लग्न में या पञ्चम में हो और पञ्चमेश त्रिकस्थान (६।८।१२) में हो।

(५) पञ्चमेश एवं गुरु पापग्रह के साथ अष्टम में रहें तो अथवा पञ्चमेश सूर्य-चन्द्र के साथ अष्टम में रहे।

(६) गुरु यदि शनि के नवांश में होकर शनि-भौम से युक्त हो और पञ्चमेश द्वादश में रहे।

(७) लग्न में गुरु-शनि, नवम में राहु अथवा राहु के साथ गुरु द्वादश स्थान में रहे तो इन (सात) योगों में ब्रह्मशाप से सुतक्षय होता है।

ब्रह्मशापदोष शान्ति—इस दोष के शान्ति हेतु चान्द्रायण व्रत और तीन कृच्छ्र व्रत(प्रायश्चित्त) करने के बाद दक्षिणा सहित गौ का दान करें तथा सुवर्णसहित पञ्चरत्न का दान करें। तत्पश्चात् यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावें। ये सब करने-कराने से शापमुक्ति होती है और सत्पुत्र का लाभ होता है।

पत्नीशाप से सुतनाश ये अधोलिखित प्रकार कहा गया है—

(१) सप्तमेश पञ्चम में, शनि सप्तमेश के नवांश में और पञ्चमेश अष्टम में रहे तो स्त्रीशाप से सुतक्षय होता है

(२) सप्तमेश अष्टम में, द्वादशेश पञ्चम में तथा पुत्रकारकग्रह पापयुक्त रहे तो सुतक्षय होता है।

(३) शुक्र पंचम में, सप्तमेश अष्टम में और पुत्रकारक ग्रह पापग्रह से युक्त रहे तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।

(४) द्वितीयभाव में पापग्रह, सप्तमेश अष्टम में और पञ्चम में पापग्रह रहे तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।

(५) नवम में शुक्र, सप्तमेश अष्टम में तथा लग्न व पञ्चम में पापग्रह रहें तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।

(६) शुक्र नवमेश हो, पञ्चमेश शत्रुराशि में हो, गुरु-लग्नेश-सप्तमेश ये तीनों ६, ८, १२ (त्रिक) स्थान में हों तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।

(७) पञ्चम में वृष या तुला राशि हो और उसमें सूर्य-चन्द्र हों तथा १२, १, २ भाव में पापग्रह हों तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।

(८) सप्तम में शनि-शुक्र, अष्टमेश पंचम में तथा लग्न में सूर्य-राहु हों तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।

(९) द्वितीय में भौम, द्वादश में गुरु तथा पञ्चम में शुक्र व राहु हों तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।

(१०) अष्टम में द्वितीयेश व सप्तमेश रहें, पञ्चम व लग्न में भौम-शनि तथा पुत्रकारकग्रह पापग्रह से युक्त हों तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।

(११) लग्न-पञ्चम-नवम में क्रमशः राहु-शनि-भौम तथा पञ्चमेश और सप्तमेश अष्टम भाव में रहें तो पत्नीशाप से सुतक्षय होता है।

पत्नीशाप दोष शान्ति—इस शाप से मुक्ति हेतु कन्यादान करना चाहिए। यदि कन्या नही हो तो सुवर्ण मूर्ति और सवत्सा दश गौ का दान करें तथा शय्या-भूषण-वस्त्र आदि द्विज-दम्पति को देने से पुत्र प्राप्ति और भाग्यवृद्धि होती है।

प्रेतशाप से सुतक्षय योग—मृतक का यदि श्राद्धादि द्वारा मोक्ष नहीं होता है तो वह प्रेत होकर श्राद्धाधिकारी को शाप देता है, जिससे अगले जन्म में वह श्राद्धाधिकारी पुत्रहीन होता है। इस पुत्रहीन योग को कहते हैं—

(१) पञ्चम में शनि-सूर्य, सप्तम में क्षीण चन्द्र, लग्न और व्यय स्थान में राहु-गुरु रहें तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।

(२) पञ्चमेश व शनि अष्टम में, लग्न में भौम और अष्टम में पुत्रकारकग्रह रहें तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।

(३) लग्न में पापग्रह, द्वादश में सूर्य, पञ्चम में भौम-शनि-बुध और अष्टम में पञ्चमेश हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।

(४) लग्न में राहु, पञ्चम में शनि व अष्टम में गुरु हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।

(५) लग्न में शुक्र-गुरु-राहु-चन्द्र-शनि हों और लग्नेश अष्टम में हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।

(६) पञ्चमेश और पुत्रकारकग्रह दोनों ही नीचराशि में हों और नीचस्थग्रह से दृष्ट हों तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।

(७) लग्न में शनि, पञ्चम में, राहु, अष्टम में सूर्य और व्यय में भौम हो तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।

(८) सप्तमेश ६-८-१२ में, पञ्चम में चन्द्र, लग्न में शनि और गुलिक रहें तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।

(९) अष्टमेश पञ्चमभाव में शनि के साथ हो व पुत्रकारक ग्रह नीचराशि में रहे तो प्रेतशाप से सुतक्षय होता है।

प्रेतशापदोष शान्ति—दोष के शान्ति हेतु गया में श्राद्ध, रुद्राभिषेक-ब्रह्मा की सोने की मूर्ति-प्रत्यक्षगाय-चाँदी का पात्र तथा नीलमणि का दान करना चाहिए। उसके पश्चात् यथासंख्य ब्राह्मण भोजन कराकर उन्हें दक्षिणा देनी चाहिये। इस प्रकार शान्ति करने से पुत्रप्राप्ति और कुलवृद्धि होती है।

ग्रहदोष में शान्ति—ग्रहदोष से यदि सन्तानहीनता योग हो तो निम्न अनुष्ठान करें। बुध-शुक्रकृत दोष में शङ्करपूजन, गुरु-चन्द्रकृत दोष में मन्त्र (सन्तानगोपाल आदि), यन्त्र तथा औषधि सेवन, राहु दोष में कन्यादान, सूर्यदोष में विष्णु की आराधना, भौम व शनि दोष में षडङ्गशतरुद्रीजप। ये सब अनुष्ठान से सन्तान प्राप्ति होती है। सभी प्रकार के अनपत्य दोष में श्रद्धा-भक्तिपूर्वक श्रीहरिवंशपुराण श्रवण करने से निश्चय ही चिरंजीवी पुत्र की प्रप्ति होती है।

॥ इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का त्रिविंशम पुष्प रूप 'प्रकीर्ण विषय निरूपण' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ॥२३॥

—***—

२४

ग्रहशान्ति

ग्रहविषयक शुभाशुभ फल प्राप्ति के अनेक प्रकार की युक्तियों को बताने के बाद अब ग्रहदोष शान्ति हेतु उनकी पूजाविधि को संक्षेप में लोकोपकारार्थ आगे बतलाया जा रहा है—

सूर्यादि नवग्रहों के नाम और गुण पूर्व में कहा जा चुका हैं। संसार में सभी जन्तुओं के सुख-दुःख ग्रहों के अधीन हैं, इसलिए सुख-सम्पत्ति-वृष्टि-आयुर्दाय या पुष्टि हेतु भक्तिपूर्वक ग्रहों का यज्ञ (जप-होम-पूजनादि) करना ही चाहिये।

पूजनार्थग्रहप्रतिमा—सूर्य की प्रतिमा ताम्र से-चन्द्र की स्फटिक से-भौम की रक्तचन्दनकाष्ठ से-बुध और गुरु की स्वर्ण से-शुक्र की चाँदी से-शनि की लोहे से-राहु की सीसा से और केतु की काँसा से प्रतिमा बनवायें अथवा चन्दन गन्धादि से पट्टवस्त्र पर उपरोक्त धातुओं के रंग से तत्तद ग्रहों का चित्र बनाकर तत्तद दिशा में स्थापित करें।

ग्रहों का स्वरूप—कमलासनस्थ हाथ में कमलपुष्प लिये हुए कमलसदृश रक्तवर्ण के सात घोड़े जुते रथ पर बैठे दो भुजाओं से सुशोभित सूर्य का स्वरूप।

श्वेतवर्ण-श्वेतवस्त्रधारी-दश घोड़े वाले रथ पर श्वेत आभूषण से युक्त हाथ में गदा लिये हुए दो भुजावाले चन्द्र का स्वरूप।

रक्तमाल्य-रक्तवस्त्रधारी-चतुर्भुज-शक्ति शूल गदा और अभयमुद्रा धारण किये हुए मेष वाहन युक्त मंगल का स्वरूप।

पीतमाल्य-पीत वस्त्र धारण किये हुए चतुर्भुज, तलवार, ढाल, गदा और वरमुद्रा धारण किये हुए सिंह पर सवार बुध कां स्वरूप।

गुरु का पीतवर्ण शुक्र का श्वेतवर्ण, दोनों हीं चतुर्भुज, क्रम से दण्ड-अक्षसूत्र-कमण्डलु हाथ में धारण किये हुए गुरु व शुक्र का स्वरूप।

नीलमणिसमकान्ति, चतुर्भुज, शूल शर धनुष और वरमुद्रा धारण किये हुए गृध्र पर सवार शनि का स्वरूप।

भयावह मुख, चतुर्भुज, तलवार ढाल और वरमुद्रा धारण किये हुए नीलवर्ण सिंह पर सवार राहु का स्वरूप।

धूम्रवर्ण, दो भुजावाले, गदा व वरमुद्रा धारण किये हुए विकृतमुख और गृध्र पर सवार केतु का स्वरूप।

ग्रहमूर्ति प्रमाण—लोकहित करने वाले ग्रहों की मूर्ति मुकुट सहित अपने अङ्गुल से १०८ अंगुल प्रमाण का बनाना चाहिये।

पूजनविधि—ग्रह का जो वर्ण होता है उस वर्ण के पुष्प से तथा वस्त्र-गन्ध (चन्दनादि), दीप-धूप एवं जिस ग्रह का जो द्रव्य है अन्न है, वह सब भक्तिभाव से उसको अर्पित करना चाहिए।

जपसंख्या—पूजनोपरान्त सूर्य का जप "आकृष्णेन रजसा" इत्यादि मंत्र से ७ हज़ार, चन्द्र का "इमं देवा असपत्नं" से ११ हजार, भौम का 'अग्निर्मूर्धा दिव:' से १० हजार, बुध का "उद्बुध्यस्व" से ९ हजार, गुरु का "बृहस्पते अतियदर्यो" से १९ हजार, शुक्र का "अन्नात् परिश्रुतो रसं" से १६ हजार, शनि का "शन्नो देवीरभीष्टय" से २३ हजार, राहु का 'कया नश्चित्र आभुव' से १८ हजार और केतु का "केतुं कृण्वन्न केतवे" मन्त्र से १७ हजार जप करना चाहिये।

ग्रहों की समिधा—ग्रहशान्त्यर्थ क्रमश: मदार-पलाश-खैर-चिरचिरी-पीपल-गूलर-शमी-दूर्वा और कुश की समिधा मधु-घृत-दही के साथ १०८ बार अथवा २८ बार हवन करना चाहिये।

सूर्यादि ग्रहों के शान्त्यर्थ गुड़ के साथ बना हुआ भात, दूध से बना हविष्य (तीन्नी आदि), दूध से बना साठी चावल का भात, दही भात-सघृतभात-सचूर्ण भात (तिल-चूर्ण और भात), मांस (उड़द) भात तथा खिचड़ी ये यथाशक्ति सत्कारपूर्वक ब्राह्मणों को खिलाना चाहिये।

ग्रहों की दक्षिणा—सवत्सा गौ-शङ्ख-बैल-सुर्वण-वस्त्र-घोड़ा-काली गाय-लोहे का अस्त्र और छाग सूर्यादि ग्रहों के शान्त्यर्थ दक्षिणा स्वरूप देना चाहिए।

शान्ति कराने का समय—दशा अन्तर्दशा समय में जो ग्रह अशुभ हो उससमय उस ग्रह का पूजन यत्नपूर्वक करना चाहिए क्योंकि ब्रह्मा ने ग्रहों को वर दिया है कि-"जो तुम्हारा पूजन करे उसका कल्याण करो।" भूवासी मनुष्यों की उन्नति-अवनति तथा संसार की उत्पत्ति-नाश भी ग्रहों के वश में है इसलिये ग्रह परमपूज्य होते हैं।

अशुभजन्म—कभी-कभी लग्न और ग्रहयोग उत्तम रहने पर भी जिस कारण जन्म अशुभ होता है उसको बतलाते हैं।

अमावास्या और कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, भद्राकरण, सोदरजन्मनक्षत्र, माता या पिता का जन्मनक्षत्र, सूर्य की संक्रान्ति, पात (क्रान्तिसाम्य), सूर्य व चन्द्रग्रहण,व्यतीपात आदि दुष्टयोग, तीनों गण्डान्त, यमघण्ट, तिथिक्षय, दग्धादि योग तथा त्रीतर (तीन पुत्री के बाद पुत्र या तीन पुत्र के बाद पुत्री) जन्म अथवा विकृत प्रसव (गर्भ में अन्य योनि का अथवा हीन व अधिक अङ्ग युक्त जन्म) अशुभ होता है। इसकी शान्ति करने कराने से कल्याण होता है। अतः इस प्रकार के दोषों की शान्ति के उपायों को यहाँ क्रमशः प्रस्तुत किया जा रहा है।

अमावस्या जन्म—इस प्रकार अमावास्या में उत्पन्न सन्तान दरिद्रता करता है। दोषशान्त्यर्थ शान्ति अवश्य करनी चाहिये। विधिपूर्वक कलशस्थापन करके उसमें गूलर, वट, पीपल, आम और नीम के पल्लव, जड़, छाल तथा पञ्चरत्न देकर उसे दो रक्तवस्त्र से आच्छादित करे।

पूजन विधि—अनन्तर-'सर्वे समुद्रा' तथा 'आपो हिष्ठा' इत्यादि तीनों मन्त्रों से कलश को अभिमन्त्रित करके अग्निकोण में स्थापित करें। दर्श के देवता चन्द्र और सूर्य की स्वर्णमयी अथवा चाँदी का चन्द्र और ताम्र की सूर्यमूर्ति बनाकर विधिवत् उसका स्थापन कर क्रम से 'आप्यायस्त' इत्यादि मन्त्र से चन्द्र की तथा 'साविता' इत्यादि मन्त्र से सूर्य की षोडशोपचार या पञ्चोपचार पूजन करें। फिर समिधा और चरु से स्व-स्व मन्त्र से सूर्य और चन्द्र के प्रीत्यर्थ १०८ या २८ बार हवन करे, फिर सन्तान व माता-पिता का अभिषेक कलशजल से करके सुवर्ण-चाँदी और गौ की दक्षिणा दें। पुनः ब्राह्मणों को भोजन करावें। यह शान्ति कर्म करने से कल्याण होता है।

कृष्णचतुर्दशीजन्म—कृष्णपक्ष चतुर्दशी के घट्यादि मान को ६ से विभक्त करे, प्रथम भाग में यदि जन्म हो तो शुभ, द्वितीय भाग में जन्म हो तो पिता का नाश, तृतीयभाग में जन्म हो तो माता की मृत्यु, चतुर्थभाग में जन्म हो तो मामा का नाश, पञ्चमभाग में जन्म हो तो कुल का नाश, षष्ठ भाग में जन्म हो तो धन का या जन्म लेने वाले का नाश होता है। अतः दोषशमनार्थ शान्ति करनी चाहिये।

सामर्थ्यानुसार सुवर्णमयी शिव की मनोहर प्रतिमा जिसके शिर पर

बालचन्द्र, श्वेतमाला, श्वेतवस्त्रयुत, त्रिनेत्र, वृषभारूढ़, द्विभुज, वर और अभय की मुद्रा युक्त बनाया जाना चाहिए।

वारुण मन्त्र से आवाहन 'त्र्यम्बक' मन्त्र से पूजन, 'इमं मे वरुण' 'तत्त्वा यामि' ऋचा से 'त्वं नो अग्ने' तक तथा 'स त्वं नो' इत्यादि मंत्र से अग्निकोण स्थित कलश से आरम्भ कर 'आनोभद्रा' इत्यादि तथा 'भद्रा अग्नेश्च' इस सूक्त का जपकर (सहस्त्रशीर्षेत्यादि) और 'कद्रुदेत्यादि' मन्त्र को जपे। शिव का अभिषेक और नवग्रहों का विधिवत पूजन करके समिधा-घृत-चरु-तिल-माष-सरसों एवं पीपल-पाकड़-पलास-खैर की समिधा से १०८ बार या २८ बार हवन करे, 'त्र्यम्बकं' इत्यादि मन्त्र से तिल का हवन और व्याहृति से ग्रहों का हवन करना चाहिए इससे कल्याण होता है। फिर कलश के जल से जातकसहित माता और पिता का अभिषेक करके यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा देनी चाहिए।

भद्रा आदि दुर्योग जन्म—पराशर ऋषि ने कहा—हे विप्र! भद्रा, तिथिक्षय, व्यतीपात, परिघ, वज्र आदि दुर्योग तथा यमघण्ट इत्यादि योग में जन्महोना अशुभ कहा गया है उसकी शान्ति विधि को यहाँ कहा जा रहा है। जिस दुर्योग में जन्म हुआ हो वह दुर्योग पुनः जिस दिन आवे उसी दिन शान्ति करनी चाहिये।

अथवा अच्छे ज्यौतिषी द्वारा निर्दिष्ट शुभमुहूर्त और शुभलग्न में देवपूजा, ग्रह का पूजनादि, श्रीशङ्कर का अभिषेक, शिवमन्दिर में घृत का दीपदान करें और आयु को बढ़ाने वाले पीपलवृक्ष का पूजन व प्रदक्षिणा कर विष्णु के मन्त्र (विष्णो रराटमसीत्यादि) से १०८ बार हवन करके यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराकर दक्षिणा दें तो दोषनिवृत्ति व कल्याण होता है।

एकनक्षत्रजदोष—यदि सोदर या पिता-माता के जन्मनक्षत्र में किसी का जन्म हो तो उन दोनों या उनमें से एक का मरण या मरणतुल्य कष्ट होता है। अतः उसकी शान्तिविधि को कहता हूँ। शुभमुहूर्त में, रिक्ता-भद्रादि दोष से रहित दिन में शान्तिकर्म करनी चाहिये। जन्मनक्षत्र के देवता की सुन्दर प्रतिमा बनाकर ईशानकोण में कलश पर स्थापन कर रक्त वस्त्र से ढँक कर फिर दो वस्त्र से वेष्टित करें और नक्षत्र के मन्त्र से पूजन करें। अपनी-अपनी शाखा के विधि अनुसार अग्निमुख होकर उसी मन्त्र से १०८ बार घृत-शाकल्यादि से हवन करें, पुनः उन दोनों (पिता पुत्र, या सहोदरों) का

अभिषेक करें। विप्रों को विशेष कर आचार्य को दक्षिणा देकर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन कराना चाहिए।

नक्षत्रदेवता का वैदिक मन्त्र ही नक्षत्रमन्त्र होता है। यहाँ सभी नक्षत्रों के मन्त्र तथा समिधावृक्ष दिए गये हैं—

१. अश्विनी—अश्विना तेजसाचक्षु प्राणेन सरस्वतीवीर्यम्। वाचेन्द्रो बले-नेन्द्रायदद्युरिन्द्रियम्। (कुचला वृक्ष)

२. भारणी—यमाय त्वांगिरस्यते पितृमते स्वाहा स्वाहा धर्माय स्वाहा धर्मपित्रे। (आँवला वृक्ष)

३. कृत्तिका—अग्निमूर्धादिव: ककुत्पति: पृथिव्यामयम्। अपा ग्वं रेता ग्वं सिजिन्वति:। (गूलर ''उदुम्बर'' वृक्ष)

४. रोहिणी—ब्रह्मजज्ञानं प्रथमम्पुरस्ताद्विसीम: सुरुचे वेनआयव: सबुध्न्या उपमा अस्य विष्ठा: सतश्च योनिमसतश्च विव:। (जामुन वृक्ष)

५. मृगशिरा—इमं देवा असपत्नं सुबध्वं महते क्षत्राय महते ज्येष्ठाय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय इममुष्यैपुत्रममुष्यै विश एषवोऽमीराजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ग्वं राजा। (खदिर ''खैर'' वृक्ष)

६. आर्द्रा—नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषवे नम: बाहुभ्यामुतते नम:। (कृष्णकमल वृक्ष)

७. पुनर्वसु—अदिति द्यौरदितिरन्तरिक्षमदिति: माता स पिता स पुत्र:। विश्वेदेवा अदिति: पंचजना अदिति: जातिमादितिर्जनित्वम्। (बबूल वृक्ष)

८. पुष्य—बृहस्पते अतियदर्यो अर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यदीदयच्छ वस ऋत प्रज़ात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्। (पीपल वृक्ष)

९. श्लेषा—नमोऽस्तु सर्वेभ्यो ये के च पृथिवीमनु: ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्य: सर्पेभ्यो नम:। (चम्पावृक्ष)

१०. मघा—पितृभ्य: स्वधायिभ्य: स्वधा नम:। पितामहेभ्य: स्वधायिभ्य: स्वधा नम:। प्रतिपतामहेभ्य: स्वधायिभ्य: स्वधा नम:। अक्षन्न पित्रोमीमदन्त पितरोऽतीतृप्यन्त पितर: पितर: शुन्धध्वम्। (वट वृक्ष)

११. पू. फा.—भगप्रणोतभर्गसत्यराधो भगेमाधियमुदवाददन्न भगये प्रणोजनयगोभिरश्वैर्भयप्रनृभिर्नृवनस्याम्। (अशोक वृक्ष)

१२. उ. फा.—देवावध्वर्यूश्चागतस्थेन सूर्यात्वचा मघ्वायणं समंजाथो तं प्रत्नया यं वेनाश्चित्रं देवानाम्। (खेजड़ी वृक्ष)

१३. हस्त—विभ्राड् बृहत् पिबतु सौम्य मध्यायुर्दध यज्ञ पतिं च विहुतम्। वातजूतो यो अभिरक्षतित्मनाप्रजा: पुपोषपुरुधा विराजति। (जूही वृक्ष)

१४. चित्रा—त्वष्टा तुरीयो अद्भुत इन्द्राग्नी पुष्टिवर्धनम्। द्विपदा छन्दऽइन्द्रियमुक्षा गौत्रवयोदध:। (बिल्व वृक्ष)

१५. स्वाति—वयो ये ते सहस्त्रिणो स्था सस्ते त्रिरागदि नियुत्वाम सोम पीतये। (अर्जुन वृक्ष)

१६. विशाखा—इन्द्राग्नी आगत सुतं गीमिनेमो वरेण्यभू:। अस्य पातं धियेषिता। (नागकेशर वृक्ष)

१७. अनुराधा—नमो मित्रस्य वरुणस्य चक्षसे महादेवायतदृत सपर्यत दूर दृशे दृशे देव जाताय केतवे दिवसपुत्राय सूर्यायश सत्। (नागकेशर वृक्ष)

१८. ज्येष्ठा—त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र ग्वं हवे हवे सुहव। शूरमिन्द्रम् ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्र: ग्वं स्वस्तिनो मघवाधात्विन्द्र:। (निम्ब वृक्ष)

१९. मूल—मातेव पुत्र पृथिवी पुरीष्यमणि ग्वं स्वेयोनावमारुषज्ञ। तां विश्वदेवर्ऋतुभि: संवदान: प्रजापतिर्विश्वकर्मा विमुंचतु। (बिल्व वृक्ष)

२०. पू. षा.—अपाधमप किल्विषमपकृत्यामपोरप:। अपाम्मार्ग त्वमस्मदन्दु-स्वपय ग्वं सुव:। (आक वृक्ष)

२१. उ. षा.—विश्वेदेवा कृणुतेम हव मे ये अन्तरिक्षे य उपद्यविष्टम्। अग्नि-जिह्वा उतवाय जत्रा आसद्यास्मिन्वा मादयध्वम्। (कटहल वृक्ष)

२२. श्रवण—विष्णो रराटमसि विष्णो: श्नपत्रस्थो विष्णो: स्यूरसि विष्णो: ध्रुवोसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा। (आक वृक्ष)

२३. धनिष्ठा—वसो: पवित्रमसि शतधारं वसो: पवित्रमसि सहस्त्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु वसो: पवित्रेण शतधारेण सुप्त्वा कामधुक्ष:। (नारिकेल वृक्ष)

२४. शतभिषा—वरुण स्योत्तम्भनभसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनिस्थो वरुणस्य ऋत सदन्यसी वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदन मासीद। (आम्र वृक्ष)

२५. पू. भा.—उतनोऽहिर्बुध्न्य नृणोत्वज एकपात् पृथिवी समुद्र:। विश्वेदेवाऽऋतावृधोहुवाना स्तुता मन्त्रा कविशस्ता अवन्तु। (कदम्ब वृक्ष)

२६. उ. भा.—शिवोनामासि स्वधिस्ते पिता नमस्ते अस्तु मामहि ग्वं सी: निवर्तयाम्यायुषेन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय। (मेहदी वृक्ष)

२७. रेवती—पूषन् तवव्रते वयं नरिष्येम कदाचन स्तोतारस्त इहस्मसि। (बैर ''बदरी'' वृक्ष)

अभिजित नक्षत्र के स्वामी ब्रह्मा हैं, अत: रोहिणी नक्षत्र का मन्त्र ही अभिजित का भी मन्त्र होता है।

संक्रान्तिजन्म—सूर्यादिवारों में संक्रान्ति होने पर क्रमश: घोरा-ध्वांक्षी-महोदरी-मन्दा-मन्दाकिनी-मिश्रा तथा राक्षसी संज्ञा की संक्रान्ति होती है। इनमें जन्म लेने वाला दरिद्र और दु:खी होता है, परन्तु शान्ति करने पर सुखी होता है। अत: शान्तिविधि को यहाँ बतलाया जा रहा है—

शान्ति विधान—संकान्ति दोष शान्ति हेतु नवग्रह यज्ञ करना चाहिए। अपने घर के पूर्वभाग में सुन्दर स्वच्छ स्थान में ५ द्रोण परिमित धान्य (साठी), अढाई द्रोण (अढैया) चावल और सवा अढैया तिल इनकी अलग-अलग ढेरियाँ बनाकर इन सभी पर अष्टदल कमन बनावें। पुण्याहवाचन कराकर, मन्त्रार्थ का ज्ञाता, शान्तिकर्म में पटु आचार्य का वरण करें।

अन्न की तीनों ढेरियों पर सुन्दर कलश स्थापन कर उसमें तीर्थजल, सप्तमृत्तिका, शतौषधि, पञ्चपल्लव, पञ्चगव्य देकर वस्त्र से वेष्टित करे। प्रत्येक घट पर आसनार्थ सूक्ष्म वस्त्र से लपेटे छोटे-छोटे पात्र कसोरा रखें। उन पर अधिदेव और प्रत्यधिदेव सहित प्रधान (संक्रान्ति) प्रतिमा को स्थापित करें। इसमें सूर्य अधिदेव और चन्द्र प्रत्यधिदेव होते हैं। दोनों बगल में सूर्य और चन्द्र की तथा मध्य में प्रधान देव (संक्रान्ति) की विधिपूर्वक पूजा करे। पूजन से पूर्व यथा शक्ति प्रत्येक प्रतिमा को दो-दो वस्त्र समर्पण करे। फिर व्याहृतिपूर्वक स्व-स्व मन्त्र से प्रत्येक की पूजा करे। जैसे—त्रयम्बकं ('त्र्यम्बकं यजामह') मन्त्र से प्रधान प्रतिमा की 'उत्सूर्य' मन्त्र से सूर्य की और 'आप्यायस्व' मन्त्र से चन्द्र की षोडशोपचार या यथाशक्ति पञ्चोपचार पूजा करके पुन: प्रधान प्रतिमा का स्पर्श कर मृत्युञ्जय मन्त्र का अष्टोत्तरसहस्त्र, अष्टोत्तरशत या अट्ठाइस बार यथासंभव जप करे।

स्थापित घटों के पश्चिम में स्थण्डिल भाग में अग्निस्थापन करके स्वगृह्योक्त विधि से संस्कार कर 'त्रयम्बकं यजामहे' मन्त्र से समिधा-घृत और

चरु से १००८ या १०८ या २८ बार हवन करें। मृत्युञ्जय मन्त्र से तिल का हवन, पुनः स्विष्टकृत् होम करके माता-पिता सहित बालक का अभिषेक करें, अन्त में यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन करावें और दक्षिणा दें। इस तरह शान्ति करने से निश्चित ही कल्याण होता है।

ग्रहणजन्म—सूर्य या चन्द्र के ग्रहणकाल में जन्म होने से व्याधि-कष्ट-दारिद्र्य और मृत्युभय होता है। मनुष्यों के हितार्थ यहाँ शान्तिविधि बतलाया जा रहा है। जिस नक्षत्र में ग्रहण हो उस नक्षत्र के स्वामी (दस्र,यम आदि) की प्रतिमा स्वर्ण से तथा सूर्यग्रहण में सूर्य की मूर्ति भी स्वर्ण से और चन्द्रग्रहण में चन्द्र की मूर्ति चाँदी से व राहु की मूर्ति सीसे से बनवायें।

शान्ति विधान—समतल व पवित्र भूमि में नवीन सुन्दर वस्त्र के उपर तीनों मूर्तियों को स्थापित करें। सूर्यग्रहण में सूर्य प्रीत्यर्थ रक्त अक्षत-रक्तचन्दन-रक्तवर्ण की माला-रक्तवस्त्र आदि, चन्द्रग्रहण में चन्द्र प्रीत्यर्थ श्वेतचन्दन-फूल-श्वेतवस्त्रादि, राहु के प्रीत्यर्थ कालावस्त्र-काला पुष्प आदि तथा नक्षत्रस्वामी के प्रीत्यर्थ श्वेतपुष्पादि अर्पण करना चाहिये। सूर्य की पूजा 'आकृष्णेन' इत्यादि मन्त्र से, चन्द्र की 'इमं देवा' इत्यादि मन्त्र से तथा राहु की पूजा दूर्वा द्वारा 'कया नश्चित्र' इत्यादि मन्त्र से करे। आक की समिधा सूर्य के निमित्त, पलाश चन्द्र के निमित्त दूर्वा राहु के निमित्त तथा नक्षत्रस्वामी के निमित्त पीपल की समिधा से हवन करें।

इसके बाद कलशजल से जातक का अभिषेक करें, पुनः शान्त चित्त से भक्तिपूर्वक आचार्य की पूजाकर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करावें व दक्षिणा दें। इस प्रकार शान्ति करने से विघ्नों का शमन होता है।

गण्डान्तजन्म—

तिथि, नक्षत्र और लग्न सम्बन्धी तीन तरह के गण्डान्त होते हैं। जो जन्म-यात्रा-विवाहादि में अशुभप्रद होते हैं।

पूर्णा (५, १०, १५) तिथियों के अन्त में और नन्दा (१, ६, ११) तिथियों की आदि में २-२ घटी मिलाकर ४ घटी तिथिगण्डान्त होता है।

इसी तरह रेवती-अश्विनी की, आश्लेषा-मघा की और ज्येष्ठा-मूल की सन्धि में अन्त और आरम्भ की ४ घटी नक्षत्रगण्डान्त होता है।

तथा मीन-मेष की, कर्क-सिंह की और वृश्चिक-धनुलग्न की सन्धि में १ घटी लग्नगण्डान्त होता है।

इन गण्डान्त नक्षत्रों में ज्येष्ठा के अन्त में ५घटी और मूल के आरम्भ में ८ घटी 'अभुक्तमूल' होता है, यह अत्यन्त अशुभप्रद होता है।

शान्ति विधान—अब गण्डान्तोत्पन्न की शान्तिविधि को बतलाया जाता है। किसी शुभ दिन-सुलग्न में बालक का पिता शान्ति करने के पश्चात् बालक को देखे। तिथिगण्डान्त में वृषदान, नक्षत्र गण्डान्त में सवत्सागोदान और लग्नगण्डान्त में स्वर्णदान करना चाहिये। गण्डान्त के पूर्वभाग में यदि जन्म हो तो पिता के साथ तथा यदि द्वितीय भाग में जन्म हो तो माता के साथ बालक का भी अभिसिंचन करना चाहिये।

१६ मासा का या सामर्थ्यानुसार उसके आधा या चतुर्थांश तुल्य स्वर्ण से तिथिस्वामी, नक्षत्रस्वामी या लग्नस्वामी का स्वरूप बनाकर कलश पर स्थापित कर पूजा करें, पूजा के बाद में हवन तथा अभिषेक अन्त में ब्राह्मण भोजन व दक्षिणा दें। इस तरह शान्ति करने से आयु-आरोग्य व ऐश्वर्य की वृद्धि होती है।

अभुक्तमूलजन्म—ज्येष्ठा के स्वामी इन्द्र और मूल के स्वामी राक्षस होते है, इन दोनों में नैसर्गिक वैर होने के कारण अन्य गण्डान्त से इसमें अधिक दोष होता है। अभुक्तमूलोत्पन्न का त्याग कर देना चाहिये या जन्म से आठ वर्ष तक पिता के जातक का मुख नहीं देखना चाहिए। इसके दोषशान्ति विधि इसं प्रकार अवश्य सम्पन्न करना चाहिए।

इन (ज्येष्ठा और मूल) में विशेष दोष होने से प्रथम मूलशान्ति को पुनः प्रस्तुत किया जाता है। जन्म से १२वें दिन या जन्मनक्षत्र के आने पर, या किसी भी चन्द्र, तारानुकूल शुभमुहूर्त्त में विधिविधान से शान्ति करनी चाहिये।

शान्ति विधान—समतल व पवित्र स्थान में घर से पूर्व या उत्तर भाग में चार द्वार युक्त तोरणादि से सुशोभित मण्डप निर्माण करें। हवनार्थ बाहर में कुण्ड निर्माण करें। सामर्थ्य के अनुसार १६-८, या ४ माशा स्वर्ण से नक्षत्र (देव-राक्षस) की मूर्ति श्यामवर्ण, दो मस्तक, दो भुज, तलवार-ढाल सहित शव पर आरूढ़ भयानक मुख का बनावे।

मूर्ति के अभाव में स्वर्ण मूल्य की ही स्थापना करके उपरोक्त ध्यान कर पूजन करें, क्योंकि सुवर्ण सब देवों का प्रिय है।

स्वस्तिवाचन व आचार्य वरण स्वगृह्योक्त विधान से कलशस्थापन

कर उसमें पञ्चगव्य, शतौषधि आदि सब द्रव्य और तीर्थों व गङ्गादिजल को देकर सौ छिद्र वाले घट पर बाँस का पत्ता रखकर उस पर नक्षत्रदेवता (राक्षस के स्वरूप) को पश्चिमाभिमुख स्थापित कर श्वेतपुष्प-चन्दन-श्वेतवस्त्रादि से पूजन करें तथा अधिदेव इन्द्र और प्रत्यधिदेव जल की भी पूजा करें। फिर सबों के प्रीत्यर्थ होम करें। हवन में यथासंभव १००८ वा १०८ आहुति करें। मृत्युनिवारणार्थ- मुत्युञ्जय मन्त्र 'त्र्यम्बकं' इत्यादि का जप करे, तदनन्तर अभिषेकार्थ सभी देवों की प्रार्थना करे।

तत्पश्चात् स्त्री-पुत्र सहित यजमान का वस्त्र से ढके हुए पूर्वोक्त दोनों कलश के जल से अभिषेक करें। अनन्तर श्वेतवस्त्र-श्वेत-चन्दनादि यजमान को लगावें और आचार्य को सवत्सा धेनु दक्षिणा में दें तथा अन्य ऋत्विजों को भी यथाशक्ति दक्षिणा देकर ब्राह्मण भोजन करावें।

फिर-'यत्पापं' मन्त्र (श्लोक १९) से अच्छी तरह से घृत में अपना मुँह देखें। इस तरह अभुक्तमूल में उत्पन्न बालक का दोष नष्ट होता है।

ज्येष्ठादिगण्डजन्म—अब यहाँ ज्येष्ठादि गण्डान्तशान्ति विधि को कैसे सम्पन्न करना चाहिए, बतलाया जा रहा है। इसमें भी मण्डप-कलशस्थापन, आचार्यवरण आदि मूल शान्ति की तरह करना चाहिये। इसमें प्रधान देवता इन्द्र, अधिदेवता अग्नि और प्रत्यधिदेवता राक्षस होते हैं।

शक्त्यानुसार सुवर्ण से इन्द्र की मूर्ति वज्र और अङ्कुश हाथ में लिये ऐरावत पर आरूढ़ ऐसा बनाकर चावल से परिपूर्ण कलश पर रख कर स्व-स्व गृह्योक्त मन्त्र से गन्धादि से अधिदेव-प्रत्यधिदेव व प्रधानदेव का पूजन करें। फिर हवन, अभिषेक और ब्राह्मण भोजन करावें। इन्द्रसूक्त और मृत्युञ्जय मन्त्र का जप करके इन्द्र की प्रार्थना करें तो इस तरह शान्ति हो जाती है।

यदि शान्ति करने का सामर्थ्य नहीं हो तो मात्र गोदान से ही शान्ति हो जाती है; क्योंकि सम्पूर्ण भूमिदान से भी गोदान का अधिक महत्व होता है।

मूल-ज्येष्ठा-आश्लेषा-मघा इन नक्षत्रों के गण्डान्त में तीन गोदान, रेवती-अश्विनी में दो गोदान और अन्य गण्डान्त या दुष्टयोग में एक गोदान करना चाहिये। यदि गौ का अभाव हो तो उसका उक्त मूल्य ही ब्राह्मण को देना चाहिये।

ज्येष्ठानक्षत्र में उत्पन्न कन्या अपने पति के ज्येष्ठ भाई की तथा

विशाखा के चतुर्थ चरण में उत्पन्न कन्या अपने देवर को नष्ट करती है। अत: उसके विवाह काल में दोषशान्त्यर्थ गोदानादि करवा देना चाहिये।

आश्लेषा नक्षत्र के अन्त्य कें दो-तीन-चार चरण में उत्पन्न कन्या या बालक अपनी सास को तथा मूल के एक-दो-तीन चरण में उत्पन्न कन्या या बालक श्वशुर को नष्ट करने वाले होते हैं। अत: उनके विवाहकाल में यथाशक्ति शान्ति करा देनी चाहिये। पति के अग्रज-श्वसुर-सास यदि नहीं हों तो दोष नहीं होता है।

त्रीतरजन्म—अब यहाँ अन्य दोषप्रद जन्म की शान्तिविधि को प्रस्तुत करने जा रहा हैं। यदि तीन पुत्र के बाद पुत्री या तीन पुत्री के बाद पुत्र का जन्म हो तो उसके पितृकुल और मातृकुल दोनों में अनिष्ट होता है, इसलिये यथासंभव इसकी शान्ति करनी चाहिये।

जनन-अशौच बीतने के पश्चात् प्रात:काल या किसी शुभ मुहूर्त्त में आचार्यादिवरण तथा ग्रहपूजनपूर्वक, धान पर चार कलश रख कर, चारों पर क्रमश: ब्रह्मा-विष्णु-शङ्कर और इन्द्र की पूजा करें।

एक पवित्र ब्राह्मण सावधान होकर चारो रुद्रसूक्त और समस्त शान्ति सूक्त का पाठ करे। समिधा-घृत-तिल और चरु से १००८ या १०८ या २८ बार तथा ब्रह्मादि चारों देवताओं के अपने-अपने गृह्योक्त मन्त्र से आचार्य हवन करे। पुन: स्विष्टकृत् और पूर्णाहुति के पश्चात् परिवार सहित जातक का अभिषेक करके ऋत्विजों को दक्षिणा देकर ब्राह्मण भोजन करावें। फिर कांस्य पात्र में रखे हुए घृत को देखकर दीन और दु:खीजन को अन्न-वस्त्र से सन्तुष्ट करें। इसतरह शान्ति करने पर अरिष्ट से निवृत्ति और सुख की प्राप्ति होती है।

प्रसवविकारशान्ति—अब प्रसव विकार को बतलाया जा रहा है, जिसके दोष से उस गाँव और कुल का अनिष्ट होता है। प्रसवकाल से पूर्व या अधिक (२, ३, ४ मास) में प्रसव हो, अङ्ग से हीन या अधिक या बिना मस्तक या दो मस्तक वाला प्रसव हो अथवा स्त्री में पशु अथवा पशु में मनुष्य आदि की आकृति वाले का जन्म हो तो यह प्रसवविकार कहलाता है जो विपत्तिकर होता है।

जिसकी स्त्री या गाय-घोड़ी आदि में प्रसवविकार हो उसके घर और कुल में अनिष्ट होता है। इसलिए दोषनिवृत्त्यर्थ यत्नपूर्वक शान्ति करनी चाहिए या उसको त्याग देना चाहिए।

स्त्री के जन्मसमय से १५ वें या १६ वें वर्ष में गर्भप्रसव हो तो अनिष्टकारक होता है। सिंहस्थ सूर्य में गौ का तथा मकरस्थ सूर्य में भैंस का प्रसव हो तो पालक के लिए विनाशकारक होता है, अत: उस गाय और भैंस को ब्राह्मण के लिए दे देना चाहिये अथवा विधिपूर्वक शान्ति करनी चाहिये। त्रीतर शान्ति में जिस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु और रुद्र का पूजन-हवन-अभिषेक-ब्राह्मण भोजन कहे गये हैं सब उसी तरह यहाँ भी करना चाहिए। शान्ति करने पर सब पाप से मुक्त होकर सुखी होता है।

इस तरह किसी भी अरिष्ट के प्राप्त होने पर जो विधि-विधान से शान्ति कर लेता है, वह पापमुक्त होकर चिरञ्जीवी होकर सुखी जीवन व्यतीत करता है।

।। इस प्रकार 'जन्मकुण्डली रचना एवं फल विचार' ग्रन्थ का चतुर्विंशम पुष्प रूप 'ग्रह शान्ति विवेचन' डॉ० सुरकान्त झा द्वारा वाराणसी में सुसम्पन्न हुआ ।।२४।।
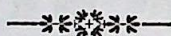
भारत और उसके समीपस्थ स्थानों का अक्षांश-रेखांश सारिणी

	अक्षांश		रेखांश	
नगर	अंश	कला	अंश	कला
अकबरपुर (उ.प्र.)	२६	२६	८२	३३
अकलकोट	१७	३२	७६	१३
अङ्कलेश्वर	२१	३९	७२	५९
अकोला (म)	२०	४२	७७	२
अकोट (म)	२१	६	७७	६
अजमेर	२६	२७	७४	४२
अजन्ता (आन्ध्र)	२०	३३	७५	४८
अतरौली (उ.प्र.)	२८	०२	७८	१८
अजन्ता (म.प्र.)	२०	२०	७७	१०
अमरावती	२०	५६	७७	४८
अमृतसर	३१	३७	७४	५५
अयोध्या	२६	४८	८२	१४
अनाइमुडी	१०	२४	७६	४०
अनकापल्ली (आ.प्र.)	१७	४१	८३	३०
अर्नाकुलम (के.)	९	५८	७६	५८
अरकोणम्	१३	५	७९	४३
अर्काट	१२	५६	७९	२४
अमरकण्टक (म.प्र.)	२२	३०	८१	२०
अलवर	२७	३४	७६	३८
अलीगढ़	२७	५४	७८	६
अलीगढ़ (राज.)	२५	५८	७६	०७
अलीपुर (प. बं.)	२२	३२	८८	२४
अलीपुरा (म.प्र.)	२५	१०	७९	२२
अल्मोड़ा	२९	३७	७९	४०
असाई (आंध्र)	२०	१५	७५	५८
अल्लेपी (के.)	९	३७	७६	२१
अहमदनगर	१९	५	७४	४८
अहमदाबाद	२३	२	७२	३७
अहरौरा	२४	५९	८२	२
आगरा	२७	१०	७८	५

	अक्षांश		रेखांश	
आजमगढ़	२६	३	८३	१३
आरा (बि.)	२५	३४	८४	३२
आदिलाबाद	१९	३७	७८	३०
आबू (राज.)	२४	४०	७२	४५
आसनसोल	२३	४२	८७	१
अगरतला (त्रिपुरा)	२३	५०	९१	२३
अञ्जार (कच्छ)	२३	७	७०	१
अम्बिकापुर (म.प्र.)	२३	१०	८३	१५
अम्बाजी (गुज.)	२४	२२	७२	५६
अनन्तपुर (आंध्र)	१४	४१	७७	३९
आनन्द (गुज.)	२२	३५	७२	५८
अमरेली (गुज.)	२१	३६	७१	१२
इगतपुरी	१९	४२	७३	३५
इटारसी	२२	३०	७७	५५
इटावा	२६	४७	७९	२
इन्द्रगढ़ (राज.)	२५	४४	७६	१२
इन्दौर	२२	४४	७५	५४
इरोड (तमिल.)	११	२०	७७	४६
ईडर	२३	५०	७३	२
इम्फाल (मणि.)	२४	४४	९३	५८
इलाहाबाद	२५	२८	८१	५४
इस्लामाबाद (का.)	३३	४३	७५	१७
उज्जैन	२३	९	७५	४३
उटकमण्ड	११	२४	७६	४४
उडमलपेठ	१०	३६	७९	१९
उडीपी	१३	१८	७४	४०
उदयपुर (त्रिपुरा)	२३	३१	९१	२१
उदयपुर (राज.)	२४	४२	७३	३३
ऊँझा (उ. गुज.)	२३	४७	७२	२४
उदयगिरि (आंध्र.)	१४	५२	७९	१९
उस्मानाबाद	१८	८	७६	६
एकलिङ्गजी (राज.)	२४	४३	७३	४३
एन्नुर (तमिल.)	१३	१४	८०	२२

	अक्षांश		रेखांश	
एलोरा	२०	२	७५	१३
एल्लोर (आंध्र.)	१६	४२	८१	९
ओखा बन्दर	२२	१५	६९	१०
औंध (सता.)	१७	३३	७४	२३
औरंगाबाद	१९	५३	७५	२३
अम्बाला (पंजाब)	३०	२१	७६	५२
उन्नाव	२६	४८	८०	४३
कटक (उड़ीसा)	२०	२८	८५	५४
कटनी (म.प्र.)	२३	४७	८०	२७
कटिहार	२५	३०	८७	४०
कण्णनूर (मद्रास)	११	५२	७५	२५
कनारक (उड़ीसा)	१९	५३	८६	८
कन्नौज (उ.प्र.)	२७	३	७९	५८
कर्नाटिक (म.प्र.)	१२	०	८०	०
कर्णूल (आंध्र.)	१५	५०	७८	५
कमेङ्ग (अ.प्र.)	२७	२९	८२	४२
कलकत्ता	२२	३४	८८	२४
करनाल (पंजाब)	२९	४२	७७	२
कल्याण (महा.)	१९	१४	७३	१०
कानपुर (उ.प्र.)	२६	२८	८०	२४
कामेटशिखर (उ.)	३०	५६	७९	३६
कालीकट	११	१५	७५	४९
केपकामोरिन	८	४	७७	३६
काशी	**२५**	**२०**	**८३**	**०**
कारवार	१४	४८	७४	८
कांजीवरम् (मद्रा.)	१२	५०	७९	४५
किशनगंज (बि.)	२६	१०	८८	०
किशनगढ़ (राज.)	२६	३६	७४	५६
कुडप्पा (आंध्र.)	१४	२८	७८	४९
कुनुर (मद्रास)	११	२०	७६	५०
कुम्भकोनम् (मद्रास)	१०	५८	७९	२५
कृष्णनगर (प.बं.)	२३	२४	८८	३३
कुशलगढ़ (राज.)	२३	८	७४	२७

	अक्षांश		रेखांश	
केसरीआजी	२४	५	७३	४०
कोकोनाड़ा (आं.)	१६	५७	८२	१५
कोचीन	९	५८	७६	१७
कोटा (राज.)	२५	१०	७५	५२
कोट्टयम (कोचीन)	९	३६	७६	३४
कोडैकनाल (म.)	१०	१३	७७	३२
कोयंबतूर (मद्रास)	११	०	७७	०
कोल्हापुर	१६	४२	७४	१६
कोल्लुर (मद्रास)	१३	४३	७४	१३
कोलार (मैसूर)	१३	९	७८	११
कांगडा (पंजाब)	३२	५	७६	१८
खडकी (पूना)	१८	१३	७३	५४
खण्डवा (म.प्र.)	२१	५०	७६	२३
खड्गपुर (पं.बं.)	२२	२०	८७	१९
खम्भात् (गुज.)	२२	१९	७२	३८
खाराघोडा	२३	१०	७१	४२
खेड़ा	२२	४५	७२	४०
गया (बिहार)	२४	४९	८५	१
गदग	१५	२५	७५	४२
गढ़वाल	३०	१५	७९	३०
ग्वालियर	२६	१४	७८	१०
गाजियाबाद	२८	४०	७७	२८
गाजीपुर (उ.प्र.)	२५	३४	८३	३५
गंगापुर (रा.)	२६	२९	७६	४५
गुंटुर (आंध्र.)	१६	१८	८०	२९
गिरसप्पाप्रपात	१४	१८	७४	५५
गिरीडीह (बिहार)	२४	१०	८६	२१
गुडगाँव (हरियाणा)	२८	३७	७७	४
गुर्दासपुर (पंजाब)	३२	३	७५	२७
गुल्वर्गा (हैदराबाद)	१७	१९	७६	५४
गूटी (आंध्र)	१५	७	७७	४१
गोवा	१५	३०	७३	५७
गोधरा	२२	४५	७३	४०

	अक्षांश		रेखांश	
गोपालपुर (उड़ीसा)	१९	१६	८४	५७
गोरखपुर (उ.प्र.)	२६	४५	८३	२४
गोलपारा (आ.)	२६	११	९०	४१
गोण्डल (सौराष्ट्र)	२१	५५	७०	५२
गोण्डा (उ.प्र.)	२७	२८	८२	१
गोंदिया (म.प्र.)	२१	२८	८०	२९
गोहाटी (आसाम)	२६	११	९१	४७
गंजम (उड़ीसा)	१९	२२	८५	६
घोघरा (उ.प्र.)	२७	३०	८१	२०
चम्बल	२४	४८	७५	२०
चालीसगाँव	२०	३३	७५	१०
चांदा (म.प्र.)	१९	५७	७९	२१
चण्डीगढ़	३०	४४	७६	२५
चिदम्बरम् (म.)	११	२४	७९	४४
चित्तोड़गढ़ (रा.)	२४	५४	७४	४२
चिट्टूर (आंध्र.)	१३	१३	७९	८
चेरापुंजी (आंध्र.)	२५	१७	९१	४७
छिंदवाड़ा (म.)	२२	३	७८	५९
छत्तीसगढ़ (म.)	२१	३०	८२	०
छोटा उदयपुर (गु.)	२२	१८	७४	८
छपरा (बिहार)	२५	४७	८४	४१
छोटा नागपुर (झा.)	२३	०	८५	०
जमशेदपुर (झा.)	२२	५०	८६	१०
जम्मू (काश्मीर)	३२	४४	७४	५४
जबलपुर (म.प्र.)	२३	१०	७९	५९
जमालपुर (बिहार)	२५	१९	८६	३२
जयपुर (आसाम)	२७	१५	९२	२६
जयपुर (राज.)	२६	५५	७५	५२
जलगाँव	२१	५	७५	४०
जलपाईगुरी (बं.)	२६	३२	८८	४६
जालंधर (पंजाब)	३१	१९	७५	१८
जसवन्तनगर (उ.)	२६	५१	७८	५५
जामनगर (गुज.)	२२	२७	७०	५

	अक्षांश		रेखांश	
जावरा (म.प्र.)	२३	३८	७५	७
जालोर (राज.)	२५	२२	७२	५८
जूनागढ़ (सौराष्ट्र)	२१	३१	७०	३६
जैसलमेर (राज.)	२६	५५	७०	५७
जोधपुर (राज.)	२६	१८	७३	४
जोगिन्दरनगर (पं.)	३१	५०	७६	४५
जौनपुर (उ.प्र.)	२५	४६	८२	४४
झरिया (झा.)	२३	५०	८६	३३
झालावाड (राज.)	२४	३६	७४	९
झालोद (गुज.)	२३	७	७४	८
झांसी (उ.प्र.)	२५	२७	७८	३७
झाबुआ (म.प्र.)	२२	४५	७४	३८
टनकपुर (उ.प्र.)	२९	१०	८०	१८
टुमकूर (मैसूर)	१३	२०	७७	८
टोंक (राज.)	२६	११	७५	५०
टुंडला (उ.प्र.)	२७	१३	७८	१३
टेहरी (टीकमगढ़)	२४	४५	७८	५३
डीसा (गुज.)	२४	१४	७२	१३
डिब्रूगढ़ (आ.)	२७	२९	९४	५८
डूँगरपुर (राज.)	२३	५०	७३	५०
डुम्मस (गुज.)	२१	६	७२	४१
ढुर्ग (म.प्र.)	२१	११	८१	१७
डोंगरगढ़ (म.प्र.)	२१	१२	८०	५०
तलेगाँव (पूना)	१८	४२	७३	४०
तांजोर (मद्रास)	१०	४७	७९	८
तिरुचिरापल्ली	१०	५०	७८	४६
तिरुपति (आं.प्र.)	१३	४०	७९	२०
तिरुमंगलम् (मं.)	९	४९	७८	१
तिरुबल्लूर (म.)	१३	९	७९	५७
तूतीकोरिन (म.)	८	४५	७८	११
तेजपुर (आ.)	२६	३७	९२	५०
त्रिपुरा (बंगाल)	२३	४५	९१	३०

	अक्षांश		रेखांश	
त्रिवेन्द्रम्	८	२९	७६	५९
त्रिनेवल्ली	८	४३	७७	५७
त्रिचूर	१०	३०	७६	१५
थाणा (महा.)	१९	१२	७३	२
थानेसर (पंजाब)	२९	५८	७६	५६
दमण (गुज.)	२०	२५	७२	५३
दरभंगा (बिहार)	२६	१०	८५	५१
दहाणुं (गुज.)	१९	५९	७२	४३
दार्जिलिंग (सिक्किम)	२७	२३	८८	१८
दाहोद	२२	५०	७४	१६
दिल्ली	२८	३८	७७	१२
दावनगिरी (मैसूर)	१४	३१	७५	५८
द्वारका (गुज.)	२२	१४	६९	१
देवगढ़बारीआ	२२	४२	७३	५३
देवगढ़ (उड़ीसा)	२१	३२	८४	४६
देवलाली	१९	५६	७३	५०
देवास (म.प्र.)	२२	५८	७६	६
देहरादून	३०	१९	७८	४
दौलताबाद	१९	५७	७५	१५
धनबाद (झा.)	२३	४७	८६	२४
धनुष्कोडि (म.)	९	१०	७९	२८
धर्मशाला (पंजाब)	३२	१६	७६	२३
धार (म.प्र.)	२२	३५	७५	२०
धारवार (महा.)	१५	२७	७५	५
धर्मावरम् (आ.प्र.)	१२	२४	७७	०
धरमपुर (गुज.)	२०	३२	७३	१३
घौंड़ (पूना)	१८	३२	७४	४०
धौलपुर (राज.)	२६	४२	७७	५३
धांगध्रा (सौराष्ट्र)	२२	५९	७१	३१
नडिआद	२२	४१	७२	५५
नरसिंहपुर (आं.)	२०	३८	८५	७
नरसिंहगढ़ (म.)	२३	४१	७७	५
नवसारी (गुज.)	२१	७	७२	५५

	अक्षांश		रेखांश	
नवलगढ़	२७	५१	७५	१६
नलीआ (कच्छ)	२३	१६	६८	४९
नसीराबाद (राज.)	२६	१८	७४	४६
नागपुर (महाराष्ट्र)	२१	९	७९	९
नागोर (राज.)	२७	११	७३	४२
नाथद्वारा (राज.)	२४	५६	७३	४८
नागरकोईल	८	१२	७७	२९
नागा पहाड़ियाँ	२६	०	९४	२०
नानपारा (उ.प्र.)	२७	५२	८१	३३
नालन्दा (बिहार)	२५	९	८५	२४
नासिक	२०	२	७३	५०
निजामाबाद	१८	४०	७८	१०
निमच (राज.)	२४	२७	७४	५२
नीलगिरी (आं.)	२१	२७	८६	४९
निलगिरि पहा.	११	२४	७६	४७
नेल्लोर (आंध्र)	१४	२७	८०	०
नैनीताल (उ.प्र.)	२९	२३	७९	३०
नैहाटी (प.बं.)	२२	५४	८८	२८
पंचगीनी	१७	५४	७३	४९
पंजीम	१५	३०	७३	५५
पंचमढी (म.प्र.)	२२	३०	७८	२२
पनवेल (कोलाबा)	१९	०	७३	७
पन्ना (विं.प्र.)	२४	४३	८०	१२
पटना (बिहार)	२५	३७	८५	१३
पटकई (आसाम)	२७	०	९५	३०
पठाणकोट (पं.)	३२	१७	७५	४२
पंढरपुर	१७	४१	७५	२३
प्रतापगढ़ (राज.)	२४	२	७४	४५
प्रतापगढ़ (उ.प्र.)	२५	५३	८१	५८
पटियाला (पं.)	३०	२०	७६	२५
पटौडी (पं.)	२८	१८	७६	४८
परली (वैजनाथ)	१८	५१	७६	३२
पल्लावरम् (म.)	१२	५८	८०	१३

	अक्षांश		रेखांश	
पलनी (मद्रास)	१०	०	७७	०
पलासी (प.बं.)	२३	४७	८८	१७
प्रयाग (उ.प्र.)	२५	३०	८१	५६
पाटण (उ.गु.)	२३	५२	७२	१०
पाटण (सतारा)	१७	२२	७३	५३
पानीपत (हरिया.)	२९	२३	७७	१
प्रांतीज (उ.गु.)	२३	२६	७२	५१
पारसनाथ (बि.)	२४	०	८६	११
पालनपुर (गुज.)	२४	१२	७२	२८
पालघाट (म.)	१०	४६	७६	४२
पालमकोट्टा (म.)	८	४३	७७	४६
पालीताना (गुज.)	२१	३१	७१	५०
पालामऊ (बि.)	२३	५२	८४	१७
पाली (राज.)	२५	३६	७३	२५
पावागढ़ (गुज.)	२२	३०	७३	३२
पाण्डिचेरी (म.)	११	५६	७९	५३
पीथापुरम्	१७	४	८२	१२
पीलानी (राज.)	२८	२२	७५	३५
पीरमीड (म.)	९	३०	७७	२
पीलीभीत (उ.प्र.)	२८	३८	७५	५१
पुरुलिया (बि.)	२३	२०	८६	२५
पुरी जगन्नाथ	१९	४८	८५	५२
पूना	१८	३०	७३	५५
पूर्णिया (बिहार)	२५	४९	८७	३१
पूलिकट (मद्रास)	१३	२५	८०	२१
पेटलाद (गुज.)	२२	२९	७२	५०
पैठण (हैदरा.)	१९	२९	७५	२६
पोन्नानी (म.)	१०	४७	७५	५८
पोर्टब्लेयर (अंड.)	११	४१	९२	४३
पोरबन्दर (गुज.)	२१	३७	६९	४९
फतेहगढ़ (उ.प्र.)	२७	२३	७९	४०
फतेहपुर (उ.प्र.)	२५	५५	८०	५२

	अक्षांश		रेखांश	
फतेपुर (राज.)	२८	०	७५	२
फतेहाबाद (पं.)	२९	३१	७५	२०
फर्रुखाबाद (उ.प्र.)	२७	२४	७९	३७
फालना (राज.)	२५	५	७२	५९
फिरोजाबाद (उ.)	२७	९	७८	२४
फिरोजपुर (पं.)	३०	५५	७४	४०
फैजाबाद (उ.प्र.)	२६	४७	८२	१२
बक्सर (बिहार)	२५	३४	८४	१
बडनेरा (म.प्र.)	२०	५२	७७	४६
बड़ौदा	२२	१८	७३	१६
बद्रीनाथ	३०	४४	७९	३२
बर्दवान (प.बं.)	२३	१६	८७	५४
बरेली (उ.प्र.)	२८	२२	७९	२७
बलरामपुर (उ.प्र.)	२७	२४	८२	१०
बांकुरा (प.बं.)	२३	१४	८७	५
बागलकोट	१६	११	७५	४२
बांदा (उ.प्र.)	२५	२८	८०	१२
बारडोली (सूरत)	२१	७	७३	७
बाराबांकी (उ.प्र.)	२६	५५	८१	१०
बालाघाट (म.प्र.)	२१	४८	८०	१२
बालासोर (ओ.)	२१	३०	८६	५६
ब्यावर (राज.)	२६	६	७४	१९
बारामुला (का.)	३४	१०	७४	३०
बाल्टीस्तान (का.)	३५	३०	७६	०
बालेश्वर (ओ.)	२१	३०	८३	५४
बांकीपुर (बिहार)	२५	४०	८५	१२
बांसवाड़ा (राज.)	२३	३०	७४	२४
बिजनौर (उ.प्र.)	२९	२७	७८	३०
बीकानेर (उ.प्र.)	२८	१	७३	२२
बीजापुर	१६	५०	७५	४७
बोधगया (बिहार)	२४	४१	८५	२
बीलीमोरा (गु.)	२०	४६	७२	५८

	अक्षांश		रेखांश	
बुडगाम (सां.)	१६	५४	७४	३६
बुंदी (राज.)	२५	२७	७५	४१
बुन्देलखण्ड	२४	४०	८०	०
बुरहानपुर (म.)	२१	१७	७६	१६
बुलन्दशहर (उ.)	२८	२४	७७	५४
बेतूल (म.प्र.)	२१	५१	७७	५८
बेंगलोर (मैसूर)	१२	५८	७७	३८
बेलगाँव	१५	५२	७४	३४
बेल्लारी (मैसूर)	१५	९	७६	५७
बोरसद (गु.)	२२	२७	७२	५४
भण्डारा (म.प्र.)	२९	९	७९	३९
भरतपुर (राज.)	२७	१५	७७	३०
भड़ौच (गुज.)	२१	४१	७३	०
भद्रावती (मैसूर)	१३	५२	७५	४०
भाटींडा (पू.पं.)	३०	११	७४	५७
भागलपुर (बिहार)	२५	१५	८७	२
भाटपारा (पं.बं.)	२२	५४	८८	२५
भावनगर (गुज.)	२१	४६	७२	९
भीलसा (म.प्र.)	२३	३२	७७	५१
भीलवाडा (राज.)	२५	२१	७४	३८
भीलोड़ा (गु.)	२४	१	७२	१
भीवंडी (थाणा)	१९	२०	७३	५
भीवानी (उ.प्र.)	२८	४८	७६	९
भुवनेश्वर (उड़ीसा)	२०	१५	८५	४५
भुसावल	२१	२	७५	४७
भुज (कच्छ)	२३	१५	६९	४०
भोपाल (म.प्र.)	२३	१६	७७	३६
मऊ (उ.प्र.)	२५	५७	८३	३४
मण्डसोर (राज.)	२४	४	७५	५
मण्डी (हिमाचल)	३१	४०	७६	५५
मधुबनी	२६	२५	८६	५
मधेपुरा (बिहार)	२५	५३	८६	४८
मछलीपट्ठण (आं.)	१६	९	८१	८

	अक्षांश		रेखांश	
मथुरा (उ.प्र.)	२७	२८	७७	४१
मदुरै (मद्रास)	९	५८	७८	१०
मद्रास	१३	४	८०	१७
मनमाड़	२०	१५	७४	२९
मरकारा (कुर्ग.)	१२	२५	७५	४३
मन्नारकुडी (म.)	१०	४०	७९	२९
मर्ता	२६	३९	७४	६
मसूरी (उ.प्र.)	३०	२७	७८	६
महुधा (गुज.)	२२	४९	७२	५६
महेबूबनगर	१६	४२	७७	५८
महाबलेश्वर	१७	५८	७३	४८
महेमदाबाद (गु.)	२२	५०	७२	४५
महेसाना (गु.)	२३	३६	७२	२५
महू (म.प्र.)	२२	३४	७५	४७
माण्डवी (कच्छ)	२२	५१	६९	२०
माण्डल (गुज.)	२३	१७	७१	५८
माणसा (गुज.)	२३	२६	७२	४०
मालवण (कोंकण)	१६	३	७३	३०
मालेगाँव	२०	३३	७४	३०
माथेरान	१८	५९	७३	१८
मायावरम् (म.)	११	६	७९	४२
मानसर (नाग.)	२१	२२	७९	१७
मारवाड़ (राज.)	२५	३	७३	३६
मालदा (पं.बं.)	२५	३	८८	९
मीरत (उ.प्र.)	२९	१	७७	४२
मीरज (म.)	१६	४९	७४	३८
मिरजापुर (उ.प्र.)	२५	१०	८२	३७
मीरपुर (कश्मीर)	३३	१२	७३	५१
मुद्योल (कर्णाटक)	१६	२०	७५	१७
मुगलसराय (उ.प्र.)	२५	१७	८३	११
मुम्बई (महा.)	१८	५५	७२	५०
मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)	२९	२८	७७	४४
मुर्शिदाबाद (पं.बं.)	२४	११	८८	१८

	अक्षांश		रेखांश	
मुरादाबाद (उ.प्र.)	२८	५१	७८	४९
मुंगेर (बिहार)	२५	२३	८६	३०
मुजफ्फराबाद (का.)	३४	२४	७३	२२
मुजफ्फरपुर (बिहार)	२६	८	८५	२२
मेंगलोर (द.भा.)	१२	५२	७४	५३
मेरठ (उ.प्र.)	२९	१	७७	४५
मैमन सिंह (बं.)	२४	४६	९०	२७
मैसूर	१२	१८	७६	४२
मोकामा (बिहार)	२५	२४	८५	५५
मैनपुरी (उ.प्र.)	२७	१३	७९	२
मोंघीर (बिहार)	२५	२३	८६	२७
मोडासा (गुज़.)	२३	२८	७३	१८
मोतीहारी (बि.)	२६	४०	८५	५७
मोरबी (सौराष्ट्र)	२२	५०	७०	५४
मोरार (म.प्र.)	२६	१३	७८	१४
मण्डला	२२	४३	८०	३५
मण्डी (हिमाचल)	३१	४३	७६	५८
मंचेरीयल (आं.)	१८	५१	७९	५
यरवडा (पूना)	१८	३३	७३	५३
यवतमाल (म.प्र.)	२०	२३	७८	११
रतलाम (म.प्र.)	२३	३१	७५	७
रत्नागिरि	१७	८	७३	१९
रांची (झा.)	२३	२३	८५	२३
राजमहेन्द्री (आं.)	१७	०	८१	४८
राजनन्दगाँव (म.)	२१	५	८१	५
राजपीपला (गु.)	२१	५५	७३	२६
राजकोट (गुज.)	२२	१८	७०	५९
रानीखेत (उ.प्र.)	२९	४०	७९	३२
रानीगंज (प.बं.)	२३	३७	८७	६
रामगढ़ (बिहार)	२३	३८	८५	३४
रामटेक (म.प्र.)	२१	२४	७९	२०
रामदुर्ग	१५	५६	७५	१८
रामपुर (उ.प्र.)	२८	४८	७९	५

	अक्षांश		रेखांश	
रामगिरि-	१९	४	८३	५५
रामेश्वरम् (म.)	९	१७	७९	२२
रायगढ़ (म.प्र.)	२१	५४	८३	२६
रायचूर (हैदरा.)	१६	१२	७७	२१
रायपुर (छत्तीसगढ़)	२१	१५	८१	४१
रायबरेली (उ.प्र.)	२६	१४	८१	१६
रेवाड़ी	२८	१२	७६	३६
राधनपुर	२३	५०	७१	३९
रोहतक (पं.)	२८	५४	७६	३८
रोहिलखण्ड (उ.प्र.)	२८	३०	७९	०
रंगपुर (प.बं.)	२५	४५	८९	१८
लखनऊ (उ.प्र.)	२६	५५	८०	५९
लखीमपुर (उ.प्र.)	२७	५७	८०	४९
लक्ष्मनगढ़ (राज.)	२७	५०	७५	४
लद्दाख (कश्मीर)	३२	०	८०	०
ललितपुर (उ.प्र.)	२४	२२	७८	२८
लश्कर (म.प्र.)	२६	१०	७८	१०
ल्हासा (तिब्बत)	२९	४०	९१	८
लालबाग (प.बं.)	२४	१३	८८	१९
लींबडी (सौ.)	२२	३४	७१	५३
लुनावाडा (गु.)	२३	८	७३	३७
लुधीयाना (पं.)	३०	५६	७५	५२
लेह (कश्मीर)	३४	१०	७७	४०
लोनावाला (पूना)	१८	४४	७३	२४
लोहारु (हरियाणा)	२८	१६	७५	४५
बड़नगर (उ.गु.)	२३	४६	७२	३७
बढ़बाण (सौराष्ट्र)	२२	४३	७१	४३
वृन्दावन (उ.प्र.)	२७	३३	७७	४४
वर्धा (म.प्र.)	२०	४५	७८	३९
वन (म.प्र.)	२३	३	७८	५७
वरोरा (म. प्र.)	२०	१४	७९	१
वलसाड (गुज.)	२०	३७	७२	५६

	अक्षांश		रेखांश	
वाडासीनोर (गु.)	२२	५७	७३	१९
बांकानेर (गुज.)	२२	३३	७१	०
वालटेयर	१७	४३	८३	२३
विजयदुर्ग	१६	२६	७३	२६
विजयनगर (म.)	१५	२०	७६	३०
विजयवाडा (आं.)	१६	३१	८०	३९
विजयानगरम्	१८	७	८३	२७
बीजापुर (उ.गु.)	२३	३४	७२	४५
बिल्लुपुरम् (म.)	११	५७	७९	३२
बिलासपुर	२२	५	८२	१३
विशाखापट्टनम्	१७	४२	८३	२०
विरमगाम (गु.)	२३	८	७२	७
विसनगर (गु.)	२३	४२	७२	३२
वेल्लोर (आं.)	१२	५५	७९	११
शाहाबाद (पं.)	३०	१०	७६	५५
शाहजहाँपुर (उ.प्र.)	२७	५४	७९	५७
शाहाबाद (उ.प्र.)	२७	३०	८०	५
शिकारपुर (मै.)	१४	१६	७५	२४
शिलाँग (आ.)	२५	३४	९१	५६
शीहोर (गुज.)	२१	४२	७१	५७
शिवपुरी (म.प्र.)	२५	२६	७७	३९
श्रीकाकुलम् (आं.)	१८	१८	८३	५७
श्रीगंगानगर (रा.)	२९	५६	७३	५२
श्रीरंगपट्टम (मै.)	१२	२६	७६	४३
श्रीनगर (का.)	३४	६	७४	५१
श्रीरंगम् (मद्रास)	१०	५२	७८	४४
सहरसा	**२५**	**५०**	**८६**	**३६**
सतना	२४	३४	८०	५५
सतारा (महा.)	१७	४२	७४	२
सम्बलपुर (उड़ीसा)	२१	२८	८३	५९
सवाईमाधोपुर (रा.)	२५	५८	७६	२०
सांभर (राज.)	२६	५४	७५	१५

	अक्षांश		रेखांश	
सागर (म.प्र.)	२३	५०	७८	५०
सांगली (महा.)	१६	५२	७४	३६
सहरानपुर (उ.प्र.)	२९	५८	७७	२३
सालेम (मद्रा.)	११	३९	७८	१२
सावंतवाड़ी (म.)	१५	५४	७३	५२
सावरकुण्डला (सौ.)	२१	२०	७१	१८
सायला (गुज.)	२२	३२	७१	२९
सिक्किम	२७	३१	८८	३३
सिकन्द्राबाद (आ.)	१७	२७	७८	३३
सियाङ्ग (अ.प्र.)	२८	१९	९४	४१
सीतापुर (उ.प्र.)	२७	३६	८०	४०
शीमला (उ.प्र.)	३१	६	७७	१०
सिलीगुड़ी (प.बं.)	२६	४२	८८	२५
सिरोही (राज.)	२४	५३	७२	५४
सिलहट (आ.)	२४	५३	९१	५५
सुरत (गुज.)	२१	१२	७२	५२
सुवनशिरी (अ.प्र.)	२८	१०	९३	४५
सुल्तानपुर (उ.प्र.)	२६	१६	८२	७
सैंथिया (प.बं.)	२४	०	८७	५०
सोनपुर (उड़ीसा)	२०	५१	८३	५५
सोनगढ़ (सौ.)	२१	४३	७१	५३
सोलन (हिमा.)	३०	५५	७७	९
सोलापुर (महा.)	१७	४०	७५	५६
सोमनाथ (सौ.)	२१	४	७०	२६
हरिद्वार	२९	५८	७८	१३
हरदा (म.प्र.)	२२	२१	७७	६
हरसुद (म.प्र.)	२२	५	७६	४४
हजारीबाग (झा.)	२३	५९	८५	२५
हरदोई (उ.प्र.)	२७	२३	८०	१०
हरपनहल्ली (मै.)	१४	४७	७५	५८
हरिहर (मै.)	१४	३१	७५	५२

	अक्षांश		रेखांश	
हाजीपुर (बि.)	२५	४१	८५	१४
हाथरस (म.प्र.)	२७	३६	७८	६
हापुड़ (म.प्र.)	२८	४५	७७	४६
हालोल (गुज.)	२२	३०	७३	२८
हाबड़ा (प.बं.)	२२	३५	८८	२३
हासन (मैसूर)	१३	१	७६	१०
हिसार (हरियाणा)	२९	१०	७५	४६
हिंगोली	१९	४३	७७	११
हिम्मतनगर (गुज.)	२३	३५	७२	५८
हुबली	१५	२०	७५	१२
हैदराबाद	१७	२०	७८	३०
होशियारपुर (पं.)	३१	३२	७५	५७
होशंगाबाद (म.प्र.)	२२	४६	७७	४५
नेपाल				
अन्नपूर्णा	२८	३५	८३	५७
दोलखा	२७	४०	८६	५
ओखलदूँगा	२७	२०	८६	३२
घरान	२६	४६	८७	९
विराटनगर	२६	२८	८७	१६
जनकपुर	२६	४४	५८	५२
वीरगंज (रक्सौल)	२७	५	८५	०
दांग	२८	७	८२	१८
दलेख	२८	१२	८१	४०
अछाम	२८	५९	८१	१६
काठमाण्डू	२७	४२	८५	१७
पोखरा	२८	१७	८३	५८
धोलगिरि	२९	११	८३	०
अमलेखगंज	२७	१५	८५	०
धानकूटा	२७	०	८७	१९
गोरखा	२७	५५	८४	३०
मुक्तिनाथ	२८	५४	८३	४९

	अक्षांश		रेखांश	
पाटण	२७	३८	८५	१३
अमलेखगंज	२७	१५	८५	०
भाटगाँव	२७	३९	८५	२२
एवरेस्ट (सागरमाथा)	२८	५	८६	५८
पाल्पा	२०	५४	८३	२५
स्तलियान्त	२८	५४	८२	१५
सिलगड़ी	२९	१२	८१	६
पाकिस्तान				
अटक	३३	५३	७२	१७
अलिपुर	२९	२३	७०	५७
करांची	२४	५१	६७	४
कलात	२५	२१	६४	३
गुजरात	३२	३६	७४	५
गुजराँवाला	३२	१०	७४	१४
बियारत	३०	३७	६७	४८
डेराइस्माइलखाँ	३१	५१	७०	५६
तक्षशिला	३३	४०	७२	५०
नासिराबाद	२८	२४	६८	२८
पेशावर	३४	२	७१	३७
बहावलपुर	२८	२४	७१	४७
बोलनघाटी	२९	४०	६७	३६
मरी	३३	५५	७३	२७
मान्ट गोमरी	३०.	५८	७३	२१
मुल्तान	३०	१२	७१	३१
रावलपिंडी	३३	३७	७३	६
लायलपुर	३१	४४	७३	५
लाहौर	३१	३७	७४	२६
वजिराबाद	३२	२७	७४	१०
शिकारपुर	२७	५७	६८	४०
सक्खर	२७	४२	६८	५५

	अक्षांश		रेखांश	
सतलज सरघोघा	२८	२५	७२	०
स्यालकोट	३२	३१	७४	३६
हड़प्पा	३०	३५	७२	५८
हैदराबाद	२५	२५	६८	३८
बांग्लादेश				
चटगाँव	२२	२१	९१	५३
ढाका	२३	४३	९०	२६
नारायणगंज	२३	२७	९७	३२
नोआखली	२२	४८	९१	६
फरीदपुर	२३	३६	८९	५३
बोगरा	२४	५०	२३	२३
मीमेनसींग	२४	४५	९०	२५
चितागोंग	२२	५०	८१	५
खुलना	२२	५०	८९	३५
कोमील्ला	२३	२८	९१	९२
तीलहट	२४	५४	९१	५२
दिनजपुर	२५	३७	८८	३८
तिब्बत				
अल्टीनटाघ	३८	४०	९०	०
काराकोरम्	३६	१०	७५	०
कुनलुन पहाड़	३६	०	८५	०
गटोंक	३१	४५	८०	२१
चंबी	२७	२७	८८	५८
लाभा	२९	३०	९१	५
भूटान राज्य				
पुनारवा	२७	३२	८९	५३
धीरंगजंग	२७	५४	९२	१८
बलुचिस्तान				
चमन	३०	५६	६६	२६
क्वेटा	३०	१४	६७	१
मलाया (सिंगापुर)				
क्वालालम्पुर	३	७	१०१	४०
मलाका	२	१०	१०२	१५
सींगापुर	१	१७	१०३	४७

	अक्षांश		रेखांश	
अफगानिस्तान				
कन्धार	३१	३७	६५	४०
काबुल	३४	३०	६९	१८
जलालाबाद	३४	२४	७०	२८
गजनी	३३	३४	६८	१७
लंका				
अनुराधापुरा	८	२२	८०	२३
कोलम्बो	६	५६	७९	५६
कंकेशन्तुराई	९	५१	८०	५
त्रिंकोमाली	८	३३	८१	१५
बांदरावेला	६	५२	८०	५८
रत्नपुरा	६	४२	८०	२४
ब्रह्मदेश				
अमरपुरा	२१	५५	९६	४
आक्याब	२०	८	९२	५२
आराकानयोमा	२०	०	९४	२०
करेंन्निराज्य	१९	०	९७	३०
चांगीन	१८	१९	९५	१५
जोबीनचोक	१८	१४	९५	४०
टोंगु	१८	५६	९६	२७
थोटन	१६	५३	९५	३१
निग्रेस	१६	२	९४	३१
पकोक्कू	२१	४२	९५	७
पेगू	१७	२०	९६	२९
प्रोम	१८	४७	९५	२०

नोट—द्वितीय विश्वयुद्ध (०१ सितम्बर १९४२ से १४ अक्टूबर १९४५) के बीच भारतीय मानक समय की घड़ी में १ घण्टा बढ़ाया गया था। अतः उस समय के जन्मसमय में १ घण्टा कम कर वास्तविक जन्मसमय मानकर इष्टकाल आदि साधन करना चाहिये।—(लेखक)

—✲✲✲—

परेश कुमार [illegible]
सीरापुर बसहीं, वाराणसी